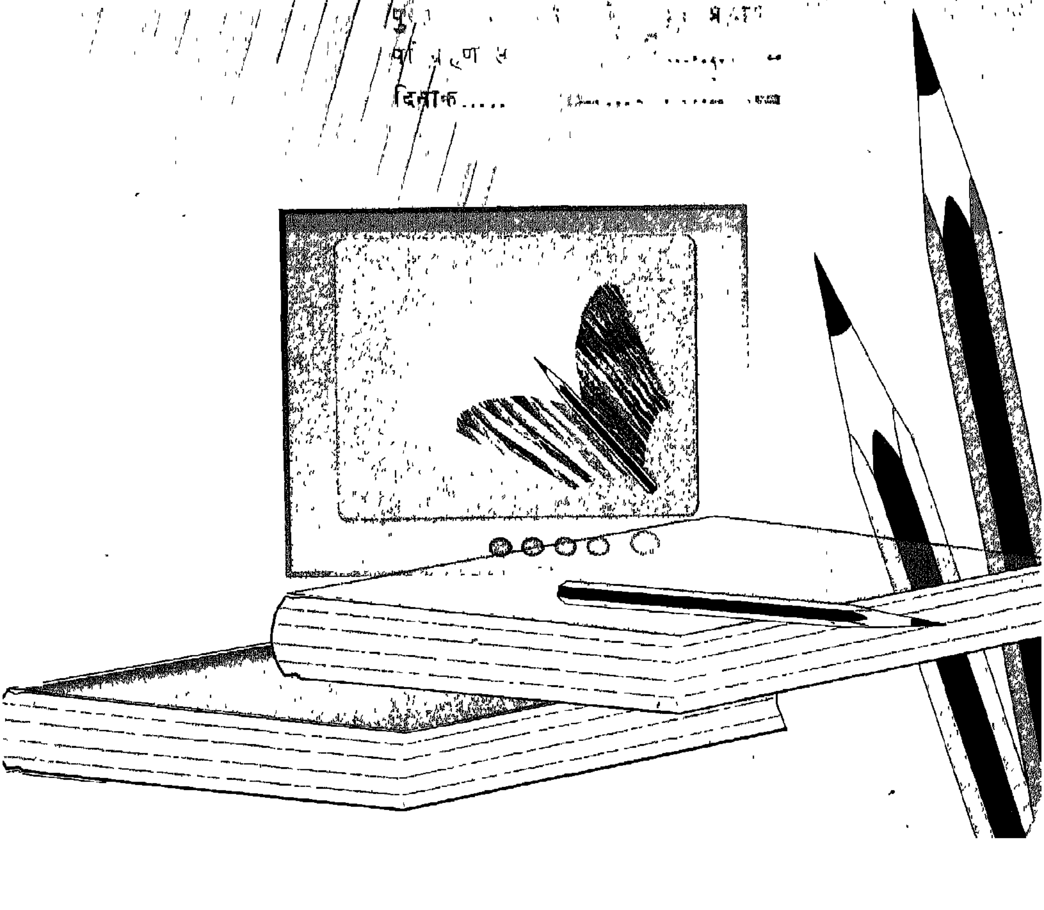
भारतीय आधुनिक शिक्षा

जनवरी 2003



भारतीय आधुनिक शिक्षा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् की एक त्रैमासिक पत्रिका है। इस पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है शिक्षको, शिक्षक-प्रशिक्षकों, शैक्षिक प्रशासकों तथा शोधकर्ताओं को एक मच प्रदान करना, शिक्षा के विभिन्न आयामो जैसे शिक्षादर्शन, शिक्षा मनोविज्ञान, शिक्षा की समकालीन समस्याएं, पाठ्यक्रम एव प्रविधि संबधी नवीन विकास, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा का स्वरूप, विभिन्न राज्यों में शिक्षा की स्थिति आदि पर मौलिक तथा आलोचनात्मक चितन को प्रोत्साहित करना और शिक्षा के सुधार और विकास को बढ़ावा देना। लेखकों द्वारा व्यक्त किए गए विचार उनके अपने हैं। अत· ये किसी भी प्रकार परिषद् की नीतियो को प्रस्तुत नहीं करते इसलिए इस संबध मे परिषद् का कोई उत्तरदायित्व नहीं है।

मूल्य एक प्रति · 8.50 रुपए   वार्षिक : 34.00 रुपए

भारतीय आधुनिक शिक्षा

वर्ग : 21 | अंक : 3 | जनवरी 2003

इस अंक में

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और
प्रशिक्षण परिषद् की ओर
से आप सभी को
नव वर्ष की
शुभकामनाएं!

□ जगमोहन सिह राजपूत

निदेशक

सीखने का आनन्द

❑ मन्दाकिनी चौरे

प्रशिक्षण में सीखने का आनन्द कहीं नहीं है। अतः प्रशिक्षण की नीरसता, एकरसता को खत्म करने के लिए मैंने 'सीखने का आनन्द' एक प्रोजेक्ट के रूप में लिया है जो कि पूर्णतः प्राथमिक शिक्षकों के लिए है। यहां पर प्रशिक्षणार्थियों को शाला के छात्रों के साथ भी प्रयोग कार्य करने के लिए कहा गया है।

आज यह सिद्ध हो चुका है कि पुस्तकीय शिक्षा से बालक का सर्वांगीण विकास सम्भव नहीं है। अत शिक्षा को व्यावहारिक एवं जीवनोपयोगी बनाने के लिए बच्चों को सीखने का आनन्द देना ही होगा।

मैं लगभग 24 वर्षो से एक शिक्षक प्रशिक्षक के रूप में कार्यरत हूं। अत इन प्रशिक्षण संस्थाओं मे जो इस समय प्रशिक्षण दिया जा रहा है वह सैद्धान्तिक व नीरस अधिक है, उबाऊ प्रशिक्षण है– चाहे यह प्रशिक्षण शिक्षण विधि का हो या विषय-वस्तु के ज्ञान देने के संबंध मे।

अत गत वर्षो से मेरे मन मे इन सस्थाओ की प्रशिक्षण पद्धति पर विचार मथन हो रहा है। मैं हमेशा यह महसूस करती रही हूं कि प्रशिक्षण सस्थाओ के प्रशिक्षण का तरीका अलग होना चाहिए।

- ❑ कक्षा शिक्षण विधि अधिकांशतः शहरी वातावरण के अनुसार दी जाती है जिसे शिक्षक अपने कार्य क्षेत्र मे उपयोगी नहीं मानते है।
- ❑ शिक्षक प्रशिक्षकों एव प्रशिक्षणार्थियों में आपस में सामजस्य का अभाव है।
- ❑ शिक्षक प्रशिक्षकों में कक्षा शिक्षण में व्याख्यान विधि अधिक है।
- ❑ यदि ईमानदारी से स्वीकारा जाए तो यह सत्य है कि हमारे शैक्षणिक प्रशिक्षण नीरस और उबाऊ हो गए है। प्रतिभागी या तो आना ही नहीं चाहते है या जो आते हैं उनमें सीखने की चाह के अतिरिक्त कुछ भी कारण हो सकते हैं।
- ❑ प्रशिक्षण मात्र औपचारिकता बनकर रह गया है।

डाइट स्तर पर दो प्रकार के प्रशिक्षणार्थी प्रशिक्षण प्राप्त करते है।

- पूर्व सेवाकालीन– जो कि 12वी कक्षा के बाद भर्ती होते है।
- सेवाकालीन शिक्षक– जो कि 12 दिन के लिए सस्थान में आते हैं।

मेरे विचार से उक्त दोनों प्रकार के प्रशिक्षणों में सीखने का आनन्द कहीं नही है। अत. प्रशिक्षण की नीरसता, एकरसता को खत्म करने के लिए मैंने सीखने का आनन्द, एक प्रोजेक्ट के रूप में लिया है जो कि पूर्णत प्राथमिक शिक्षको के लिए है। यहा पर प्रशिक्षणार्थियो को शाला के छात्रों के साथ भी प्रयोग कार्य करने के लिए कहा गया है।

सीखने के आनन्द का अर्थ

- ❑ शिक्षक को कक्षा मे अध्यापन करने की पूर्ण स्वतन्त्रता है।
- ❑ अध्यापन के समय शिक्षक सीखने का आनन्द छात्रों को दे सकता है।

- ☐ एक नई शैक्षिक एव सामाजिक क्राति इस प्रोजेक्ट से कर सकता है।
- ☐ कक्षा को खेलने और सीखने की आनन्द स्थली बनाते है।

"सीखने का आनन्द प्रोजेक्ट" – शिक्षकों का, शिक्षको के लिए, शिक्षको द्वारा विकसित एव संचालित प्रोजेक्ट है।

इससे उपलब्ध हैं–

- शिक्षको का सकल्प एव समर्पण,
- बच्चो का आकर्षण,
- कार्य करने के आनन्द की अनुभूति,
- सीखते समय उत्साह एवं आनन्द की अनुभूति होना।

बाल केन्द्रित शिक्षा के द्वारा सस्थान/विद्यालयो मे पढ़ने और पढाने की प्रक्रिया को रुचिकर और आनन्ददायी बनाने के लिए सीखने का आनन्द प्रोजेक्ट तैयार किया गया है।

प्रोजेक्ट का उद्देश्य

- ☐ प्रथम वर्ष के पाठ्यक्रम मे बाल केन्द्रित शिक्षा एवं शैक्षिक प्रौद्योगिकी मे नई तरह के अध्यापन की जानकारी देना।
- ☐ नई शिक्षण पद्धतियों का समुचित उपयोग सीखने के आनन्द के साथ करना।
- ☐ प्राथमिक शाला के शिक्षकों को अध्यापन में उत्साहित करना, शिक्षक उन्मुखीकरण कार्यक्रम मे बालक को केन्द्र मानकर क्रिया प्रधान मनोरंजक एव कौतुहलोन्मुखी गतिविधियो का किस प्रकार आयोजन करने का ज्ञान देना।
- ☐ सृजनात्मकता का विकास छात्रों मे पैदा करना है।
- ☐ कक्षा की समस्त गतिविधियो मे बालको की भागीदारी बढाने की विधि की जानकारी देना।
- ☐ शैक्षिक गुणवत्ता मे सुधार एवं सीखने-सिखाने की गतिविधियों मे परिवर्तन कर उन्हे ज्ञानवर्द्धक मनोरजक एव क्रिया प्रधान बनाकर आनन्ददायक बनाना।
- ☐ बच्चो के लिए रचनात्मक गतिविधिया– ● कल्पना एवं रचनात्मकता ● गीत ● नाटक ● विज्ञान पिकनिक ● विज्ञान खेल ● गणित का जादू ● जिज्ञासा मंच ● बाल मेला ● मनोरजक शैक्षिक खेल ● शैक्षिक खिलौने ● स्क्रेप बुक आदि से विधाओ का एक ऐसा वातावरण तैयार करना जिससे प्राथमिक शिक्षा के लिए माग पैदा कर सबके लिए शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त किया जा सके।

प्रोजेक्ट की व्यूह रचना

उक्त उद्देश्य की प्राप्ति के लिए व्यूह रचना दो चरणो में निर्धारित की गई है। प्रथम चरण प्रशिक्षण और द्वितीय चरण मेलो के आयोजन से सम्बद्ध है।

	प्रशिक्षण	*अवधि*	*आनन्द मेला*
1	प्रथम वर्ष एव द्वितीय वर्ष के छात्राध्यापको के लिए प्रशिक्षण कार्यशाला	1 सप्ताह (4 बार)	शालाओ मे जाकर सीखने के आनन्द का आयोजन करना (2 माह में 2 दिन)
2	सेवाकालीन शिक्षको हेतु प्रशिक्षण कार्यशाला	दो काल खण्ड	(शनिवार को)
3	50 छात्राध्यापकों को व्याख्यान विधि एवं अन्य विधि से प्रशिक्षण दिया	–	शिक्षको की ग्रामीण शाला में छात्राध्यापकों एव शिक्षको के साथ मिलकर

शाला का स्तर– कक्षा 1 से 5वी तक प्राथमिक शाला।

सीखने की आनन्द की गतिविधियां

"स्वर्गीय इन्दिरा गाधी तो स्वयं बच्चों की वानर सेना बनकर खेलते-खेलते, सीखने, पढ़ने-पढ़ाने का आनन्द अपने बचपन में किया करती थी और कहती थीं कि जो शिक्षा बच्चो को आनन्द न दे वह नीरस शिक्षा किस काम की।" इसी विचार से निम्न गतिविधियों का विकास किया गया है–

- ☐ विज्ञान के मनोरजक प्रयोग (कक्षा 4 व 5)
- ☐ गणित का जादू (वैदिक गणित से) (कक्षा 3 व 4)
- ☐ स्क्रैप बुक का निर्माण (कक्षा 4 व 5)
- ☐ मनोरंजक खेल (शैक्षिक खिलौने से) (कक्षा 1 से 5)
- ☐ अन्ताक्षरी (कक्षा 3 के लिए अध्याय 1)
- ☐ ओरोगामी (कागज के खिलौने बनाना– नाव, हवाई जहाज, फूल आदि)
- ☐ क्राफ्ट (कचरे से कला)
- ☐ माथा-पच्ची (खेल-खेल मे गुणा, पहाडे आदि)
- ☐ अभिव्यक्ति (भाषण तात्कालिक)
- ☐ जिज्ञासा मंच (बच्चों द्वारा)
- ☐ विज्ञान का जादू
- ☐ नाचकर अभिनय, सास्कृतिक कार्यक्रम
- ☐ शैक्षिक परिभ्रमण
- ☐ मिट्टी के खिलौने बनाना
- ☐ शैक्षिक खेल (मै कौन हू, जीवन जाल)
- ☐ पहेली मंच
- ☐ प्रश्न मच (छात्राध्यापको द्वारा)
- ☐ कविता बनाना सीखें (आओ कविता वनाएं)
- ☐ कार्टून बनाना
- ☐ चित्रकला– फूल से, पत्तो से
- ☐ पत्तियो का जादू
- ☐ कविता, कहानी पूरी करो
- ☐ शरीर को जानो
- ☐ किताबो की ओर
- ☐ रेखाचित्र बनाना (गिनती, अक्षर, आकृति से)
- ☐ सृजनात्मक परिचर्चा
- ☐ विज्ञान क्लब
- ☐ रोचक रेडियो वार्ता

उक्त सभी गतिविधिया किसी भी दो दिन शाला में जाकर छात्राध्यापको के साथ की गई जिनकी सख्या लगभग 50 थी। एक गतिविधि के लिए दो छात्राध्यापक थे एवं 5 शिक्षक प्रशिक्षक एवं 10 शाला के शिक्षकों ने मिलकर कार्य किया।

प्रोजेक्ट की कार्यशैली

(अ) आनन्द मेला की रूपरेखा (दो दिन)

गतिविधियों के आधार पर समय 4 घण्टे

गतिविधियो की सख्या	*शिक्षक प्रशिक्षको की संख्या*	*शिक्षको की सख्या*	*छात्राध्यापको की सख्या*	*छात्रो की सख्या*
25	05	10	50	250
या			(प्रत्येक गतिविधि में दो)	प्रत्येक गतिविधि मे 10
10	05	10	(छात्राध्यापक 50)	छात्र होगे 100

प्रत्येक गतिविधि के लिए समय इस प्रकार होगा

$$\frac{60 \times 4}{*\ 10} = 24 \text{ मिनट}$$

* गतिविधि संख्या

- गतिविधियों की सख्या कम भी हो सकती है।
- सीखने के आनन्द के लिए प्रथम चरण मे छात्राध्यापको को एक सप्ताह तक विभिन्न गतिविधियों से अवगत कराया एव कार्यशाला मे विभिन्न प्रकार की सामग्री अल्प लागत से तैयार करवाई गई।
- प्रशिक्षण कार्यशाला मे सगीत का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। छात्राध्यापक खेल-खेल मे सामग्री निर्माण के साथ सगीत का आनन्द भी ले रहे थे।
- प्रथम दो दिवस गतिविधियो मे लगने वाली सामग्री का सग्रह करवाया गया जो कि बिना मूल्य की या अल्प लागत सामग्री थी।
- प्रत्येक छात्राध्यापक ने सभी गतिविधियो में भाग लिया।
- अन्त मे सामूहिक चर्चा के आधार पर आने वाली कठिनाइयो पर विचार एवं निर्माण सामग्री का प्रदर्शन किया गया।
- परिभ्रमण मे सभी छात्राध्यापकों ने खुशी-खुशी भाग लिया जैसे शहर का ● कीर्ति संग्रहालय ● जन्तु घर ● चिकित्सा महाविद्यालय ● जन्तर-मन्तर ● ऐतिहासिक स्थान।
- द्वितीय चरण मे शाला जाकर आनन्द मेले की तैयारी की गई एव कमरो का नामकरण गतिविधियों के आधार पर किया गया।

(ब) प्रशिक्षण कार्यशाला का समय विभाग चक्र

- प्रथम दिवस – सीखने के आनन्द का अर्थ एव रूपरेखा सामग्री संग्रह
- द्वितीय दिवस – गतिविधियो की जानकारी एवं सामग्री सग्रह
- तृतीय दिवस – गतिविधि में सम्मिलित होना, कर के देखना
- चतुर्थ दिवस – सगीत के साथ-साथ स्क्रेप बुक का निर्माण
- पचम् दिवस – विज्ञान एव गणित के जादू का निर्माण
- षष्ठम् दिवस – कचरे से कला, सजावट की वस्तुओं का उपयोगी निर्माण
- सप्तम् दिवस – सभी गतिविधियो का प्रदर्शन एवं गीत

(स) चमत्कार एवं आनन्द मेला

सीखने के आनन्द में यह देखा–

- बारिश का सुहाना मौसम था। हरियाली प्रकृति विद्यार्थियो के उत्साह व मेले की शोभा को और बढा रही थी।
- मेले की आम धारणा से अलग शैक्षिक मेला नवाचार योजना के आदर्श और व्यावहारिक रूप को लिए हुए था।
- स्कूल के साथ-साथ आसपास के ग्रामो के स्कूल भी सम्मिलित थे।
- छात्राध्यापक एव कक्षा 4 व 5 के छात्र मॉनीटर कार्यक्रम का संचालन कर रहे थे। (बाल केन्द्रित शिक्षा का यही व्यावहारिक रूप है)
- 10 विभिन्न गतिविधियो, शैक्षिक खेलो के लिए 10 ग्रुप छात्रों के तैयार किए।
- 30 मिनट एक ग्रुप एक खेल को इसी क्रम से। समस्त खेलो में छात्रो ने अनुशासनबद्ध, उत्साह, जिज्ञासा, कल्पना, बाल सुलभ चेष्टाए भी कभी-कभी दिखाई दे रही थी।
- कुछ मॉनीटर छात्रो को रिपोर्ट का काम दिया था। उन नन्हे रिपोर्टर का उत्साह देखते ही बनता था।
- कुछ बडे छात्राध्यापक विज्ञान का जादू बताने मे अधिक उत्साह दिखा रहे थे।
- कहीं प्रश्न मच मे छात्र जाने को तैयार ही नहीं थे (क्योंकि छात्राध्यापक अपने अध्यापन के समय पाठ योजना के सिर्फ प्रश्न करते थे)
- शिक्षक एव छात्र पूरे आनन्द मेले की व्यवस्था का महत्वपूर्ण केन्द्र विन्दु थे।
- शिक्षक एवं छात्रो को अपनी शाला मे नवाचार, प्रयोग एव आनन्ददायी शिक्षण करने की स्वतन्त्रता मिली थी।
- छात्राध्यापक उत्साही थे क्योंकि उन्हें सैद्धान्तिक पक्ष की जगह व्यावहारिक कार्य करने को तत्काल मिला।

- ☐ छात्र सीखने का आनन्द लेने लगे।
- ☐ छात्रों को सीखने मे खुशी, स्वतन्त्रता और आनद का अनुभव हुआ।
- ☐ उस दिन शाला मनोरजक एव आकर्षक लगने लगी।
- ☐ शिक्षकों, छात्राध्यापको की प्रतिभा उनके कार्य को सम्मान छात्रो द्वारा मिला।

(द) ऐसा क्या करते है? आनन्द मेले में

- ☐ छात्राध्यापक, शिक्षक, छात्र शाला मे दीवार पर अपने-अपने चित्र, गीत बनाकर कक्षा को सजाते हैं। इससे मेले के दो दिन तक कक्षा स्वय बोलने और गानों से गूजने लगी।
- ☐ गीत, कहानी, पहेली, खेल आदि से शिक्षण सहायक सामग्री का निर्माण कर इनका उपयोग करते है।
- ☐ शिक्षण सहायक सामग्री अत्यंत सस्ती या बिना मूल्य की होती है जो स्थानीय स्रोतो और पर्यावरण से ही उपलब्ध की जाती है।
- ☐ छात्राध्यापकों एव शिक्षकों मे झिझक नही रही और वे छात्रो को सिखाने की क्रिया मे स्वय नाचते, गाते, नाटक करते, खेलते हुए शामिल होते गए।
- ☐ छात्रो के मन से सीखने का डर समाप्त हो गया और वे समूह बनाकर खेल-खेल मे सीखने का आनन्द लेने लगे।
- ☐ शिक्षकों एवं छात्रो मे आपसी सहयोग की तत्परता का वातावरण बनता गया।

(इ) शैक्षिक खेल

(विज्ञान के मनोरंजक खेल)

- इन्द्रधनुष के रंग बनाना— आइने को पानी के अदर रखते है एव सूर्य के प्रकाश के सामने 45^0 तिरछा रखकर इन्द्रधनुष के रग दीवार पर प्राप्त करते है।
- अन्य ग्रुप विज्ञान के नए प्रयोग देख, सीख और प्रयोग कर रहे थे— छात्र ही प्रश्न के उत्तर दे रहे थे जैसे (सिक्का पानी में डालने पर बीचों-बीच क्यो नही जाता है)
- रिफिल से फव्वारा कैसे बनता है।

(गणित के जादू)

लुका छिपी करने वाली सख्याए

- तीन अंकों का चमत्कार— तुम्हारे जोड, घटाव का उत्तर मेरे पास है जैसे— कोई-सी तीन अको की सख्या ले लो, जैसे 112 अव इसे उल्टा लिखो 211, छोटी संख्या घटा दो 211−112 = 099 अब इस सख्या को उल्टा लिखो और जोड दो 090 + 999 = 1089 इसी प्रकार अन्य सख्याओं पर भी कर सकते है लेकिन विसम सख्या नही होनी चाहिए जैसे 101, 252।
- मुझे तुम्हारी उम्र मालूम है? जैसे 100 मे से अपनी उम्र घटाकर मुझे बताओ क्या आया? जैसे 100−12 = 88। तुम्हारी उम्र 12 वर्ष है।
- वैदिक गणित से गुणा, भाग, वर्ग निकालने का तरीका— उन संख्याओ का गुणा जिनमे इकाई अक 5 न हों इन सख्याओ के गुणा का आधार 10 या 100 मानकर किया जाता है जैसे — 100 कम 98 × 98 = 9604
  यहा पर 98, 100 से 2 कम है अत. 2 × 2 = 04 अब 98 मे दो कम करके 96 को सैकडे और हजार के स्थान पर लिखे। (कक्षा मे अध्यापन भी कर सकते हैं)

गुप्त सख्या का पता होना जैसे मुझे तुम्हारे नोट का नम्बर पता है।

- अपने नोट का नम्बर लिख लें (मुझे न बताए)।
- नोट के नम्बर को दो गुणा कर दे।
- जो फल आए उसे 5 से गुणा कर दें।
- परिणाम मुझे बताए।
- जो सख्या आए उसके अन्त का शून्य हटाकर सख्या बता दे। जैसे— 7 × 2 = 14, 14 × 5 = 70 उत्तर 7 है।

(माथा पच्ची)

- पजल्स— माचिस की तिलियों को जोड़ने से नई आकृतिया तैयार करना।
- शब्दों को उलट-पलट कर ठीक शब्द बनाना।
- लकडी के खिलौने के भाग को जोडना।
- खेल-खेल मे पहाड़े बनाना/गुणा करना।
- ☐ आरोगामी— कागज के खिलौने तैयार करना

जैसे–नाव, दवात, जहाज आदि।

1. कविता, कहानी पूरी करो– अधूरी कविता, कहानी को पूर्ण करो, चित्रो के आधार पर कहानी बनाओ।
2 चित्रकला– कागज पर रग, टूथब्रश से स्प्रे पेंटिंग, धागो से चित्र बनाए गए।
3 पत्तियों का जादू – ग्रीटिंग कार्ड पर पत्तियो को या शादी के निमन्त्रण पत्र पर इस प्रकार से चिपकाया गया कि उसमे लडकी, लडका, पक्षी, पशु के आकार दिखाई दे रहे थे।
4 शरीर को जाने– जैसे शरीर के अंगो को पहचान सकेगा, गीत गाकर शरीर के अंगो का वर्णन करना।
5 शैक्षिक खेल– एक ग्रुप गोल घेरे में बैठकर टेलीफोन का खेल-खेल रहा था तो दूसरा समूह मै कौन हूं? खेल रहा था।
6 अत्याक्षरी– इसमे दो ग्रुप होते हैं। प्राकृतिक/अप्राकृतिक

एक ग्रुप मानव निर्मित वस्तुओ का	दूसरा ग्रुप मानव ने निर्मित नहीं की ऐसी वस्तुओं का
1. कलम	1 मछली
2. लड्डू	2. डाली
3 लट्टू	3. टमाटर
4 रस्सी	4 सियार आदि वस्तुएं
अप्राकृतिक अजीवित वस्तुए खेलते-खेलते सूची बन जाती है	प्राकृतिक जीवित वस्तुए

प्रोजेक्ट की शिक्षण पद्धति

- स्क्रेप बुक का निर्माण एव अध्यापन
- सृजनात्मक परिचर्चा करके
- वैदिक गणित के द्वारा
- शैक्षिक खिलौने के द्वारा (सभी विषयों का)
- रोचक समस्या प्रस्तुत कर (वैज्ञानिक दृष्टिकोण)
- रोचक क्रियाकलाप द्वारा
- परिभ्रमण पर ले जाकर
- पहेली द्वारा– शैक्षिक खेल
- जिज्ञासा/प्रश्न मंच द्वारा
- चित्र द्वारा अन्य प्रणाली

प्रोजेक्ट पद्धति की कुछ विशेष शर्ते

- ☐ उक्त अध्यापन विधिया कक्षा शिक्षण के लिए हैं। यहां पर शिक्षक समय-समय पर छात्रो के अनुरूप सीखनें का आनंद द्वारा गतिविधियां करवा सकता है।
- ☐ सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली का मूल आधार छात्र एवं शिक्षक है। मुझे विश्वास है कि सीखने की प्रक्रिया अधिक रोचक तव होती है जब वह शिक्षक और छात्र दोनो के लिए नए अनुभवों पर आधारित हो।
- ☐ इन शिक्षण पद्धतियो मे शिक्षक प्रशिक्षक की भूमिका सूचनाओ के आदान-प्रदान करने वाली नहीं, अपितु एक ऐसे मार्गदर्शक, सहायक की है जो सीखने की प्रक्रिया को सुगम वनाता है और शिक्षक व छात्र के सम्मिलित प्रयास को प्रेरित करता है।
- ☐ प्रश्नो का उत्तर ज्ञात हो यह जरूरी नहीं है। कई अवसरों पर शिक्षक एवं छात्र मिलकर प्रश्न पूछ सकते है। छात्रो को प्रेरित करें कि वे इन प्रश्नों के उत्तर कैसे प्राप्त कर सकते हैं। इस बात पर भी महत्व दिया जाता है कि सभी प्रश्नो के उत्तर अभी ज्ञात नही हैं। ऐसे अनेक ज्ञान क्षेत्र हैं जिनका अध्ययन निरीक्षण होना शेष है।
- ☐ पद्धतियो को इस प्रकार विकसित किया गया है कि विद्यार्थी अवलोकन और अन्वेषण की ओर प्रवृत्त होकर मानव प्रकृति के मध्य विद्यमान अन्तर्सम्बन्धो को समझ सके।

स्क्रेप बुक से अध्यापन

जब हम बाल केन्द्रित शिक्षा की बात करते हैं तो आवश्यक हो जाता है कि बच्चो के साथ स्थानीय परिवेश में उपलब्ध सामग्री से गतिविधिया सचालित की जाएं ताकि बच्चों मे आत्मविश्वास बढ सके।

बाल केन्द्रित शिक्षा का एक प्रमुख लक्ष्य विद्यार्थियों को स्वक्रिया तथा अध्यापन की प्रेरणा देना है। इस दृष्टि से स्क्रेप बुक का विशेष महत्व है। स्क्रेप बुक मे छात्र समाचार-पत्रो से महान व्यक्तियों के चित्र, चित्र कथाएं, पर्यावरण सम्बन्धी चित्र आदि कतरनो का सग्रह करते हैं। फिर इन चित्रो को ग्राफ कापी या ड्राइंग

कापी में क्रमबद्ध रूप से चिपकाते हैं। चित्रो के नीचे शीर्षक या नारे के रूप मे लिखना सिखाया जाता है।

अध्यापन कैसे करे— सबसे पहले छात्रो को चार की टोली में विभाजित करें। फिर विभिन्न विषय-वस्तुओ से सम्बन्धित स्क्रेप बुक छात्रो मे वितरित कर उन्हे स्व-अध्ययन करने दें। उसके पश्चात् छात्रो को समूह मे एकत्रित करें, परिचर्चा करवाएं कि उनकी टोली ने कौन-सी स्क्रेप बुक का अध्ययन किया है।

इस प्रकार छात्र स्वक्रिया से विभिन्न विषयो का अध्ययन कर सकते हैं। इस संस्थान के प्रथम वर्ष के छात्रों ने लगभग 50 स्क्रेप बुक का निर्माण किया है। उनके विषय निम्नलिखित है— ● भारत दर्शन ● उज्जैन दर्शन ● प्रदूषण— जल, ध्वनि, हवा ● भारत के स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी ● भारत के महान नेता ● सजीव वस्तुएं ● जन्तुओ का जीवन चक्र ● कृषि यंत्र ● ऐतिहासिक इमारते ● स्वच्छता ● पौष्टिक आहार ● व्यजन प्रविधिया ● घर की सजावट ● शैक्षिक खेल ● पर्यावरण और प्रदूषण ● भारत मां के अमर शहीद ● इन्दिरा गाधी ● भोजन के बारे में उपयोगी जानकारी ● भारत के कुछ प्रसिद्ध मन्दिर एव पर्यटन स्थल ● विचित्र जन्तुओ की जानकारी ● भारतीय इतिहास के सितारे ● पुष्प सज्जा ● राजपूत कालीन इमारते ● स्वच्छता आदि। छात्रो के समूह प्रतियोगिता के रूप में भी यह कार्य किया जा सकता है।

इस प्रकार स्क्रेप बुक, शिक्षण मे बाल केन्द्रित उपागम अपनाने का माध्यम बन सकती है।

सर्जनात्मक परिचर्चा करके

शिक्षक क्या करे? इस पद्धति मे कक्षा मे एक ही तरह के प्रश्नों की वजाय विविधार्थी प्रश्न करते हैं।

प्रौढ आतक से मुक्त होकर छात्रो के साथ सहज होते हैं छात्रो को चुनौती, कौतुहल, बैचेनी से उकसाते है। छात्रो को प्रश्न करने व चुनौती देने की अनुमति देते हैं जैसे — सोचिए एवं उत्तर खोजिए?

ऐसे प्रश्न जिनके कई विकल्पों में उत्तर हो सकते हैं, बहुत सहायक होते है।

★ रोटी गोल ही क्यो बेली जाती है?
★ सक्के अक्सर गोल ही क्यो बनाए जाते है?
★ यदि पृथ्वी पर वृक्ष न हो तो क्या होगा?
★ शिक्षक को अगर पूछ हो तो क्या होगा?
★ आखे अगर सिर के पिछले भाग मे होती तो क्या होगा?
★ हम यदि हरे रग के हों तो?
★ शाला में यदि प्राचार्य न हो तो ?
★ यदि आपकी कक्षा के लिए शिक्षक नही रखा जाए तो आप पढाई के लिए क्या करेगे?
★ नाखुन में काटे हो तो क्या होगा?
★ क्या होगा यदि मानव शरीर में कोई हड्डी न हो?
★ कितना पानी पीने योग्य है?
★ चन्द्रमा पर पानी का उपयोग कैसे करेगे?
★ आश्चर्यजनक पदार्थ पृथ्वी पर कौन-सा है?
★ पेड़ों पर पत्तिया चमकीली हो तो?
★ तेल एवं जल में समानता/असमानता क्या है?
★ बीजो के अंकुरित होने के कारण क्या है?
★ हृदय की धडकन की वृद्धि के कारण क्या हैं?
★ आप शिक्षा मत्री वन जाओ तो क्या करोगे?
★ कोरा कागज हो, रग न हो तो चित्र कैसे वनाएंगे?
★ वीज बोने से फसल तैयार होने तक जो समय लगना है, अगर वह आधा हो जाए तो क्या होगा?
★ आग लगने पर क्या करेगे?
★ विद्यालय में साफ पानी पीने की व्यवस्था के लिए क्या करेगे?
★ शाला का समय निश्चित न हो तो?
★ शाला में घन्टी न बजे तो?
★ वाल नेता भी बने तो?

वैदिक गणित के द्वारा

गणित जैसे कठिन विषय को सरल एव मनोरंजक ढग से प्रस्तुत करने के लिए मैने वैदिक गणित का सहारा लिया है। जैसे — कक्षा 3, 4, 5 में गुणा करते समय

100 तक पहाडे याद रखना जरूरी होता है। यहां पर वैदिक गणित की विशेषता है कि सिर्फ 5 तक पहाड़े के आधार पर हजारों लाखो का गुणा, भाग सरलता से करते हैं। उदाहरण 12×13 का गुणा करना है तो यहा 10 को आधार मानकर गणना करते है। सख्या अधिक होने पर जोड़ते है एव कम होने पर घटाते हैं 12 अक 10 से 2 ज्यादा है एवं 13 अक 10 से 3 ज्यादा है। अत 12 + 2 एवं 13 + 3 कोई एक भाग को जोड़े एवं इकाई अंक का आपस मे गुणा करेगे। उत्तर 156।

वर्ग निकालने की क्रिया

जिसमे अन्तिम सख्या 5 हो वहा "एकाधिकेन पूर्वेण" अर्थात् दहाई की संख्या मे एक जोडना है। फिर जोड राशि मे उसी दहाई सख्या का गुणा करना है।

जैसे 5^2 का 25 है। यह मालूम होना चाहिए 15^2 निकालने का तरीका इस प्रकार होगा 5^2 का 25 पहले लिख देना है। फिर दहाई की सख्या जोड़ना है। 1 + 1 फिर जोड़ राशि में दहाई का गुणा करना है। 2 × 1 = 2 को सैकडे के स्थान पर लिखना है। इस प्रकार छात्र मौखिक रूप से दो सख्याओं का वर्ग हल कर सकता है।

उदाहरण ● $15^2 = 225$ ● $25^2 = 625$

अन्तिम संख्या 0 हो तो छात्रो से कहे कि दो शुन्य पहले लिख दे फिर दहाई की संख्या को दोगुना कर के लिखें

उदाहरण $10^2 = 100$, $20^2 = 400$ आदि

तीन अंक का वर्ग निकालना

"दावद्नम ताव दूनीकृत्य वर्गम् च योंजनेत"

जैसे $985^2 = 970225$ यहा आकर 1000 को मानेंगे 1000-985 = 15 कम हैं। कम सख्या का वर्ग रखकर फिर इसी कम सख्या को सम्पूर्ण मूल सख्या मे से घटाकर रख देंगे। जैसे 15 कम सख्या आई है इसका वर्ग 225 फिर 15 कम सख्या को 985 मे से घटाना 970 संख्या है अतः उत्तर 970225 है।

$94^2 = 8836$ उक्त नियम से करेगे 100-94 = 6 6^2 2 के वर्ग 36 94–6 = 86 उक्त गणित के हल करने मे सीखने का आनन्द प्राप्त होता है। छात्र बार-बार क्रिया को करना चाहता है।

शैक्षिक खिलौने द्वारा

यहा पर छात्राध्यापको द्वारा हिन्दी, गणित, सामाजिक अध्ययन, विज्ञान के शैक्षिक खिलौने तैयार किए गए है।

जैसे – हिन्दी मे दो, तीन, चार शब्दो को रखकर शब्द चक्र बनाया है। इसकी सहायता से छात्र शब्दों को आपस में जोड़कर घुमाकर सम्वन्ध स्थापित करता है।

● शुद्ध चक्र– तीन चक्रो में है।

● वाक्य चक्र– इसमे दो चक्र है। एक में संज्ञा एवं दूसरे मे क्रिया (आदेश) दी गई है। छात्र दोनों चक्रो को घुमाकर 256 बार वाक्यो की रचना करता है एव शैक्षिक खिलौने से सीखने का आनन्द प्राप्त करता है।

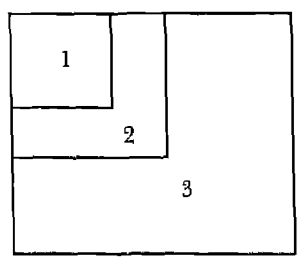
● टू इन वन चक्र– एक तरफ सज्ञा, विशेषण है दूसरी तरफ सज्ञा, क्रिया हैं।

● विज्ञान कक्षा 4– स्वअधिगम (पोषक तत्व) चक्र इसमें विटामिन की जानकारी रोचक ढंग से प्रस्तुत की गई है।

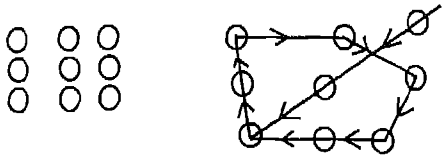
इस चक्र में अलग-अलग खिड़कियो से विटामिन का प्राप्ति स्थान, कमी से होने वाले रोग, अधिकता से होने वाले रोग आदि का पता छात्र स्वय लगा लेता है। इस प्रकार विज्ञान की जानकारी रोचक/मनोरजक ढग से लेता है।

रोचक समस्या प्रस्तुत कर (वैज्ञानिक दृष्टिकोण का आधार)

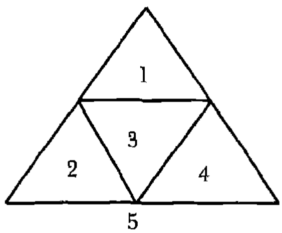
● आठ सीधी रेखाओं से तीन वर्ग बनाना।



● नौ बिन्दुओं को सीधी रेखा मे जोडे, न पेन्सिल को उठाए न दोहराए



● तीन त्रिभुजो को इस तरह से रखो कि वे पांच हो जाएं।



● मेरा आयतन कैसे ज्ञात करेंगे? (क्षेत्रफल के द्वारा, पानी की टंकी में डुबोकर आदि)

● मैंने एक सप्ताह में निम्नानुसार दूरदर्शन का कार्यक्रम देखा बताओ मैंने कितने घण्टे खर्च कर दिए संख्या कार्यक्रम

1/3 घण्टे DD1 देखा, 6 घण्टे दो फिल्मे देखीं

1/5 घण्टे मेट्रो चैनल देखा

1/6 घण्टे जी टीवी देखकर

1/4 घण्टे एटीएन देखा तो कितने घण्टे कार्यक्रम देखा (100, 120)

● किसी दैनिक घटना को रोचक समस्या के रूप मे प्रस्तुत कर परिचर्चा कर सकते हैं।

रोचक क्रियाकलाप द्वारा

विज्ञान मे इसका उपयोग अधिक हो सकता है।

- नमक मे आयोडीन की मात्रा है इसका पता कैसे लगाएगे।
- विभिन्न खाद्य पदार्थो मे मिलावट का पता लगाना।
- रुमाल को पानी के अन्दर इस तरह डुबोना है कि वह गीला न हो (सामग्री ● बाल्टी ● ग्लास ● रुमाल) (2 मि.)
- बिना आलू और चाकू को घुमाए आलू काटना (साथ में सामग्री कागज दिया हुआ है) (2 मि.)
- बोतल में गुब्बारा फुलाना है
- आलपिन या ब्लेड को पानी मे तैराना है। (कागज साथ मे दिया है) (2 मि.)
- आलू पर छेद करना है। (स्ट्रा साथ मे है 30 मि.)
- खराब अण्डा कौन-सा है। (नमक का पानी साथ मे है) (5 मि.)
- सिर के बाल गिनने का कोई तरीका सोचो (साथी का सिर, कंघा) (1 महीना)
- ऐसा प्रयोग बताएं कि शरीर मे रक्त सचरण क्रिया हो रही है।
- पौधे मे संवेदनशीलता कैसे होती है? प्रयोग सुझाव 1 सप्ताह
- शरीर मे लगभग कितनी हड्डिया होती है? (गिनकर बताना है)

परिभ्रमण पर ले जाकर (अवलोकन)— छात्रो को सड़क पर चलने वाले वाहनों का अवलोकन अलग-अलग समय पर करवाया गया। सड़क पर होने वाले वायु, ध्वनि प्रदूषण का ज्ञान तालिका से छात्रों ने किया

निष्कर्ष— 75% वाहन वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण प्रति 30 मिनट में करते है एवं सडक पर जगह भी अधिक घेरते है। 25% वाहन वायु, ध्वनि प्रदूषण नहीं करते है। उक्त प्रयोग में छात्रो ने बहुत रुचि ली।

शैक्षिक खेल

मै कौन हू ? सभी छात्रों को गोल घेरे में बैठने को कहना फिर एक छात्र को जन्तु का नाम देकर पहचानने को कहना। वह पाच प्रश्न जन्तुओ के बारे मे करेगा एवं स्वयं पता लगाएगा कि वह कौन-सा जन्तु बना था जैसे हाथी बनाने पर छात्र प्रश्न करेगा एव उसके साथी सिर्फ हा/ना मे उत्तर देगे—

1	क्या मै पानी में रहता हूं?	नहीं
2	क्या थल मे रहता हूं?	हां
3.	क्या मेरे चार पैर है?	हां
4	क्या मेरा रग काला है?	हा
5	क्या मेरी सूड है?	हा

समय 10.30 से 11.00 प्रातः

क्र. सं	वाहन का नाम	संख्या	धुआं छोडती है	शोर करती है	जगह ज्यादा घेरती है	प्रतिशत
1	साइकिल	25	×	×	×	12 5%
2	टैम्पो	50	✓	✓	✓	25.0%
3.	स्कूटर	50	✓	✓	✓	25.0%
4.	रिक्शा	50	✓	✓	✓	25 0%
5.	कार	10	×	×	✓	05 0%
6	ट्रक	15	✓	✓	✓	07 5%
वाहनों की सख्या		200				100%

तो मुझे हाथी बनाया गया था।

इस खेल मे छात्रों को सीखने का आनन्द बहुत आता है।

आओ कविता बनाएं

कविता बनाने के पहले शान्त मन से प्रकृति को निहारे फिर किसी जन्तु को देखे। कविता इस प्रकार बनाने का प्रयास करें।

- पहले जन्तु का नाम एक शब्द से लिखें (संज्ञा)-
- दूसरी पक्ति मे दो शब्द मे उस जन्तु की विशेषता लिखें (विशेषण)----
- तीसरी पंक्ति में उस जन्तु के क्रियाकलाप लिखे (क्रिया) ----
- चौथी पक्ति मे उस जन्तु के बारे मे आपके क्या विचार है (भावार्थ) ---
- पाचवी पक्ति में उस जन्तु का दूसरा नाम एक शब्द में लिखें (पर्यायवाची) ---

जैसे हाथी

मोटा काला

झूम के चलता

राजा की सवारी

बैठने को मन करता

गजराज

इस प्रकार खेल-खेल में अन्य प्रकार की कविता भी कर सकते है। कविता बनाने मे छात्रो को सीखने का आनन्द बहुत आता है।

जीव विज्ञान मे जन्तु एव वनस्पाते की रोचक जानकारी छात्र कविता स्वय बनाकर लेते है। जब तक छात्रो को कविता बनाना नही आता था तब तक छात्र जन्तु की जानकारी ठीक से नहीं रखते थे। लेकिन जन्तु के ऊपर कविता करना छात्राध्यापको को बहुत अच्छा लगा एव जीवो की जानकारी कविता के माध्यम से बहुत अच्छी तरह से रखते है।

जीव विज्ञान विषय मे रुचि लेने लगे। छात्र अपनी अभिव्यक्ति कविता के माध्यम से भी कर सकते हैं। वे कविता बनाना जल्दी सीख जाते है।

प्रोजेक्ट की उपयोगिता (कार्य योजना)

- ☐ प्राथमिक स्तर के शिक्षको को शालाओं में पर्यावरणीय अध्ययन विषय शिक्षण मे कुशल शिक्षण हेतु अवलोकन, तर्क, तुलना, विधि का अच्छा अभ्यास प्राप्त हुआ।
- ☐ सृजनात्मक परिचर्चा मे नए-नए उत्तर उभर कर सामने आए, जिससे छात्राध्यापको को सीखने में आनन्द की अनुभूति प्राप्त हुई।

अधिगम प्रतिफल

आनन्द मेले की गतिविधियों के वर्गीकरण की तालिका 1

क्र. सं	गतिविधियों के नाम	छात्राध्यापको मे अधिगम प्रतिफल	पाठ्यक्रम अध्यापन विधि	विवरण
1	विज्ञान के मनोरजक खेल	इनसे अवलोकन, तर्क क्षमता का विकास होता है।	नई अध्यापन विधि	प्रयोग प्रदर्शन कर सकता है।
2	परिभ्रमण पर जाना		परिभ्रमण विधि	
3	माथा-पच्ची	जिज्ञासा, रुचि का विकास होता है।		प्रदूषण की जानकारी अवलोकन
4	शैक्षिक खेल		खेल-खेल में शिक्षा	गणित को सरल कर अध्यापन किया जाता है।
5.	वैदिक गणित	तर्क शक्ति, जिज्ञासा रुचि का विकास गणित में होता है।	आगमन-निगमन विद्या, अन्वेषण विद्या	
6.	चित्रकला	इनसे कलात्मक कौशल का विकास होता है।	स्व अधिगम से अध्यापन कर सकते हैं।	स्क्रेप बुक बनाना सीखते हैं।
7	आरोगामी			
8	स्क्रेप बुक बनाना			
9.	कविता, कहानी, गीत	इनसे छात्रों में साहित्य पठन एवं लेखन में कौशल का विकास होता है।	व्याख्यान, गद्य, पद्य, विद्या का विकास हुआ	अभिव्यक्ति ठीक से कर सकता है।
10	सृजनात्मक परिचर्चा	सृजनात्मकता का विकास हुआ।	परिचर्चा	—

- ☐ जिज्ञासा शक्ति का विकास हुआ।
- ☐ वैदिक गणित की व्याख्या सुनिश्चित होने पर जहां प्रसन्नता का अनुभव व गौरव की प्राप्ति हुई, वहीं नई जिज्ञासा का जन्म होने से भावी चिन्तन तथा अवलोकन के लिए आधार मिला।
- ☐ परिभ्रमण पर जाने से छात्रो में पर्यावरण की वास्तविक जानकारी वैज्ञानिक विधि से आनन्ददायी स्थिति में सीखी।
- ☐ छात्राध्यापकों मे छिपी प्रतिभा को उभारने का अवसर मिला।
- ☐ छात्रों में छोटी वस्तुएं बनाने का आत्मविश्वास व कौशल का विकास हुआ।
- ☐ समूह में काम करने की भावना का विकास हुआ।
- ☐ बाल केन्द्रित शिक्षा का व्यावहारिक स्वरूप छात्रो को आनन्द मेले मे भागीदार बनकर ही समझ मे आया।

- ☐ आनन्द मेले का सचालन छात्रों के साथ मिलकर छात्राध्यापको एवं शिक्षको– दोनों ने किया।
- ☐ स्क्रेप वुक का निर्माण कर स्वयं छात्राध्यापकों ने अध्यापन कार्य किया।
- ☐ स्थानीय व कम लागत वाली सामग्री का निर्माण कर इसका उपयोग किया।
- ☐ प्रतियोगिता नही होने के कारण छात्राध्यापक समूह भावना से कार्य करना सीख गए।
- ☐ प्रश्न मंच का आयोजन कर कक्षा में छात्राध्यापको ने अध्यापन का तरीका सीखा।
- ☐ विज्ञान अध्यापन में अंताक्षरी का उपयोग कर सकते है।
- ☐ प्राथमिक शिक्षक एवं छात्राध्यापक भविष्य मे अपने-अपने कार्य क्षेत्र मे "सीखने के आनन्द" को अपना सकेंगे।

प्रोजेक्ट का परीक्षण

इस प्रोजेक्ट के परीक्षण हेतु प्रथम वर्ष के 25 छात्राध्यापक एवं द्वितीय वर्ष के 25 छात्राध्यापको को चुना गया। इस प्रकार दो समूह मे छात्राध्यापकों को विभाजित किया गया–

- ☐ प्रायोगिक समूह– 50 छात्राध्यापक
- ☐ अप्रायोगिक समूह– 50 छात्राध्यापक

प्रायोगिक समूह

● इस समूह के 50 छात्राध्यापकों को 20 प्राथमिक शिक्षको सेवाकालीन के लिए 12 दिन हेतु संस्था मे प्रशिक्षण के लिए आते हैं के साथ "सीखने का आनन्द" का 1 सप्ताह तक प्रशिक्षण दिया गया। इस प्रशिक्षण में प्रोजेक्ट की विशेष गतिविधियों एव शिक्षण पद्धतियों से अवगत कराया गया।

● 50 छात्राध्यापकों को ★ स्क्रेप बुक का निर्माण करना सिखाया गया ★★ दैनिक गणित से गुणा, वर्ग निकालना सरल विधि एवं मनोरजक विधि से समझाया गया ★★★ सृजनात्मक परिचर्चा समूह मे करवाई गई। ★★★★ शैक्षिक खिलौने, परिभ्रमण आदि विधाओं से अवगत कराया गया फिर इन पद्धतियों का परीक्षण प्राथमिक शाला में 100 बच्चो पर किया गया।

● आनन्द मेले का सचालन पूर्णत स्रोत पुरुष के रूप में छात्राध्यापक एव शिक्षकों ने किया। यह कार्य माह में दो वार किया गया।

अप्रायोगिक समूह (नियन्त्रित समूह)

● इसमे 50 छात्राध्यापको को सीखने के आनन्द का प्रशिक्षण नहीं दिया गया, 10 प्राथमिक शिक्षकों को भी प्रशिक्षण नही दिया गया।

● ये प्रतिदिन परम्परागत विधियो से कक्षा में प्रशिक्षण लेते रहे।

● इन्हे व्याख्यान विधि, प्रदर्शन विधि द्वारा कक्षा अध्यापन कराया गया कि आनन्द मेला कैसा लगता है? क्या होता है?

● सैद्धान्तिक पक्ष को 1 सप्ताह तक अप्रायोगिक समूह (नियन्त्रित समूह) के समक्ष रखा गया, दोनो समूहों का अवलोकन किया गया तव छात्राध्यापको के व्यवहार में निम्न परिवर्तन देखने को मिले।

निष्कर्ष

उक्त अध्ययन से निष्कर्ष निकला कि "सीखने के आनन्द" प्रोजेक्ट से–

● छात्राध्यापको ने सीखने के आनन्द में ज्यादा रुचि ली।

● सीखने का आनन्द वास्तव मे अच्छा, सही सीखने का एक तरीका है। वैदिक गणित से कम समय मे सवाल मौखिक रूप से करते हैं।

● सृजनात्मक गतिविधियों से छात्राध्यापक कई शिक्षण विधाओ से स्वयं ही अवगत हुए।

● सृजनात्मक परिचर्चा में उन्हे वहुत ही आनन्द आया एवं छात्रों के साथ स्वयं करके देखा तथा अनुभव किया।

सुझाव

- ☐ इस प्रकार के अन्य विषयो पर भी प्रोजेक्ट का क्रियान्वयन किया जा सकता है एवं आनन्द मेला ग्रामों मे लगाकर छात्रों को सृजनशील बना सकते हैं।
- ☐ छात्रों मे शाला के प्रति रुचि विकसित कर सकते है।

तालिका 2

प्रोजेक्ट के दोनों समूह (प्रायोगिक समूह एवं अप्रायोगिक समूह) के अधिगम प्रतिफल (व्यवहारों में परिवर्तन) निम्न थे

क्र.स	*प्रायोगिक समूह*		*अप्रायोगिक समूह*
1	हमेशा जिज्ञासु एवं सक्रिय रहे।	1	सक्रिय नही रहे।
2	"सीखने का आनन्द" ले रहे थे एवं खुशी-खुशी सभी कार्यो को सम्पन्न करा रहे थे।	2.	निष्क्रिय रूप से कक्षा मे अध्ययन कर रहे थे।
3	गतिविधियो की तैयारी सृजनात्मक रूप से कर रहे थे।	3.	कार्य का मौका नही मिला, अतः सुस्त थे।
4	वैदिक गणित मे रुचि ले रहे थे कि उन्हे यह छात्रों को बताना है।	4	सिर्फ सीख रहे थे। (रुचि नही थी)
5	सीखने के प्रति अति उत्साह प्रदर्शित कर रहे थे।	5	सीखते समय चिढ़ रहे थे कि उन्हें आनन्द मेले मे क्यों नही लिया गया।
6	आनन्द मेले मे सक्रिय रूप एव मनोरजक ढग से छात्रो के साथ व्यस्त थे।	6	नाराज होकर आनन्द मेले का अवलोकन कर रहे थे। (उन्हें मौका नही मिला इसलिए)
7	आत्मविश्वास के साथ अध्यापन कार्य छात्रों के साथ कर रहे थे।	7.	अध्यापन कार्य में तनाव महसूस कर रहे थे।
8	वैदिक गणित से गुणा वर्ग के सवाल मौखिक रूप से जल्दी कर रहे थे। (3 मिनट में)	8	गुणा वर्ग के सवाल 10 मिनट तक हल नही कर सके।

तालिका 3

वर्ग	प्रायोगिक समूह महिला/पुरुष	समूहों की संख्या नियन्त्रित समूह महिला/पुरुष
प्रथम वर्ष 95	25 = 14 + 11	25 = 12 + 11
द्वितीय वर्ष 95	25 = 20 + 5	25 = 15 + 10
प्राथमिक शिक्षक	20	10

मूल्यांकन

दोनों समूहों की औसत अभिव्यक्ति निम्न थी।

तालिका 4

3 प्रश्न 15 मिनट में समय 1 घण्टा प्रश्न समूह-4 पूर्णांक 100

	प्रायोगिक समूह द्वारा प्राप्तांक	अप्रायोगिक समूह द्वारा प्राप्ताक	विवरण दोनो समूहों मे
पूर्व-परीक्षण	40	40	अभिव्यक्ति समान थी
पश्च-परीक्षण	65	55	सृजनात्मक अभिव्यक्ति अच्छी है सीखने के आनन्द के कारण

तालिका 5

दोनों समूहों की सृजनात्मक विकास की प्रतिशत तालिका

क्र सं	*समूह*	*सृजनात्मक विकास का प्रतिशत*	*विवरण*
1.	नियन्त्रित समूह	22%	प्रायोगिक समूह मे सीखने के आनंद से सृजनात्मकता का विकास ज्यादा अच्छा हुआ है।
2.	प्रायोगिक समूह	40%	

अनुवर्तन

शिक्षको का शालाओं मे जाकर अवलोकन किया गया कि अध्यापन बहुत अच्छा करते है।

□□

डाइट
दशहरा मैदान, उज्जैन
मध्य प्रदेश

शिक्षा का माध्यम– एक विवेचन

❐ कमलेश कुमार चौधरी

हिन्दी एक ऐसी भाषा है, जो भारत में सर्वाधिक लोगों व सबसे बड़े भू-भाग की भाषा है। हिन्दी सशक्त एवं समृद्ध भाषा है। इसे राष्ट्रभाषा होने का भी गौरव प्राप्त है। अतः समस्त भारतीय भाषाओं में यही वह भाषा है जिसको वर्तमान समय में समग्र भारत में सम्पर्क भाषा के रूप में विकसित किया जा सकता है तथा उन क्षेत्रों में जहां के निवासियों की मातृभाषा अथवा प्रादेशिक भाषा हिन्दी नहीं है, वहां भी इसे शिक्षा के माध्यम के रूप में विकसित किया जा सकता है। एतद् निमित्त अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में प्राथमिक स्तर पर कक्षा तीन तक की शिक्षा मातृभाषा में दी जाए। कक्षा तीन से ही हिन्दी को अनिवार्य विषय के रूप में पाठ्यक्रम में स्थान देकर कक्षा छः से धीरे-धीरे हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाने की ओर अग्रसर होना चाहिए। माध्यमिक स्तर से समूचे देश में शिक्षा का माध्यम हिन्दी भाषा होनी चाहिए।

भारत एक ऐसा देश है, जहां विभिन्न जाति, धर्म, सम्प्रदाय एवं भाषा-भाषी लोग रहते है। भारत के सविधान में हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा प्राप्त है, परन्तु संविधान लागू होने के लगभग 52 वर्षो के उपरान्त भी हिन्दी जनभाषा का वह मुकाम हासिल नही कर सकी है जिसकी कल्पना सविधान निर्माताओ ने की थी। इतिहास पर दृष्टिपात करने से विदित होता है कि "भारत मे जब आर्य आए तो उन्होने इस देश में राष्ट्रभाषा की परम्परा डाली और सस्कृत भाषा शैक्षिक, सांस्कृतिक और प्रशासनिक कार्यो के लिए प्रयोग की जाने लगी। लगभग दसवीं शताब्दी तक संस्कृत भाषा ही मुख्य भाषा रही।" इसी प्रकार जब मुस्लिम देश मे आए तो वे अपने साथ परशियन और अरेबिक भाषाएं लाए, परन्तु इन भाषाओ का प्रयोग केवल प्रशासन की भाषा के रूप मे तथा सामाजिक, सास्कृतिक और साहित्यिक क्रियाकलापो के लिए मुस्लिम राज्यो तक सीमित रहा। अग्रेजों के आगमन के साथ अग्रेजी ने इन भाषाओं का स्थान ग्रहण कर लिया। सस्कृत भी दूसरी भाषाओ के साथ साहित्यिक, सास्कृतिक और धार्मिक क्षेत्रो मे प्रयुक्त होती रही। मुस्लिम और ब्रिटिश काल मे बहुत-सी भारतीय भाषाए यथा–हिन्दी, उर्दू, ब्रज भाषा इत्यादि भी विकसित हुई।

वर्तमान में भारत बहुभाषी राष्ट्र है। अग्रेजो के भारत छोडने के पश्चात् भी अंग्रेजी का प्रयोग प्रशासन और शिक्षा आदि क्षेत्रो में होता रहा है। परिणामतः हमारी विविध मातृभाषाओ के विकास का मार्ग प्रशस्त न हो सका। "भारत मे संविधान की आठवीं अनुसूची के अनुसार 18 प्रमुख भाषाए है। ये है–असमिया, बगला, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़, कश्मीरी, कोकणी, मलयालम, मणिपुरी, मराठी, नेपाली, उडिया, पजाबी, सस्कृत, सिन्धी, तमिल, तेलुगू व उर्दू।" ये भाषाए भारत की सम्पूर्ण जनसख्या के लगभाग 90 प्रतिशत से अधिक लोगो की है। इससे स्पष्ट होता है कि शेष लगभग 10 प्रतिशत लोगों की भाषाए, इन भाषाओ के अतिरिक्त हैं। ऐसे मे इस बहुभाषी राष्ट्र में कौन-सी भाषा ऐसी है, जो शिक्षा के माध्यम

के रूप में राष्ट्र हित मे सर्वाधिक उपयुक्त हो सकती है और देश की एकता और विकास का मार्ग प्रशस्त करने मे समर्थ होगी, यह एक चिन्तन का विषय है। एतद् निमित्त लेखक द्वारा शिक्षा के सम्बन्ध मे गठित प्रमुख आयोगों एव समितियों के शिक्षा के माध्यम के विषय मे दिए गए सुझावो का अवलोकन करने का प्रयास किया गया है, जिसका विवरण निम्नवत है—

- मैकाले (1835) ने अपने विवरण पत्र मे अंगेजी के माध्यम से पाश्चात्य ज्ञान और विज्ञान की शिक्षा का समर्थन किया है। उसने कहा कि "अंग्रेजी पश्चिम की भाषाओ मे भी सर्वोपरि है। जो व्यक्ति अग्रेजी भाषा जानता है, वह उस विशाल ज्ञान भण्डार को सुगमता से प्राप्त कर लेता है, जिसकी विश्व की सबसे बुद्धिमान जातियो ने रचना की है।"
- वुड (1854) ने अपने घोषणा पत्र मे "शिक्षा के माध्यम के रूप में अग्रेजी के साथ-साथ भारतीय भाषाओ को भी प्रतिष्ठित किया। समिति के मतानुसार सार्वजनिक शिक्षा केवल भारतीय भाषाओं के माध्यम से सफलतापूर्वक सम्पन्न की जा सकती है और अग्रेजी शिक्षा का ज्ञान उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए आवश्यक था। पाश्चात्य साहित्य तथा विज्ञान के उच्च ज्ञान के लिए भी अंग्रेजी भाषा का माध्यम आवश्यक था। अत समिति ने दोनों प्रकार की भाषाओ की समुचित शिक्षा व्यवस्था का शिक्षा सस्थानो मे होने का सुझाव दिया। समिति ने यह भी सुझाव दिया कि पाश्चात्य ज्ञान विज्ञान की शिक्षा दोनो ही भाषाओं अर्थात् भारतीय और अंगेजी में होना चाहिए।"
- राष्ट्रीय आन्दोलन (1905-1921) के समय देश के नेताओं ने घोषित किया कि "राष्ट्रीय शिक्षा में भारतीय भाषाओ के अध्ययन पर बल दिया जाना चाहिए और उन्ही भाषाओ को शिक्षा का माध्यम बनाया जाना चाहिए।" महात्मा गाधी ने भी यग इण्डिया में प्रकाशित अपने लेख में कहा कि अग्रेजी विदेशी भाषा होने के कारण वास्तविक ज्ञान प्रदान नही कर सकती है।
- राधाकृष्णन आयोग (1948-49) ने सुझाव दिया कि "शिक्षा का माध्यम अग्रेजी के बजाय प्रादेशिक भाषाए होना चाहिए, पर सघीय भाषा (हिन्दी) को शिक्षा का माध्यम होने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। सघीय भाषा के लिए केवल देवनागरी लिपि का प्रयोग किया जाना चाहिए और इस लिपि के दोषों को यथा शीघ्र दूर किया जाना चाहिए।"
- कोठारी कमीशन (1964-66) ने सुझाव दिया कि "प्रादेशिक भाषा को सभी स्तरो पर शिक्षा का माध्यम बनाया जाए। साथ ही 10 वर्ष की अवधि में इन भाषाओ को विश्वविद्यालय स्तर पर शिक्षा के माध्यम के रूप में ग्रहण कर लिया जाए।"
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) की समीक्षा समिति रिपोर्ट (1990) में उद्धृत किया गया है कि "ग्रामीण छात्र उच्च शिक्षा की ओर प्रवृत्त नहीं हो पाते। इसका एक गम्भीर कारण यह भी है कि आज भी अगेजी भाषा का प्रभुत्व चल रहा है। इसलिए समानता की मांग है कि शिक्षा के सभी स्तरो पर शिक्षा के माध्यम के रूप मे क्षेत्रीय भाषाओ को प्रोत्साहित किया जाए। इसके लिए क्षेत्रीय भाषाओं के रूप मे माध्यम परिवर्तन के लिए न केवल राजनीति तथा शैक्षणिक प्रतिबद्धता ही आवश्यक है अपितु सरकारी तथा निजी क्षेत्र की सेवाओं में भर्ती के लिए क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से परीक्षा लेने या कम से कम विश्वविद्यालय में परीक्षा देने के लिए इन भाषाओं का विकल्प चुनने की स्वतन्त्रता देने, समुचित अध्ययन-अध्यापन सामग्री, संदर्भ साहित्य तैयार करने समेत इन भाषाओ को प्रोत्साहित करने के गम्भीर उपाय करने की आवश्यकता है।"
- विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2000) मे कहा गया है कि "बच्चों में बौद्धिक, संवेगात्मक और आध्यात्मिक विकास के लिए मातृभाषा सर्वाधिक महत्वपूर्ण माध्यम है। जिन छात्रो की मातृभाषा क्षेत्रीय भाषा है, वहां वहीं की भाषा विद्यालयी भाषा के सभी स्तरों या कम से कम प्राथमिक स्तर के अन्त तक शिक्षा का माध्यम

होगी। जहां छात्रो की मातृभाषा राज्य या क्षेत्र की भाषा से अलग है वहा क्षेत्रीय भाषा को तीसरी कक्षा और उसके आगे के स्तर से माध्यम के रूप मे अपनाया जा सकता है।"

शिक्षा के माध्यम के सम्बन्ध मे विभिन्न समितियों एवं आयोगों की उपर्युक्त सस्तुतियों से विदित होता है कि मात्र मैकाले के विवरण पत्र मे एकमात्र केवल अंग्रेजी भाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप मे प्रस्तुत किया गया है। वुड के घोषणा-पत्र में अगेजी एवं भारतीय भाषाओं, दोनो को ही शिक्षा के माध्यम के रूप मे प्रस्तुत किया गया है। शेष अन्य सभी समितियो एवं आयोगो ने मातृभाषा अथवा प्रादेशिक भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाए जाने का सुझाव दिया है। इन सुझावों के बावजूद भी वर्तमान समय मे अपने देश मे प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा के स्तर पर शिक्षा के माध्यम के रूप मे अंग्रेजी का वर्चस्व कायम हो गया है और यह वर्चस्व निरन्तर बढता ही जा रहा है, यह एक विडम्बना है। लेखक यहां यह स्पष्ट कर देना चाहता है कि वह अंग्रेजी भाषा और साहित्य के अध्ययन-अध्यापन का विरोधी नही है किन्तु शिक्षा के माध्यम के रूप मे अग्रेजी को अपनाए जाने के पक्ष में भी नही है। कारण सुविदित है— विद्यार्थी की समझ, अवबोध, उसकी प्रतिक्रियाए, सृजनात्मकता, अभिव्यक्तिया, चिन्तन और विश्लेषण सभी कुछ अधिकतम मातृभाषा के माध्यम से ही विकसित होती हैं। अपनी मातृभाषा से हर व्यक्ति का लगाव भी जग जाहिर है, परन्तु ऐसे देश मे जहा 18 भाषाओं को सवैधानिक मान्यता प्राप्त हो, इन सभी को शिक्षा के समस्त स्तरो पर शिक्षा के माध्यम के रूप में समर्थन करना, समूचे देश के लोगो को आपस में विचारो के आदान-प्रदान से वंचित करना होगा। दूसरी ओर विचारणीय बिन्दु यह है कि अगर अंग्रेजी भाषा शिक्षा के सभी स्तरो पर शिक्षा का माध्यम हो सकती है तो कोई भारतीय भाषा इस स्थान पर क्यों नहीं प्रतिष्ठित हो सकती है। एतद् निमित्त आवश्यकता जनमानस में एक ऐसा भाव जागृत करने की है, जिससे लोग भाषा-विवाद से ऊपर उठकर राष्ट्र हित में किसी एक भारतीय भाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप में अपनाने हेतु तैयार हो सकें।

सभी भारतीय भाषाओं पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि हिन्दी एक ऐसी भाषा है, जो भारत मे सर्वाधिक लोगों एवं सबसे बडे भू-भाग की भाषा है। हिन्दी सशक्त एव समृद्ध भाषा है। इसे राष्ट्र भाषा होने का भी गौरव प्राप्त है। अतः समस्त भारतीय भाषाओ मे यही वह भाषा है जिसको वर्तमान समय में समग्र भारत में सम्पर्क भाषा के रूप में विकसित किया जा सकता है तथा उन क्षेत्रों मे जहां के निवासियो की मातृभाषा अथवा प्रादेशिक भाषा हिन्दी नही है, वहा भी इसे शिक्षा के माध्यम के रूप मे विकसित किया जा सकता है। एतद् निमित्त अहिन्दी भाषी क्षेत्रों मे प्राथमिक स्तर पर कक्षा तीन तक की शिक्षा मातृभाषा मे दी जाए। कक्षा तीन से ही हिन्दी को अनिवार्य विषय के रूप मे पाठ्यक्रम मे स्थान देकर कक्षा 6 से धीरे-धीरे हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाने की ओर अग्रसर होना चाहिए। माध्यमिक स्तर से समूचे देश में शिक्षा का माध्यम हिन्दी भाषा होना चाहिए।

कुछ लोगो का यह तर्क कि भारतीय भाषाएं इतनी समृद्ध नही है कि उनके माध्यम से उच्च ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा दी जाए, यह एक अनर्गल प्रलाप के अतिरिक्त और कुछ प्रतीत नही होता है। ऐसा वे लोग ही कहते हैं जिन्होंने अग्रेजी माध्यम से पढ़ा है और राजकीय/केन्द्रीय सेवाओ मे अपना प्रभुत्व चाहते हैं। कोई भी देश अपनी राष्ट्रभाषा को जनभाषा के रूप में स्थापित किए बिना, राष्ट्र की एकता, प्रगति एव राष्ट्रीय सम्मान को अक्षुण्य नहीं रख सकता। चीन, जापान और रूस ने अपनी भाषाओं के माध्यम से शिक्षा का सम्पादन किया और आज ये देश विश्व के विकसित एव शक्तिशाली राष्ट्रों की श्रेणी में गिने जाते है। अत: भारत के लिए अंग्रेजी की अपरिहार्यता क्यो? यह एक विचारणीय प्रश्न है। एतद् निमित्त आवश्यकता मात्र दृढ़ राजनीतिक इच्छा शक्ति से निर्णय लेने एव संकल्पबद्धता के साथ उसके क्रियान्वयन की है। हिन्दी भाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप में स्थानापन्न हेतु प्रस्तुत सुझाव निम्नवत है—

- सभी प्रतियोगी परीक्षाओ का आयोजन हिन्दी भाषा में भी हो।
- प्रतियोगी परीक्षाओ मे अग्रेजी के प्रश्न-पत्र की अनिवार्यता को समाप्त कर उसके स्थान पर हिन्दी का प्रश्न-पत्र अनिवार्य किया जाए।
- सरकार अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा प्रदान करने वाले विद्यालयो के स्थान पर हिन्दी भाषा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करने वाले विद्यालयो को मान्यता एवं वित्तीय सहायता प्रदान करने मे उदारता बरते।
- सरकारी एव निजी सस्थाओं मे हिन्दी में कार्य करने वाले अधिकारियों एवं कर्मचारियों को अतिरिक्त वेतन वृद्धि देकर लोगो को हिन्दी अपनाने हेतु आकर्षित किया जाए।
- हिन्दी मे विभिन्न विषयों की मौलिक पाठ्यपुस्तको की रचना एवं प्रकाशन हेतु विशेष उपक्रम किया जाए।
- सभी विषयों की दूसरी भाषा में उपलब्ध मानक पुस्तको के हिन्दी अनुवाद की व्यवस्था की जाए।
- सरकार द्वारा हिन्दी माध्यम से संगोष्ठियों एवं कार्यशालाओं के आयोजन को प्राथमिकता के आधार पर अनुदान प्रदान किया जाए।
- सरकार एव प्रशासन में उच्च पदो पर आसीन लोगो द्वारा विभिन्न अवसरों पर होने वाले सम्बोधन हिन्दी में ही हो।
- जनसामान्य द्वारा जन आन्दोलन के माध्यम से अग्रेजी माध्यम के स्कूलों के सचालकों/ प्रधानाचार्यो से पूछा जाए कि जब सभी शिक्षाविद् एव मनोवैज्ञानिक इस तथ्य पर एकमत हैं कि बालक मातृभाषा के माध्यम से सर्वाधिक विकास करते है, ऐसी स्थिति में वे शिक्षा के माध्यम के रूप मे अंग्रेजी का समर्थन क्यो कर रहे हैं। इस तर्क के आधार पर शिक्षा के माध्यम के रूप में अग्रेजी के वर्चस्व को खत्म करने के लिए उन्हें तैयार किया जाए।
- राजनीति में उच्च पदस्थ लोगों के विदेशो मे हिन्दी किन्तु अपने देश मे अग्रेजी में सम्बोधन की दोहरी प्रवृति की तरफ ध्यान आकृष्ट किया जाए। इन सभी प्रयासों से जन सामान्य मे हिन्दी अपनाने हेतु अनुकूल वातावरण बनेगा। फलत. शिक्षा के माध्यम के रूप में हिन्दी, अंग्रेजी का स्थान ग्रहण करने मे समर्थ हो सकेगी। □□

शिक्षा विभाग
एम.जे.पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय
बरेली, उत्तर प्रदेश

अधिगम के इन्द्रधनुषी रंग
एक अभिनव प्रयोग

❑ नलिनी पाटिल

इस अभिनव प्रयोग की नित्य नवीन क्रिया उनकी जिज्ञासा, ज्ञान पिपासा की तृप्ति का आह्लादकारी एवं मनोरंजन का साधन बनी। छात्र प्रतिदिन प्रयोगकर्ता शिक्षिका की अधीरता से प्रतीक्षा करते पाए गए। पालकों ने इस कार्य में अपने बालकों का साथ दिया। उनके द्वारा दी गई कुछ कतरनें जब स्क्रेप बुक में चिपकाई गई उस समय उन छात्रों के मुख एक विशिष्ट तृप्ति का भाव लिए प्रफुल्लित हो कर दमक रहे थे। छात्रों की खोज प्रवृति के विकास की चरम सीमा देखकर मैंने दातों तले उंगली दबाई जब एक छात्र ने कहा कि मैडम "पिंक सिटी" जयपुर है तो अपना भोपाल "श्वेत नगर" है यह मुझे पेपर के लिफाफे बनाते समय एक स्थान पर उस पेपर में पढ़ने को मिला।

सामान्य जानकारी

1. शाला का नाम — शासकीय रवीन्द्रनाथ टैगार प्राथमिक शाला, टी टी. नगर, भोपाल मध्य प्रदेश
2 कक्षा — चतुर्थ
3 विषय — हिन्दी भाषा, असंज्ञात्मक पक्ष विकास
4. लिंग — बालक/बालिका
5 आयु-वर्ग — 10 वर्ष से 12 वर्ष
6. सख्या — बालक 33 बालिका 34 योग 67
7 जाति

क्र.स	जाति वर्ग	बालक	बालिका	योग	विशेष
1	अजा	14	16	30	
2	अजजा	01	03	04	
3	पिछडा	07	06	13	
	योग	22	25	47	71%
4	सामान्य	11	09	20	29%
	योग	33	34	67	

8 समयावधि — 3 अक्तूबर, 94 से 14 नवम्बर, 94 (40 दिन)

9	समारोह प्रस्तुति दिनाक वार	12 नवम्बर, 94 शनिवार
10	सामाजिक एव आर्थिक स्थिति	कक्षा मे अध्ययनरत छात्रो मे बालक एव बालिकाओ की संख्या लगभग समान है।

अनुसूचित जाति, अनु जन जाति एव पिछडे वर्ग के 71% छात्र हैं जो झुग्गियों में निवास करते हैं। जिनके माता-पिता निरक्षर है। जिनकी औसत उपस्थिति 60% से 65% तक रहती है। कठिनाई से बालक/बालिकाए शाला आ सकते है। परिवार की आर्थिक स्थिति उनके शाला आने में बहुत बड़ी रुकावट है। कचरे के ढेर मे कागज, पन्नियां खोजने वाले बालक अपने लिए शैक्षिक साधन और शाला मे आने हेतु समय नहीं जुटा पाते।

अधिकाश बच्चों के पिता ठेला चलाना, मजदूरी करना या कपडे धोने का काम करते है। माताएं कचरा बीनना, घर-घर में बर्तन-झाड़ू, कपड़े धोना आदि कार्य करती है। घर मे शैक्षिक वातावरण नहीं है। पुस्तके पढने के स्थान पर उन्हे अपने छोटे-छोटे भाई-बहनो को सभालना अथवा माता-पिता के बाहरी कार्यो में उनका साथ देना पडता है।

उपर्युक्त सामाजिक और आर्थिक परिवेश मे पले/बढ़े बालक/बालिकाओ मे भी ज्ञानात्मक प्रतिभा है। उनकी रुचियां और अभिरुचियां भी है जो प्रतिभा प्रस्फूटन और अभिरुचियों के विकास के अवसर खोजने ही शाला आते है।

समस्या

छात्रों के पास पाठ्यपुस्तकें एव कापिया आदि का अभाव है। ऐसी स्थिति में हिन्दी विषय पढना, लिखना व समझाना उनके लिए एक दुष्कर कार्य है। यह कटु सत्य शिक्षिका (प्रयोगकर्ता) के सामने उस समय आया जब सस्थान की ओर से दक्षता मूल्यांकन हेतु कक्षा 4 मे प्रवेश किया। पुस्तकों के अभाव में छात्र सुनता है एव रटता है। सोचना, समझना, चितन-मनन, सूझबूझ, भावानुभूति एवं कल्पनाशीलता का विकास छात्रो में नही हो पाता। इन सब के अभाव मे समानान्तर चलने वाला ज्ञान, खोज एव नैतिक उत्थान अवरुद्ध हो जाता है। कथन, भाषण, विचारो की प्रस्तुति गायन आदि का क्षेत्र बालसभा एव सास्कृतिक क्रियाकलापो तक ही सीमित तथा कुछ चुने हुए छात्रो की धरोहर बन कर रह जाती है। शिक्षण एक बोझिल, नीरस, उबाऊ प्रक्रिया बन जाती है। प्रतिभा प्रस्फुटन के मार्ग अवरुद्ध हो जाते है। छात्र आत्महीनता एव कुठा से ग्रसित होते है।

उद्देश्य

प्रस्तुत प्रयोजना के उद्देश्य उपर्युक्त समस्या को ध्यान मे रखकर (1) मध्य प्रदेश शासन, स्कूल शिक्षा विभाग द्वारा विहित पाठ्यक्रम 1993 एवं (2) भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मत्रालय (शिक्षा विभाग) द्वारा गठित समिति की रिपोर्ट, "प्राथमिक स्तर पर न्यूनतम अधिगम स्तर", राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, अगस्त 1991 के आधार पर निर्धारित किए गए।

मध्य प्रदेश शासन, स्कूल शिक्षा विभाग के पाठ्यक्रम 1993 मे अकित पृष्ठ 68 पर कक्षा 4 के लिए हिन्दी शिक्षण के विशिष्ट उद्देश्य।

विशिष्ट उद्देश्य

- ☐ शब्द भडार मे वृद्धि।
- ☐ विचार, भाव, तथ्य, घटना, स्थानीय परिवेश आदि पर प्रभावपूर्ण ढंग से वार्तालाप करना।
- ☐ अर्थ की गहराई समझने के लिए मौन वाचन की आदत डालना।
- ☐ बाल-साहित्य को पढ़ने की अभिरुचि जागृत करना।
- ☐ स्वास्थ्य संबधी नियम, अच्छी आदतें, महापुरुषो और वैज्ञानिको की जीवनी से उभरे जीवन-मूल्यो के प्रति आस्था उत्पन्न करना।

- ☐ व्याकरण सम्मत मानक भाषा के प्रयोग की आदत डालना।
- ☐ अपने स्तर के उपयुक्त किसी बात को सुन पढ़कर समझना तथा उसके विषय मे प्रश्न करने की क्षमता का विकास करना।
- ☐ सद्वृत्तियों का विकास—बड़ो का आदर, आज्ञा-पालन, समय पर काम करना, स्वच्छता, श्रम के प्रति आस्था, नियमो का पालन, सत्य बोलना, सद्व्यवहार, सवेदनशीलता, सहिष्णुता आदि नैतिक मूल्यों का रोपण करना।

इसके साथ ही विभिन्न कौशल—श्रवण कौशल, वाक् एव वाचन कौशल का विकास करना भी सह उद्देश्य रहा।

- ☐ प्राथमिक स्तर पर न्यूनतम अधिगम स्तर, भारत सरकार के मानव ससाधन विकास मंत्रालय (शिक्षा विभाग) द्वारा गठित रिपोर्ट, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद्, अगस्त 1991 में अकित अध्याय 3 भाषा मे न्यूनतम अधिगम स्तर पृष्ठ 15 पैरा प्रथम तृतीय पक्ति में लिखित भाषा के प्रमुख नौ कौशल—सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना, सुनकर एव पढकर विचारो को समझना, व्यावहारिक व्याकरण, स्व-अधिगम, भाषा-प्रयोग और शब्द भडार पर अधिकार आदि।
- ☐ वाल केन्द्रित शिक्षण से हिन्दी शिक्षण को स्वातः सुखाय वनाना। आनंदानुभूति करते हुए ज्ञानार्जन करना।
- ☐ खोज प्रवृत्ति का विकास करना।
- ☐ सकलन की आदत डालना।
- ☐ संगीत एवं चित्रकला में निहित सौन्दर्य का रसास्वादन करने की क्षमता विकसित करना।
- ☐ चित्रांकन द्वारा अभिव्यक्ति एव कल्पना शक्ति का विकास करना।
- ☐ निरुपयोगी वस्तुओं का सदुपयोग करना सीखना।
- ☐ सुन्दर एव सजावट के महत्व को समझना।

कार्य-कारण संबंध

निरीक्षण के दौरान देखा गया कि छात्रों मे हिन्दी भाषा के प्रति उदासीनता का कारण अध्यापन के समय केवल पाठ्यपुस्तक का ही उपयोग करना है। अत बालक उतने मनोयोग से अध्ययन नही करते क्योंकि यह पाठ्यपुस्तक से अध्यापन शिक्षक केन्द्रित विधि बन जाती है। फलत वालकों को भावानुभूति नही हो पाती एवं भावार्थ समझने मे कठिनाई होती है।

उपकरण और अधिगम संसाधन का आकलन और उपलब्धता

- ☐ हिन्दी पाठ्यपुस्तक बाल भारती भाग-4 (वर्ष 1993)
- ☐ पाठो से सबधित स्क्रेप बुक क्र. 1 से 7
- ☐ भारत माता की परिकल्पना हेतु वेशभूषा, शृंगार प्रसाधन एव मुकुट।
- ☐ भारत का लघु मानचित्र (निरुपयोगी ड्राईग शीट का वना हुआ)।
- ☐ तिरगा ध्वज।
- ☐ शूरवीरों के चित्र—झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, राणा प्रताप, शिवाजी आदि।
- ☐ शरीर के अवयवों का चित्र।
- ☐ वन्य पशुओ के चित्र।
- ☐ विभिन्न गीत।
- ☐ महापुरुषों के प्रेरक एव जीवनी (संक्षिप्त) कथन, सुविचार की पेपर पत्रिका से काटी गई कतरने।
- ☐ रग भरो— समाचार पत्र से काटी गई कतरने।
- ☐ महापुरुषों की उपाधिया (लिखित अंश)।
- ☐ देश पहचानो— कुछ लिखित वाक्य।
- ☐ + एवं 0 के सकेतो से चित्र अपनी कल्पनाशीलता एवं सूझबूझ से बनाने हेतु— बु. प्र प्रमाण-पत्र के प्रशिक्षणार्थियों के पाठ योजना की निरुपयोगी शीट्स जो एक तरफ कोरी हो।

परिकल्पना

समाचार-पत्र एवं पत्रिकाए बड़ो के लिए ही नहीं बच्चों

के लिए भी ज्ञानवर्धक हैं। इस महत्व को स्पष्ट करना। समाचार-पत्र केवल एक राजनीतिक, सामाजिक एव आर्थिक समाचारो के प्रसारण का साधन ही नहीं अपितु बालको के ज्ञानवर्धन, मनोरंजन व शैक्षिक प्रसार तथा आत्म विशलेषण का साधन है, यह बोध कराना।

- ☐ शैक्षिक अधिगम सामग्री "अमूल्य से अनमोल" सहज ही बन जाती है। यह प्रयोग द्वारा सिद्ध करना।
- ☐ विभिन्न कौशलो एवं दक्षताओ का विकास सरलता से एव सहजता से किया जा सकता है। यह अवधारणा सुस्पष्ट करना।
- ☐ स्व-अधिगम सामग्री की ओर आकर्षित करना।
- ☐ शिक्षण स्वप्रयासों से सरलतम हो सकता है। इस धारणा को सिद्ध करना।
- ☐ पाठों मे निर्दिष्ट पात्र एवं जीव-जन्तुओ का जीवन दर्शन काल्पनिक नहीं अपितु अटल सत्य है। इसका बोध कराना।
- ☐ थोड़ी मेहनत, कल्पनाशीलता, सूझबूझ, धैर्य एवं साहस से "सब संभव है" की पुष्टि करना।
- ☐ जिन खोजा तिन पाइयां को सार्थक स्वरूप प्रदान कर अधिगम की अवधारणा छात्रो के मन मस्तिष्क मे सुस्पष्ट करना।

कार्य योजना

प्रथमत शिक्षार्थियों से उनकी रुचि, समझ, कल्पनाशीलता के अनुसार समाचार-पत्र, पत्रिकाओ से विभिन्न कतरने मगाई गई। शिक्षार्थियो से कतरनों के कुछ अशों को पढवाया गया। चुने हुए कुछ अंशों एवं गीतों को देखकर विभिन्न मुहावरे, कहावते, चुटकुले एव पहेलियो को उनकी याददाश्त स्मरण शक्ति के आधार पर लिखने के लिए कहा गया। गीतो को पढने-गाने का प्रयास किया गया। तदुपरान्त (तदृंतर) इनकी त्रुटियो एवं कठिनाईयों को दूर करने हेतु एव अधिगम प्रक्रिया को बाल केन्द्रित बनाने हेतु सुनियोजित कार्यक्रम प्रारभ किया गया।

क्रियान्वयन

3 अक्तूबर, 94 से यह प्रायोजना शासकीय रवीन्द्रनाथ टैगोर प्राथमिक शाला, टी.टी नगर, भोपाल (म प्र.) के कक्षा 4 के छात्रो पर कार्यान्वित की गई।

छात्रो को उनकी हिन्दी की पाठ्यपुस्तक बाल भारती भाग-4 का प्रथम पाठ पद्य— "मातृभूमि" पढने के लिए कहा गया। छात्रो ने उसे साधारण गद्य रूप में पढा। तत्पश्चात् वही कविता प्रयोगकर्ता शिक्षिका ने उन्हें लयबद्ध गाकर सुनाई। छात्र गद्‌गद् एव भाव विभोर हो गए। उस समय पद्य की प्रत्येक पक्ति के भावानुरूप उनके चेहरे पर उतार-चढाव स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहे थे। कविता का भावार्थ शिक्षार्थियो के बोलते चेहरों पर स्पष्ट रूप से दमक रहा था। उनसे वही कविता दोबारा पढने के लिए कहा तो वे सामूहिक सस्वर एव भावविभोर होकर गाने लगे। अपने आप मातृभूमि की वंदना में उनके हाथ अनायास ही जुड गए। इसी मुद्रा में प्रायोजन के समापन दिवस पर उन्होंने "भारतमाता" के सम्मुख खडे होकर संपूर्ण कविता लयबद्ध गाकर प्रस्तुत की।

छात्र सही, सुस्पष्ट वाचन, सस्वर गायन करे, भावानुभव, चिंतन, मनन करें एवं मौन वाचन का अभ्यास करें इस उद्देश्य से उन्हें अनवरत रूप से मार्गदर्शन दिया गया।

- ☐ छात्रो द्वारा लाई गई एवं स्वयं काटकर लाई गई समाचार-पत्र, पत्रिकाओ की कतरनो को एकत्र कर उनका समय-समय पर प्रयोग किया गया।
- ☐ प्रयोग द्वारा इन कतरनो का सबंध हिन्दी विषय से जोडकर उनकी उपयोगिता सिद्ध की गई।
- ☐ कतरनो का विषयवार वर्गीकरण करके उन्हे अधिक समय तक सुरक्षित रखने एव बार-बार प्रयोग मे लाने हेतु स्क्रेप बुक मे चिपकाया गया।
- ☐ स्क्रेप बुक बनाने हेतु बी.टी सी के प्रशिक्षणार्थियो द्वारा प्रयोग की गई पाठ योजना की निरुपयोगी शीट्स का उपयोग किया गया।
- ☐ स्क्रेप बुक बनाने की कला का ज्ञान दिया गया जो शिक्षार्थी एवं विषय शिक्षिकाओ के लिए भी सहज, सरल, रोचक एवं आनंदमयी प्रक्रिया बनी।
- ☐ सृजनात्मक एवं रचनात्मक कार्य हेतु मार्गदर्शन दिया।
- ☐ सौन्दर्यानुभूति, रग सयोजन, आकारों का समन्वय,

संकलन हेतु विषय चयन, वर्गीकरण एवं कागज को सुरुचिपूर्ण चिपकाने की क्रिया से अवगत कराया गया।

- ☐ संकलित विचारों, प्रेरक प्रसगो का छात्रों पर प्रत्यक्ष विचारों के आदान-प्रदान, आचरण एवं विभिन्न उदाहरणों का प्रभाव स्पष्ट देखा गया।
- ☐ पूर्व-परीक्षण के प्रश्नों से शिक्षार्थियो मे लगन, उत्साह एव ज्ञान पिपासा जागृत करने का प्रयास किया गया।
- ☐ विभिन्न क्षेत्र/विषयों के ज्ञान-विस्तार हेतु अलग-अलग रोचक खेल तैयार किए (बनाए) गए।
- ☐ अधिगम की विशिष्ट विधियां प्रयोग मे लाई गई।

शब्दावली नियत्रण— बोलना, पढना, विचार बोधन एवं स्व-अधिगम का खेल। समोच्चारित शब्दो का खेल— डमडम, धमधम एव छमछम शब्दों का अभिनय ध्वनि निकालकर। बलाघात के आधार पर वाक्य का अर्थ बदल जाने का खेल। जैसे—

- ☐ मुझे घर जाना है।— सरल वाक्य।
- ☐ मुझे घर जाना है?— प्रश्न वाचक।
- ☐ मुझे घर जाना है।— घर जाने की व्यग्रता प्रकट करना।
- ☐ मुझे घर जाना है।— अनुमति प्राप्त करने हेतु तीन शब्दो पर जोर, बल देकर बोलना।

झडा, डडा, बंदूक, भाला— इनके विभिन्न स्थितियों मे उपयोग अभिनय के साथ प्रस्तुत करो।

खेल-खेल के माध्यम से पाठ्य-वस्तु अधिगम के लिए आकर्षित करना जैसे— ● अपनी मातृभाषा या स्थानीय बोली मे वाक्य बोलकर बताओ। ● जोशपूर्ण कविता/गीत सुनाओ। ● 2-2 पशु—पालतू एवं वन्य की आवाजे निकालो। ● आप बीती सुनाओ। ● चुटकुला अथवा पहेली सुनाओ। ● "जय" शब्द को अन्य शब्द से जोड़कर ऐसे शब्द बनाओ जिनका अर्थ जीत हार हो (विजय, पराजय)।

शरीर के अवयवो के, अवयवो से सबधित कहावतों का वाक्य प्रयोग करो। जैसे—

सिर— इसके सिर मे तो भूसा भरा है।

आखे— मुझसे क्या गलती हो गई जो आखें दिखा रहे हो।

नाक— गुस्सा तो तुम्हारे नाक पर रहता है हमेशा।

कान— बात को तुम पहले अच्छी तरह समझ लो नहीं तो मेरे कान खाओगे।

गला— यह बात फांस की तरह मेरे गले मे अटक रही थी। आज तुम्हें देखकर जबान पर आ ही गई।

इसी प्रकार अन्य अवयवो का कहावतों/मुहावरो में प्रयोग कराना।

अंकों का खेल—

- ● अकों के आधार पर मुहावरों का ज्ञान कराना।
- ● इस वृत मे किस अक की पुनरावृत्ति हुई।
- ● वे कौन-से अक है जो आपस मे स्थान बदलते ही भाव परिवर्तन करते/बदलते हैं— शत्रुता को मित्रता मे बदल देते है। शत्रुता 36 (मित्रता 63) 4-इन + (धन) चिन्हों से एक रगोली बनाइए।
- ● "रग भरो" की कतरनो को रंग सयोजन के माध्यम से चित्रित किया गया।
- ● अधूरे चित्र उनकी कल्पनाशीलता एवं सूझ-बूझ से पूर्ण किए गए।
- ● खोजो, अंतर ज्ञात करो, बताओ, शब्द बनाओ आदि विभिन्न अधिगम सामग्री का शिक्षार्थियों ने भरपूर उत्साह एव आनद के साथ प्रयोग किया।

इस अभिनव प्रयोग की नित्य नवीन क्रिया उनके जिज्ञासा, ज्ञान पिपासा की तृप्ति का आह्लादकारी एव मनोरजन का साधन बनी। छात्र प्रतिदिन प्रयोगकर्ता शिक्षिका की अधीरता से प्रतीक्षा करते पाए गए। पालको ने इस कार्य में अपने बालको का साथ दिया। उनके द्वारा दी गई कुछ कतरनें जब स्क्रेप बुक में चिपकाई गई उस समय उन छात्रों के मुख एक विशिष्ट तृप्ति का भाव लिए प्रफुल्लित हो कर दमक रहे थे।

छात्रों की खोज, प्रवृति के विकास की चरम सीमा देखकर मैंने दातों तले उगली दबाई जब एक छात्र ने कहा कि मैडम "पिंक सिटी" जयपुर है तो अपना भोपाल "श्वेत नगर" है यह मुझे पेपर के लिफाफे बनाते समय एक स्थान पर उस पेपर मे पढ़ने को मिला।

- ● + एव ◯ (धन एव वृत) सकेतो से बनाए चित्र

के द्वारा छात्रों की कल्पनाशीलता एव कलात्मकता को दिशा दर्शन दिया गया।

- इन चित्रो के माध्यम से उन्हे कला का सौन्दर्य बोध एव आकारों की सही-सही स्थिति तथा उनके क्षेत्रो का ज्ञान कराया गया।

इस अभिनव प्रयोग के दौरान छात्रों में असीम उत्साह देखने को मिला। प्रयोग समापन तिथि बाल दिवस के दो दिन पूर्व की निश्चित की गई। इसके पूर्व उनका पश्च-परीक्षण "आप कितने कीमती है?" प्रश्नावली उसे/उन्हें अपने असंज्ञानात्मक/ नैतिक, सामाजिक, व्यावहारिक गुणो, स्वच्छता, आज्ञापालन, पर्यावरण चेतना आदि का आभास कराने हेतु किया गया।

पश्च-परीक्षण के दिन अनुपस्थित छात्रों मे उस दिन की अनुपस्थिति का गहरा आघात देखा गया। दूसरे दिन उन्होने परीक्षण मे उपस्थित छात्रो से उन प्रश्नों पर चर्चा की एव वे भी बहुमूल्य हैं इसका आभास प्रयोगकर्ता शिक्षिका से निवेदन किया। उनके मुरझाए चेहरे से उनकी अमूल्य निधि खोने का भास सुस्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा था।

- ☐ प्रयोग समापन पर चाचा नेहरु को श्रृद्धा सुमन अर्पित करने का प्रस्ताव शिक्षार्थियों का था। तद्नुसार उन्होने 12 नवम्बर, 1994 को हिन्दी पाठ्यपुस्तक की कविता "बाल दिवस" का चयन कर उसे "चलगीत" के रूप मे प्रस्तुत कर कार्यक्रम का शुभारभ किया।
- ☐ बालक अरुण कुमार साहा ने पेपर/समाचार-पत्र नई दुनिया से "एक बच्चे की चाहत" गीत सुस्पष्ट सुनाया।
- ☐ बालिका सलमा बानो ने जवाहरलाल नेहरु का सक्षिप्त परिचय दिया।
- ☐ छात्र फारूक ने "मेरी पसंद, चंद छद" मे स्व राजीव गाधी, भोपाल (म प्र.) निवासी डा शकरदयाल शर्मा (तत्कालीन राष्ट्रपति) तथा यह मेरा देश का सक्षिप्त परिचय एक पेपर की कतरन लेकर पढ़ा।

कार्यक्रम प्रस्तुति की पराकाष्ठा उस समय दृष्टिगोचर हुई जब एक नन्हें से छात्र सतीश ने अपना उद्बोधन प्रारभ किया— "दो मित्र" कहावतों और मुहावरों से युक्त दो मित्रों की नोंक-झोंक एकता की मिसाल थी। उद्बोधन नोक-झोक के अन्तिम वाक्य—हमारी एकता जिन्दाबाद। जय हिन्द।" इतने जोश मे बोले गए कि तालियो की गडगडाहट भी उतनी ही आवेशपूर्ण ध्वनित हुई। दर्शक छात्र, शिक्षिकाए आदि सभी आश्चर्य चकित हो उस बालक को निहारते रह गए।

"भारत माता" की वंदना उनके हिन्दी पाठ्यपुस्तक के प्रथम पाठ "मातृभूमि" की कविता के सामुहिक सस्वर गायन से कार्यक्रम का समापन किया गया।

अनापेक्षित कार्यक्रम इतना मनोरम एव आह्लादकारी हो गया कि छात्र "बाल दिवस" समाप्ति के पश्चात् भी उसका रसास्वादन करते पाए गए। इसका प्रभाव 16 नवम्बर, 1994 को उनको, उनके कार्यक्रम के फोटो दिखाते समय अनुभव किया गया।

मूल्यांकन

प्रस्तुत प्रायोजना से पाठ्यक्रम मे निर्देशित विशिष्ट उद्देश्यो एवं कौशलो का सहजता से विकास हो गया।

- ☐ व्याकरण शिक्षण का एक उबाऊ एव नीरस भाग है जो सरसता से एव आनदमय प्रक्रिया बनकर सहज गम्य हो गया।
- ☐ लोक भाषा का अनायास ही परिचय, प्रयोग करने का ज्ञान एव समझने की क्षमता का विकास हो गया।
- ☐ मुहावरो को बोलना, पढ़ना, समझना एवं वाक्य प्रयोग करना खेल-खेल मे वार्तालाप द्वारा सीख गए।
- ☐ क्रमबद्ध लेखन क्षमता का विकास हो गया।
- ☐ व्याकरण सम्मत भाषा का प्रयोग करना सीख गए।
- ☐ खेल-खेल में विभिन्न क्षेत्रों/विषयों का शिक्षण एवं जानकारी सरस ढग से प्राप्त हो गई।
- ☐ अनुशासन एवं एकता की भावना का सरलता से बोध हो गया।
- ☐ नैतिक, सामाजिक, व्यावहारिक गुणो एवं पर्यावरण की चेतना जागृत हई।
- ☐ स्व-अधिगम की ओर आकृष्ट हुए।
- ☐ स्वमूल्यांकन करना सीख गए।

- ☐ सृजनात्मकता, कल्पनाशीलता, भावानुभूति का बोध हो गया।
- ☐ अनुपयोगी सामग्री का उपयोग करना जान गए।
- ☐ प्राथमिक स्तर पर न्यूनतम अधिगम स्तर–भाषा के नौ कौशल–सुनना, बोलना, पढना, लिखना, विचारो का बोधन, व्यावहारिक व्याकरण, स्व-अधिगम, भाषा प्रयोग एवं शब्दावली नियत्रण आदि विकसित हुए।
- ☐ शिक्षण/ज्ञान रटकर नहीं अपितु सरलता, सहजता एवं रोचकता से हृदयंगम करने की प्रक्रिया जान गए।
- ☐ बाल-केन्द्रित शिक्षण एक सरल, सहज, सरस, आनंदमयी विधि है इसका शिक्षक एवं शिक्षार्थियो को अनुभव हो गया।

निष्कर्ष

छात्रो में पाठ्यपुस्तक के अभाव मे भी शिक्षण के प्रति रुचि उत्पन्न की जा सकती है और अधिगम को स्वात. सुखाय एव आनदपूर्ण बनाकर ज्ञानार्जन किया जा सकता है। यह इस प्रयोग द्वारा प्रमाणित हुआ।

- ☐ शिक्षक यदि मार्गदर्शन देकर विकास के अवसर उपलब्ध करा दे तो अधिगम स्वप्रेरित एव आनंदप्रद प्रक्रिया बन जाती है।
- ☐ "अधिगम का इन्द्रधनुष" इसका प्रयोग इस दृष्टि से सार्थक हुआ कि शिक्षक एव शिक्षार्थी स्वप्रेरित कार्यो/स्वअधिगम मे रुचि लेने लगे।

तुलनात्मक अध्ययन

प्रयोग पूर्व के छात्र व्यवहार और प्रयोग पश्चात् के छात्र व्यवहार मे आकाश-पाताल का अतर अनुभव हुआ। प्रयोग के पूर्व छात्र मौन, निष्क्रिय, उदासीन और आत्महीनता से ग्रस्त थे। प्रयोग के दौरान एव प्रयोग के उपरान्त बच्चो के व्यवहार में ये वाछनीय परिवर्तन दिखाई दिए–

नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूकता

10-11-1994

कुल उपस्थित छात्र संख्या 36

प्रश्न क्रमांक	*असज्ञानात्मक पक्ष*	*सही उत्तर देने वाले छात्रो की सख्या*	*प्रतिशत*
1	*2*	*3*	*4*
1.	जल्दी उठने की आदत	30	83 33
2	शरीर की स्वच्छता	35	97 28
3	आज्ञापालन	34	94.4
4.	सहयोग	32	88 8
5	सजगता	33	91.8
6	आदर	32	88 8
7.	पढ़ाई की नियमितता	33	91 6
8	खेलकूद मे सहभागिता	30	83 33
9.	प्रसन्न रहना	30	83 33
10	सामाजिक चेतना	28	77 70

1	2	3	4
11	अतिथि स्वागत	34	98 4
12	घर की स्वच्छता	32	88.88
13	पर्यावरण सजगता	33	91 6
14	व्यवस्थितता	33	94.8
15.	प्रेमभाव	34	98 8
16	सहायता	33	91 6
17	अनुशासन	34	98 4
18	समय की नियमितता	32	88.8
19.	बालसभा में सहभागिता	27	75 00
20	सदुपयोग	33	88.8
21	रुचिया-शौक (पढने का)	35	97 28
22.	आत्मविश्वास	30	83 33
23.	हिचकिचाहट शेष है	07	19.5
24	ईश विनय मे आस्था	28	66 5
25	गायन रुचि	31	86 1

- ☐ सक्रियता, आत्मविश्वास, उत्साह और उत्फुल्लता उनकी विभिन्न गतिविधियों में दृष्टिगोचर हुई।
- ☐ आत्म प्रकाशन का अवसर मिलते ही उनकी दबी-छुपी प्रतिभा साकार होकर सामने आई।

विश्लेषण

नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूकता

सलग्न तालिका से स्पष्ट है कि स्वमूल्यांकन परीक्षा मे सम्मिलित 36 छात्रो मे विभिन्न नैतिक मूल्यो के प्रति जागरूकता विकसित हुई है।

स्वच्छता, पढ़ने में रुचि इन दोनो आदतो का विकास 35 बच्चों में (97.28% बच्चो मे) हुआ है। बच्चे शारीरिक स्वच्छता के प्रति सजग हुए। स्व-अधिगम और अध्ययन अभिरुचि का विकास तो इस सीमा तक हुआ कि बालक पत्र-पत्रिकाओ की ज्ञानवर्धक कतरने बहुधा कक्षा मे लेकर आए और सब छात्रों के सामने पढ़कर सुनाई।

आज्ञापालन, अतिथि स्वागत, प्रेमभाव, अनुशासन इन चार गुणो के विकास पर भी 94.4% छात्रों ने बल दिया। सजगता, पढ़ाई की नियमितता, पर्यावरण सजगता, सुव्यवस्थितता, सदुपयोग, सहायता जैसे गुणो के क्रियान्वयन के प्रति भी बालक उत्प्रेरित हुए। 91 6% छात्रो मे इन गुणों के आविर्भाव का आभास हुआ।

सहयोग, आदर, घर की स्वच्छता, समय की नियमितता जीवन मे उन्नति का द्वार खोल देती है, बच्चे इसके प्रति भी जागरूक दिखे। 88 8% छात्रों के व्यवहार मे यह वाछनीय परिवर्तन दृष्टिगोचर हुआ।

विद्यार्थियो में गायन रुचि का विकास हुआ। 86 1% छात्रो के सही उत्तर इसके प्रमाण हैं।

जल्दी उठने की आदत, खेलकूद में रुचि, प्रसन्न रहना, आत्मविश्वास जीवन मे सफलता की कुंजी है। 83.33% छात्रो ने इस बात पर बल दिया।

83.5% छात्रों में हिचकिचाहट / सकोच, आत्मविश्वास की कमी दृष्टिगोचर हुई। दूसरे शब्दो में प्रस्तुत अभिनव प्रयोग से 80 5% छात्रो में भी हिचकिचाहट दूर हुई, आत्मविश्वास बढा। न्यूनतम अधिगम स्तर में भी 80 80% की बात कही गई है जिसका अर्थ है– 80%

छात्र 80% उपलब्धि प्राप्त कर ले। इस कसौटी पर यह अभिनव प्रयोग खरा उतरा क्योकि 80 5% छात्रो से हिचकिचाहट दूर हुई, आत्मविश्वास बढ़ा। 91.5% छात्रो मे हिचकिचाहट, सकोच शेष रहने का कारण उनकी कक्षा में अनियमित उपस्थिति रही।

ईश विनय मे आस्था	66.5%
बालसभा में सहभागिता	75%
सामाजिक चेतना	77 7%

ईश विनय मे आस्था, बालसभा मे सहभागिता, सामाजिक चेतना इन तीन बिन्दुओ से संबंधित प्रश्नों के भी सही उत्तर देने वाले छात्रो का प्रतिशत क्रमश. उपरोक्तानुसार रहा।

इन तीन बिन्दुओं का कम प्रतिशत यह दर्शाता है कि बच्चो की यह मानसिकता बन जाती है कि भाषण, गायन, उद्‌बोधन–सास्कृतिक क्रियाकलाप एवं बालसभा की विभिन्न गतिविधिया सीमित तथा चुने हुए छात्र ही धरोहर है। शिक्षक भी इन कुछ चुने हुए छात्रो को सदैव सहभागिता के लिए प्रोत्साहित करते है। शेष छात्रों की नियति निष्क्रिय श्रोता, दर्शक बनने की ही है।

प्रस्तुत अभिनव प्रयोग से अधिकतर शिक्षार्थियों मे सजगता और सक्रियता बढी। प्रयोग की समयावधि लगभग 40 दिन रही। इन 40 दिनों मे जिन छात्रों की उपस्थिति कम या अनियमित रही उन्ही छात्रो में ईश विनय के प्रति आस्था, बालसभा मे सहभागिता तथा सामाजिक चेतना के विकास मे कमी पाई गई।

निष्कर्ष

"नैतिक मूल्यो के प्रति जागरूकता" इस तालिका के आंकडो के विश्लेषण से सिद्ध है कि 83 33% से 97.28% छात्रो मे विभिन्न अच्छी आदतो, नैतिक मूल्यों का विकास हुआ है। केवल मात्र 19 5% छात्र ही ऐसे रहे जिनमे हिचकिचाहट, संकोच की भावना शेष रही। प्रयोगकर्ता की दृढ मान्यता है यदि इस अभिनव प्रयोग को कक्षा शिक्षक 2-3 माह तक क्रियान्वित करें तो निश्चित रूप से इन बालको मे से भी हिचकिचाहट, आत्महीनता की भावना हट जाएगी। फलत· इन बालको मे आत्मविश्वास बढेगा, बालसभा मे सक्रिय सहभागिता होगी और सामाजिक चेतना भी बढेगी।

प्रतिक्रियाएं

प्रस्तुत अभिनव प्रयोग के माध्यम से अधिगम आनंदप्रद बन गया। बालक, पालक, शिक्षक और प्रधान अध्यापिका की प्रतिक्रिया इस प्रकार रही–

- पालक की उदासीनता दूर हुई। पहले विरोधी प्रतिक्रिया लिखकर भेजी फिर बालक के आत्मविश्वास और उत्साह को देखकर सकारात्मक प्रतिक्रियाए प्रत्यक्ष प्रयोगकर्ता से भेटकर आश्चर्य मिश्रित शब्दो में व्यक्त की– मै अपने बालक में हुए परिवर्तन रो हैरान हू। समझ मे नहीं आया तो आपसे मिलने आ गया। मेरे बच्चे मे इतना सुधार करने के लिए धन्यवाद।"
- अधिगम अनुभव कराते समय छात्रो की जिज्ञासाए, प्रत्युत्पन्न मति, विचित्र कल्पनाए, शकाए और उनका समाधान करने में नए-नए अनुभव प्राप्त हुए– जैसे स्क्रेप बुक 3 "आओ सीखे अच्छी बाते, पृष्ठ 3/51 सीखे" छोड़ो को समझा, अनुभव किया, तो पृष्ठ 5 पर 'शब्द बताओ' मे जेवर जो पैरो में पहना जाता है" के प्रत्युत्तर मे एक छात्रा ने पायल के साथ एक अन्य जेवर का नाम बताया जो "पा" अक्षर से प्रारभ तो नही होता था परन्तु द्विअर्थी था– वह क्या चीज है जो खाई और पहनी जाती है? उत्तर था– लौंग।
- छात्रो की जिज्ञासा का समाधान कक्षा स्थल पर ही किया गया। स्क्रेप बुक 3 पृष्ठ 3/59 "जरूरत है– जरूरत है कि अंतर्गत दिए वाक्य– एक शिक्षक एवं छात्र के लिए गलत थे मेरे द्वारा काटने पर एक छात्रा बोली, "मैडम आपने वाक्य तो काट दिए पर हमें आपकी और आपको हमारी जरूरत है।" बालिका के कथन की सत्यता जानते हुए मैने तत्क्षण उसी कतरन पर लिख दिया, "शिक्षक को छात्र की, प्राण को गात्र की जरूरत है।"

उपरोक्त स्क्रेप बुक मे ही पृष्ठ 10 "कौन सा गुण किसका" मे पशुओ के नाम एव उनके गुण दिए गए।

उन्हे पढने के बाद एक बालक ने पूछा "शिक्षक और छात्र के प्रमुख गुण क्या है?" प्रयोगकर्ता शिक्षिका ने इस वाक्य द्वारा उनका समाधान किया— "शिक्षक मे गुरुता व छात्र में नम्रता" होनी चाहिए।

समाचार-पत्र की कतरनों से तैयार स्क्रेप बुक देखकर एक शिक्षिका के उद्‌गार–

- ☐ स्क्रेप बुक एक अव्ययी अधिगम सामग्री है।
- ☐ यह सहजता से बनाई जा सकती है।
- ☐ स्क्रेप बुक अथवा पेपर से काटी गई कतरनो के माध्यम से अधिगम रोचक एव शिक्षण कार्य सरल हो जाता है।

विशेष अभिलक्षण

प्रस्तुत प्रायोजना के दौरान एवं अनंतर शिक्षार्थियो के व्यवहार मे ये परिवर्तन परिलक्षित हुए—

- ☐ विद्यार्थियों मे खोज एव जिज्ञासा प्रवृति का विकास हुआ। वे स्वेच्छा से अपने घर अथवा पड़ोसी से पुराने समाचार-पत्र लेकर उसमे अपने काम, ज्ञान की सामग्री खोजकर कक्षा मे प्रतिदिन लाने लगे। एक छात्र ने अपनी माता द्वारा लिफाफे बनाने हेतु लाए समाचार-पत्र में से पढ़ा समाचार उस समय सुनाया, जब स्क्रेप बुक 3 पृ 5/61 की कतरन "बताओ तो भला" मे दिए भौगोलिक उपनाम में "पिंक सिटी" "जयपुर" बताया। तब वह तत्काल, लगभग 2 वर्ष पूर्व तत्कालीन स्थानीय मंत्री की घोषणानुसार भोपाल को श्वेत नगर बनाया जाएगा के आधार पर अपनत्व की भावना में– "अपना भोपाल भी श्वेत नगर है" बोल पडा।
- ☐ आत्मप्रकाशन से विद्यार्थियों का आत्मविश्वास बढ़ा।
- ☐ अभिनय, गायन, मच साहस एव वक्तव्य कला का विकास हुआ। इसका प्रमाण उनके द्वारा प्रस्तुत प्रायोजना समापन दिवस पर की गई प्रस्तुति से स्पष्ट दृष्टिगोचर हुआ।
- ☐ धैर्य, लगन और एकाग्रता के साथ कार्य करने की भावना परिपुष्ट हुई।
- ☐ विपय चयन (समयानुसार) का ज्ञान हो गया। इसका प्रमाण उनके द्वारा लाई गई कतरने हैं। बालक अनूप कुमार साहा का चयन "एक बच्चे की चाहत— फूलो-सा सुख देना" उसकी उत्तम खोज का प्रमाण है। उसने इस गीत को भावविभोर होकर सुनाया। (स्क्रेप बुक 2 पृष्ठ 2)
- ☐ छात्र सतीश द्वारा प्रस्तुत छोटी सी नोक-झोंक मुहावरों से युक्त सारगर्भित प्रस्तुति थी जिसका दर्शक छात्र एव शिक्षक वर्ग ने तालियो की गडगडाहट से भरपूर स्वागत किया।
- ☐ बालक फारूक ने स्क्रेप बुक 3 पृ 7/73 की कतरन का शीर्पक अपनी सूझबूझ का परिचय देते हुए वदल दिया— "काव्य सरिता, आपकी पसद" के स्थान पर "मेरी पसंद चंद छंद" बोल कर पढा।
- ☐ स्क्रेप बुक 1 पृष्ठ 3/50 पर अकित रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा "बधन" के संबंध मे कहे गए वाक्य से वे जान गए कि शिक्षा उनका हक/अधिकार है। इस अधिकार मे उनकी पारिवारिक स्थिति बाधक है जिसके कारण वे नियमित शाला मे उपस्थित नही हो सकते। इसका रोष/खेद उनके साथ की गई चर्चा से ज्ञात हुआ। शिक्षा/ज्ञान पिपासा उनमें स्पष्ट दिखाई दी।
- ☐ स्क्रेप बुक 1 पृष्ठ 2/49 मूर्खता के क्रम-5 पर अंकित– "यदि कभी तुम मूर्ख नही रहे तो निश्चय जानो तुम कभी बुद्धिमान नहीं वन सकते।" थैकरे के इस कथन से बालको में साहस, दृढ़ निष्ठा और विश्वास का आविर्भाव हुआ।
- ☐ राजर्षि टडन का "हिन्दी प्रेम" भी उन पर असर कर गया। छात्रो मे हिन्दी बाल साहित्य, समाचार-पत्र पढने की चाह जागृत हुई। वे हिन्दी का आदर करते पाए गए।
- ☐ शैक्षिक खेलों के प्रति आकर्षण बढ गया और वे नित नई माथा-पच्ची की कतरनो का उत्साह से प्रयोग करने में व्यस्त हो गए। जिससे उनकी सूझबूझ एवं तार्किक शक्ति का प्रमाण मिला।
- ☐ छात्रो को अपने मूल्य का आभास "हम इतने लाख के हैं।" इससे अधिक कीमती बनने की लालसा

से दृष्टिगोचर हुआ।

- शिक्षार्थियो के मनन एव चिंतन का साक्षात प्रमाण प्रायोजना समापन प्रस्तुति मे उनकी पाठ्यपुस्तक से चयन एव प्रस्तुत कविताओ के द्वारा मिला। छात्र चिंतन एवं मनन ही नहीं उसका प्रस्तुतिकरण इस दिशा में निरतर अग्रसर हो रहे हैं— यह इससे सिद्ध हुआ।
- भारत माता बनी छात्रा का मुखमंडल अप्रतीम तेज से दैदीप्यमान हो रहा था। वह इस पात्र मे गर्व अनुभव कर रही थी।
- बालकों की प्रस्तुति "मातृभूमि" नम्रता एवं देशप्रेम का जीवत उदाहरण बनी। इससे छात्रो में इन गुणो का भरपूर विकास देखा गया।
- समस्त छात्रों का मत था कि इस प्रकार की अधिगम सामग्री से शिक्षण दिया जाए ताकि पाठ्यक्रम शिक्षण नीरस, बोझिल और उबाऊ न रहकर सरस और सहज बन जाए।

उपलब्धि

इस अभिनव प्रयोग की सबसे बड़ी उपलब्धि यह रही कि बालक और पालक सजग और सक्रिय हो गए। अधिगम सामग्री जुटाने मे दोनो ने परस्पर योगदान दिया।

- हर्ष की बात यह रही कि पुस्तकीय ज्ञान बोझिल न होकर एक सुखद आनंदकारी प्रक्रिया बनी।
- शिक्षक और छात्रो के बीच सवाद सेतु बना जिससे बालको की प्रतिभा प्रस्फुटन के द्वार खुल गए।
- छात्रों की प्रतिभा विकास को नए-नए आयाम मिले।
- स्वतः स्फूर्त पहल शक्ति से कम समय मे अधिक ज्ञान विद्यार्थियों को मिला।
- छात्रों में अनुपस्थिति से अपने शिक्षण पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव का अनुभव किया एवं नियमित कार्य करने की आदत का विकास हुआ।
- न्यूनतम अधिगम स्तर की परपरित अवधारणा को खंडित कर नई अवधारणा प्रतिस्थापित की गई।
- "आओ सीखें बाते" स्क्रेप बुक 3 पर "उद्गार" उनसे कुछ सीखो— में चाचा नेहरु के अमर कथन दिए गए है। शिक्षिका इन कथनो की प्रात्याक्षिक प्रतीती बालको की प्रतिक्रियाओ के माध्यम से हुई।
- नियमित उपस्थिति मे परिवर्तन दिन-प्रतिदिन देखा गया। उनकी शाला मे अनुपस्थिति का प्रमुख कारण पारिवारिक स्थिति है इस बात का आभास शिक्षार्थियो द्वारा व्यक्त किया गया। अभिनव प्रयोग प्रस्तुत करते समय यह सुखद अनुभव हुआ कि छात्र नियमित शाला मे आने का प्रयास करते हैं।
- झुग्गी-झोपडी में रहने वाले बच्चे जो आर्थिक दृष्टि से कमजोर है और कम उम्र मे ही पारिवारिक जिम्मेदारी से दवे हुए हैं, उनका ज्ञान, प्रतिभा एव सजग वुद्धि उनकी गतिविधियों में, प्रतिक्रियाओ मे प्रतिबिंबित हुई। क्षमता है, आगे बढने की महत्वाकाक्षा भी है। आवश्यकता है उन्हे प्रेरित करने की, उनकी शक्ति को रचनात्मक दिशा देने की और अधिगम अनुभव को आनदपूर्ण बनाने की। प्रस्तुत प्रयोग से बालक इतने उत्साहित और प्रेरित हुए कि प्रयोगकर्ता शिक्षिका को आश्चर्यजनक सुखद अनुभव हुआ। शिक्षार्थी सतीश ने यह सिद्ध कर दिया कि प्रतिभा किसी विशेष परिवेश या परिवार की धरोहर नही होती। जिन्हे खिलना है वे कंटकों में, पत्थरों में भी खिलते है, वीराने मे बसंत लाते हैं और अपनी प्रतिभा के आसपास का वातावरण सुगंधित कर मोह लेते है। उसकी दो मित्र आपसी नोक-झोक एक आशातीत उपलब्धि है।
- छात्रो का कक्षा में निर्धारित समय पर शिक्षिका (प्रयोगकर्ता) की अधीरता से प्रतीक्षा करना एवं उत्साह से शिक्षण मे, विचारो के आदान-प्रदान में सहयोग देना अपने मे एक बडी उपलब्धि है।
- शिक्षार्थियो की मानसिक परिपक्वता तथा सामान्य ज्ञान का ऊंचा स्तर दृष्टिगोचर हुआ। सामान्यतः हमारी धारणा यह है कि न्यूनतम अधिगम स्तर के जो निर्धारित मानदड हैं वे मध्य प्रदेश के बालको के बौद्धिक स्तर से ऊचे है। उन तक पहुचना मध्य प्रदेश के प्राथमिक कक्षाओं के बच्चों के लिए असंभव नहीं तो दुष्कर कार्य अवश्य है।

प्रस्तुत अभिनव प्रयोग मे यह सामान्य धारणा दूर हुई। प्रयोगकर्ता का अनुभव बहुत आशापूर्ण और संभावनाओ से परिपूर्ण रहा क्योंकि शिक्षिका ने सही उत्तर, सजग बुद्धि की जितनी अपेक्षा की थी बालक, बालिकाओं के उत्तर और प्रतिक्रियाएं उससे अधिक सकारात्मक और आशाप्रद रहे जैसे— विभिन्न देशो के स्वतंत्रता दिवस की जानकारी प्राप्त करते समय एक बालिका ने कहा— नामीबिया का स्वतंत्रता दिवस एक अप्रैल है। सारी दुनिया में 1 अप्रैल "अप्रैल फूल" दिवस के रूप में मनाया जाता है फिर नामीबिया के लोग अपने स्वतत्रता दिवस को किस रूप में मनाते होगे।

संकलित सुविचारो से प्रेरणा— समाचार-पत्रो से सुविचार की कतरनें स्क्रेप बुक में सजोई गई हैं। स्क्रेप बुक 1 याद करो पृ 2 पर "मूर्खता" शीर्षक से 5-6 कथन दिए गए हैं। इसमे क्रम 5 पर कथन है "यदि कभी तुम मूर्ख नही रहे तो निश्चय ही तुम बुद्धिमान नहीं बन सकते।" थैकरे।

बच्चो ने अपने परिवार और परिवेश में अनेकानेक बार इस कटु सत्य का सामना किया है जब उन्हे मूर्ख कहकर सबोधित किया गया है। थैकरे के उपर्युक्त सुविचार को पढकर बच्चों की सहज और स्वाभाविक प्रतिक्रिया यह रही कि लोग हमे मूर्ख कहते है तो कोई बात नही क्योकि मूर्ख व्यक्ति भी बुद्धिमान बन सकता है।

थैकरे के कथन ने बालको मे सहज ही आत्मविश्वास, सकल्प और साहस सुदृढ़ किया— "हम भी एक दिन बुद्धिमान बनकर दिखाएंगे।"

- प्रयुक्त अधिगम सामग्री का शिक्षार्थियों पर वांछित प्रभाव पड़ा।
- रेखाओ के खेल—स्क्रेप बुक 7 छात्रों को दिए गए संकेतों (+ एवं 0) धन चिन्ह एवं वृत्त के आधार पर बनाई गई रेखाकृतिया हैं। इसमें उनकी कल्पनाशीलता के विभिन्न आयाम दृष्टिगोचर हुए।
- निस्संदेह यह प्रयोग बाल-केन्द्रित शिक्षण हेतु एक उद्देश्यपूर्ण प्रस्तुति रहा। सरल, सरस एव स्व-अधिगम का माध्यम वना। अधिगम सामग्री अव्ययी एवं सहज उपलब्ध हो सकती है, इसका मार्ग प्रशस्त हुआ। शिक्षक एवं शिक्षार्थी तनाव मुक्त रहकर शिक्षण कार्य करते रहे।
- खेल-खेल में अधिगम आनद— इस प्रयोग की सार्थक और सराहनीय उपलब्धि यह रही कि सुनना, बोलना, पढना, लिखना, विचार बोधन, व्यावहारिक व्याकरण, स्व-अधिगम, भाषा प्रयोग और शब्दावली नियत्रण जैसी दक्षताओं का अधिकतम विकास बालको की विभिन्न गतिविधियो मे सहजता से परिलक्षित हुआ।
- असज्ञानात्मक पक्ष मे अच्छी आदतो का विकास और नैतिक मूल्यो की प्रतिस्थापना भी बालको में हुई जिसका प्रमाण उनकी प्रतिदिन की शैक्षिक और सह शैक्षिक गतिविधियो से मिला जो उनके लिए एक आह्लादकारी अनुभव था।

सुझाव

यह प्रयोग अल्प अवधि का न होकर शैक्षिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग बने। शिक्षक को प्रतिदिन प्रत्येक पाठ को आनदपूर्ण अधिगम बनाने के लिए स्वयं सूझ-बूझ और कल्पनाशीलता एवं लगन तथा परिश्रम का परिचय देना पड़ेगा।

- अध्यापन मे विद्यार्थियों की सहभागिता एवं सक्रियता हेतु बाल-केन्द्रित शिक्षण विधि का प्रयोग अधिकतम किया जाए ताकि बच्चे उसे आसानी से आत्मसात् कर सके। स्व-अधिगम हेतु प्रेरित होंगे और उनकी प्रतिभा का निरंतर विकास होगा।
- ऐसे ही अल्पव्ययी एव अव्ययी अधिगम सामग्री आधारित प्रयोग अन्य विषयों के लिए भी किए जाए तो निश्चित रूप से बालको का शैक्षिक, नैतिक एव सामाजिक अन्वयन होगा।

शैक्षिक उपादेयता

शिक्षको के परस्पर सहयोग से ही बालकों का बहुमुखी विकास होता है। शिक्षको की सक्रियता और समर्पण की भावना से ही शैक्षिक एवं नैतिक गुणों की वृद्धि निश्चित रूप से होती है। अत. आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षक नई दृष्टि, नई सूझ-बूझ और अपनी

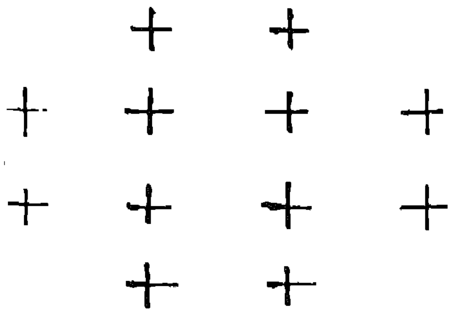
कल्पनाशीलता से स्व-अधिगम की स्थितिया निर्मित करे। बच्चो की रुचि, योग्यता, क्षमता और संभावनाओं को उभारें और उजागर होने के अवसर उपलब्ध कराएं।

- सुविधा वचित समूह के बालक/बालिकाओ को आत्म प्रकाशन के अवसर मिलने से वे द्विगुणित उत्साह और आत्मविश्वास से आगे बढते है।
- मौन और निष्क्रिय रहने वाले छात्र वाचाल और सक्रिय बन गए।
- उदासीनता और आत्महीनता का अंधकार छटने लगा।
- आशा और आत्मविश्वास का आलोक बालको के आचरण मे दमकने लगा।
- खेल-खेल मे अधिगम आनद की चरम सीमा यह रही कि पिक सिटी के साथ तत्क्षण भोपाल को व्हाइट सिटी (श्वेत नगर) कहा।
- काव्य सरिता में आपकी पसद की पंक्तियो का वाचन करते समय शीर्षक बदलकर तत्काल कहा— "मेरी पसंद, चंद छद"।
- प्रस्तुत प्रायोजना की शैक्षिक उपादेयता इस दृष्टि से भी प्रमाणित हुई कि बच्चों ने भाषा, गणित, पर्यावरण, नागरिकता एवं इतिहास बोध, नैतिक मूल्य एव लोक संस्कृति के प्रति रुचि का विकास सहजता से समवाय पद्धति से कर लिया। इसका अर्थ यह है कि प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर विविध विषय नितांत पृथक-पृथक नहीं रखे जा सकते है अपितु व्यक्तित्व के सतुलित, समग्र, सर्वागीण विकास के लिए विभिन्न विषयो की समग्र जानकारी उन्हे इस रूप मे मिले। भाषा, गणित आदि विषय परस्पर संबधित, परस्पर प्रभावी एवं परस्पर पूरक है।
- गायन/गाना किसी विशेष व्यक्ति का ही कार्य नही है। समयानुसार प्रत्येक व्यक्ति यह कार्य सहजता से कर सकता है। इसका अनुभव किया गया।
- गायन से भावो की अभिव्यक्ति एव अनुभूति जल्दी ही हो जाती है, यह अवधारणा सुस्पष्ट की गई।
- पढ़ने, बोलने, सोचने, समझने, मनन, चितन एवं गायन हेतु विशेष समय अथवा साधनों की जरूरत नहीं होती। उसे सहज उपलब्ध सामग्री मे खोजा एव पाया जा सकता है।
- ज्ञानवर्धन हेतु शाला, घर, आसपास का वातावरण सहायक होता है, इसका बोध हो गया।
- सुविचारो, महापुरुषो के प्रेरक प्रसग, जीवन वृत्तात— अनुशासन एवं आचरण पर किस प्रकार प्रभावी होते हैं, इसका अनुभव हो गया।
- छात्रों की स्मरण शक्ति, हाजिर जवाबी, निर्भीकता, साहस, सहज बोलना, कहावतो-मुहावरो का सटीक प्रयोग करना, विषय/पाठ से संबंधित कतरनों को खोजना व प्रयोग करना एक आश्चर्य मिश्रित सुखद तथा प्रभावी उपलब्धि है— यह छात्रों ने अपनी विभिन्न गतिविधियों के माध्यम से प्रमाणित किया।
- छात्रों को स्व-अधिगम सामग्री का परिचय करवाया गया।
- प्रयुक्त अव्ययी सामग्री से शिक्षण को सरल, सरस, रोचक एव आह्लादकारी बनाया जा सकता है। इससे छात्रो के व्यावहारिक, सामाजिक एव नैतिक गुणों का विकास किया जा सकता है। यह अकाट्य सत्य है—निरूपित हुआ।

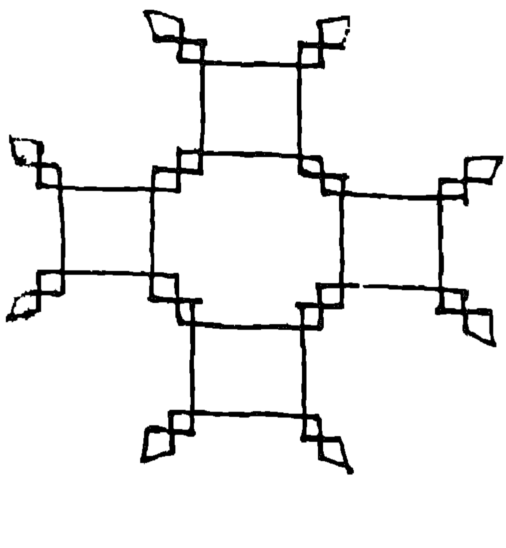
पहेलियां

पूर्व-परीक्षण दिनाक 4-10-1994

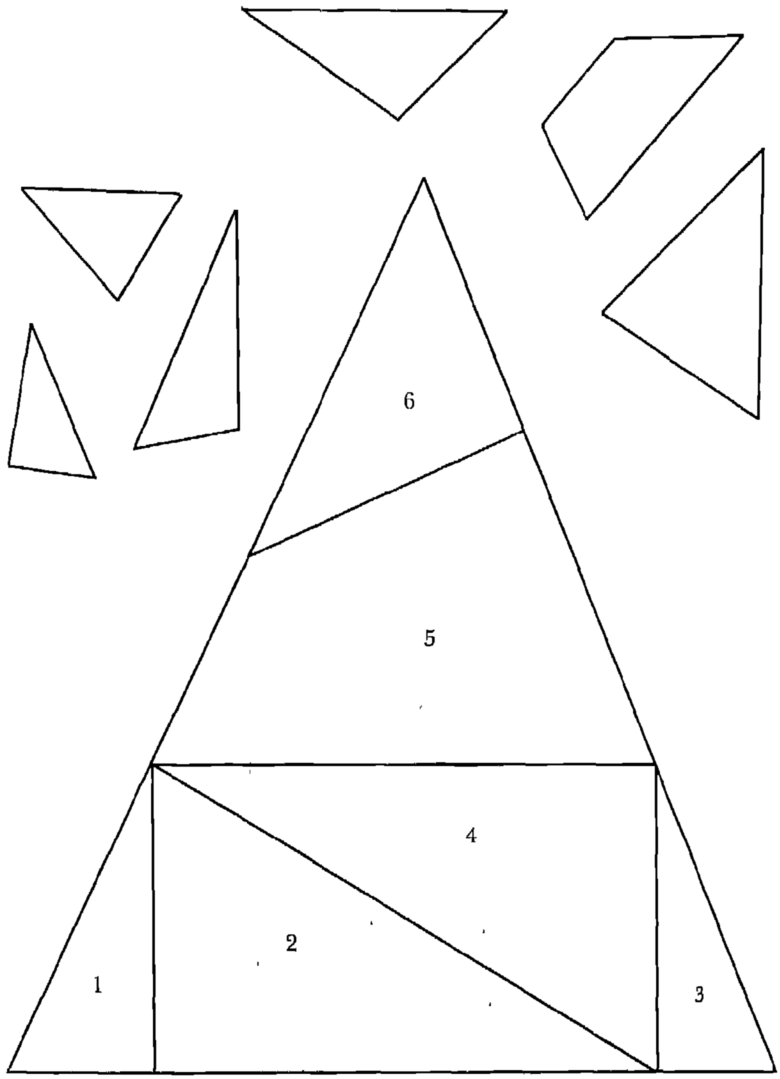
- वह कौन-सी चीज है जो बिना आग के जल जाती है? (बिजली)
- हम दोनों पक्के मित्र
करते काम विचित्र
पाच-पाच है साथ
बताओ क्या है बात? (हाथ)
- दोनो भाई पड़ोसी, कभी मिलन ना आपसी (नयन)
- तीन रग का सुन्दर पक्षी नील गगन मे भरे उड़ान, जय-जयकार करते सारे दे पूरा सम्मान। (तिरगा-ध्वज)
- ऐसी कौन-सी चीज है जहा नदिया हैं पानी नहीं, देश है पर मनुष्य नही, पहाड है पर ऊचाई नहीं। (मानचित्र / नक्शा)



सरल रेखाओं को जोड़कर
निम्न रंगोली बनेगी।



प्रश्न 27 त्रिभुज का खेल

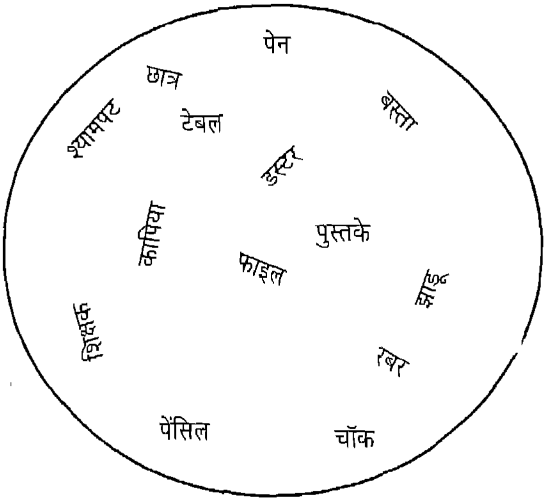


उपरोक्त टुकडों को क्रमाक के अनुसार जोडने पर एक बड़ा त्रिभुज तैयार होगा।

वृत्त मे असंगत शब्द छांटो

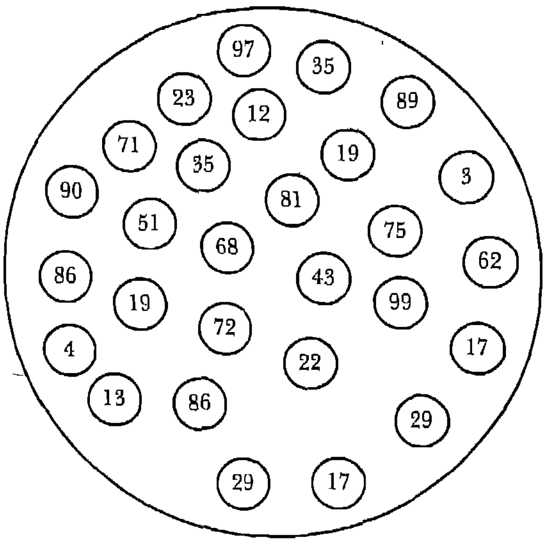
प्रश्न 18

वृत्त 1



प्रश्न 25 किस अक की पुनरावृत्ति हुई?

वृत्त 2



- ☐ ऐसे शब्द बताओ जिसका प्रथम एवं अंतिम अक्षर समान हो। कोई 4(डालडा, सरस, जलज, जहाज)
- ☐ समान उच्चारण वाले 4 शब्द बताइए। (मगन, गगन, छगन, लगन)
- ☐ अपनी शाला मे गाई जाने वाली प्रार्थना की चार पंक्तिया सुनाइए।
- ☐ एक आपबीती का प्रसंग बताओ।
- ☐ एक वाक्य बोलिए जिसके बोलने के ढंग से/हावभाव से हर बार भिन्न अर्थ निकले।
- ☐ डमडम, धमधम, छमछम शब्द किस क्रिया को दर्शाते हैं।
- ☐ झंडा, डंडा, बदूक, भाला किस बात के सूचक है।
- ☐ "जय" शब्द को अन्य शब्द से जोड़कर दो शब्द वनाओ जिसका अर्थ जीत-हार हो।
- ☐ शूरता पूर्ण कविता की पक्तिया सुनाओ।
- ☐ 2 पशुओं और 2 पक्षियों की आवाजे निकालिए।
- ☐ भोपाल मे कला प्रदर्शन का स्थान कौन-सा है? (भारत भवन)
- ☐ भोपाल में स्थित विश्वविख्यात धरोहर कौन-सी है? (ताजुल मस्जिद)
- ☐ जहा सिक्के ढाले जाते है वह स्थान क्या कहलाता है? (टकसाल)
- ☐ वह क्या है? जिसे हमने सम्राट अशोक से अपनाया। (शेरो वाली आकृति, चक्र)
- ☐ वे कौन-से देश हैं जो "स्तान" शब्द से जुडे हैं? (हिन्दुस्तान, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, तुर्किस्तान ब्लूचिस्तान आदि)
- ☐ अकों से संबधित 2-2 कहावते कहिए? (नो दो ग्यारह होना। तीन पाच करना। एक टाग पर खड़े होना। दो-दो हाथ करना।)
- ☐ कौन-से पहाड़े मे समान अंक आते है? (11)
- ☐ वे कौन-से अक है जिन्हे लिखने मे वृत का प्रयोग किया जाता है? (1, 4, 7...)
- ☐ वे कौन-से अक है जो आपस मे स्थान बदलते ही भाव बदलते है? (शत्रुता को मित्रता मे बदल देते है) (36) (63)
- ☐ वृत्त दो में किस अंक की पुनरावृत्ति हुई?
- ☐ इस कागज पर बने (+) धन चिन्हों को जोडकर एक रंगोली बनाओ।
- ☐ इन टुकडो से मिलकर बनने वाली आकृति को पहचानिए। (त्रिभुज)
- ☐ इस वृत्त में ऐसे शब्द खोजो जो असंगत हैं।
- ☐ इन्द्रधनुष मे कितने रग होते हैं? कौन से?
- ☐ आकाश मे चन्द्रमा किस रात दिखाई नही देता।
- ☐ तुम्हारे घर का दरवाजा किस दिशा में है?
- ☐ अपने राष्ट्रीय ध्वज मे स्थित चक्र पर कितनी धारिया है और वे किस बात का प्रतीक है। (24, प्रतिपल आगे बढना)

☐☐

डाईट, जहांगीराबाद
भोपाल, मध्य प्रदेश

उच्च माध्यमिक स्तर पर हिन्दी साहित्य की छात्राओं की लिखित व मौलिक अभिव्यक्ति के स्तर में सुधार

❑ पूर्णिमा त्रिवेदी

शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य की अन्तर्निहित भावनाओं और शक्तियों को सुअवसर देकर उनका पूर्ण विकास करना है। भाषा इन शक्तियों के विकास में महत्वपूर्ण आधार प्रदान करती है। यदि बोलचाल और लेखन की शिक्षा का समुचित आयोजन किया जाए तो मौलिक अभिव्यक्ति के लिए मार्ग प्रशस्त हो सकता है। शिक्षा का महत्वपूर्ण कार्य बालक को इस योग्य बनाना है कि वह स्वच्छ और स्वतंत्र आत्म क्रियाशीलता द्वारा मौलिक अभिव्यक्ति कर सके। भाषा पढ़ाते समय अध्यापक की दृष्टि इस बात पर भी रहती है कि बालक अपने विचारों, अनुभूतियों और अपने अनुभवों को शुद्ध और स्पष्ट भाषा में व्यक्त करे। इस प्रकार भाषा शिक्षण के अभिव्यंजनात्मक उद्देश्य की प्राप्ति तभी हो सकती है जबकि बालक अपने अर्जित ज्ञान, विचारों, अनुभूतियों और अनुभवों को शुद्ध, स्पष्ट भाषा में प्रभावशाली ढंग से दूसरों के सामने लिखित और मौलिक रूप से व्यक्त कर सके।

अपने विचारों को अभिव्यक्ति देना मानव की नैसर्गिक वृत्ति है। साथ ही वह यह भी चाहता है कि अपने विचारो को अपनी विशिष्ट शैली में अभिव्यक्त करे ताकि दूसरे उससे प्रभावित हों। जिस प्रकार वास्तुकार या मूर्तिकार अपने स्थूल साधनों के प्रयोग से विभिन्न कलाकृतियो का निर्माण करता है तथा चित्रकार तूलिका के सहारे अपने सूक्ष्म भावों को पटल पर अंकित करता है उसी प्रकार एक लेखक शब्द, वाक्य, लोकोक्ति, मुहावरो आदि का आश्रय लेकर व्याकरण सम्मत नियमों मे आबद्ध होकर लेखन के सहारे अपने आंतरिक मनोभावो को साकार करता है।

शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य की अन्तर्निहित भावनाओं और शक्तियों को सुअवसर देकर उनका पूर्ण विकास करना है। भापा इन शक्तियों के विकास मे महत्वपूर्ण आधार प्रदान करती है। यदि बोलचाल और लेखन की शिक्षा का समुचित आयोजन किया जाए तो मौलिक अभिव्यक्ति के लिए मार्ग प्रशस्त हो सकता है। शिक्षा का महत्वपूर्ण कार्य बालक को इस योग्य बनाना है कि वह स्वच्छ और स्वतत्र आत्म क्रियाशीलता द्वारा मौलिक अभिव्यक्ति कर सके। भाषा पढाते समय अध्यापक की दृष्टि इस बात पर भी रहती है कि बालक अपने विचारों, अनुभूतियो और अपने अनुभवो को शुद्ध और स्पष्ट भाषा मे व्यक्त करे। इस प्रकार भाषा शिक्षण के अभिव्यजनात्मक उद्देश्य की प्राप्ति तभी हो सकती है जबकि बालक अपने अर्जित ज्ञान, विचारो, अनुभूतियो और अनुभवो को शुद्ध, स्पष्ट भाषा में प्रभावशाली ढंग से दूसरो के सामने लिखित और मौलिक रूप से व्यक्त कर सके।

हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है एवं राजस्थान एक हिन्दी भाषी राज्य है। ऐसी स्थिति में बालकों की अभिव्यक्ति

का सशक्त माध्यम भी हिन्दी ही है। हिन्दी का ज्ञान प्राय' प्रत्येक विद्यार्थी को होता है क्योंकि पहली कक्षा से वह निरन्तर हिन्दी पढता है। परन्तु कई विद्यालयो मे यह भी देखा गया है कि अध्यापन का माध्यम हिन्दी न होकर स्थानीय भापा बन जाता है जिसके कारण विद्यार्थी क्षमता होने पर भी अपनी भावनाओ को परिष्कृत भाषा मे अभिव्यक्त नही कर पाते तथा अभिव्यक्ति के समय वे प्राय' कुछ गिने-चुने सामान्य स्तर के शब्दो का ही प्रयोग कर देते है।

आज विद्यार्थी सामान्यत कुजी, पासबुक आदि का सहारा लेकर निबध, पत्र, प्रस्ताव आदि लिखते है। ऐसा करने रो अध्यापको और विद्यार्थियों की सोचने-समझने की बुद्धि कुठित हो जाती है। उनका लेखन के प्रति आत्मविश्वास ही नही बन पाता, ऐसी स्थिति में लेखन मे नवीनता और मौलिकता उत्पन्न होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। बालक में नैसर्गिक रूप से सृजनशीलता अधिक होती है। यदि इसी समय उन्हे सही मार्गदर्शन दिया जाए तो उच्चकोटि की रचनाओं का एक सग्रह एकत्रित किया जा सकता है जो हिन्दी भाषा की समृद्धि मे वृद्धि करेगा।

समस्याभिज्ञान

अपने शिक्षकीय दायित्वों के निर्वहन के दौरान लेखिका को उच्च माध्यमिक स्तर की कक्षाओं में हिन्दी साहित्य के शिक्षण का अवसर प्राप्त हुआ। लेखिका एक ऐसी शिक्षण सस्था मे कार्यरत है जहां जिले के दूरस्थ क्षेत्रो से भी बालिकाए माध्यमिक कक्षा उत्तीर्ण कर ग्यारहवीं कक्षा मे प्रवेश के लिए आती है। यह विद्यालय आवासीय विद्यालय भी है। हिन्दी साहित्य के अध्यापन के समय यह अनुभव किया गया कि छात्राओं में मौलिक अभिव्यक्ति का अभाव है। प्रश्नों के उत्तर देते समय भी वे प्राय पुस्तकीय भाषा अथवा सामान्य वोलचाल की भाषा का प्रयोग करती है। परिणामस्वरूप वे परीक्षा मे अच्छे अक प्राप्त करने से वंचित हो जाती हैं। परीक्षक ही नहीं प्रत्येक व्यक्ति साहित्य के विद्यार्थी से यह अपेक्षा करता है कि उसकी अभिव्यक्ति उच्च कोटि एव सारगर्भित हो। परीक्षा में मौलिक अभिव्यक्ति के अभाव मे कम अक प्राप्त करने पर छात्राओ मे हीनता की भावना पनपती है तथा हिन्दी साहित्य के प्रति उनमे अरुचि उत्पन्न हो जाती है। जिसका प्रभाव यह पडता है कि छात्राए इस विषय को छोड कर अन्य ऐसे विषय ले लेती है जिनमें अपेक्षाकृत कम परिश्रम से अधिक अंक प्राप्त किए जा सके। उच्च माध्यमिक परीक्षा का परिणाम ही उनके भविष्य का निर्धारण करता है। अत हताश होकर वे हिन्दी विषय छोडने पर विवश हो जाती है। परन्तु यह कोई कारगर विकल्प नही है।

इस समस्या के निराकरण हेतु एक सशक्त कदम उठाने का निर्णय लिया और प्रयोग स्वरूप कक्षा XI की हिन्दी साहित्य विषय पढने वाली 40 छात्राओ के एक समूह को लेकर "उच्च माध्यमिक कक्षा XI की हिन्दी साहित्य की छात्राओं की लिखित व मौलिक अभिव्यक्ति के स्तर में सुधार" शीर्षक से एक नवाचार सम्पादित करने का निश्चय किया गया।

प्रस्तुत नवाचार के अन्तर्गत सर्वप्रथम समस्या से सम्बद्ध कारण का पता लगाया गया। इस हेतु छात्राओ के परिवेश, पारिवारिक पृष्ठभूमि तथा उनके परिवार मे बोली जाने वाली भाषा के बारे मे सूचनाए एकत्रित की गई। साथी शिक्षको एव भाषा विशेषज्ञों से परामर्श तथा स्वय के अनुभव के आधार पर कुछ कारण सूचीवद्ध किए जो लिखित व मौलिक अभिव्यक्ति के स्तर मे न्यूनता हेतु उत्तरदायी है।

इस प्रयत्न में सबसे पहला कारण भाषा शिक्षकों द्वारा मौलिक अभिव्यक्ति की ओर समुचित ध्यान नही दिया जाना उभर कर सामने आया। राज्य की शिक्षा नीति के अनुसार यह व्यवस्था है कि कक्षा आठ तक शिक्षक को सभी विषय पढ़ाने होते है चाहे उस विषय मे अध्यापक की दक्षता हो अथवा नहीं। विषय का पूर्ण ज्ञान नहीं होने की स्थिति मे शिक्षक विद्यार्थियों को सिर्फ इतना ही दे पाता है जिसके आधार पर वे परीक्षा उत्तीर्ण कर सके। इसके लिए शिक्षक को भी जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। यदि प्रारम्भिक कक्षाओं से ही भाषा शिक्षक विद्यार्थी को मौलिक अभिव्यक्ति का

अवसर दें तथा उनकी त्रुटियो की ओर सजग रहें तो माध्यमिक व उच्च माध्यमिक कक्षा तक पहुचते हुए विद्यार्थी की मौलिक अभिव्यक्ति में उत्तरोत्तर निखार आएगा।

दूसरा कारण मौलिक अभिव्यक्ति के स्तर सम्बन्धी कोई निश्चित मापदण्ड नही होना पाया गया। मौलिक व लिखित अभिव्यक्ति में परिमार्जित भाषा की अपेक्षा की जाती है। अत इस स्तर पर छात्राओं की मौलिक व लिखित अभिव्यक्ति मे निखार लाने हेतु चरणबद्ध कार्यक्रम का निर्धारण किया। इस हेतु मौलिकता के पाच मापदण्ड निर्धारित किए गए।

इस समस्या से सम्बद्ध तीसरा कारण लिखित व मौलिक अभिव्यक्ति के प्रति प्रश्न-पत्र निर्माताओ एव शिक्षकों का उपेक्षा भाव ज्ञात हुआ। माध्यमिक स्तर तक की कक्षाओ मे प्रश्न-पत्र निर्माता एक शिक्षक दोनो ही मौलिक अभिव्यक्ति की आवश्यकता को अनुभव नहीं करते। अत लिखित कार्य में शिक्षक भी मौलिक अभिव्यक्ति हेतु छात्रों को उत्प्रेरित नहीं करते और न ही प्रश्न-पत्र निर्माता द्वारा मौलिक चिन्तन के प्रश्नो का निर्माण किया जाता है।

चौथा कारण, जिस परिवेश से विद्यार्थी आ रहा है उस परिवेश मे स्थानीय भाषा एव सामान्य स्तर की हिन्दी का प्रचलन होना विदित हुआ। विद्यार्थी अपने घर में व आसपास स्थानीय भाषा को सुनता व वोलता है। अत उसे सामान्य स्तर की हिन्दी से साहित्यिक परिमार्जित भाषा तक पहुचाने का पूरा दायित्व भाषा शिक्षक का ही है।

प्रस्तुत नवाचार को क्रियात्मक अनुसधान के रूप मे संधारित किया गया। अत' इस शोध हेतु क्रियात्मक प्राक्कल्पनाएं परिकल्पित की गई जो इस प्रकार हैं— • लिखित व मौलिक अभिव्यक्ति के मापदण्ड निर्धारित कर छात्राओ को प्रश्नो एव निवन्धो के माध्यम से समुचित अभ्यास दिया जाए तो छात्राओ की मौलिक व लिखित अभिव्यक्ति मे सुधार होगा। • यदि अध्यापक कक्षा शिक्षण मे परिष्कृत एवं परिमार्जित भाषा का प्रयोग करे तो छात्राओ की लिखित व मौलिक अभिव्यक्ति में सुधार होगा।

क्रियात्मक अनुसधान की कार्य प्रक्रिया के अन्तर्गत चयनित समूह की लिखित अभिव्यक्ति मे मौलिकता के समावेश हेतु मौलिकता के कुल पाच मापदड निर्धारित किए गए जो इस प्रकार हैं—

मौलिकता का पहला मापदण्ड "पुस्तकीय भाषा से हटकर अपने शब्दों में उत्तर देना" निर्धारित किया गया। छात्रों की अभिव्यक्ति में सबसे पहली कमी यह पाई जाती है कि विद्यार्थी पुस्तको अथवा कुंजियो की भाषा मे रटा-रटाया उत्तर लिख देता है उसमे मौलिकता का स्थान नगण्य प्राय. होता है। माध्यमिक एव उच्च माध्यमिक स्तर पर प्रश्न-पत्रों में ऐसे प्रश्नो का भी समावेश होता है जिनमे विद्यार्थी के मौलिक चिन्तन का मूल्याकन किया जाता है। इसमे विद्यार्थी प्रश्नो के उत्तर तो दे देता है लेकिन मौलिकता के अभाव मे अच्छे अक प्राप्त करने से वचित रह जाता है।

हिन्दी भाषा मे मुहावरों व कहावतो का अपना महत्व है। इनका प्रयोग भाषा के सौन्दर्य मे वृद्धि करता है एवं उसे रोचक बनाता है। इनके प्रयोग से भाषा मे प्रवाहशीलता आती है। विद्यार्थी अपनी अभिव्यक्ति में इनका प्रयोग प्राय नही करते। अत. मौलिकता के दूसरे मापदण्ड मे "यथावश्यकता मुहावरों व कहावतो का प्रयोग करना" निर्धारित किया गया।

"प्रसंगानुसार उदाहरण देना" मौलिकता का तीसरा मापदण्ड निर्धारित किया गया। प्रासगिक उदाहरण मन्तव्य को सरल व सुगम बनाने में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। प्रासंगिक उदाहरणो के माध्यम से जटिल से जटिल विषय को सरलतम रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। प्रासगिक उदाहरण विद्यार्थी के स्वयं के साथ घटित घटना के रूप मे भी हो सकता है किन्तु विद्यार्थी इसका प्रयोग न कर अपनी बात स्पष्ट करने मे असमर्थ रहता है।

समानान्तर परिस्थितियो से अपनी बात की पुष्टि करने को मौलिकता का चौथा मापदण्ड निर्धारित किया गया। मौलिक अभिव्यक्ति के समय कुछ क्षण ऐसे भी आते हैं जब उस परिप्रेक्ष्य के समानान्तर घटित दृष्टांत का उल्लेख करना आवश्यक हो जाता है परन्तु विद्यार्थियो का यह पक्ष कमजोर होता है। अतः उनकी मौलिक

अभिव्यक्ति सशक्त नही हो पाती।

"परिमार्जित भाषा का प्रयोग" मौलिकता का पाचवा मापदण्ड निर्धारित किया। साहित्य के विद्यार्थी से यह अपेक्षा की जाती है कि उसके द्वारा परिमार्जित भाषा प्रयुक्त की जाए। यह तभी संभव है जब उसका शब्द भण्डार समृद्ध हो। इस हेतु विद्यार्थी को उच्च स्तर की पुस्तको व पत्रिकाओ आदि के नियमित अध्ययन की ओर प्रेरित किया जाना चाहिए तथा प्रत्येक विद्यार्थी को शब्द कोष के निरन्तर प्रयोग की आदत विकसित करने की ओर सजग किया जाना चाहिए।

पूर्व-परीक्षण

इसके अन्तर्गत कक्षा XI की छात्राओं के चयनित समूह का पूर्व-परीक्षण किया गया। पूर्व-परीक्षण पत्र मे छः प्रश्नो का एक प्रश्न-पत्र प्रसारित किया गया। प्रश्न-पत्र में 10-10 अको के पाच प्रश्न तथा 50 अंकों का एक निबन्ध दिया गया। प्रश्न पाठ्य-वस्तु से ही सम्बन्धित चुने गए लेकिन यह ध्यान रखा गया कि उनमें मौलिक अभिव्यक्ति के पर्याप्त अवसर उपलब्ध हों। समसामयिक विषयों से सबधित निबन्ध दिया गया। पूर्व-परीक्षण के मूल्यांकन के आधार पर छात्राओ को यह बताया गया कि उनकी लिखित व मौलिक अभिव्यक्ति में किस-किस प्रकार की कमियां रही है। प्राय. सभी छात्राओं ने पुस्तकीय भाषा का ही प्रयोग किया था। यद्यपि कतिपय छात्राओं ने कहीं-कही पर मुहावरो का प्रयोग तथा प्रसंगानुसार उदाहरण देकर भी अपनी बात स्पष्ट की। परिमार्जित भाषा का प्रायः अभाव पाया गया। पूर्व-परीक्षण के अको का अभिलेख रखा गया।

प्राक्कल्पना प्रयुक्ति

पूर्व-परीक्षण के पश्चात् पूर्व निर्धारित दोनों प्राक्कल्पनाओ के अनुसार कार्य प्रारम्भ किया गया। सर्वप्रथम छात्राओ को प्रत्येक पक्ष (15 दिन) मे पाठ्यक्रम से संबंधित मौलिकता के उक्त मापदण्डो पर आधारित पांच प्रश्नो के उत्तर लिखवाए गए। साथ ही समसामयिक विषयों से सबधित मौलिकता के उक्त मापदण्डो पर आधारित एक निबन्ध भी लिखवाया गया। यह कार्य अतिरिक्त कालांश लेकर किया गया। यह अभ्यास कार्य चयनित समूह की छात्राओ को निरन्तर तीन माह की अवधि मे छ बार कराया गया। प्रत्येक पक्ष में छात्राओ की मौलिक अभिव्यक्ति मे उत्तरोत्तर सुधार आता गया। प्रश्नोत्तर तथा निबन्ध लेखन का अभ्यास कार्य करवाते समय छात्राओ का पूर्ण सहयोग लिया गया। इस प्रकार लेखिका ने तीन माह के अन्तराल मे छात्राओ को कुल 30 प्रश्न एवं 6 निबन्ध लिखने का समुचित अभ्यास करवाया। इन प्रश्नो एवं निबन्धो को दो दिनो के अन्तराल में जांचकर प्रतिपुष्टि प्रदान की ताकि छात्राए त्रुटियो को दोहराएं नहीं।

पश्च-परीक्षण

छात्राओं को पर्याप्त अभ्यास कराने के पश्चात् पुन परीक्षण लिया गया। इसके लिए छात्राओं को पाठ्यपुस्तक तथा समसामयिक परिस्थितियो से सबधित पांच प्रश्न तथा एक निबन्ध लिखने को दिया गया। छात्राओं द्वारा दिए गए उत्तर का निर्धारित मापदण्डों के आधार पर परीक्षण किया गया। इस बार छात्राओं ने बहुत हद तक अपने लेखन मे मौलिकता का समावेश किया। आवश्यकतानुसार कहावतों, मुहावरो का प्रयोग तथा प्रसगानुसार उदाहरण देकर विषय-वस्तु को स्पष्ट करने का सराहनीय प्रयास किया। पश्च-परीक्षण के परिणाम उत्साहवर्धक रहे। पश्च-परीक्षण के परिणाम से छात्राओं में मौलिक अभिव्यक्ति के प्रति आत्मविश्वास में वृद्धि हुई। उनकी रचनात्मक क्षमता का विकास हुआ।

दत्त विश्लेषण एवं सांख्यिकी

छात्राओं द्वारा पूर्व-परीक्षण एवं पश्च-परीक्षण के मापदण्डवार एवं समेकित रूप से प्राप्त अकों का माध्य, प्रमाणीकृत विचलन एव टी परीक्षण ज्ञात किया गया।

दत्त विशलेषण से प्राप्त परिणाम इस प्रकार रहे— पूर्व एवं पश्च-परीक्षणो के माध्य मे स्पष्टत अन्तर पाया गया। यह अन्तर समसामयिक विषयो से संबधित निबन्ध लेखन मे सर्वाधिक 15 05 तक रहा। प्रश्नोत्तर में लिखित

व मौलिक अभिव्यक्ति मे सर्वाधिक अन्तर 3 02 परिमार्जित भाषा का प्रयोग करने मे रहा। अन्य मापदण्डो में यह अन्तर अपेक्षाकृत कम रहा। सभी मापदण्डो के समेकित अको का माध्य पूर्व-परीक्षण मे 31 05 था जो बढकर पश्च-परीक्षण मे 58 08 हो गया। इस प्रकार सभी मापदण्डो के समेकित माध्य में 26.55 अंको की वृद्धि हुई जो निश्चय ही उल्लेखनीय उपलब्धि है।

मात्र माध्य के अन्तर से निश्चित रूप से यह कहना उपयुक्त नही कि दोनो परीक्षणो के प्राप्ताको मे वास्तव मे अन्तर है, जब तक कि उसे साख्यिकी दृष्टि से जांच न लिया जाए। अत' दोनो परीक्षणो के अन्तर को साख्यिकी दृष्टि से ज्ञात करने हेतु इनका टी परीक्षण निकाला गया। पूर्व एव पश्च-परीक्षणो की दृष्टि से ज्ञात मापदण्डों एव समेकित प्राप्ताकों के टी परीक्षण से निम्नाकित तथ्य स्पष्ट हुए–

- ☐ निवन्ध लेखन मे टी परीक्षण का परिणाम 29 80 रहा जो 01 स्तर पर सार्थक रहा अर्थात् समसामयिक विषयो से संवधित निबन्ध लेखन के पूर्व एव पश्च-परीक्षणो के माध्यों के अन्तर पर 99 प्रतिशत मामलों मे विश्वास किया जा सकता है। इस प्रकार निवन्ध लेखन के सन्दर्भ में उल्लेखनीय उपलब्धि रही है।
- ☐ प्रश्नोत्तर मे पुस्तकीय भाषा से हटकर अपने शब्दो में उत्तर देने का टी परीक्षण परिणाम 20 48 रहा। इसी प्रकार मुहावरो एव कहावतों के प्रयोग, प्रसगानुसार उदाहरण देने, समानान्तर परिस्थितियों से अपनी वात पुष्ट करने तथा परिमार्जित भाषा का प्रयोग करने में टी परीक्षण परिणाम क्रमश 16 42, 19.17, 13.55 तथा 22 23 रहा। इन सभी मापदण्डों मे सार्थकता का स्तर .01 रहा अर्थात् इन सभी मापदण्डो में पूर्व एवं पश्च-परीक्षणों के माध्य के अन्तर में 99 प्रतिशत मामलो में विश्वास किया जा सकता है। इस प्रकार इन समस्त मापदण्डो के सन्दर्भ में उल्लेखनीय उपलब्धि रही।
- ☐ पांचो मापदण्डों के समेकित अको के पूर्व एव पश्च-परीक्षणो के माध्य के सन्दर्भ मे टी परीक्षण परिणाम 33 12 रहा जो .01 स्तर पर सार्थक रहा अर्थात् समेकित अकों के माध्य के अन्तर पर भी 99 प्रतिशत मामलों मे विश्वास किया जा सकता है। इस प्रकार समेकित माध्य के उच्च स्तरीय 01 सार्थकता स्तर से लिखित मौलिक अभिव्यक्ति के विकास के लिए स्वीकार की गई दोनों प्राक्कल्पनाओ के प्रभावी ढग से उपयोगी होने का पता चलता है।

प्रयोगात्मक प्रभाव

कक्षा-कक्ष शिक्षण से संबधित इस नवाचार से छात्राओ की मौलिकतापूर्ण लिखित अभिव्यक्ति को सुधारने का प्रयास किया गया। देखा जाए तो मौलिकतापूर्ण लिखित अभिव्यक्ति का क्षेत्र कक्षा-कक्ष शिक्षा में सर्वाधिक उपेक्षित क्षेत्र होता है। प्रस्तुत नवाचार से इस क्षेत्र मे आशानुरूप सफलता प्राप्त हुई, जो निश्चय ही उल्लेखनीय कही जा सकती है। फिर इस प्रयास की एक विशेषता यह रही है कि इसमे व्यय नगण्य हुआ।

किसी नवाचार का एक बड़ा लक्षण उसके व्यापक विचार की सामर्थ्य के रूप में जाना जाता है। प्रस्तुत नवाचार इस दृष्टि से भी खरा उतरता है क्योंकि मौलिक व लिखित अभिव्यक्ति के सुधार की आवश्यकता सार्वदेशिक व सार्वकालिक है और रहेगी तथा इस नवाचार को प्रयुक्त करके इस आवश्यकता की पूर्ति करना सहज होगा।

केवल 6 निबन्धों और 30 प्रश्नों को लेकर सीमित क्षेत्र (कक्षा XI की 40 छात्राएं) में किया गया यह शोध सार्थक रहा। यदि यही प्रयास माध्यमिक (कक्षा IX) स्तर से निरन्तर किया जाए तो इसका प्रभाव और व्यापक होगा, ऐसी संभावना है। ☐☐

राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय
रेजीडेंसी, उदयपुर, राजस्थान

उच्चतम विद्यालय स्तर पर व्यावसायिक अध्ययन-अध्यापन की बहुनीति

❑ रजनी रावल

पढ़ाने के इन नवीन तरीकों की एक मुख्य विशेषता थी– मितव्ययता। इस परियोजना में अध्यापिका ने नवीन विधियों को विकसित करने में दूरदर्शन, पत्रिकाओं तथा अखबार का प्रयोग किया। छात्राओं ने बिना महंगी पुस्तकों तथा ट्यूशन के ज्ञान प्राप्त किया। यह सरकारी विद्यालय की छात्राओं के लिए और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि वे निम्न/मध्यम आय के परिवार से संबंध रखती हैं तथा उनके परिवार के लोग शिक्षित नहीं हैं।

पठन-पाठन की प्रक्रिया मे अध्यापक तथा विद्यार्थी दो प्रमुख अंग है। पुराने समय मे अध्यापक निरकुश था। विद्यार्थियो के साथ मात्र एक घडे या पात्र की तरह व्यवहार किया जाता था जिसमें केवल किताबी ज्ञान को ही भरा जाता था। विद्यार्थी केवल निश्चेष्ट दर्शक थे। उनकी जिज्ञासा तथा उनकी सामर्थ्य व क्षमताओ की ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता था। लेक्चर विधि का प्रयोग करते हुए पढ़ाने की प्रक्रिया केवल याद रखने के स्तर तक थी जिसमे दृश्य और श्रव्य दोनों प्रकार के साधनो का अभाव था। शिक्षा मनोविज्ञान के सिद्धान्तो पर आधारित नही थी। कक्षा मे छात्र की उपस्थिति मात्र शारीरिक थी। मानसिक रूप से वह कक्षा में उपस्थित नही होता था। इस प्रक्रिया का परिणाम था– सकुचित ज्ञान का विकास तथा प्राप्त किए गए ज्ञान को लंबे समय तक याद न रख सकना। विद्यार्थी प्राप्त किए गए ज्ञान को वास्तविक जीवन मे प्रयोग करने में सक्षम नहीं था अर्थात् उसका ज्ञान केवल किताबी या व्यावहारिक नही था।

विख्यात शिक्षाशास्त्री स्किनर तथा ब्रूनर के द्वारा किए गए प्रयत्नो को धन्यवाद जिन्होने पढाने की प्रक्रिया को अध्यापक केन्द्रित होने के स्थान पर छात्र केन्द्रित होने को महत्व दिया। छात्र के अस्तित्व को मान्यता दी जाने लगी। अब वह केवल एक निश्चेष्ट श्रोता नहीं अपितु पठन-पाठन प्रक्रिया मे सक्रिय भागीदार बनता है तथा अपनी कार्यक्षमता का प्रयोग करता है। वह कार्य को करते हुए सीखता है न कि केवल सुनकर जिससे उसमे तर्कपूर्ण, कल्पनाशील तथा बहुमुखी ज्ञान का सृजन होता है। छात्र का दृष्टिकोण वैज्ञानिक है जो अवलोकन पर आधारित है। कक्षा मे स्वप्रेरणा की स्थिति है। आधुनिक पढाने के तरीके निम्नलिखित सिद्धान्तों पर आधारित है–

★ उपयोगिता का सिद्धान्त
★ तत्परता का सिद्धान्त
★ स्वय करते हुए सीखना
★ छात्र को कार्य करने की स्वतन्त्रता
★ समाजीकरण का सिद्धान्त

पढाने के इन प्रवर्तित तरीको का कक्षा मे प्रयोग करने से छात्रों में विश्लेषण करने की, संश्लेषण तथा मूल्याकन करने की क्षमता का विकास होता है तथा छात्रो में उच्च श्रेणी का तथा प्रभावपूर्ण ज्ञान सृजित करने के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

किंतु वास्तविक परिस्थितियो मे यह अनुभव किया गया कि विद्यालयो में पढाने का कार्य अभी भी लेक्चर विधि से किया जाता है तथा अध्यापक वर्ग के द्वारा

नवीन/प्रवर्तित तरीको का प्रयोग करने का प्रयास नहीं किया जाता। यह स्थिति उन विषयो मे और भी अधिक कठिन है जो प्रकृति से सैद्धान्तिक तथा विवरणात्मक है। व्यावसायिक अध्ययन एक ऐसा ही विषय है तथा इसके पढाने की प्रक्रिया मे लेक्चर विधि का ही प्रयोग किया जाता है। आमतौर पर अध्यापक के द्वारा नोट्स बनाकर बच्चों को लिखवा दिए जाते है तथा उनकी ग्राह्यता या ग्रहण क्षमता का मूल्याकन केवल उनकी याद रखने की क्षमता से किया जाता है। अध्यापन केवल याद करने तथा दोहराने की प्रक्रिया तक सीमित है। यह विषय सैद्धान्तिक होने के साथ उच्चतम विद्यालय के स्तर पर ग्यारहवी तथा बारहवीं कक्षा में पढाया जाता है जब छात्र तरुणावस्था की स्थिति से गुजर रहे होते है। यह अवस्था अस्त-व्यस्तता, भ्रांति, अनिश्चितता तथा दिवास्वप्न की होती है। छात्र भविष्य में अपने लक्ष्यो के प्रति निश्चित नही होता। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि विषय को इस प्रकार से पढाया जाए कि न केवल विषय रोचक लगे तथा छात्र की समझ बढ़े अपितु वह विषय का वास्तविक जीवन के साथ सामजस्य स्थापित करते हुए अपने व्यवसाय तथा भविष्य के लक्ष्य को निर्धारित कर सके।

इस चुनौती को स्वीकार कर इस प्रकार प्रयत्न किया कि छात्र विषय को समझ कर उसका वास्तविक जीवन के साथ संबध स्थापित कर सके। इससे एक ओर विषय रोचक होगा तथा दूसरी ओर अधिक से अधिक छात्र सक्रिय होकर पठन-पाठन की प्रक्रिया का सक्रिय हिस्सा बन सकेगे। इस दिशा मे प्रयत्नशील होते हुए पढाने के नवीन तरीकों की एक शृंखला को विकसित किया और उसे सफलतापूर्वक अपनाते हुए पढ़ाने का प्रयास किया।

उद्देश्य

सामान्य उद्देश्य

- प्रबध की अवधारणाओं और सिद्धान्तों की समझ विकसित करना।
- व्यवसाय की आर्थिक समझ विकसित करना।
- उच्च शिक्षा के लिए आवश्यक आधार देना।
- छात्र को प्रबध का महत्व तेजी से बदलती हुई व्यावसायिक परिस्थितियों मे समझने के लिए सक्षम बनाना।

विशेष उद्देश्य

- ज्ञान (बौद्धिक स्तर पर) विद्यार्थी को इस योग्य बनाना कि वह प्रबध के सिद्धान्तो, अवधारणाओ तथा प्रक्रियाओ की पहचान कर सके तथा आवश्यकता पडने पर दोहरा सके।
- समझ (समझ के स्तर पर) छात्र प्रबंध तथा व्यवसाय के विभिन्न सिद्धान्तो को समझ सके तथा उनकी व्याख्या कर सके।
- व्यावहारिकता (प्रयोग के स्तर पर) छात्र न केवल याद ही करे अपितु समझ कर विभिन्न सिद्धान्तो के बीच अंतर कर सके और उनके सापेक्षिक महत्व को मान्यता दे सके। समझे गए सिद्धान्तो का व्यावसायिक स्थिति के अनुसार प्रयोग कर सके।

परिकल्पना

उपरोक्त उद्देश्यो के आधार पर नवीन तरीको के प्रयोग द्वारा व्यावसायिक अध्ययन की शिक्षा से निम्नलिखित लक्ष्यो की प्राप्ति संभव हो पाएगी—

- नीरस तथा सैद्धान्तिक माने जाने वाले विषय के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करना।
- छात्रो में प्रबधकीय सिद्धान्तो की समझ तथा उन्हें प्रयोग करने की क्षमता विकसित करना।
- विषय मे रुचि तथा समझ छात्र को भविष्य में अपने व्यावसायिक लक्ष्यो को निर्धारित करने मे सहायता करेगी।

रूपरेखा

इस परियोजना की रूपरेखा तथा अवलोकन समाजीकरण पर आधारित है जिसमें उपयोगिता, स्वप्रेरणा तथा पढने के प्रति तत्परता आदि सिद्धान्तो को महत्व दिया गया, जिससे अध्यापक तथा छात्र के बीच विचार-विमर्श/क्रिया-प्रतिक्रिया अधिक हो जो जहां एक ओर छात्र मे समझ उत्पन्न करे वहीं अध्यापक को भी और अधिक प्रयत्न

करने के लिए अभिप्रेरित करे। एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य जो इस परियोजना की रूपरेखा बनाते समय ध्यान मे रखा गया कि तरुणावस्था मे होने के कारण बच्चे टेलीविजन, पत्रिकाओं तथा अखबार के प्रति विशेष आकर्षण रखते है। इसलिए यह प्रयत्न किया गया कि व्यावसायिक अध्ययन/प्रबंध की अवधारणाओं तथा सिद्धातो को इन्हीं माध्यमो की सहायता से व्याख्या की जाए। इसके अतिरिक्त कार्ड खेल, प्रश्नोत्तर परीक्षा तथा हिंदी के मुहावरों/लोकोक्तियो का भी प्रयोग किया जाए ताकि इस विषय को पढाने के अपेक्षित लक्ष्यो की प्राप्ति की जा सके।

उपरोक्त माध्यमो से विकसित किए गए तथा कक्षा मे प्रयोग किए गए विभिन्न नवीन/प्रवर्तित तरीके इस प्रकार है–

व्यंग्य चित्रों में सीखेंगे प्रबंध

आवश्यक सामग्री– दैनिक प्रकाशित होने वाले तीन मुख्य समाचार-पत्र– दि टाइम्स ऑफ इंडिया, दि हिंदुस्तान टाइम्स तथा नवभारत टाइम्स व साप्ताहिक प्रकाशित होने वाली पत्रिका इडिया टुडे का इस कार्य के लिए प्रयोग किया गया।

संरचना– टाइम्स ऑफ इंडिया हर बुधवार को अपने पत्रिका विभाग मे 'ऐसेन्ट' नाम से एक पत्रिका निकालता है और दि हिंदुस्तान टाइम्स हर वीरवार को 'एच टी कैरियर्स' नामक पत्रिका प्रकाशित करता है। इडिया टुडे अपनी साप्ताहिक पत्रिका में आधे पृष्ठ का राजनीतिक व्यंग्य चित्र छापता है। इन सभी पत्रिकाओ मे छापे गए उचित व्यग्य चित्र को सफेद कागज पर चिपकाया गया तथा उनकी सहायता से विभिन्न प्रश्न विकसित करते हुए प्रबध के सिद्धान्तो तथा कार्यों की व्याख्या की गई।

प्रक्रिया– फ्लेन्डर के क्रिया-प्रतिक्रिया विश्लेषण के महत्व को मान्यता देते हुए, कक्षा में छात्राओं को कहा गया कि कुछ देर के लिए वे हर व्यग्य चित्र को देखे और फिर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करे। उनके द्वारा व्यक्त किए विचारों को स्वीकार करते हुए, प्रबंध से सम्बन्धित प्रश्न कक्षा में पूछे गए। अध्यापिका ने उन्हें निश्चित दिशा प्रदान करने मे सहायता की। छात्राओं ने आपस में बातचीत करना आरंभ किया तथा अध्यापिका द्वारा प्रोत्साहित किए जाने पर अपने विचारों को व्यक्त करना आरम्भ किया। इस प्रक्रिया का परिणाम रहा कि कक्षा में न तो शाति थी और न ही भ्राति अपितु कक्षा मे पूछे गए प्रश्नो की छात्रों मे निश्चित व पक्की समझ उत्पन्न हो गई थी। यह समझ इतनी गहरी थी कि छात्राओं ने विभिन्न प्रबधकीय प्रश्नो से सबधित व्यग्य चित्र लाने आरंभ कर दिए।

कौन बनेगा सफल प्रबंधक

यह मूल्याकन की विधि थी जिसका प्रेरणा स्रोत था 'बिग बी' अर्थात् अमिताभ बच्चन द्वारा प्रस्तुत किया जाने वाला कार्यक्रम "कौन बनेगा करोड़पति"। प्रबधकीय सिद्धांतो तथा अवधारणाओ से सबंधित प्रश्नो का एक बैंक अर्थात् सग्रह बनाया गया। हर प्रश्न के चार जवाब थे जिनके द्वारा प्रश्न को हल किया जा सकता था। इस खेल को नाम दिया गया, "कौन बनेगा सफल प्रबंधक"!

तरीका– इस खेल को शुरू करने के लिए हर छात्रा के नाम को एक अलग छोटे कागज पर लिखा गया और सभी नाम लिखे कागजो को एक पात्र में डाला गया। एक कागज को उठाया गया तथा उस कागज पर जिस छात्रा का नाम लिखा था उसे खेलने के लिए आमन्त्रित किया गया। इस छात्रा को अलग डेस्क (हॉट शीट) पर बिठाया गया। अध्यापिका द्वारा तैयार की गई प्रश्नावली से प्रश्न पूछे गए। इस प्रकार के दो उदाहरण नीचे दिए गए है–

कार्यात्मक संगठन की मुख्य पहचान है

- अधिकारो का केन्द्रीय स्तर पर केन्द्रीयकरण।
- कार्य तथा अधिकारों का विशिष्टीकरण के आधार पर विभाजन।
- कारखाने में लगे मजदूरो के द्वारा केवल एक अध्यक्ष से आदेश।
- प्रथम तथा तृतीय लक्षण।

सरकारी तथा गैर-व्यावसायिक सस्थाओ मे जहा

नियम परायणता तथा अधिकारिता की ज्यादा जरूरत होती है, निर्णयन, संगठन तथा नियन्त्रण की प्रक्रिया को–

- प्रबंध कहते हैं।
- प्रशासन कहते है।
- नौकरशाही कहते है।
- सगठन व्यवस्था कहते हैं।

पारितोषिक के रूप में उन्हे अक दिए गए (के वी सी) के रुपयों के स्थान पर, जो हर प्रश्न के साथ दोगुने हो जाते थे। इन अंको की अधिकतम सीमा एक करोड़ ही थी। तीन जीवन धाराओं के रूप मे 50-50, कक्षा की छात्राओ का सग्रहित मत तथा अपनी सहयोगी छात्रा से पूछिए, थे।

इस परियोजना को जब कक्षा में किया गया तो वहा का वातावरण बहुत उत्साहित था। सभी छात्राए इस खेल के लिए तैयार होकर आई थी। उन्होने इस खेल का भरपूर आनन्द लिया और चार जवाबो मे जो अतर था, उसकी पहचान करने मे भी सफल हुई। प्रोत्साहन गैर-मौद्रिक प्रेरणा के रूप में अध्यापक तथा कक्षा के अन्य विद्यार्थियो द्वारा की गई प्रशसा थी।

मुहावरे भी सिखा सकते हैं प्रबंध

हिंदी हमारी मातृभापा है। इसे सीखकर सम्प्रेषण के माध्यम के रूप मे हम इसे दिन-प्रतिदिन प्रयोग करते है। पीढी दर पीढ़ी से यह भाषा बोली जा रही है। इस भापा में कई मुहावरे, लोकोक्तिया तथा कहावते हैं जिनका प्रयोग किसी स्थिति को स्पष्ट करने व रोचक वनाने के लिए किया जाता है। इनका प्रयोग पढ़े-लिखे ही नही बल्कि अनपढ़ लोग भी कर पाते हैं, खासतौर पर हमारे वडे-बूढ़े।

कार्यप्रणाली– अध्यापिका ने कुछ मुहावरों को छाटकर उन्हे प्रवध के सिद्धान्तों के साथ जोड़ा। चुने गए मुहावरे और उससे सबंधित प्रबंधकीय प्रश्न कागज पर लिखकर कक्षा मे पूछे गए। नीचे दिए गए दो उदाहरण इसे और स्पष्ट करते है–

दाल-भात मे मूसलचंद।
व्यर्थ में दखल देना।

प्रबधकों द्वारा कर्मचारियों के कार्य मे दाल-भात मे मूसलचद बनना, कर्मचारियों की पहल क्षमता, कार्यक्षमता तथा प्रबधको के कार्यभार पर क्या प्रभाव पड़ेगा? इस मुहावरे से फेयोल के कौन-से सिद्धान्त को स्पष्टता मिलती है? उस सिद्धान्त को कक्षा मे समझाइए।

तेते पांव पसारिए जेती लम्बी सौर।

यदि प्रबधक आय के मुकाबले अधिक खर्च करेगे तो इससे रिजर्व बनाने तथा लाभ के पुन वियोग पर क्या प्रभाव पडेगा तथा सस्था की वित्तीय स्थिति में कौन-सी दशा उत्पन्न हो जाएगी– अल्पपूंजीकरण और अतिपूंजीकरण। उस स्थिति का उपयोग किस प्रकार हो रहा है? इसका कम्पनी तथा शेयरधारियो पर क्या प्रभाव पडेगा?

छात्राओ ने इस मे इतनी रुचि दिखाई कि वे स्वय भी नई कहावतें तथा मुहावरे लिखकर लाने लगी जो प्रबंध के सिद्धान्तों या अवधारणाओ को परिभाषित करती थी।

"एक अच्छे नेता/पर्यवेक्षक मे कौन-से गुण होने चाहिए?" यह प्रश्न बारहवीं कक्षा की वोर्ड की परीक्षा मे 7 से 8 नंबर का पूछा जाता है, छात्राओ ने यह प्रश्न मुहावरो की सहायता से स्वयं तैयार किया।

खेल-खेल में सीखेंगे प्रबंध

सभी बच्चे कार्ड खेल से जरूर परिचित होते हैं। सभी बच्चे साप-सीढी और ताश जैसे खेल जरूर खेलते हैं। बच्चे ही नही यहां तक कि वयस्क भी इन खेलों को उतना ही मजा लेकर खेलते हैं। बाजार में कई खेल मौजूद हैं और ऐसे खेल बच्चो की पत्रिकाओ मे भी प्रकाशित होते रहते हैं। ऐसे खेल मे एक पासा और कुछ गोटिया होती है जिनसे कम से कम दो खिलाडी जरूर खेलते है। इन खेलो के आसान नियम होते है और जो खिलाडी 'अंत' (लक्ष्य) पहले पहुच जाता है, वह विजेता होता है।

कुछ ऐसे ही खेल विकसित किए गए जिससे छात्र प्रबध के कार्यो, विधियो तथा सिद्धान्तो को समझ तथा याद कर सके। ये खेल न केवल पढाने के माध्यम सिद्ध हुए अपितु इनके द्वारा छात्रो का रचनात्मक मूल्याकन तथा अतिम मूल्याकन करना भी संभव हो गया। छात्रों

ने भी इन खेलो मे बहुत रुचि ली। इनमें एक खेल उदाहरणार्थ निम्नलिखित है—

अब मंजिल दूर नही

यह खेल रचनात्मक तथा अतिम मूल्याकन के लिए विकसित किया गया है। यह खेल ज्ञान तथा समझ पर आधारित है जो छात्र में विश्लेषण की शक्ति को जागृत करता है। इस खेल की व्याख्या इस प्रकार है—

सरचना

विषय— कर्मचारी प्रबंध

उपविषय— कर्मचारी चुनाव की प्रक्रिया

कक्षा-12

समय अवधि— 5 से 7 मिनट

खिलाडियों की सख्या— पांच छात्रो का समूह

(एक छात्र कर्मचारी चुनाव प्रक्रिया के विभिन्न चरणो को लिखेगा तथा अन्य छात्र उसकी सहायता करेगे)

उद्देश्य— छात्रो मे कर्मचारी चुनाव प्रक्रिया के विभिन्न चरणो की समझ उत्पन्न होगी तथा वे इसे दोहरा पाएगे।

विधि— चार उम्मीदवार ए बी सी डी किसी पद के लिए नियुक्ति पाने का प्रयास कर रहे हैं। छात्र इस खेल मे एक उम्मीदवार के साथ बढ़ना शुरू करेगा। हर मोड़ पर उसे चुनाव प्रक्रिया मे आने वाले चरण सही क्रम से लिखने होगे। उदाहरण के लिए उम्मीदवार डी. का साथ देते हुए छात्र हर मोड़ पर चुनाव प्रक्रिया के चरण लिखेगा—

● प्रारंभिक जाच ● रिक्त आवेदन फार्म भरना ● लिखित तथा मनोवैज्ञानिक परीक्षाएं।

इसके पश्चात् इस उम्मीदवार का रास्ता बद है। इसका अर्थ है कि वह चुनाव की प्रक्रिया को कुशलतापूर्वक पूरा करने में असमर्थ रहा। उम्मीदवार 'ए' का साथ देते हुए छात्र लिखेगा—

● प्रारम्भिक परीक्षा ● रिक्त आवेदन फार्म भरना ● लिखित तथा मनोवैज्ञानिक परीक्षाएं ● साक्षात्कार ● संदर्भ परीक्षण ● शारीरिक परीक्षा ● कार्य पर परीक्षा ● नियुक्ति पत्र की प्राप्ति

परिभाषाओं को सीखने के लिए प्रश्नोत्तर खेल

व्यावसायिक अध्ययन के परीक्षा-पत्रों की जाच करने पर अनुभव किया गया कि छात्र प्रबध की अवधारणा अथवा सिद्धान्त लिखते हुए या तो अधूरी परिभाषा लिखते हैं, अस्पष्ट लिखते है या महत्वपूर्ण तथ्यो का स्पष्टीकरण नहीं करते। छात्रो मे अवधारणा अथवा सिद्धात का सही ज्ञान तथा समझ हो, उनका स्पष्टीकरण हो तथा उनमें सही तथा पूरी परिभाषा लिखने की क्षमता हो, एक प्रश्नोत्तर परीक्षा कक्षा मे आयोजित की गई। इसकी प्रक्रिया इस प्रकार रही—

- ☐ सभी छात्राओं को विषय से संबधित 25 परिभाषाएं प्रतियोगिता से तीन दिन पहले याद करने के लिए दे दी गई।
- ☐ प्रतियोगिता के दिन कक्षा को चार भागो में बाटा गया।
- ☐ पहला समूह प्रतियोगिता को आरम्भ करेगा तथा अधूरी परिभाषा देगा।
- ☐ उसके आगे आने वाले समूह को निम्नलिखित प्रश्नो का उत्तर देना होगा—
  - अवधारणा या सिद्धान्त को पहचानिए।
  - इस सिद्धान्त को किसके द्वारा लिखा गया है।
  - परिभाषा को पूरा करिए।

समूह 3 तथा 4 भी इसी प्रक्रिया को दोहराएगे।

विधि— एक छात्रा (सुधा) — पहले समूह से सुधा ने इस प्रक्रिया को आरम्भ किया— "यह कार्य सगठनात्मक ढाचे मे मानवीय साधनो के उचित चुनाव, मूल्याकन तथा विकास"।

अब सुधा द्वारा दी गई इस परिभाषा से सबधित निम्नलिखित प्रश्नो का उत्तर दूसरे समूह को देना होगा।

- यह परिभाषा प्रबंध के किस कार्य की है?
- यह परिभाषा किसके द्वारा लिखित है?
- इस परिभाषा को पूरा करिए।

दूसरे समूह को आपस में विचार-विमर्श करने के लिए दो मिनट का समय दिया गया और छात्राओ ने इसका इस प्रकार जवाब दिया।

इस प्रकार यह प्रक्रिया तीसरे तथा चौथे समूह मे चलती रही।

इस प्रक्रिया मे हर परिभाषा के अत मे अध्यापिका द्वारा परिभाषा दोहराई गई तथा उसके महत्वपूर्ण तथ्यो को स्पष्ट किया गया।

निष्कर्ष

इन नवीन/प्रवर्तित तरीकों के द्वारा पढाये जाने पर अध्यापिका अपने इच्छित उद्देश्यो को प्राप्त करने मे सफल रही। अलग-थलग रहने वाली छात्राओं ने भी सक्रिय भाग लिया तथा कक्षा मे पूरा ध्यान दिया। पठन-पाठन की प्रक्रिया केवल याद करने के स्तर पर नहीं अपितु समझ तथा चितन के स्तर पर थी। कक्षा में तनाव मुक्त वातावरण व्याप्त था तथा विचारो को व्यक्त करने की पूरी स्वतंत्रता थी। कक्षा मे जहा टीम भावना तथा समाजीकरण की भावना का सृजन हुआ वही अध्यापिका तथा छात्राओ मे आपसी समझ उत्पन्न हुई।

पढाने के इन नवीन तरीको की एक मुख्य विशेषता थी– मितव्ययता। इस परियोजना में अध्यापिका ने नवीन विधियो को विकसित करने में दूरदर्शन, पत्रिकाओं तथा अखबार का प्रयोग किया। छात्राओ ने बिना महंगी पुस्तकों तथा ट्यूशन के ज्ञान प्राप्त किया। यह सरकारी विद्यालय की छात्राओं के लिए और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि वे निम्न/मध्यम आय के परिवार से सबध रखती हैं तथा उनके परिवार के लोग शिक्षित नही है।

एक और लाभ जो यद्यपि अप्रत्यक्ष है कि इसमे पढ़ाने के साथ-साथ मूल्यांकन भी होता है क्योकि विद्यार्थियो की प्रतिक्रियाए सतुष्ट हो जाने पर उनमें विषय की पूर्ण समझ विकसित हुई। □□

राजकीय उच्चतर माध्यमिक कन्या
विद्यालय नं. 1, पंजाबी बाग
नई दिल्ली

माध्यमिक कक्षा के विद्यार्थियों के लिए हिन्दी विषय में व्याकरणिक अभिक्रमित अनुदेश तैयार कर उनकी प्रभावशीलता का एक अध्ययन

❑ ओमवती सक्सेना

बुद्धि का शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पाया गया। सामान्य धारणा यह रहती है कि कम बुद्धि वाली छात्राएं अधिक बुद्धिलब्धि वाली छात्राओं से अपेक्षाकृत अधिक सीखती हैं जबकि उनकी शैक्षिक उपलब्धि कम बुद्धिवाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि से अधिक होती है। वर्तमान शोधकार्य में भी यही पाया गया। फलतः जिन छात्राओं की बुद्धिलब्धि अधिक थी उनकी शैक्षिक उपलब्धि भी अधिक पाई गई।

वर्तमान परिस्थिति के परिसदर्भ मे शिक्षा की सार्वजनीन मांग, ज्ञान का विस्फोट एवं विद्यार्थियो की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई संख्या ने शिक्षण-अधिगम के क्षेत्र मे अनेक समस्याए उत्पन्न कर दी है। फलतः शिक्षण के क्षेत्र में नवाचार एवं नवीन विधियां प्रयुक्त की जा रही हैं। "अभिक्रमित अनुदेशन" भी इन नवीन विधियो मे से एक है। अर्थ की दृष्टि से इसके सप्रत्यय मे निरंतर परिवर्तन होते रहते है, इसीलिए बी.एफ स्नीकर ने "अभिक्रमित अनुदेशन" को शिक्षण की कला तथा अधिगम के विज्ञान की संज्ञा दी है। इसका उद्‌भव अधिगम के सिद्धान्तों के आधार पर एक अनुदेश की व्यूह रचना के रूप मे हुआ है। इस व्यूह रचना मे विद्यार्थियों के अधिगम के लिए पाठ्य-वस्तु को छोटे-छोटे पदो मे क्रमवद्ध रूप मे प्रस्तुत किया जाता है जिसका संबध अतिम व्यवहार में होता है।

अत. विचार किया गया कि हिन्दी भापा का व्याकरण विद्यार्थियों के लिए दुरूह शुष्क विषय बना रहता है। व्याकरण की दुरूहता को कम करने तथा व्याकरण के नियमो को सहज वनाए जाने की दृष्टि से हिन्दी विषय के व्याकरण से संधि, स्वर सधि व उसके भेद प्रकरण का चयन किया गया। चूकि हिन्दी विषय की व्याकरण को चयनित प्रकरण पर "अभिक्रमित अनुदेशन" तैयार नहीं पाए गए। अत सर्वप्रथम शोधकर्ता ने शोध के प्रथम चरण मे "रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन" तैयार किया। रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की प्रभावशीलता तथा परम्परागत शिक्षण से इसकी तुलना करने के उद्देश्य से उक्त शोध कार्य किया गया। शोध कार्य कक्षा 10 मे अध्ययनरत राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय, बीकानेर, राजस्थान की छात्राओं पर किया गया।

प्रकरण चयन के साथ शोध समस्या को सीमाकित किया गया।

"अभिक्रमित अनुदेशन" के नियोजन के समय उद्देश्यों का निर्धारण किया गया। तदनुरूप व्यवहार परिवर्तन भी निर्धारित किए गए। "अभिक्रमित अनुदेशन" के पदो की सख्या 132 रखी गई। विश्वसनीयता की जाच के लिए "कोहन" का सूत्र प्रयोग किया गया। अभिक्रमित का लेखन "स्किनर" के "क्रिया प्रसूत अनुबध सिद्धान्त" की शैली के आधार पर किया गया। रेखीय अभिक्रमिक शैली मे भी विद्यार्थी उद्दीपन अनुक्रिया तथा पुनर्बलन के आधार पर बाह्य अनुक्रियाए करते हैं।

अभिक्रमित के सम्पादन मे मानदण्ड परीक्षा को अंतिम परीक्षा के रूप मे प्रस्तुत किया गया। मानदण्ड

परीक्षा के आधार पर उपलब्धि प्राप्ताको की सहायता से उद्देश्यो की सप्राप्ति के सबंध में निर्णय लिया जाता है। मानदण्ड परीक्षा के निर्माण मे उद्देश्यो की सख्या 40 तथा परीक्षण की संख्या 70 रखी गई। इसमें वहुविकल्प प्रश्न 23 (33 प्रतिशत) रिक्त स्थान पूर्ति प्रश्न 10 (14 प्रतिशत), लघुउत्तरात्मक प्रश्न 25 (36 प्रतिशत) सत्य-असत्य प्रश्न 8 (11 प्रतिशत) तथा विज्ञान पद प्रश्न 4 (6 प्रतिशत) रखे गए। बाह्य मानदण्ड तथा अभिवृत्ति गुणक का प्रयोग किया गया।

- **शोध विधि**— प्रयोगात्मक विधि शोध मे प्रयुक्त की गई।
- **उपकरण**— अधोलिखित उपकरण शोध में प्रयुक्त किए गए यथा—
  - रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन पाठो का निर्माण।
  - डा एस. जालोटा का शाब्दिक बुद्धि परीक्षण।
  - डा. सी पी. माथुर का अध्ययन संबंधी आदतों एवं मनोवृत्तियों का परीक्षण।
  - मॉडस्ले की व्यक्तित्व अनुसूची का हिन्दी रूपान्तरण। (डा. जालोटा तथा कपूर द्वारा)
  - डा. बाकर मेहदी द्वारा सृजनशील चिन्तन परीक्षण।
  - मानदण्ड परीक्षण।

शोध मे प्रयोगात्मक विधि इसलिए प्रयुक्त की गई क्योकि यह सर्वाधिक वैज्ञानिक विधि है। इस विधि के द्वारा अध्ययन नियत्रित परिस्थितियो में किया जाता है। इसके अंतर्गत कोई सूक्ष्म समाधान प्रस्तुत किया जा सकता है। अत शोध अध्ययन में दो समूहों का प्रयोग किया गया— 10 प्रयोगात्मक समूह (समूह 1) एव 2 नियत्रित समूह (समूह 2)।

शोध मे निष्पत्ति परीक्षा के आधार पर प्राप्तांक आश्रितवर के रूप मे प्रयोग किए गए तथा स्वतन्त्र वर के रूप मे बुद्धि, व्यक्तित्व (अतर्मुखी-बहिर्मुखी) स्नायुदौर्बलय, सृजनात्मक चिन्तन, लचीलापन, प्रवाह मानता, मौलिकता तथा अध्ययन आदते व शिक्षण विधियो को रखा गया।

निष्पत्ति प्राप्ताको को प्रत्येक शिक्षण विधि के समूह को स्वतन्त्र घर के उच्च तथा निम्न समूह के आधार पर विश्लेपित किया गया।

उपकरण तथा प्रक्रिया के निर्धारण के साथ न्यादर्श चयन के आधार पर निर्धारित किए गए। न्यादर्श चयन किसी भी अनुसधान की आधारशिला होता है। यह आधारशिला जितनी सुदृढ होगी, शोध के परिणाम उतने ही विश्वसनीय तथा परिशुद्ध होते है। अत महारानी बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय की परीक्षा परिणाम के प्राप्ताको के आधार पर 500 छात्राओ में से 200 छात्राओ का बुद्धि परीक्षण किया गया। उपलब्धि प्राप्तांकों के आधार पर उन्हे 33 शतमक तथा 66 शतमक को आधार मान चयन किया गया। यादृच्छिक प्रतिचयन की विधि के द्वारा 70 छात्राओ के न्यादर्श का चयन किया गया। 35-35 छात्राओ के दो समूह बनाकर उन्हे सात दिवस तक परम्परागत शिक्षण विधि से नियत्रित समूह को तथा प्रयोगात्मक समूह को रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन विधि से अध्ययन कराया गया। परम्परागत विधियो में आगमन तथा निगमन विधि का प्रयोग किया गया।

शोध का प्रमुख उद्देश्य स्वतत्र चरो एवं शिक्षण विधियो के द्वारा छात्राओ को उपलब्धि के प्राप्तांकों के बीच सबध ज्ञात करना रहा।

अध्ययनोपरान्त उनकी शैक्षिक उपलब्धि ज्ञात करने के लिए शोधकर्ता ने उन छात्राओ को मानदण्ड परीक्षा के रूप मे वस्तुनिष्ठ प्रश्न-पत्र दिया। मानदण्ड परीक्षा का निर्माण भी उद्देश्यानुसार व्यवहार की जाच करने के लिए किया गया। उद्देश्यों की सख्या 40 तथा परीक्षण पदो की सख्या 70 रखी गई। छात्राओ द्वारा इस प्रश्न-पत्र के हल स्वरूप प्राप्त प्राप्तांको को शिक्षण विधियो की प्रभावशीलता का आधार बनाया गया।

शोध के दौरान छात्राओ की वृद्धि, सृजनशीलता, व्यक्तित्व तथा अध्ययन आदतो का पता लगाने के लिए विभिन्न परख दिए गए। संकलित दत्तो का विश्लेपण करने के लिए प्राप्त प्राप्ताको का उच्च तथा निम्न समूह के आधार पर माध्य तथा मानक विचलन निकाला गया। 33 प्रतिशत अंक से नीचे वाली छात्राए निम्न समूह मे तथा 55 शतमंक के ऊपर वाली छात्राए उच्च समूह

मे सम्मिलित की गई। छात्राओ की निष्पत्ति परीक्षा पर प्राप्तांक आश्रित रूप मे लिए गए। माध्यो के अतर की जाच "टी" परख द्वारा की गई तथा अतर की सार्थकता का पता लगाया गया। इस संपूर्ण प्रक्रिया के आधार पर इस शोध कार्य के द्वारा अधोलिखित शोध निष्कर्ष प्राप्त हुए। अभिकल्प का एक उदाहरण प्रस्तुत है।

मौलिकता का सार्थक प्रभाव दोनो विधियो द्वारा अध्ययन कराने से पाया गया।

बुद्धि का शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पाया गया। सामान्य धारणा यह रहती है कि कम बुद्धि वाली छात्राए अधिक बुद्धिलब्धि वाली छात्राओं से अपेक्षाकृत अधिक सीखती है। उनकी शैक्षिक उपलब्धि कम बुद्धिवाली छात्राओ की शैक्षिक उपलब्धि से अधिक होती है। वर्तमान शोधकार्य में भी यही पाया गया। फलत' जिन छात्राओ की बुद्धिलब्धि अधिक थी उनकी शैक्षिक उपलब्धि भी अधिक पाई गई। गोर्की तथा माता (1963), छोटी तथा डोटी (1964), हार्वले (1965) तथा कमाडिया (1972) के शोध द्वारा कथन की पुष्टि पाई गई।

सृजनशीलता में प्रवाहमानता का शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पाया गया। सामान्यत यह धारणा रहती है कि अधिक प्रवाहमानता रखने वाली छात्राए अधिक शैक्षिक उपलब्धि प्राप्त करती है तथा कम प्रवाहमानता रखने वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि भी कम रहती है। प्रस्तुत शोध मे परिणाम धारणा के अनुरूप ही पाए गए।

सृजनशीलता मे लचीलापन का शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पाया गया किन्तु रेखी अभिक्रमित अनुदेशन विधि से पढ़ने वाली छात्राओ मे उच्च स्तर का लचीलापन रखने वाली छात्राओ की अपेक्षाकृत औसत से कम स्तर का लचीलापन रखने वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि अधिक पाई गई।

सृजनशीलता में मौलिकता का शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पाया गया किन्तु अधिक मौलिकता रखने वाली छात्राओं की अपेक्षाकृत तुलना गे औसत से कम स्तर की मौलिकता रखने वाली छात्राओं की उपलब्धि अधिक रही। "रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन" समूह में यह अंतर 05 स्तर पर सार्थक पाया गया। जबकि परम्परागत शिक्षण समूह में यह अंतर सार्थक नही पाया गया।

अंतर्मुखी तथा बहिर्मुखी व्यक्तित्व का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव ज्ञात की सार्थकता का आकलन किया गया। बहिर्मुखी छात्राओं की सप्राप्ति अतर्मुखी छात्राओ की तुलना मे उच्च रही। अतर्मुखी तथा बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाली छात्राओ मे दोनो शिक्षण विधियो द्वारा सार्थक सह सबध पाया गया।

स्नायुदौर्बलय में औसत से कम स्तर का स्नायुदौर्बलय रखने वाली छात्राओ की शैक्षिक उपलब्धि दोनो शिक्षण विधियो के द्वारा उच्च पाई गई।

अध्ययन आदते तथा शैक्षिक सप्राप्ति में घनिष्ठ सह सबध पाए गए। उच्च स्तर की अध्ययन आदतें रखने वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि उच्च तथा निम्न स्तर की अध्ययन आदतें रखने वाली छात्राओ की शैक्षिक उपलब्धि कम पाई गई।

अन्य शोध कार्य के निष्कर्षो की भांति वर्तमान शोध कार्य द्वारा भी इस निष्कर्ष पर पहुंच गया कि "रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन" एक प्रभावशाली शिक्षण विधि है।

प्रश्न उठता है कि शैक्षिक उपलब्धियो को प्रभावित करने वाले घटक बुद्धि, व्यक्तित्व, सृजनशीलता तथा अध्ययन आदते आदि रेखीय अनुदेशन द्वारा प्राप्त की गई शैक्षिक उपलब्धियो को क्या इसी प्रकार प्रभावित करेंगे? इस समस्या का हल ढूढने के लिए दो माध्यमो के अतर की जाच "टी" परख द्वारा किए जाने का निर्णय लिया गया तथा सार्थकता का पता लगाया गया। "बुद्धि" के उपलब्धि पर पडने वाले प्रभाव को रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन द्वारा विपरीत पाया गया। औसत से कम स्तर की बुद्धि रखने वाली छात्राओ से अधिक उच्च बुद्धिलब्धि रखने वाली छात्राएं कम लाभान्वित होती है। व्यक्तित्व तथा शिक्षण विधियों में सार्थक सह संबंध पाया गया। अध्ययन आदते तथा शिक्षण विधियों में प्रत्यक्ष सबंध पाया गया।

वर्तमान शोधकार्य केवल 70 छात्राओं पर प्रक्रिया

गया जो कि सार्थक निर्णय पर पहुंचने के लिए पर्याप्त नही है। इस "प्रकरण" पर शोध हेतु कम से कम 500 शोधकार्य के लिए ही इतने बड़े न्यादर्श का चयन किया जा सकता था। अतः परिणामस्वरूप आगामी शोध के लिए न्यादर्श का बड़ा आकार लिया जाना चाहिए ताकि ठोस निर्णय पर पहुचा जा सके।

वर्तमान शोध मे 8 स्वतत्र चर लिए गए। किन्तु माध्यो का अतर ज्ञात करने के लिए बड़ा न्यादर्श लेकर भविष्य में सार्थकता का पता लगाया जाना चाहिए।

शोध कार्य "स्वर सधि तथा उसके भेद" प्रकरण पर रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन का निर्माण किया जाना यद्यपि कठिन कार्य होता है किन्तु अधिगमकर्ता की उपलब्धि को ध्यान में रखकर भविष्य हेतु सुझाव दिए जाते है कि समास, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, व्यंजन तथा विसर्ग, संधि, उपसर्ग तथा प्रत्यय आदि पर भी रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन का निर्माण किया जाना चाहिए। इन प्रकरणो पर रेखीय अभिक्रमित अनुदेश तैयार होने पर छात्र/छात्राओ के लिए व्याकरण की दुरूहता समाप्त हो जाएगी। अभिक्रमित अनुदेश तैयार कर उनकी प्रभाव शीलता की जाच की जानी चाहिए।

वर्तमान शोध शैक्षिक दृष्टि से अत्यधिक उपयोगी साबित हो सकता है क्योकि इसमें परम्परागत विधि की तुलना मे रेखीय अभिक्रमित अनुदेश अधिक प्रभावी पाई गई।

वर्तमान समय मे ज्ञान का विस्तार हो रहा है। भाषा शिक्षण मे भाषा के लिखने तथा बोलने की मेरूदण्ड "व्याकरण" कहलाती है। भाषा के सम्यक ज्ञान के अभाव मे प्रस्तुत प्रसंगानुसार आशय को समझने में कठिनाई तथा गडबड़ी पैदा हो सकती है। भाषा वह साधन होती है जिसके द्वारा हम अपने मन के भाव दूसरों पर प्रकट करते हैं। हमारे मन में समय-समय पर विचार, भाव, इच्छाए तथा अनुभूतियां उत्पन्न होती रहती हैं। हम भाषा के द्वारा बोलकर, लिखकर तथा संकेतो के द्वारा दूसरो पर प्रकट करते है। भाषा द्वारा बहुत से ऐसे शब्दो और अर्थ के द्वारा मन मे एक अभेद्य सबंध स्थापित हो जाता है। फलतः नवीन तथ्यों तथा दुरूह प्रकरणों पर रेखीय अभिक्रमित अनुदेश प्रणाली पर पुस्तके तैयार की जाएं तो सभी स्तर के विद्यार्थी बिना किसी कठिनाई के विषय-वस्तु को सीख सकते है। सरकार का व्यय जो सेमिनार तथा कार्यगोष्ठियो में किया जाता है उसको अभिक्रमित अनुदेश की पुस्तको के माध्यम से बचाया जा सकता है।

खुला विश्वविद्यालय तथा खुला विद्यालय के विद्यार्थियों के लिए भी अनौपचारिक केन्द्रो पर शिक्षण प्राप्त कर रहे विद्यार्थियो के लिए तथा पत्राचार पाठ्यक्रम के द्वारा अध्ययनरत व स्वयं पाठी विद्यार्थियों के लिए भी इन अनुदेशो की उपयोगिता सिद्ध हो सकती है तथा वे भी इससे लाभान्वित हो सकते हैं।

अत इसके लिए विभिन्न प्रकरणो पर व्याकरण के रेखीय अभिक्रमित अनुदेश का निर्माण किया जाए तथा प्रथम लेखन के पश्चात् वैयक्तिक तथा समूह पर इसका परीक्षण करके इन्हे अन्तिम रूप देकर टंकण/मुद्रण/चक्राकित करवाकर विद्यार्थियो को उपलब्ध कराया जाए।

कक्षान्तर्गत विद्यार्थियों की निरन्तर बढती हुई सख्या के कारण शिक्षको का कार्यभार बढ गया है। अत' शिक्षक विद्यार्थियो पर वैयक्तिक ध्यान दिए जाने मे अपनी असमर्थता प्रकट करते हैं। विद्यालयो तथा महाविद्यालयो मे रेखीय अभिक्रमित अनुदेश का उपयोग कर अध्यापक के भार को घटाया जा सकता है। अध्यापक इस समय का उपयोग व्यक्तिगत मार्गदर्शन, उपचारात्मक शिक्षण, निदानात्मक परीक्षण तथा गृहकार्य सशोधन मे कर सकता है। ▢▢

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
उदयपुर, राजस्थान

संस्कृत में निहित जीवन-मूल्यों का विस्थापन– श्लोकों द्वारा

❑ हुक्मी चन्द नागदा

पाठ्यक्रम में निहित अनुभवों के संकलन, लिखित प्रस्तुतीकरण, सीखे हुए ज्ञान की पुनरावृत्ति और अप्रत्यक्ष रूप से ज्ञान प्राप्त करने की दृष्टि से पाठ्यपुस्तकें अपरिहार्य हैं। आवश्यकता इस बात की है कि इनमें पाठ्य-वस्तु, भाषा-शैली आदि की दृष्टि से पर्याप्त सुधार करके इन्हें छात्रों के लिए अधिकाधिक उपयोगी बनाया जाना चाहिए।

भारत की प्रतिष्ठा सस्कृत और उसकी संस्कृति से है। संस्कृति, सस्कृत से रिक्त ऐसी प्रतीत होती है जैसे प्राणशून्य देह। इसलिए कहा भी गया है- "भारतस्य प्रतिष्ठे दे संस्कृतण्चैव सस्कृति·"

जीवन के परम लक्ष्य मानवता के विकास एव शाश्वत मानवीय मूल्यों, नैतिक मूल्यों, आध्यात्मिक मूल्यो, सामाजिक एवं सास्कृतिक मूल्यों के निर्वहन एवं विश्व मानवतावाद की महती भूमिका के सतत् प्रेरणादायी स्वरूप की जानकारी किए वगैर हम भारतीयता को कदापि नही समझ सकते। जब भी भारतीय सभ्यता एव संस्कृति का प्रश्न उठता है तो हम अपने उस चिर संचित अतीत की ओर दृष्टिपात करते है।

सस्कृत भाषा भारतवर्ष की संस्कार भाषा है। सस्कृत भाषा का प्रयोग भारत में विविध सस्कार कार्यो मे किया जाता है। इस वाड्मय की कई विशेषताओ में से एक यह है कि इसमे विद्यमान सूक्तिया आज भी भारतीयो के अभ्युद्य और श्रेयस के लिए निरन्तर प्रेरणा देती रहती हैं। इसका प्रयोग भारत सरकार के विभिन्न विभागो मे ध्येय-वाक्य के रूप मे किया जाता है– जैसे भारत सरकार के अपने चिह्न त्रिमुखी सिंहो के चित्र के नीचे 'सत्यमेव जयते', भारतीय जीवन बीमा निगम के चित्र दोनों हाथो के मध्य– एक दीपक व उसके नीचे "योगक्षेम वहाम्यहम्"। भारतीय वायुसेना के चिह्न विमान के चित्र के नीचे "नम स्पर्श दीप्तम्", हरियाणा सरकार के राज्यचिह्न मे "योग कर्मसुकौशलम्"। लोकसभा अध्यक्ष के आसन के ऊपर "धर्मचक्र प्रवर्तनाय", लोकसभा के केन्द्रीय कक्ष की भित्ति पर "अयिज· परोवति ..वसुधैव कुटुम्बकम्"। डाक-तार विभाग के चिह्न पर "अहनिश सेवामहे"। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के ध्येय वाक्य के रूप मे "विद्ययाऽमृतमश्नुते" किं वहुना और अधिक क्या कहा जाए। उपर्युक्त विवेचन स्पष्ट रूप से सस्कृत भाषा की गौरवगाथा को प्रकट करता है। इससे स्वत· सिद्ध होता है कि सस्कृत भाषा भारत की जीवनमूर्त भाषा है, यह भाषा भारत देश मे विभूषित होती है।

चिरकाल से संस्कृत से अनुप्राणित संस्कृति के आधारभूत ग्रन्थ वेद-पुराण-स्मृति, तंत्र, वैधक ग्रन्थ, कक्षा-काव्य व्याकरण, ज्योतिष, नाटक, छन्द, शिक्षा कल्प कोश आदि ग्रथो से संचित हमारे पूर्वजों की अनुपम एवं अमूल्य निधि इसी भाषा के माध्यम से हमे उपलब्ध हो सकती है जिसकी उपादेयता आज भी अक्षुण्ण वनी है। अत भारतीय सस्कृति के उत्तरोत्तर विकास एवं आधुनिक भारतीय भाषाओं की श्रीवृद्धि के लिए सस्कृत का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है।

सस्कृत पाठ्यपुस्तक	
विद्यालय का नाम	चयनित विद्यालय
विषय	संस्कृत मे निहित जीवन-मूल्यो का विस्थापन– श्लोकों द्वारा
कक्षा परिसीमन	कक्षा 'आठ' अ
चयनित अवधि	चालीस दिन
विषय	सस्कृत
समस्या कथन	संस्कृत मे निहित जीवन-मूल्यो का विस्थापन– श्लोको द्वारा
उद्देश्य	कक्षा आठ मे श्लोको द्वारा सस्कृत में निहित जीवन-मूल्यों का विस्थापन
विधि	☐ अवलोकन ☐ सर्वेक्षण
प्रविधि	● शाब्दिक चार्ट, ● चित्र, ● श्रव्य प्रणाली, ● दृश्य-श्रव्य प्रणाली, ● फ्लेश कार्ड, ● अर्थबोध प्रणाली

उद्देश्य

- ☐ सस्कृत विपय के प्रति रुचि जाग्रत करना।
- ☐ सस्कृत विपय के प्रति आस्था जागृत करना।
- ☐ सस्कृत विषय के प्रति निष्ठा उत्पन्न करना।
- ☐ सस्कृत विषय के ज्ञान को आत्मसात् कर उपयोग करना।
- ☐ जीवन-मूल्यो की पहचान करना।
- ☐ जीवन-मूल्यो को आचरण मे ढालना।
- ☐ जीवन-मूल्यों की शिक्षा ग्रहण करना।
- ☐ जीवन-मूल्यों को दैनिक जीवन मे प्रयोग करना।

नियोज्य पाठ्यपुस्तक में निहित श्लोकों के द्वारा

- ☐ पहचान करवाना।
- ☐ आस्था जाग्रत कराना।
- ☐ निष्ठा उत्पन्न कराना।
- ☐ दैनिक जीवन मे मूल्यो की स्थापना करवाना।
- ☐ जीवन-मूल्यो का आचरण सदुपयोग।

विधि

- ☐ अवलोकन
- ☐ सर्वेक्षण

प्रविधि

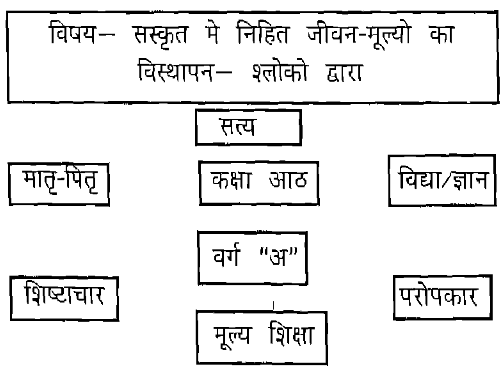
- ● शाब्दिक चार्ट
- ● चित्र
- ● श्रव्य प्रणाली
- ● दृश्य-श्रव्य प्रणाली
- ● फ्लेश कार्ड
- ● अर्थबोध प्रणाली

तथ्य एकत्रीकरण

- ☐ सम्पूर्ण कक्षावार
- ☐ छात्रावार
- ☐ छात्रवार
- ☐ तुलनात्मक अध्ययन

चयनित जीवन-मूल्य

- ☐ सत्य
- ☐ मातृ-पितृ-गुरुभक्ति
- ☐ विद्या (ज्ञान)
- ☐ शिष्टाचार
- ☐ परोपकार
- ☐ क्रोध एवं क्षमा



आधुनिक शिक्षा प्रणाली में पाठ्यपुस्तकों का महत्व सर्वविदित है। छात्र एव शिक्षक दोनो को इनसे समुचित पथ प्रदर्शन प्राप्त होता है। वैसे पाठ्यपुस्तकों को शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया मे एक सहायक साधन के रूप में ही स्वीकार किया जाना चाहिए, किन्तु यदि निष्पक्ष रूप से देखा जाए तो विशेषकर वर्तमान शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत पाठ्यपुस्तके ही छात्रो एव शिक्षकों का एक मात्र आश्रय है। अन्य विषयों की भांति भाषा में ही पाठ्यपुस्तकों के महत्व का अवलाप नहीं किया जा सकता।

पाठ्यक्रम मे निहित अनुभवों के संकलन, लिखित प्रस्तुतीकरण, सीखे हुए ज्ञान की पुनरावृत्ति और अप्रत्यक्ष रूप से ज्ञान प्राप्त करने की दृष्टि से पाठ्यपुस्तके अपरिहार्य है। आवश्यकता इस बात की है कि इनमें पाठ्य-वस्तु, भाषा-शैली आदि की दृष्टि से पर्याप्त सुधार करके इन्हें छात्रो के लिए अधिकाधिक उपयोगी वनाया जाना चाहिए।

उद्देश्य

- ☐ भाषायी कौशल का विकास।
- ☐ जीवन-मूल्यो की पुनर्स्थापना पर बल।
- ☐ सद्नागरिक एव सामाजिक, मानवीय मूल्यो की पुनर्स्थापना।
- ☐ छात्रों को विभिन्न अनुभवो को प्रदान करना।
- ☐ संस्कृत साहित्य को विभिन्न विधानों एव लेखन शैलियो का ज्ञान कराना।
- ☐ छात्रों मे जीवन-मूल्यो व छात्रों मे संस्कृत पढ़ने के प्रति रुचि उत्पन्न करना।
- ☐ बालको में सद्सत का विवेक उत्पन्न करना।

चयनित प्रविधि

शाब्दिक चार्ट से अर्थबोधतम

- शाब्दिक चार्ट
- चित्र प्रविधि
- श्रव्य प्रणाली
- दृश्य-श्रव्य प्रणाली
- फ्लेश कार्ड
- अर्थबोध प्रणाली

शाब्दिक चार्ट— प्रस्तुत प्रयोग मे शब्दो के माध्यम से जीवन-मूल्यों को प्रदर्शित करते हुए श्लोक कक्षा-कक्ष मे दर्शाते हुए निश्चित जीवन-मूल्यो की उद्देश्य प्राप्ति के लिए सम्मिलित किए गए हैं। इसमे छात्रो का सहयोग भी लिया गया है। जिससे उनको अभिप्रेरक तथा कार्य मे रुचि होती रही है एव जीवन-मूल्यो की भिन्न-भिन्न रूप से प्रश्नो के द्वारा, छात्रो के द्वारा पहचान करवाई गई।

चित्र प्रविधि— चित्र युक्त चार्टो में परिसीमित किए गए छः जीवन-मूल्यो को दर्शाया गया एवं उनसे सबधित श्लोक, समझ प्रस्तुत कर उसमें से जीवन-मूल्यो को छाटने के लिए कहा गया। प्रत्येक विद्यार्थी ने अपनी क्षमतानुसार अपनी तत्परता का प्रयोग कर जीवन-मूल्यो को छांटा।

श्रव्य प्रणाली (टेपरिकार्डर एवं रेडियो)— टेपरिकार्डर की सहायता से अध्यापक ने रेडियो की सीमाओ को दूर करते हुए कुछ कार्यक्रम एव कुछ श्लोको का अनुप्रयोग किया। जिससे छात्रों ने अवधान केन्द्रित कर जीवन-मूल्यों को पहचानने का प्रयास किया। तत्पश्चात् श्यामपट पर छात्र सहभागीत्व से जीवन-मूल्यो को लिखवाया गया।

दृश्य-श्रव्य प्रणाली— इसके लिए अध्यापक ने सबसे अधिक आशापूर्ण एव प्रभावोत्पादक सदेश वाहक दृश्य-श्रव्य यंत्र को अपना आधार बनाया तथा बालकों मे अपनी— देखने व सुनने— दोनों इन्द्रियो का प्रयोग करने के लिए दूरदर्शन पर आने वाले जीवन-मूल्यों से युक्त धारावाहिकों की सूची एव जो कड़ी देखी हो उससे प्राप्त होने वाली शिक्षा के बारे मे कक्षा में विचार-विमर्श किया इससे संबधित श्लोक लिखकर लाने को कहा। यह प्रयोग अत्यधिक पुष्टिवर्धक रहा।

फ्लेश कार्ड— छोटे-छोटे फ्लेश कार्डो के माध्यम से प्रदर्शित होने वाले जीवन-मूल्यों की सूची वनाने को कहा और जिस छात्र को जीवन-मूल्य अति उपयोगी लगा उससे सबधित 2-2 श्लोक लिखने को कहा। दूसरे दिन कक्षा-कक्ष मे छात्र और छात्राओ में से प्रतिनिधि को चुनकर श्लोक सुनाने को कहा। जिससे स्वस्थ प्रतिस्पर्धा का जन्म हुआ।

अर्थबोध प्रणाली— कक्षा-कक्ष मे अध्यापक द्वारा सरल अधिग्रहण के लिए अर्थबोध प्रणाली का अधिकतर सहारा लिया गया जिससे कि छात्रों को संस्कृत श्लोक में स्थापित जीवन-मूल्यो को समझने के लिए अधिक श्रम नही करना पडा और छात्रों में रुचि उत्पन्न हुई।

मूल्यांकन का अर्थ एवं परिभाषा

मूल्यांकन की नूतन अवधारणा वस्तुतः परीक्षा की परम्परागत धारणा से सर्वथा निम्न है। इसका अर्थ है— शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति का पता लगाना। यह कक्षा मे शिक्षक द्वारा दिए गए सीखने के अनुभवो के प्रभावो को ज्ञात करता है। इसके माध्यम से छात्र के विकास की जानकारी सभव होती है। इसमे अनेक विधियो व प्रविधियो का प्रयोग किया जाता है। परीक्षा अथवा मापन मूल्याकन के अंग मात्र हैं। छात्रों के सम्पूर्ण ज्ञान का सही अनुमान मूल्याकन प्रणाली द्वारा ही सभव है।

सर्वेक्षण

प्रस्तुत प्रयोग मे प्रारम्भ से अन्त तक छात्रो की प्रगति का मूल्यांकन उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अध्यापक द्वारा सर्वेक्षित किया गया तथा उन्हें चालीस दिन के उपरान्त एक आत्म-मूल्यांकन प्रपत्र दिया गया जिसमे तीन खण्ड बनाए गए—

- ☐ अभिभावक द्वारा
- ☐ अध्यापक द्वारा
- ☐ स्वय छात्र द्वारा

इन तीनो के द्वारा भरे गए प्रपत्र द्वारा प्रति छात्र मे आचरण संबधी कितने प्रतिशत सुधार हुआ है। एक सामने स्पष्ट छवि उभर कर आई जिससे अनुमान लगाया गया कि स्थापित किए गए जीवन-मूल्यो के प्रति छात्रो की अवधारणा में क्या विकास हुआ है?

निरीक्षण

इस प्रविधि का प्रयोग कर अध्यापक ने व्यवहार परिवर्तन एव आत्म निरीक्षण को स्पष्ट किया।

निष्कर्ष

संस्कृत अध्यापक द्वारा निष्कर्ष के लिए निम्नलिखित मापदण्ड तैयार किए गए।

- ☐ कक्षावार
- ☐ छात्रवार
- ☐ छात्रावार
- ☐ तुलनात्मक
- ☐ आत्ममूल्याकन

चयनित जीवन-मूल्यो को आधार मानकर अध्यापक के द्वारा सम्पूर्ण कक्षा के छात्रो को श्लोकगत जीवन-मूल्यो का परिचय कराया गया तथा उन्हें पन्द्रह दिन का अवसर दिया कि उन्होने दैनिक जीवन मे किस जीवन-मूल्य की व्यवहार मे अनुपालना की या प्रयत्न किया। इसके लिए अध्यापक ने स्व-मूल्यांकन प्रपत्र का प्रयोग किया एवं प्रतिदिन के अनुसार किस जीवन-मूल्य का कितनी बार पालन किया स्वय भरने को कहा और पन्द्रह दिन के निरीक्षण के दौरान मूल्यांकन प्रपत्र के आधार पर छात्र को श्रेणी दी गई। इस प्रयोग से निश्चय ही कई छात्रो मे आदर्श विद्यार्थी के गुणो का उद्‌भव हुआ एवं आपसी विचार-विमर्श के दौरान छात्र में यह आत्मबोध हुआ कि मुझे अधिक जीवन-मूल्यो का अनुसरण करना है। ☐☐

केन्द्रीय विद्यालय
एकलिंग गढ़
उदयपुर, राजस्थान

वर्तमान शिक्षा में टोली-शिक्षण

❑ शशि शुक्ला

टोली-शिक्षण, शिक्षण व्यवस्था का एक स्वरूप है। टोली-शिक्षण में भाग लेने वाले शिक्षक अपनी-अपनी क्रियाएं स्वयं निर्धारित करते हैं। इसके अतिरिक्त शिक्षक सभी साधनों, रुचियों और दक्षताओं को इकट्ठा करते हैं। इस प्रकार टोली-शिक्षण, शिक्षण की एक सुव्यवस्थित प्रणाली है जिसमें कई शिक्षक मिलकर विद्यार्थियों के एक समूह को अनुदेशन प्रदान करते हैं। सामान्यतः इसमें दो या दो से अधिक शिक्षक भाग लेते हैं। ये शिक्षक, शिक्षण की योजना और उसका कार्यान्वयन विद्यार्थियों के समूह के लिए मिलकर करते हैं। टोली-शिक्षण में शिक्षण-विधियों की योजना, समय तथा प्रक्रिया लचीली रखी जाती है ताकि शिक्षण के उद्देश्यों व शिक्षकों की योग्यता के अनुसार टोली-शिक्षण के कार्यक्रम में आवश्यक परिवर्तन किया जा सके।

आधुनिक युग मे शिक्षा प्राचीन परम्पराओ के चगुल से निकलकर शिक्षण, अधिगम तथा प्रशिक्षण के क्षेत्र में मनोविज्ञान की वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग कर रही है। इससे शिक्षा के क्षेत्र मे क्रान्तिकारी परिवर्तन हो रहे हैं। आज के युग मे शिक्षण को विज्ञान के रूप मे पहचाना जाता है। शिक्षण को कला भी माना गया है। शिक्षण को विज्ञान इस आधार पर कहा जाने लगा कि शिक्षण की सभी क्रियाओं का निरीक्षण तथा विश्लेषण किया जा सकता है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में मनोवैज्ञानिक विचारधारा के प्रादुर्भाव के परिणामस्वरूप शिक्षा बाल-केन्द्रित हो गई है। ऐसी स्थिति मे शिक्षक का दायित्व अत्यधिक बढ़ गया है। शिक्षक को प्रतिवर्ष एक ही प्रकार की पाठ्य-वस्तु पढ़ानी पडती है। इससे कभी-कभी उदासीनता तथा अरुचि का भाव उत्पन्न हो जाता है। फिर भी, अध्यापन कार्य से जुड़े होने के कारण उसे विवश होकर शिक्षण कार्य करना पड़ता है। इस प्रकार की परिस्थितियो मे टोली-शिक्षण की आवश्यकता अनुभव होती है।

कक्षा में अधिगम प्रक्रिया मे सुधार लाने के लिए टोली-शिक्षण का प्रयोग किया जाने लगा है। पाश्चात्य देशों मे टोली-शिक्षण का प्रयोग अनुदेशन की गुणवत्ता को बढाने के लिए गत पच्चीस वर्षो से किया जा रहा है। यद्यपि भारत वर्ष में इसका प्रयोग प्रारम्भिक चरण में ही है।

इस प्रविधि का विकास सर्वप्रथम 1955 मे हार्वर्ड विश्वविद्यालय में हुआ। इसके बाद यह 1960 मे ब्रिटेन मे पहुंचा। ब्रिटेन मे इसका विकास जे. फ्रीमैन ने किया। धीरे-धीरे इसका प्रयोग स्कूल तथा कालेजों में किया जाने लगा। शिकागो विश्वविद्यालय के फासिस चेज ने टोली-शिक्षण का प्रयोग प्रभावशाली शिक्षण के लिए किया। भारतवर्ष मे भी इस शिक्षण प्रविधि का प्रयोग किया जाने लगा है परन्तु इसकी सफलता पर सन्देह भी किया जा रहा है।

टोली-शिक्षण, शिक्षण व्यवस्था का एक स्वरूप है। टोली-शिक्षण मे भाग लेने वाले शिक्षक अपनी-अपनी क्रियाएं स्वयं निर्धारित करते है। इसके अतिरिक्त शिक्षक

सभी साधनों, रुचियो और दक्षताओं को इकट्ठा करते हैं। इस प्रकार टोली-शिक्षण, शिक्षण की एक सुव्यवस्थित प्रणाली है जिसमें कई शिक्षक मिलकर विद्यार्थियो के एक समूह को अनुदेशन प्रदान करते है। सामान्यत' इसमें दो या दो से अधिक शिक्षक भाग लेते है। ये शिक्षक, शिक्षण की योजना और उसका कार्यान्वयन विद्यार्थियों के समूह के लिए मिलकर करते है। टोली-शिक्षण मे शिक्षण-विधियो की योजना, समय तथा प्रक्रिया लचीली रखी जाती है ताकि शिक्षण के उद्देश्यों के अनुसार तथा शिक्षकों की योग्यता के अनुसार टोली-शिक्षण के कार्यक्रम में आवश्यक परिवर्तन किया जा सके।

इस प्रकार टोली-शिक्षण अनुदेशनात्मक व्यवस्था का वह स्वरूप है जिसमे वे शिक्षक और विद्यार्थी सलिप्त होते है जो उन्हें सौंपे जाते है। इसमे दो या अधिक शिक्षकों को साथ मिलकर कार्य करने का उत्तरदायित्व सौंपा जाता है। यह उत्तरदायित्व विद्यार्थियो के एक ही समूह को सम्पूर्ण अनुदेशन देने के लिए या उस अनुदेशन के महत्वपूर्ण भाग के लिए होता है।

डेविड वरविक के अनुसार "टोली-शिक्षण संगठन का एक स्वरूप है जिसमे कई शिक्षक अपने साधनो, रुचियों तथा दक्षताओं को इकट्ठा कर लेते है तथा विद्यार्थियो की आवश्यकताओ के अनुसार शिक्षको की एक टोली द्वारा उन्हे प्रस्तुत किया जाता है तथा स्कूल की सुविधाओ के अनुसार उपयोग किया जाता है।"

उपरोक्त परिभाषा का विश्लेषण करने पर टोली-शिक्षण विधि में कुछ महत्वपूर्ण तथ्य उजागर होते हैं–

★ टोली-शिक्षण, शिक्षण-विधि मानी जाती है।
★ इस प्रकार के शिल्प मे दो या दो से अधिक शिक्षक शिक्षण-कार्य मे भाग ले सकते हैं।
★ टोली-शिक्षण सहकारिता पर आधारित है क्योंकि इस शिक्षण विधि मे भाग लेने वाले सभी शिक्षक अपने-अपने साधनों, योग्यताओं तथा अनुभवों को एकत्रित करने का प्रयास करते है।
★ टोली-शिक्षण प्रक्रिया मे विद्यालय तथा विद्यार्थियो की आवश्यकताओं और उपलब्ध साधनों को अवश्य ही ध्यान मे रखा जाता है।
★ टोली-शिक्षण मे सलिप्त शिक्षक, शिक्षण की योजना मिलकर बनाते है, उसे मिलकर लागू भी करते है तथा मूल्याकन कार्य भी मिलकर ही किया जाता है।
★ टोली-शिक्षण में एक विषय के किसी एक प्रकरण के विभिन्न पक्षों को एक-एक करके क्रम में दो या दो से अधिक शिक्षक पढाते हैं।
★ टोली-शिक्षण में शिक्षक अपनी क्रियाओ को स्वय निर्धारित करते है, ऐसा करने से स्वाभाविक है कि शिक्षक अपनी क्षमताओ का ध्यान रखेंगे।
★ टोली-शिक्षण में शिक्षको की आपस मे एक-दूसरे से घनिष्ठता बढ़ती है।
★ टोली-शिक्षण में शिक्षण का उत्तरदायित्व एक ही शिक्षक का न होकर सम्पूर्ण टोली का होता है। इस प्रकार यह विधि सामूहिक उत्तरदायित्व पर आधारित है।
★ टोली-शिक्षण अनुदेशन परिस्थितियो को उत्पन्न करने की एक प्रविधि है।
★ टोली-शिक्षण की योजना लचीली होती है। परिणामस्वरूप अनापेक्षित दबाव नही रहता तथा शिक्षण मे स्वाभाविकता बनाए रखना सुगम होता है।
★ टोली-शिक्षण अधिक उपयोगी शिक्षण विधि हो सकती है यदि इसको विधिवत अपनाया जाए।

टोली-शिक्षण के मुख्य उद्देश्य

★ टोली-शिक्षण का मुख्य उद्देश्य शिक्षण-अधिगम को प्रभावी बनाना होता है।
★ शिक्षक वर्ग मे निहित योग्यताओ, दक्षताओ तथा उनकी रुचियों का सर्वोत्तम उपयोग करना है।
★ विद्यार्थियों की रुचियों तथा क्षमताओ के अनुसार कक्षा-शिक्षण को प्रभावशाली बनाना है।
★ विद्यार्थियो के सामूहीकरण में लचीलेपन को बढाना। इसके अन्तर्गत विभिन्न विषयो मे विद्यार्थियो की रुचियों और अभिरुचियों के अनुसार उनका सामूहीकरण करना।

★ अनुदेशन की गुणवत्ता मे वृद्धि करना।

टोली-शिक्षण के सिद्धान्त

टोली-शिक्षण प्रक्रिया को सुगम तथा प्रभावपूर्ण बनाने के लिए कुछ सिद्धान्तों का पालन करना आवश्यक होता है। यद्यपि यह आवश्यक नहीं है कि उनका पालन अत्यधिक जटिलता से किया जाए फिर भी, विद्यालय की स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार इन सिद्धान्तो का पालन अवश्य किया जाना चाहिए ताकि टोली-शिक्षण के वाछित परिणाम उपलब्ध हो सके। इसके निम्नाकित सिद्धान्त है–

समय कारक

टोली-शिक्षण मे विषय के महत्व के अनुसार ही समय-सीमा निर्धारित की जानी चाहिए। अधिक महत्व के विषय को कम समय दिए जाने से टोली-शिक्षण प्रभावहीन होकर रह जाएगा।

अनुदेशन का स्तर

टोली-शिक्षण प्रक्रिया में अनुदेशन प्रदान करने से पूर्व विद्यार्थियो के प्रारम्भिक व्यवहार का अवश्य अनुमान लगा लेना चाहिए तथा अनुदेशन का स्तर विद्यार्थियो के स्तरानुसार ही होना चाहिए।

निरीक्षण

निरीक्षण कैसा हो तथा किस प्रकार हो यह सब कुछ समूह के उद्देश्य पर ही निर्भर करता है। अत· समूह के उद्देश्यों को निरीक्षण के समय ध्यान में रखना अति आवश्यक है।

आकार और रचना

वर्तमान युग में कक्षा के निर्धारित आकार की बात पुरानी पड़ चुकी है। समूह का आकार टोली-शिक्षण के उद्देश्य के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। अत· विद्यार्थियों के समूह का आकार और रचना, समूह के उद्देश्यो और अधिगम-अनुभवो के अनुसार उपयुक्त होनी चाहिए।

शिक्षकों के उपयुक्त उत्तरदायित्व

टोली-शिक्षण की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षकों को उनके कर्तव्यो तथा उत्तरदायित्वों का बंटवारा उपयुक्त ढग से हो। उनको ये कर्तव्य उनकी शैक्षिक योग्यताओ, रुचियो तथा व्यक्तित्व की विशेषताओ के अनुसार ही प्रदान किए जाने चाहिए। अत टोली-शिक्षण मे टोली के सदस्यो का चयन अत्यधिक सावधानी से किया जाना चाहिए।

अधिगम वातावरण

टोली-शिक्षण की सफलता के लिए उपयुक्त अधिगम वातावरण प्रदान करना आवश्यक है जैसे– प्रयोगशाला, कार्यशाला, पुस्तकालय आदि की व्यवस्था।

टोली-शिक्षण के प्रकार

टोली-शिक्षण का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है–

एक ही विभाग के शिक्षकों की टोली– इस प्रकार के वर्गीकरण के अन्तर्गत एक ही विभाग के शिक्षक आते हैं। इस प्रकार की व्यवस्था माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक कक्षाओ के लिए की जाती है। ऐसा तभी सभव है जब एक ही विषय के एक से अधिक शिक्षक होते है।

एक ही संस्था के विभिन्न विभागों के शिक्षकों की टोली– इस प्रकार के वर्गीकरण के अन्तर्गत विभिन्न विषयो के शिक्षको की टोली बनाई जाती है तथा इस टोली का प्रयोग प्रशिक्षण-सस्थाओं मे किया जाता है। जैसे मनोविज्ञान, दर्शनशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, समाजशास्त्र आदि विषयों के शिक्षकों की टोली द्वारा शिक्षण की व्यवस्था बड़ी सुगमता से की जा सकती है। उदाहरण के लिए बी.एड का प्रशिक्षण, एम.एड आदि।

विभिन्न संस्थाओं के एक ही विभाग के शिक्षकों की टोली– इस प्रकार के टोली-शिक्षण मे अन्य सस्थाओ के विशेषज्ञों को भी आमन्त्रित किया जाता है। इस टोली-शिक्षण की व्यवस्था प्रत्येक स्तर पर की जा सकती है। प्रत्येक प्रकरण के लिए इस प्रकार के टोली-शिक्षण की व्यवस्था बडी सुगमता से की जा सकती है। इस टोली-शिक्षण का प्रयोग वहां अत्यन्त उपयोगी होता है जहां पर एक विषय का एक ही शिक्षक होता है। इस

प्रकार की टोली-शिक्षण से सहकारी-शिक्षण को बढ़ावा मिलता है। इस प्रकार के टोली-शिक्षण का प्रभावशाली उपयोग तब और भी सभव हो जाता है जब एक ही शहर मे एक से अधिक प्रशिक्षण संस्थाएं हों।

टोली-शिक्षण की प्रक्रिया

शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया में विभिन्न उद्देश्यो को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है इन्हीं उद्देश्यो के अनुसार टोली-शिक्षण की व्यवस्था की जाती है। टोली-शिक्षण की व्यवस्था के लिए एक क्रमबद्ध प्रक्रिया का अनुकरण किया जाता है। टोली-शिक्षण की इस प्रक्रिया के मुख्य सोपान निम्नांकित हैं–

योजना बनाना

इस सोपान के अन्तर्गत टोली-शिक्षण की योजना तैयार की जाती है। योजना तैयार करने मे निम्नांकित क्रियाए अपेक्षित हैं–

- ☐ टोली-शिक्षण के उद्देश्यो का निर्धारण।
- ☐ टोली-शिक्षण के उद्देश्यो को व्यावहारिक शब्दावली में लिखना।
- ☐ विद्यार्थियों के पूर्व-व्यवहारों को पहचानना।
- ☐ शिक्षण के लिए प्रकरण के बारे मे निर्णय लेना।
- ☐ प्रकरण के शिक्षण के लिए रूपरेखा तैयार करना।
- ☐ शिक्षकों की रुचियों तथा उनके कौशलों को ध्यान मे रखकर उन्हे कार्य सौपना।
- ☐ अनुदेशन का स्तर निर्धारित करना।
- ☐ शिक्षण सामग्री तथा अधिगम वातावरण तैयार करना।
- ☐ मूल्याकन प्रविधियो को निर्धारित करना।

व्यवस्था करना

टोली-शिक्षण की व्यवस्था के लिए उद्देश्यों को ध्यान मे रखा जाता है। साथ ही विद्यार्थियों की कठिनाइयो तथा आवश्यकताओं की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। टोली-शिक्षण की व्यवस्था के अन्तर्गत निम्नलिखित क्रियाएं की जाती है–

- ★ व्यावहारिक आधार पर अनुदेशन का स्तर निर्धारित करने के लिए शिक्षक कुछ प्रारम्भिक प्रश्न पूछता है। प्रश्नो के उत्तरों के आधार पर अनुदेशन का स्तर निर्धारित किया जाता है।
- ★ विद्यार्थियों के भाषा-ज्ञान को ध्यान मे रखकर शिक्षण सम्प्रेषण प्रविधि का चयन किया जाता है।
- ★ शिक्षक प्रमुख व्याख्यान देता है तथा टोली के अन्य शिक्षक सदस्य उस व्याख्यान को सुनते हैं और साथ मे बिन्दुओ को नोट करते रहते हैं। विशेषत वे उन बिन्दुओ को नोट करते है जिनको समझना विद्यार्थियों के लिए कठिन होता है।
- ★ इसके पश्चात् टोली के अन्य शिक्षक भी व्याख्यान देते हैं तथा विभिन्न तत्वो का स्पष्टीकरण करते है।
- ★ विद्यार्थियों की क्रियाओं को पुनर्बलन दिया जाता है। इसमे शिक्षक विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करते रहते है।
- ★ इन व्याख्यानो में विद्यार्थियों को कुछ कार्य कक्षा मे ही करने को दिया जाता है। यह टोली-शिक्षण का महत्वपूर्ण कार्य है।

परिणामों का मूल्यांकन करना

यह सोपान सम्पूर्ण टोली-शिक्षण प्रक्रिया मे महत्वपूर्ण माना जाता है। इस सोपान में विद्यार्थियो की निष्पत्तियों के आधार पर उद्देश्यो की प्राप्ति के सन्दर्भ में मूल्यांकन किया जाता है अर्थात् यह देखा जाता है कि उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हुई है। इस सोपान के अन्तर्गत निम्नलिखित क्रियाए की जाती हैं–

- ★ विद्यार्थियों की निष्पत्तियों तथा उद्देश्यों की प्राप्ति के बारे मे निर्णय लिया जाता है।
- ★ मूल्यांकन के आधार पर योजना तथा व्यवस्था चरण मे आवश्यक सुधार किया जाता है।
- ★ मूल्याकन के लिए मौखिक, लिखित प्रश्नो तथा प्रयोगात्मक विधियों का अनुसरण किया जाता है। प्रत्येक प्रश्न किसी एक उद्देश्य का मूल्यांकन करता है।

★ विद्यार्थियो की कमियो तथा कठिनाइयो का निदान किया जाता है तथा इनका आवश्यक उपचार भी किया जाता है।

टोली शिक्षण के लाभ

अनुदेशन की गुणवत्ता

टोली-शिक्षण की सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपयोगिता यह है कि इससे अनुदेशन की गुणवत्ता मे सुधार किया जा सकता है।

आर्थिक दृष्टि से लाभदायक

टोली-शिक्षण आर्थिक दृष्टि से भी लाभदायक है। इस प्रकार के शिक्षण से समय और शक्ति की बचत तो होती ही है साथ ही कक्षा मे अनुशासन स्थापित करने में भी सहायता मिलती है।

समूहों का अधिक विशेषज्ञों से सामना

टोली-शिक्षण का एक यह भी सबसे बडा योगदान है कि विद्यार्थी को अधिकाधिक विशेपज्ञों का सामना करने का अवसर मिलता है। इस प्रकार विद्यार्थियों को विभिन्न शिक्षकों के विशिष्ट ज्ञान का लाभ मिल जाता है।

शिक्षक के व्यावसायिक स्तर का विकास

टोली-शिक्षण द्वारा शिक्षको का व्यावसायिक-स्तर भी विकसित होता है क्योंकि इसमें शिक्षको को नवीनतम विपय-सामग्री पढने का अवसर मिलता है। टोली-शिक्षण मे शिक्षक स्वय भी बहुत परिश्रम करते है।

मानव सम्बन्धों का विकास

सामाजिक समायोजन के लिए मानव सम्बन्धों का विकास बहुत आवश्यक होता है। टोली-शिक्षण मे मानव सम्बन्धों के विकास को अवसर मिलता है।

स्वतन्त्र वार्ता का अवसर

टोली-शिक्षण द्वारा टोली के सभी सदस्यों को वार्ता मे भाग लेने के कई अवसर मिलते है। टोली-शिक्षण द्वारा विद्यार्थियो और शिक्षकों मे विचारों को उद्दीपन प्रदान किया जा सकता है। टोली-शिक्षण मे शिक्षकों तथा विद्यार्थियो मे भाग लेने की शक्तिशाली इच्छा और उत्तरदायित्व का विकास होता है।

लचीलापन

टोली-शिक्षण द्वारा स्कूल-भवन, स्कूल-स्टाफ तथा स्कूल के अन्य साधनों का प्रयोग बड़े ही लचीले ढग से किया जा सकता है। टोली-शिक्षण द्वारा पारम्परिक समय-सारणी से छुटकारा मिलता है।

मूल्यांकन

टोली-शिक्षण का लाभ मूल्यांकन के सोपान मे बहुत उठाया जा सकता है। इसमें सभी शिक्षको को एक-दूसरे शिक्षक के कार्य का मूल्यांकन करने का अवसर मिल जाता है तथा शिक्षण-प्रक्रिया में सुधार हेतु आवश्यक सुझाव दिये जा सकते है।

टोली-शिक्षण की सीमाएं

टोली-शिक्षण की अपनी कुछ विशेषताए एवं लाभ है वही इनकी अपनी कुछ सीमाए भी हैं, जो निम्नांकित हैं—

खर्चीली विधि

पारम्परिक शिक्षण की तुलना में टोली-शिक्षण का खर्च प्रति विद्यार्थी के हिसाब से बहुत अधिक पड़ता है।

भवनो का अभाव

टोली-शिक्षण में परम्परागत शिक्षण की अपेक्षा अधिक कमरों तथा फर्नीचर आदि की आवश्यकता होती है। कमरों का आकार भी बडा होना चाहिए। परन्तु पारम्परिक विद्यालयों मे न तो कमरे ही पर्याप्त होते हैं और न उनका आकार ही बहुत बडा होता है। अत टोली-शिक्षण के लिए पर्याप्त स्थान तथा भवन न होने के कारण टोली-शिक्षण की प्रभावशीलता सदेहशील हो जाती है।

सहयोग का अभाव

टोली-शिक्षण का आधार ही सहयोग है। लेकिन कई बार कई शिक्षक अन्य शिक्षको को सहयोग प्रदान करने मे संकोच करते है। अत॰ टोली-शिक्षण मे सभी शिक्षकों से सहयोग की आशा नहीं की जा सकती।

शक्ति और उत्तरदायित्वों का विभाजन

टोली-शिक्षण मे शक्तियों और उत्तरदायित्वो के विभाजन की आवश्यकता होती है जो कि वर्तमान स्कूल व्यवस्था में नही है क्योकि, कोई भी व्यवस्थापक अपनी शक्तियों को दूसरो को प्रदान करना पसंद नहीं करेगा।

शोध कार्य का अभाव

टोली-शिक्षण का सप्रत्यय नया होने के कारण इसमें अभी शोध कार्य अधिक नही हुआ है। केवल प्रयास एवं त्रुटि के मार्ग को अपनाकर ही इसे प्रयोग में लाने का प्रयत्न किया जा रहा है।

शिक्षको के विचारों में अनेकता

टोली-शिक्षण में अनेक शिक्षको को जब साथ-साथ काम करना पडता है तो उनके विचारों मे एकता लाना बहुत कठिन कार्य हो जाता है। जैसे कुछ शिक्षक पाठ्यक्रम विस्तृत और व्यापक बनाना चाहते है तथा कुछ सीमाबद्ध करना चाहते है। ऐसी टकराव की स्थिति से निपटना बहुत कठिन हो जाता है।

परिवर्तन और रूढ़िवादिता मे अवरोध

नई विधियो और रूढ़िवादिता में टकराव की सभावना रहती है। नई विधियों के आने से पारम्परिक शिक्षको मे एक प्रकार का असतोष पैदा होने लगता है। इस प्रकार के शिक्षक इन परिवर्तनो को रोकने का प्रयास करते है।

टोली-शिक्षण में लचीलेपन का अभाव

टोली-शिक्षण की सफलता के लिए इसकी सरचना मे लचीलापन आवश्यक है जैसे विद्यार्थियों तथा शिक्षको का चयन, शिक्षण अवधि निर्धारित करना आदि। यदि ऐसा लचीलापन संभव नहीं तो टोली-शिक्षण की सफलता एवं प्रभावशीलता नगण्य ही रहेगी। □□

श्रीनारायण महिला महाविद्यालय
उन्नाव, उत्तर प्रदेश

ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों के शाब्दिक व्यवहार का अध्ययन

❑ सरला पाण्डेय
❑ राजेश पाण्डेय

वाराणसी मण्डल के ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों के शाब्दिक व्यवहार का अध्ययन 100 शहरी तथा 100 ग्रामीण अध्यापकों के संदर्भ में किया गया, जिसमें वाचिक व्यवहार के निरीक्षण एवं विश्लेषण हेतु फ्लैन्डर्स की दस वर्गीय प्रणाली अपनाई गई। शाब्दिक व्यवहार से सम्बन्धित शिक्षक एवं छात्र के व्यवहार के विभिन्न अनुपातों की गणना प्रतिशत के आधार पर की गई जिसमें शिक्षक वार्ता, छात्र स्थिर-स्थिति अनुपात, छात्र पहल अनुपात तथा शिक्षक की तत्काल अनुक्रियात्मक प्रतिक्रिया ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों में लगभग समान रूप से पाई गई किन्तु छात्र वार्ता, शिक्षक अनुक्रिया अनुपात, शिक्षक प्रश्न अनुपात, तात्क्षणिक शिक्षक प्रश्न अनुपात, ग्रामीण अध्यापकों की तुलना में शहरी शिक्षकों में अधिक थी जबकि विषय-वस्तु अनुपात तथा निश्तब्धता ग्रामीण शिक्षक में ज्यादा पाई गई। शहरी क्षेत्र के अध्यापक ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापक की तुलना में अधिक अप्रत्यक्ष पाए गए।

वर्तमान समय में शिक्षा का विकास तेजी से होता नजर आ रहा है। इस शैक्षिक विकास के दौर में शिक्षक को शिक्षा के नए पहलुओ, आविष्कारों से परिचित होना अत्यन्त आवश्यक है। शिक्षक नए ज्ञान को कक्षागत परिस्थिति मे सही ढग से प्रचारित, प्रसारित करने का हर संभव प्रयास करता है जिससे शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके। यह कार्य शहरी अचल तथा ग्रामीण अंचल दोनों ही क्षेत्रो के अध्यापक करने के लिए तत्पर है, किन्तु शहरों मे साधन उपलब्धता जहा एक ओर उनके कार्य को बढ़ावा दे रही है, वहीं ग्रामीण अचल से जुड़े अध्यापकों के कार्य मे इस प्रकार की सुविधाएं नहीं होने से उनको काफी परेशानियों का सामना करना पड़ता है।

इसलिए आवश्यकता है गावों का विकास करने की, जिसके लिए हमे उनकी कमियो को समझने तथा उन्हे सुधारने का प्रयत्न करना पड़ेगा तथा उनके व्यवहार मे आशोधन एवं परिवर्धन कर शहरों के समान खड़ा करने की आवश्यकता है। ग्रामीण अंचल की शिक्षा में गुणवत्ता लाने हेतु सरकार ने नवोदय विद्यालय की स्थापना की है जिसमे प्रतिभाशाली बच्चो को शिक्षा प्रदान करने तथा उनके विकास के लिए यह योजना भारत मे नि.शुल्क एवं प्रभावी तरीके से चलाई जा रही है, किन्तु यहां यह मान लेना कि ग्रामीण अचल के अध्यापकों के शिक्षण व्यवहार मे ही सुधार की आवश्यकता है, अधूरा प्रतीत होगा। यदि शहरी क्षेत्र के अध्यापको को मात्र साधन सम्पन्न होने की स्थिति मे शिक्षण व्यवहार मे सुधार हेतु विचार नहीं किया जाए।

सभी सुविधाए उपलब्ध होने के साथ-साथ आज यह जानने की आवश्यकता जान पड़ती है कि उन अध्यापको की क्या भूमिका होनी चाहिए, उनमे कौन-कौन से गुण

आवश्यक है, वे कैसे अपने विद्यार्थियो को अधिक से अधिक ज्ञान कग से कम समय मे पहुचा सकते हैं जिससे शिक्षा एवं देश का विकास हो सके। वास्तव में आज एक अध्यापक अपने को एक विद्यालय की चारदीवारी तक ही सीमित रखना चाहता है, जो सर्वथा उचित नही है, क्योंकि व्यक्ति के व्यवहार का प्रभाव उसके शिक्षण को भी प्रभावित करता है। दूसरी तरफ व्यक्तित्व, शैक्षिक क्रियाकलाप पर प्रभाव डालता है। शिक्षा एव सामान्य व्यक्तित्व एक-दूसरे के पूरक हैं। शिक्षण व्यवहार मानवीय व्यवहार की एक विशेष अभिव्यक्ति है किन्तु यह व्यवहार हर परिस्थिति, समय तथा स्थान के सदर्भ में प्रकट नही होता, इसकी विशेषताएं होती है।

शिक्षण मे शिक्षक चाहे वह ग्रामीण शिक्षक हो या शहरी शिक्षक हो, शिक्षार्थी तथा विषय-वस्तु के मध्य गतिशील अन्तर्विनिमय होता है। ग्रामीण शिक्षक तथा शहरी शिक्षक के व्यवहार का अध्ययन करना अति आवश्यक हो गया है। आज शहरी शिक्षक के पास बहुत ही नए साधन हैं जिनसे वह अपना शिक्षण कार्य अच्छे ढग से कर लेता है, परन्तु ग्रामीण शिक्षक के पास साधन सीमित है। अत हमें उनकी उन्नति के लिए बहुत ही प्रयास करना है। इनके वैज्ञानिक विश्लेपण के लिए व्यवस्थित प्रेपण विधि महत्वपूर्ण आधार सामग्री प्रस्तुत कर सकती है।

नेड फ्लैण्डर्स द्वारा प्रतिपादित दस वर्गीय विधि को ग्रामीण शिक्षक तथा शहरी शिक्षक के शिक्षण व्यवहार का अध्ययन करने के लिए प्रयोग किया है, क्योंकि इन श्रेणियो के द्वारा शिक्षक के शाब्दिक व्यवहार तथा शिक्षण व्यवहार की अन्त.क्रियात्मक अवस्था पर उसके प्रभाव का अध्ययन आसानी से किया जा सकता है। वास्तव मे शाब्दिक व्यवहार प्रभावी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण मुद्दा रहा है जिस पर काफी अध्ययन देखने को मिलता है। इस दिशा की ओर शोधकर्ता के सामने यह प्रश्न उभर कर आया कि ग्रामीण विद्यालय जो ग्रामीण अंचल के विकास के लिए स्थापित किए गए हैं उनमे कार्यरत अध्यापक कक्षा मे किस प्रकार का व्यवहार प्रकट करता है तथा शहरी क्षेत्र मे स्थापित विद्यालयो मे कार्यरत अध्यापक किस प्रकार का व्यवहार प्रकट करता है। इस तरह के प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने की दिशा मे अध्ययनकर्ता ने ग्रामीण एव शहरी क्षेत्र की शिक्षण संस्थाओ के अध्यापको के शाब्दिक व्यवहार जो अन्त.क्रियात्मक परिस्थिति मे घटित होते है, के बारे में अध्ययन करने का प्रयास किया है।

समस्या कथन

प्रस्तुत अध्ययन को इस प्रकार से व्यक्त किया गया है—

"वाराणसी मण्डल के माध्यमिक स्तर के ग्रामीण एव शहरी विद्यालयो के अध्यापको के शाब्दिक व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन।"

अध्ययन का उद्देश्य

समस्या का मुख्य उद्देश्य वाराणसी मण्डल के शहरी तथा ग्रामीण अचल के कार्यरत अध्यापको के शाब्दिक व्यवहार का अध्ययन करना, जिसमे वाराणसी मण्डल के ग्रामीण विद्यालयो के अध्यापकों तथा शहरी विद्यालयो के अध्यापकों के शाब्दिक व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन शामिल है। समस्या का उद्देश्य इस प्रकार है—

- ☐ वाराणसी मण्डल के ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापको के वाचिक व्यवहार का अध्ययन करना।
- ☐ वाराणसी मण्डल के शहरी क्षेत्र के अध्यापको के शाब्दिक व्यवहार का अध्ययन करना।
- ☐ वाराणसी मण्डल के ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र के अध्यापकों के वाचिक व्यवहार की तुलना करना।

परिकल्पना

इस अध्ययन मे ग्रामीण एवं शहरी अध्यापकों के वाचिक व्यवहार की तुलना करने के लिए अमान्य परिकल्पना निर्मित की गई, जो इस प्रकार है—

"वाराणसी मण्डल के ग्रामीण तथा शहरी अचल के अध्यापको के वाचिक व्यवहार मे अन्तर नहीं होगा।"

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व

शिक्षण अधिगम परिस्थिति को प्रभावी बनाने तथा शिक्षक की प्रभाविता को अच्छी तरह से स्पष्ट करने के लिए यह

आवश्यक है कि अध्यापक द्वारा कक्षा में किए जाने वाले विभिन्न प्रकार के कार्यो की जानकारी की जाए। इस कार्य मे अध्यापक के कक्षागत व्यवहार का अध्ययन करना शिक्षण की प्रभाविता की दृष्टि से आवश्यक होता है। यह अध्ययन इस दृष्टि से भी आवश्यक है कि यदि अध्यापक की प्रभाविता को विभिन्न तरीको से अभिव्यक्त किया जाए तो अधिगम सफल तथा सुविधाजनक ढग से सम्पन्न होगा जिससे पूरे शिक्षण अधिगम परिस्थिति में आवश्यकतानुसार फेरबदल करने तथा शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावी बनाने मे यह अध्ययन महत्वपूर्ण साबित हो सकता है।

अभी तक अधिकाश अध्ययन अध्यापको के शाब्दिक तथा अशाब्दिक व्यवहार से सम्बन्धित विभिन्न पहलुओ को ध्यान में रखकर किए गए, किन्तु क्षेत्र को ध्यान में रखकर विशेष रूप से ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र मे रहने वाले अध्यापकों के वाचिक व्यवहार के अध्ययनों की काफी कमी पाई गई। इस दृष्टि से भी इस क्षेत्र मे अध्ययन करने की आवश्यकता शोधकर्ता ने महसूस की ताकि ग्रामीण तथा शहरी शिक्षको के वाचिक व्यवहार का प्रेक्षण कर शिक्षण अधिगम को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों मे परिमार्जन एवं आशोधन लाया जा सके तथा कक्षागत अन्तःक्रियात्मक परिस्थिति को ज्यादा से ज्यादा समृद्ध किया जा सके।

इन बिन्दुओं को ध्यान में रखकर ग्रामीण तथा शहरी अंचल के माध्यमिक स्तर के अध्यापको की तुलना करने का प्रयत्न किया है जिससे शिक्षण व्यवहार मे आशोधन लाया जा सके।

शोध विधि

शैक्षिक परिवेश में निरीक्षक, प्रधानाचार्य, अध्यापक के क्रियाकलापो का सावधानीपूर्वक अध्ययन करने की आवश्यकता पड़ती है कि वे लोग क्या करते हैं, इनकी क्या स्थिति है और इनको योग्य बनाने की आवश्यकता पड़ती है। इन सबकी प्राप्ति के लिए वर्णनात्मक सर्वेक्षण में विश्लेषणात्मक सर्वेक्षण विधि इस अध्ययन हेतु बहुत ही उपयुक्त प्रणाली हो सकती है।

इस प्रकार विश्लेषणात्मक सर्वेक्षण बहुत सी मूल्यवान सूचनाओ– जो स्थिति को व्यक्त करने में सहायता पहुचाती हैं– को प्रदान करता है इसलिए ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र के अध्यापको के कक्षा व्यवहार का विश्लेषण करने हेतु वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया है तथा इस विधि के माध्यम से शोधकर्ता ने कक्षागत विभिन्न शाब्दिक अन्तःक्रियात्मक पहलुओ से सम्बन्धित विभिन्न क्रियाकलापो का अध्ययन किया।

अध्ययन का प्रतिदर्श

अध्ययनकर्ता ने यादृच्छिक चयन विधि के अन्तर्गत सोद्देश्य प्रतिचयन विधि का प्रयोग किया है, इसके अन्तर्गत शोधकर्ता प्रतिदर्श के सदस्यो को अपने विवेक के आधार पर इनकी विलक्षणता को दृष्टिगत रखकर चुनता है।

अध्ययनकर्ता ने प्रतिदर्श का आकार 200 अध्यापको तक ही सीमित रखा है, 100 ग्रामीण क्षेत्र मे तथा 100 शहरी क्षेत्र मे स्थित विद्यालयो के शिक्षकों को इसमें सम्मिलित किया है।

अध्ययन उपकरण

प्रस्तुत अध्ययन में उपकरण के रूप में फ्लैन्डर्स की दस वर्गीय विधि का प्रयोग किया है। फ्लैन्डर्स ने अन्तर्क्रिया विश्लेषण हेतु जिन श्रेणियो का प्रयोग किया है, उनको इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है।

अध्ययनकर्ता द्वारा प्रयुक्त उपकरण से प्रदत्तो का संकलन किया गया जिसमे संकेतन एवं कूट संकेतन की प्रक्रिया अपनाई गई। इस कार्य के लिए सकेतन की प्रक्रिया की विश्वसनीयता अत्यन्त आवश्यक मानी जाती है। संकेतन की प्रक्रिया की विश्वसनीयता की जांच हेतु स्कॉट के सूत्र को प्रयोग कर दो अवलोकनकर्ताओं के मध्य सकेतन की प्रक्रिया की विश्वसनीयता की गणना की है जिसका मान 75 आया जो यह प्रमाणित करता है कि अध्ययनकर्ता द्वारा अपनाई गई सकेतन की प्रक्रिया विश्वसनीय है।

ग्रामीण तथा शहरी अध्यापकों के शाब्दिक व्यवहार का विश्लेषण एवं व्याख्या

विभिन्न चरो के सदर्भ में शहरी तथा ग्रामीण अध्यापको के वाचिक व्यवहार का मुख्य आधात्री के आधार पर विश्लेषण क्षेत्र को दृष्टिगत रखते हुए अधोलिखित प्रकार से किया गया है–

शहरी क्षेत्र के अध्यापकों के वाचिक व्यवहार का विश्लेषण– शहरी क्षेत्र के अध्यापको के वाचिक व्यवहार का अध्ययन करने के लिए सौ शहरी अध्यापकों के 10 × 10 मुख्य आधात्री के आकडो के मान के आधार

अनुक्रिया	शिक्षक परोक्ष वार्ता	1. भावनाओ को स्वीकार करता है।
		2. प्रशंसा या प्रोत्साहन करता है।
		3. छात्रों के विचार को स्वीकार करता है, उसे प्रयोग में लाता है।
		4 प्रश्न पूछना।
पहल	शिक्षक प्रत्यक्ष वार्ता	5 सभाषण करता है।
		6. निर्देश या आदेश देता है।
		7. आलोचना।
अनुक्रिया	छात्र वार्ता अनुक्रिया	8 छात्रवार्ता अनुक्रिया के रूप मे।
पहल	छात्रवार्ता पहल	9. छात्र वार्ता पहल के रूप में।
	निश्तब्धता	10 निश्तब्धता या अस्पष्ट वार्ता।

पर शिक्षक की अन्तःक्रियात्मक परिस्थिति से सम्वन्धित वारह चरो की गणना प्रतिशत में की गई जो सारणी 1 मे प्रदर्शित है।

सारणी 1 के अवलोकन के अन्त क्रियात्मक व्यवहारो के अनुपातो का अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि शहरी क्षेत्र के अध्यापको मे शिक्षक वार्ता 88 67% है जबकि छात्र वार्ता 5.50% है। अध्यापक वार्ता, छात्र वार्ता की तुलना मे 16 गुना अधिक है जबकि निश्तब्धता 5 57% है। निश्तब्धता का यह प्रतिशत सम्पूर्ण वार्ता के प्रतिशत की तुलना में बहुत कम है तथा सम्पूर्ण वार्ता के समय का 18वा भाग निश्तब्धता द्वारा प्रयुक्त होता है।

सम्पूर्ण वार्ता का लगभग 8.95% छात्र पहल अनुपात है जो पूरी वार्ता का लगभग 1/11वा भाग है। शिक्षक अनुक्रिया अनुपात 11 32% है जो शिक्षक द्वारा छात्रों के विचारो को स्वीकार करना, प्रशसा करना, विचारों को लेकर आगे बढना, दिशा निर्देश देना तथा आलोचना करने जैसे गुणो के परिप्रेक्ष्य मे शिक्षक अनुक्रिया को व्यक्त करता है।

शिक्षक प्रश्न अनुपात 2 66% है तथा विषय-वस्तु अनुपात 82 97% है, जो यह स्पष्ट करता है कि शिक्षक विपय-वस्तु का 1/31वा भाग शिक्षक प्रश्न के रूप में प्रयुक्त करता है। शिक्षक की तत्काल अनुक्रियात्मक प्रतिक्रिया अनुपात 65.86% है जो 50% से अधिक है। सम्पूर्ण अन्त·क्रियात्मक अवस्था में विषय-वस्तु का

सारणी 1

शहरी क्षेत्र के शिक्षकों के वाचिक व्यवहार का विश्लेषण

क्र.स	व्यवहार अनुपात	प्रतिशत
1	शिक्षक वार्ता	88 67%
2	छात्र वार्ता	5.50%
3.	निश्तब्धता	5.57%
4.	शिक्षक अनुक्रिया अनुपात	11.32%
5.	शिक्षक प्रश्न अनुपात	2.66%
6	छात्र पहल अनुपात	8 95%
7.	शिक्षक की तत्काल अनुक्रियात्मक प्रतिक्रिया	65.86%
8	तात्क्षणिक शिक्षण प्रश्न अनुपात	31.03%
9.	विषय-वस्तु अनुपात	82 97%
10.	स्थिर-स्थिति अनुपात	87 52%
11	छात्र स्थिर-स्थिति अनुपात	98.32%
12.	(अ) वास्तविक अप्रत्यक्षता	1360%
	(व) अप्रत्यक्षता/प्रत्यक्षता	.337%

भार 82.97% है, जो यह प्रदर्शित करता है कि अंतःक्रिया की गति वहुत धीमी है क्योकि छात्र स्थिर-स्थिति अनुपात 98.32% तथा स्थिर-स्थिति अनुपात 87.52% है। इस

प्रकार यह इस बात की ओर इगित करता है कि विचारो का प्रस्तुतीकरण, सोच का विकास तथा विचारो की स्वीकृति बहुत ही कम मात्रा मे की गई।

शहरी अध्यापक की कक्षा मे अप्रत्यक्षता/प्रत्यक्षता 337 है। इसका अर्थ है कि प्रत्येक 100 प्रत्यक्ष कथन में 33 अप्रत्यक्ष कथन है। इसी तरह से शहरी शिक्षक की कक्षा में वास्तविक अप्रत्यक्षता 136 है, जो इस बात की ओर इगित करता है कि 100 कथन मे वह 14 कथन प्रबलन के संदर्भ मे प्रयोग करता है।

उपरोक्त चरों के संदर्भ मे शहरी शिक्षको के वाचिक व्यवहार मे प्रत्यक्षता, अप्रत्यक्षता की तुलना मे अधिक पाई गई। शहरी शिक्षको के व्यवहार मे प्रत्यक्ष व्यवहार की अधिकता देखी गई।

ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापकों के वाचिक व्यवहार का विश्लेषण— ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापकों के वाचिक व्यवहार का अध्ययन करने के लिए 100 ग्रामीण अध्यापको के 10 × 10 मुख्य आधात्री के आकडो के मान के आधार पर शिक्षक की अन्त क्रियात्मक परिस्थिति से सम्बन्धित बारह चरों की गणना प्रतिशत मे की गई जो सारणी 2 में प्रदर्शित है।

सारणी 2 के अवलोकन से अन्तःक्रियात्मक व्यवहारो के अनुपातों का अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापको में शिक्षण वार्ता, छात्र वार्ता की तुलना मे 20 गुना अधिक है, जबकि निश्तब्धता 6 74% है जो निश्तब्धता का यह प्रतिशत सम्पूर्ण प्रतिशत की तुलना मे बहुत कम है तथा सम्पूर्ण वार्ता के समय का 15वा भाग निश्तब्धता द्वारा प्रयुक्त होता है।

सम्पूर्ण वार्ता का लगभग 7 46% छात्र पहल अनुपात है जो पूरी वार्ता का लगभग 13वा भाग है। शिक्षक अनुक्रिया अनुपात 10.96% है जो शिक्षक द्वारा छात्रों के विचारो को स्वीकार करना, विचारों को लेकर आगे बढना, दिशा-निर्देश देना तथा आलोचना जैसे गुणों के परिक्षेत्र मे शिक्षक अनुक्रिया को व्यक्त करता है।

शिक्षक प्रश्न अनुपात 1 69% है तथा विषय-वस्तु अनुपात 84.84% है जो यह स्पष्ट करता है कि शिक्षक विषय-वस्तु का 1/50वा भाग शिक्षक प्रदान के रूप मे

सारणी 2
ग्रामीण क्षेत्र के शिक्षकों के वाचिक व्यवहार का विश्लेषण

क्र.सं	व्यवहार अनुपात	प्रतिशत
1.	शिक्षक वार्ता	88.90%
2.	छात्र वार्ता	4 36%
3.	निश्तब्धता	6 74%
4	शिक्षक अनुक्रिया अनुपात	10.96%
5	शिक्षक प्रश्न अनुपात	1 69%
6	छात्र पहल अनुपात	7 46%
7	शिक्षक की तत्काल अनुक्रियात्मक प्रतिक्रिया	64 57%
8.	तात्क्षणिक शिक्षण प्रश्न अनुपात	64.57%
9.	विषय-वस्तु अनुपात	84 84%
10	स्थिर-स्थिति अनुपात	91.21%
11.	छात्र स्थिर-स्थिति का अनुपात	98 78%
12	(अ) वास्तविक अप्रत्यक्षता	.1224%
	(ब) अप्रत्यक्षता/प्रत्यक्षता	215%

प्रयुक्त करता है। शिक्षक की तत्काल अनुक्रियात्मक प्रतिक्रिया अनुपात 64 57% है, जो 50% से अधिक है। सम्पूर्ण अन्त क्रियात्मक अवस्था मे विषय-वस्तु का भार 84 84% है, जो यह प्रदर्शित करता है कि अन्त.क्रिया की गति बहुत धीमी है, क्योंकि छात्र स्थिर-स्थिति अनुपात 98 78 तथा स्थिर-स्थिति अनुपात 91 21 है। इस प्रकार यह इस ओर संकेत करता है कि विचारों का प्रस्तुतीकरण, विचारो का विकास तथा विचारों की स्वीकृति बहुत कम मात्रा में होती है।

ग्रामीण शिक्षक की कक्षा में अप्रत्यक्षता/प्रत्यक्षता का अनुपात .215 है, जो इस ओर इगित करता है कि प्रत्येक 100 प्रत्यक्ष कथन मे 22 अप्रत्यक्ष कथन हैं। इसी तरह से ग्रामीण शिक्षक की कक्षा मे वास्तविक अप्रत्यक्षता .122 है, जो इस बात की ओर संकेत करता

है कि प्रत्येक 100 कथन मे 12 कथन प्रबलन के सदर्भ मे प्रयुक्त होते है।

उपरोक्त चरो के सदर्भ मे ग्रामीण शिक्षको के वाचिक व्यवहार मे प्रत्यक्षता, अप्रत्यक्षता की तुलना मे अधिक पाई गई। ग्रामीण शिक्षकों के शिक्षण व्यवहार में प्रत्यक्ष व्यवहार की अधिकता देखी गई।

शहरी तथा ग्रामीण शिक्षकों के वाचिक व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन— पूर्व में वर्णन किए गए शहरी तथा ग्रामीण अध्यापको के वाचिक व्यवहार को अलग-अलग रूप में विश्लेषित किया गया, किन्तु इनके व्यवहारो में तुलनात्मक सम्बन्ध जानने के लिए अन्तःक्रियात्मक पक्ष के विभिन्न पहलुओ की तुलना सारणी 3 मे प्रदर्शित की गई है। इस सारणी का विश्लेषण करने पर ग्रामीण तथा शहरी अध्यापको के वाचिक व्यवहार के संदर्भ मे अधोलिखित बिन्दु स्पष्ट रूप से परिलक्षित हुए हैं—

सारणी संख्या 3
शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र के शिक्षकों के वाचिक व्यवहार का तुलनात्मक विश्लेषण

क्र सं.	व्यवहार अनुपात	शहरी शिक्षक %	ग्रामीण शिक्षक %
1	शिक्षक वार्ता	88.67%	88 90%
2	छात्र वार्ता	5 50%	4.36%
3.	निश्तब्धता	5.57%	6 74%
4	शिक्षक अनुक्रिया अनुपात	11.32%	10.96%
5	शिक्षक प्रश्न अनुपात	2 66%	1.69%
6.	छात्र पहल अनुपात	8.95%	7 46%
7.	शिक्षक की तत्काल अनुक्रियात्मक प्रतिक्रिया	65.86%	64.57%
8	तात्क्षणिक शिक्षण प्रश्न अनुपात	31 03%	26 32%
9.	विषय-वस्तु अनुपात	82.97%	84.84%
10	स्थिर-स्थिति अनुपात	87.52%	91 21%
11.	छात्र स्थिर-स्थिति का अनुपात	98.32%	98 78%
12	(अ) वास्तविक अप्रत्यक्षता	1360%	.122%
	(ब) अप्रत्यक्षता/ प्रत्यक्षता	337%	.215%

शिक्षक वार्ता

शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापको में शिक्षक वार्ता का प्रतिशत क्रमशः 88 67% तथा 88 90% है। दोनो क्षेत्र के अध्यापकों मे शिक्षक वार्ता लगभग समान पाई गई किन्तु दोनों क्षेत्र के अध्यापको मे शिक्षक वार्ता छात्र वार्ता की अपेक्षा बहुत अधिक पाई गई।

छात्र वार्ता

शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापको के शिक्षण में छात्र वार्ता क्रमशः 5.50% तथा 4 93% है, इस प्रकार शहरी क्षेत्र के अध्यापको के शिक्षण में छात्र वार्ता की तुलना मे अपेक्षाकृत अधिक है जो इस बात की पुष्टि करता है कि ग्रामीण क्षेत्र की तुलना मे शहरी क्षेत्र का शिक्षक छात्रो को कक्षा में अधिक मौका देता है।

निश्तब्धता

शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र की कक्षा में निश्तब्धता क्रमश 5.57% तथा 6.74% है जो इस ओर इंगित करता है कि शहरी क्षेत्र के अध्यापको की कक्षा मे निश्तब्धता तथा भ्रामकता की स्थिति ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापकों की अपेक्षा कम है जो छात्र वार्ता के प्रतिशत के तद्नुरूप है।

शिक्षक अनुक्रिया अनुपात

शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापको के शिक्षण मे शिक्षक अनुक्रिया अनुपात क्रमशः 11 32% तथा 10.96% है, इस प्रकार शहरी शिक्षक तथा ग्रामीण शिक्षक दोनो में छात्रो के प्रश्न पूछने या विचारो के प्रति अनुक्रिया लगभग समान है।

छात्र पहल अनुपात

शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापकों के शिक्षण में छात्र पहल अनुपात क्रमश 8 95% तथा 7.46% है जो शहरी

शिक्षक की कक्षा मे छात्र पहल की कुछ अधिकता की ओर इंगित करता है तथा छात्रों की सहभागिता शहरी अध्यापक की कक्षा मे अधिक पाई गई।

शिक्षक प्रश्न अनुपात

शहरी शिक्षक तथा ग्रामीण शिक्षक में प्रश्न अनुपात क्रमशः 2 66% तथा 1.69% है जो यह प्रदर्शित करता है कि शहरी शिक्षक ग्रामीण शिक्षक की अपेक्षा अधिक प्रश्न पूछता है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि शहरी शिक्षक पाठ को अधिक बोधगम्य बनाने हेतु तथा विद्यार्थियों की भागीदारी बढाने हेतु अधिक प्रश्न पूछता है तथा कक्षा का वातावरण अन्त क्रियात्मक होता है, जबकि वही पर ग्रामीण शिक्षक कम प्रश्न पूछता है और वच्चो के प्रति कड़ा रुख अपनाता है।

शिक्षक की तत्काल अनुक्रियात्मक प्रतिक्रिया

शहरी तथा ग्रामीण शिक्षक का तत्काल अनुक्रियात्मक अनुपात क्रमश' 65 86% तथा 64 57% पाया गया। यह इस बात की ओर इगित करता है कि ग्रामीण शिक्षक में अन्त क्रियात्मक प्रक्रिया के अन्तर्गत जो तरीका अपनाया जाता है वह अधिक परिवर्तनशील है, जबकि शहरी शिक्षक मे कम परिवर्तन होता है।

स्थिर-स्थिति अनुपात

शहरी तथा ग्रामीण शिक्षकों के अध्यापको का स्थिर-स्थिति अनुपात क्रमश 87.52% तथा 91 21% है, इस प्रकार शहरी क्षेत्र का अध्यापक अन्त क्रियात्मक तरीके को जल्दी-जल्दी परिवर्तित करता है साथ ही छात्र भी अपने व्यवहार में अधिक परिवर्तन लाता है जबकि ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापकों मे शहरी क्षेत्र के अध्यापकों की अपेक्षा इनका अभाव पाया जाता है, क्योकि इस अनुपात में जितनी वृद्धि होती है, शिक्षक-छात्र के मध्य आदान-प्रदान उतना ही कम होता है।

छात्र स्थिर-स्थिति अनुपात

शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापकों की कक्षा में छात्र स्थिर-स्थिति अनुपात क्रमशः 98 32% तथा 98 78% है जो यह व्यक्त करता है कि शहरी क्षेत्र का अध्यापक अपनी लगातार वार्ता के दौरान छात्रो को अधिक मौका प्रदान करता है।

विषय-वस्तु अनुपात

शहरी तथा ग्रामीण शिक्षकों की कक्षा मे विषय-वस्तु अनुपात क्रमश. 82 97% तथा 84 84% है जो इस बात का सकेत करता है कि ग्रामीण क्षेत्र के शिक्षकों के शिक्षण में विषय-वस्तु की मात्रा अधिक है।

तात्क्षणिक शिक्षण प्रश्न अनुपात

शहरी तथा ग्रामीण शिक्षको मे तात्क्षणिक शिक्षक प्रश्न अनुपात क्रमश 31 08% तथा 26.32% है। इससे यह सकेत मिलता है कि शहरी शिक्षक के शिक्षण मे छात्र वार्ता के संदर्भ में शिक्षक द्वारा तत्क्षण प्रश्न पूछने की प्रवृति अधिक है।

वास्तविक अप्रत्यक्षता

शहरी तथा ग्रामीण शिक्षक की कक्षा में वास्तविक अप्रत्यक्षता क्रमशः .136% तथा .122% है इससे यह स्पष्ट है कि शहरी शिक्षक तथा ग्रामीण शिक्षक मे 100 कथन में क्रमश. 14 तथा 12 कथन प्रबलन के संदर्भ मे प्रयोग होते हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि शहरी क्षेत्र के अध्यापकों मे ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापकों की तुलना मे प्रबलन का अधिक प्रयोग होता है।

अप्रत्यक्षता/प्रत्यक्षता

शहरी तथा ग्रामीण शिक्षकों की कक्षा मे अप्रत्यक्षता/प्रत्यक्षता अनुपात क्रमश. 337% तथा 215% है जो यह प्रदर्शित करता है कि प्रत्येक 100 प्रत्यक्ष कथन में शहरी तथा ग्रामीण शिक्षक क्रमश 33 तथा 22 अप्रत्यक्ष कथन का प्रयोग करता है। इस प्रकार शहरी अध्यापकों मे ग्रामीण अध्यापकों की तुलना मे अप्रत्यक्षता की मात्रा अधिक है।

शहरी अध्यापको में ग्रामीण अध्यापकों की तुलना मे अप्रत्यक्षता की मात्रा ज्यादा देखी गई, जबकि प्रत्यक्षता/अप्रत्यक्षता के आधार पर विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि शहरी तथा ग्रामीण दोनों मे अप्रत्यक्ष व्यवहार की तुलना में प्रत्यक्ष व्यवहार का प्रतिपादन अधिक किया गया।

शिक्षक द्वारा प्रयुक्त अन्तःक्रियात्मक श्रेणियों के आधार पर शहरी तथा ग्रामीण शिक्षकों के वाचिक व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन

वाराणसी मण्डल के शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र के शिक्षकों के वाचिक व्यवहार के तुलनात्मक अध्ययन के अन्तर्गत अन्त क्रियात्मक परिस्थिति में अध्यापको द्वारा कक्षा मे

कई श्रेणियो का प्रयोग किया गया जो फ्लैन्डर्स के अन्त.क्रिया विश्लेषण पद्धति का मुख्य आधार है। ये श्रेणिया इस बात की ओर इगित करती है कि एक अध्यापक कथागत अन्तःक्रियात्मक परिस्थिति में किन-किन क्रियाओं को करता है। इस आधार पर पूर्व मे कई अध्ययन हुए है। जिसमें विभिन्न प्रकार के अध्यापको द्वारा इन श्रेणियों का प्रयोग विभिन्न विपयो के शिक्षण के तहत लगभग समान रूप से प्रयोग किया गया। प्रस्तुत अध्ययन में ग्रामीण एव शहरी क्षेत्र के अध्यापकों के वाचिक व्यवहार मे इन श्रेणियो का प्रयोग किस रूप में हुआ है, इसकी जानकारी हेतु अमान्य परिकल्पना निर्मित की गई, जिनके परीक्षण के आधार पर शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र के शिक्षकों के वाचिक व्यवहार को अन्तर की सार्थकता के स्तर पर स्पष्ट किया गया। 10 × 10 मुख्य आधात्री से प्राप्त श्रेणियों के मान के आधार पर कई वर्ग की गणना परिकल्पना की सार्थकता के परीक्षण हेतु की गई, जिसका विवरण नीचे सारणी मे प्रस्तुत किया गया है।

सारणी में दिए गए कई वर्ग के मान के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि दस श्रेणियो पर कोई वर्ग का मान स्वतंत्रता के अंश के मान से अधिक है जो सार्थक अन्तर की ओर इंगित करता है, किन्तु श्रेणी संख्या तीन जिसमें अध्यापक छात्रों के विचारो का प्रयोग करता है, इस पर कोई वर्ग का मान 1 38 है, जो सारणी के मान से कम है, इस प्रकार श्रेणी सख्या तीन के सन्दर्भ में शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापको मे सार्थक अन्तर नहीं है। अत यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण तथा शहरी शिक्षको के वाचिक व्यवहार में सार्थक अन्तर पाया गया किन्तु श्रेणी संख्या तीन के संदर्भ में यह अन्तर सार्थक नही था। इस प्रकार परिकल्पना शहरी तथा ग्रामीण शिक्षको के वाचिक व्यवहार मे सार्थक अन्तर नहीं है, अस्वीकृत किया जाता है। जहा तक भावनाओं की स्वीकृति के सदर्भ में यह अन्तर 05 स्तर पर सार्थक था, किन्तु .01 स्तर पर यह अन्तर सार्थक नही पाया गया। इस प्रकार प्रशसा करना, प्रश्न पूछना, भाषण देना, निर्देश देना, आलोचना करना, अनुक्रिया करना, छात्र

सारणी 4

ग्रामीण तथा शहरी शिक्षको के वाचिक व्यवहार के विभिन्न श्रेणियों के सदर्भ में कार्ड वर्ग का मान

श्रेणियां

शिक्षक	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
शहरी	15	217	41	882	32307	1248	759	2004	197	2230	40000
ग्रामीण	05	141	31	537	33365	900	546	1613	130	2696	40000
योग	20	358	12	1455	65672	2148	1305	3617	327	4926	80000
वर्ग का मान	5	16 12	1 38	65.62	17 04	56 38	34 76	42 26	13.72	44 08	296.36

9 स्वतत्रता के अश पर X^2 का मान 01 स्तर पर 21.666
05 स्तर पर 16 919
1 स्वतंत्रता के अश पर X^2 का मान .01 स्तर पर 6.635
.05 स्तर पर 3 841

नोट– श्रेणी संख्या 1 भावनाओ की स्वीकृति, 2 प्रशंसा करना, 3. विचारो का प्रयोग, 4. प्रश्न पूछना, 5. भाषण देना, 6. निर्देश देना, 7. आलोचना करना, 8 छात्र अनुक्रिया, 9 छात्र पहल, 10. निशतब्धता।

पहल, निश्तब्धता के सदर्भ में ग्रामीण तथा शहरी अध्यापको के शाब्दिक व्यवहार में .05 तथा 01 स्तर पर सार्थक अन्तर पाया गया। कोई वर्ग का मान 9 स्वतंत्रता के अश पर सारणी के मान से अधिक है, अत. परिकल्पना लगभग पूरी तरह से अस्वीकृत की गई।

परिणाम की व्याख्या

ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र के शिक्षकों के वाचिक व्यवहार से स्पष्ट है कि शहरी क्षेत्र के शिक्षक ग्रामीण क्षेत्र के शिक्षक की अपेक्षा अधिक अप्रत्यक्ष होते हैं, क्योंकि शहरी क्षेत्र के शिक्षकों द्वारा छात्रो की भावनाओ को स्वीकार करना, उनकी प्रशंसा करना, विचारों की स्वीकृति तथा कक्षा को अधिक बोधगम्य बनाने हेतु प्रश्नों का पूछना जैसी क्रियाएं अधिकाधिक मात्रा मे प्रयोग होती है, जबकि ग्रामीण शिक्षक इन सब क्रियाओ को कम करता है। इसका कारण शहरी क्षेत्र मे अच्छे वातावरण का पाया जाना प्रमुख है। इस क्षेत्र के अध्यापको के पास कक्षा मे पढने के अलावा अन्य किसी तरह का कोई कार्य नही होता है। ये कक्षा में बड़ी तैयारी के साथ प्रस्तुत होते है, साथ ही छात्र भी अच्छे परिवार के होते हैं तथा शिक्षित घरों से सम्बन्धित होते है, जिससे छात्र भी अधिक तल्लीनता के साथ कक्षा में कार्य करते है। उनके पास भी पढने के अलावा अन्य कार्य नही होता है जबकि गांव के अध्यापकों तथा छात्रो को पढ़ाने तथा पढ़ने के अलावा घर के अनेक कार्य करने पड़ते हैं, जिससे वे कक्षा में अधिक रुचि नहीं दिखा पाते है। शहरी क्षेत्र की कक्षा में अनेक साधन उपलब्ध है जिनके कारण शहरी क्षेत्र के अध्यापकों की कक्षा अधिक प्रभावपूर्ण तथा रुचिकर हो जाती है। छात्र कक्षा में अधिक रुचि लेने लगते हैं तथा बड़ी तन्मयता के साथ कक्षा में प्रवेश करते है जबकि ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षकों की कमी तथा विद्यालयों का अभाव पाया जाता है और साथ ही छात्रों की सख्या अधिक होने के कारण एक ही कक्षा में मानदण्ड से अधिक छात्रों का प्रवेश हो जाता है, जिसके कारण ग्रामीण शिक्षक छात्रों को अधिक मौका नही दे पाते है जबकि शहरी क्षेत्र के अध्यापको की कक्षा मे छात्र की सख्या कम होती है। जिससे अध्यापक प्रत्येक छात्रों को अधिक मौका प्रदान कर पाता है। छात्र भी अपनी बातो को आसानी से प्रस्तुत कर पाता है। छात्रो की ताल्लीनता का कारण अभिभावकों की जागरूकता भी प्रमुख कारण है जिससे छात्र घर पर अध्ययन करते हैं और जब कोई समस्या आती है, उसे कक्षा में अध्यापकों के सामने प्रस्तुत कर समस्या का समाधान कर लेते है। छात्रो की जागरूकता के कारण अध्यापक भी अधिक जागरूक रहते है, वे भी तैयारी के साथ कक्षा में प्रवेश करते है।

निष्कर्ष

अध्यापको के शाब्दिक व्यवहार का विश्लेषण क्षेत्र (ग्रामीण तथा शहरी) के आधार पर किया गया तथा विभिन्न चरों से प्राप्त प्रतिशत की तुलना के सदर्भ मे अधोलिखित निष्कर्ष सामने आए–

- ☐ शहरी क्षेत्र के शिक्षको के वाचिक व्यवहार मे शिक्षक वार्ता 88.67% तथा छात्र स्थिर-स्थिति अनुपात 98.92% और ग्रामीण क्षेत्र के वाचिक व्यवहार मे शिक्षक वार्ता 88.98% तथा छात्र स्थिर-स्थिति अनुपात 98 78% पाया गया। इस प्रकार दोनों के शिक्षकों के वाचिक व्यवहार मे शिक्षक वार्ता तथा छात्र स्थिर-स्थिति अनुपात लगभग समान पाया गया।
- ☐ छात्र वार्ता शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्र के शिक्षकों की कक्षा मे क्रमश 5.50% तथा 4 36% पाई गई।
- ☐ निश्तब्धता की मात्रा शहरी तथा ग्रामीण शिक्षको की कक्षा में क्रमशः 5.57% तथा 6.74% पाई गई।
- ☐ शिक्षक अनुक्रिया अनुपात शहरी शिक्षक के वाचिक व्यवहार में 11.32% था जबकि ग्रामीण शिक्षको में 10 96% पाया गया।
- ☐ शहरी शिक्षको एव ग्रामीण शिक्षको में शिक्षक प्रश्न अनुपात क्रमश· 2.66% तथा 1.69% पाया गया इससे स्पष्ट है कि शहरी शिक्षक कक्षा को अधिक वोधगम्य बनाने हेतु अधिक प्रश्न पूछता है।
- ☐ शहरी शिक्षको के वाचिक व्यवहार मे छात्र पहल

अनुपात 8 95% तथा ग्रामीण शिक्षकों मे 7.46% पाया गया। इस प्रकार दोनो क्षेत्र के छात्रों मे छात्र पहल की मात्रा लगभग समान पाई गई।

- ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र के शिक्षकों के वाचिक व्यवहार में विषय-वस्तु अनुपात क्रमशः 84 84% तथा 82 97% पाया गया। जिससे यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण शिक्षक विषय-वस्तु की प्रस्तुति में अधिक समय लगाता है।
- शहरी शिक्षको के वाचिक व्यवहार मे तात्क्षणिक शिक्षक प्रश्न अनुपात 31.03% था जबकि ग्रामीण शिक्षकों मे यह अनुपात 26 32% पाया गया। इस प्रकार छात्र वार्ता के सदर्भ में शहरी शिक्षकों मे तात्क्षणिक प्रश्न पूछने की प्रवृति अधिक है।
- शहरी शिक्षकों तथा ग्रामीण शिक्षको के वाचिक व्यवहार मे शिक्षक की तत्काल अनुक्रियात्मक प्रतिक्रिया का प्रतिशत क्रमशः 65.86% तथा 64 57% पाया गया। इस प्रकार दोनों क्षेत्रो के शिक्षकों मे छात्र वार्ता के तत्काल बाद शिक्षक की अनुक्रिया लगभग समान है।
- शहरी क्षेत्र के अध्यापकों के वाचिक व्यवहार मे वास्तविक अप्रत्यक्षता 136% तथा अप्रत्यक्षता/प्रत्यक्षता .337% की मात्रा, ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापको के वाचिक व्यवहार मे पाए जाने वाले वास्तविक अप्रत्यक्षता 132% तथा अप्रत्यक्षता/प्रत्यक्षता 215% से अधिक है। इस प्रकार शहरी क्षेत्र के अध्यापक ग्रामीण क्षेत्र के अध्यापक की तुलना मे अधिक अप्रत्यक्ष पाए गए।

शैक्षिक अनुप्रयोग

प्रस्तुत अध्ययन निष्कर्ष का अनुप्रयोग अधोलिखित बिन्दुओ के सदर्भ में किया जाना समीचीन होगा—

- अध्यापकों में शिक्षण के दौरान की जाने वाली विभिन्न क्रियाओ को विषयगत मुख्य बिन्दुओं को ध्यान मे रखकर अप्रत्यक्ष एव प्रत्यक्ष व्यवहार को विकसित करने के लिए शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को इस प्रकार सुनियोजित किया जाना चाहिए जिससे कक्षा की अन्तर्क्रियात्मक परिस्थिति मे अप्रत्यक्षता को बढावा मिल सके। अप्रत्यक्षता का अनुपात क्षेत्र विशेष पर निर्भर करता है। इस प्रकार का परिणाम यह प्रदर्शित करता है कि शिक्षको को कक्षा में इस प्रकार का वातावरण निर्मित करने का अवसर दिया जाए जिससे शिक्षक छात्र के विचारों को स्वीकृति कर सके, उनकी भावनाओ को स्वीकार कर सके, उनके द्वारा की गई अनुक्रिया की प्रशंसा कर सके। इसके साथ-साथ छात्रो द्वारा प्रश्न पूछने तथा छात्र पहल का अवसर प्रदान कर सके। ग्रामीण शिक्षको को शहरी शिक्षको की तुलना मे ऐसा करने के लिए परिस्थिति विशेष मे अवसर कम उपलब्ध हो पाता है जिसका शिक्षण की अप्रत्यक्षता पर सीधा प्रभाव पड़ता है।
- अध्यापकों द्वारा, चाहे वह शहरी अथवा ग्रामीण क्षेत्र का हो शिक्षण की अन्तर्क्रियात्मक परिस्थिति में शिक्षण को बाल-केन्द्रित बनाने पर अधिक जोर देना चाहिए।
- दूसरी तरफ अध्यापको को शाब्दिक व्यवहार एवं अन्तर्क्रियात्मक व्यवहार के अन्तर्गत प्रयोग की जाने वाली विभिन्न क्रियाओ के संदर्भ में प्रशिक्षण प्रदान करने हेतु व्यवस्था सुनिश्चित की जाए, जिससे शिक्षक शिक्षण व्यवहार से जुडी विभिन्न परिस्थितियों से सम्बन्धित क्रियाओं को सही मात्रा तथा सही समय मे प्रयोग कर सके।
- ऐसे शिक्षण कौशलों का विकास शिक्षण की सामान्य परिस्थिति मे करना चाहिए जिससे शिक्षण व्यवहार से जुडी विभिन्न क्रियाओ जैसे व्याख्यान देना, प्रश्न पूछना, छात्रों की अनुक्रिया को बढ़ावा देना, प्रतिपुष्टि प्रदान करना, छात्रो को अपने विचारो को प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करना, कक्षागत परिस्थिति में छात्र पहल वार्ता एवं प्रश्न के रूप में बढाई जा सके, जिससे कक्षा मे छात्र की सहभागिता अध्यापक की तुलना मे ज्यादा हो सके। ☐☐

(1) महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
(2) श्री हरिश्चन्द्र इन्टर कालेज, वाराणसी

भारतीय आधुनिक शिक्षा

वर्ष · 21 | अंक : 4 | अप्रैल 2003

इस अंक में

फार्म 4

(नियम 8 देखिए)

भारतीय आधुनिक शिक्षा

1.	प्रकाशन स्थान	नई दिल्ली
2.	प्रकाशन अवधि	त्रैमासिक
3.	मुद्रक का नाम	विनोद अग्रवाल मै. सगुन ऑफसैट प्रेस
	(क्या भारत का नागरिक है?)	हां
	(यदि विदेशी है तो मूल देश का पता)	लागू नही होता
	पता	बी-92, कृष्ण नगर गली नं. 4 सफदरजंग इन्क्लेव, नई दिल्ली
4	प्रकाशक का नाम	पूरन चन्द
	(क्या भारत का नागरिक है?)	हां
	(यदि विदेशी है तो मूल देश का पता)	लागू नही होता
	पता	राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग नई दिल्ली 110 016
5	अकादमिक मुख्य संपादक का नाम	पूरन चन्द
	(क्या भारत का नागरिक है?)	हा
	(यदि विदेशी है तो मूल देश का पता)	लागू नही होता
	पता	राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग नई दिल्ली 110 016
6.	उन व्यक्तियो के नाम व पते जो समाचार-पत्र के स्वामी हों तथा समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों	राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग नई दिल्ली 110 016 (मानव संसाधन विकास मंत्रालय की स्वायत्त संस्था)

मै, पूरन चन्द अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग एतद् द्वारा घोषित करता हू कि मेरी अधिकतम जानकारी एव बिश्वास के अनुसार ऊपर लिखे विवरण सत्य हैं।

पूरन चन्द
प्रकाशक

मानवाधिकार शिक्षा – आज की अनिवार्यता

❑ सरस्वती अग्रवाल

मानवाधिकारों की शिक्षा की आवश्यकता पर सभी मानवाधिकार सम्बन्धी दस्तावेजों में बल दिया गया है। इसे 'भूमण्डलीय मानवाधिकार संस्कृति के विकास में आवश्यक योगदान' माना गया है। मानवाधिकार की सार्वभौमिक घोषणा की उद्देशिका का प्रथम वाक्य कहता है, "मानव परिवार के सभी सदस्यों की अन्तर्निहित गरिमा और समान तथा अभेद अधिकार विश्व में स्वतंत्रता, न्याय और शान्ति के आधार हैं।" मानवाधिकार की सार्वभौमिक घोषणा की धारा 26 (2) कहती है कि मानव व्यक्तित्व के पूर्ण विकास तथा मानवीय अधिकारों व आधारभूत स्वतंत्रताओं को दृढ़ता प्रदान करने की ओर शिक्षा को निर्देशित होना चाहिए। इससे यह प्रतिबिम्बित होता है कि संयुक्त राष्ट्र संघ एक ओर तो व्यक्तियों को 'अपने अधिकारों को जानो' का संदेश देना चाहता है तथा दूसरी ओर 'अन्य व्यक्तियों के अधिकारों के प्रति सम्मान' रखने की भी अपेक्षा करता है।

मानवाधिकार की पृष्ठभूमि व सार्वजनीन घोषणा

"सुन्दर है विहग, सुमन सुन्दर, मानव तुम सबसे सुन्दरतम" यद्यपि कविवर पन्त ने मनुष्य को सृष्टि की अनुपम व सर्वोत्कृष्ट कृति के रूप मे चित्रित किया है तथापि यह भी सत्य है कि सृष्टि के इस रत्न मुकुट ने ही स्वयं अपने विध्वस के अक्षम्य कीर्तिमान स्थापित किए हैं। मानव का इतिहास दासता, अत्याचार, युद्ध, जातीय विभेद, निरकुशता, लिग विभेद तथा अनेक तथाकथित शास्त्र सम्मत असभ्य रीतियो से परिपूर्ण है। अन्य किसी भी प्राणी ने अपनी जाति का इतना दमन और विध्वंस नहीं किया जितना कि स्वय मनुष्य ने मनुष्य जाति का।

सन् 1914 से 1945 का काल विश्व इतिहास मे विध्वस का काल रहा है। दो विश्व युद्ध (1914,1939) मानव जाति के इतिहास मे ऐसी हृदय विदारक अविस्मरणीय घटनाएं है जिनके द्वारा मानव की पाशविक वृत्तियों व भौतिक लालसाओं की भयावह व घृणास्पद अभिव्यक्ति हुई। भविष्य मे इस प्रकार के सहारो से विश्व की सुरक्षा करने के लिए 24 अक्तूबर, 1945 को सयुक्त राष्ट्र सघ की स्थापना हुई जिसके घोषणा-पत्र में कहा गया, "हम, सयुक्त राष्ट्र के लोग अग्रिम पीढियों को युद्ध की विभीषिका से बचाने के लिए कृत संकल्प हैं"। संयुक्त राष्ट्र संघ (1945) के चार्टर की उद्देशिका में 'मूल मानवाधिकारो' तथा 'व्यक्ति की गरिमा और महत्व' में आस्था को पुष्ट करते हुए कहा गया है, "मूल मानवाधिकारों में, व्यक्ति की गरिमा और महत्व में, पुरुषो तथा स्त्रियो और छोटे तथा बडे राष्ट्रों के समान अधिकारो मे अपनी आस्था की पुन· पुष्टि करने के लिए .. कृत सकल्प हम संयुक्त राष्ट्रों के जनसमाजों ने इस लक्ष्य की सिद्धि के निमित्त सयुक्त रूप से प्रयत्न करने का निश्चय किया है।"

1945 मे सयुक्त राष्ट्र संघ के अध्यादेश के प्रभावी होने के पश्चात् मानवाधिकारों के सम्वर्द्धन व सुरक्षा ने नवीन अन्तर्राष्ट्रीय आयाम ग्रहण किए। इसके परिणामस्वरूप 16 फरवरी, 1946 को अन्तर्राष्ट्रीय मानव

अधिकार आयोग की स्थापना की गई। आयोग ने जनवरी 1947 से श्रीमती फ्रैंकलिन डी रूज़वेल्ट की अध्यक्षता में अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया तथा मानवाधिकार की सार्वभौमिक घोषणा का प्रारूप तैयार किया जिसे सयुक्त राष्ट्र सघ की महासभा ने स्वीकार कर लिया तथा 10 दिसम्बर, 1948 को 'मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा', की गई। इसमें वे मानवाधिकार सम्मिलित किए गए 'जिनकी प्राप्ति सभी जन समाजो और सभी राष्ट्रों के लिए' सामान्यतः आवश्यक मानी जाती है। मानवाधिकार भौगोलिक सीमाओं तक सीमित नहीं हैं और न ही इनका पेटेन्ट या कॉपीराइट होता है इसलिए मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा ने विश्व के अनेक देशों के संविधानो और वैधानिक प्रणाली को प्रभावित किया। मानवाधिकारों को सुरक्षित रखने के लिए भारतीय संविधान में प्रारम्भ से ही प्रजातंत्र, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद, समानता, स्वतंत्रता, बन्धुत्व तथा न्याय के सिद्धान्तों का अनुपालन किया गया है।

'मानवाधिकार' – सम्प्रत्यय का तात्पर्य

मानवाधिकारों की धारणा मानव के सुख से जुड़ी है। मानव सुख की धारणा बढ़ते-बढ़ते सामाजिक सुख, राष्ट्रीय सुख और अन्तर्राष्ट्रीय सुख में परिणत हो जाती है। अतः आधुनिक काल मे यह धारणा बलवती है कि अन्तर्राष्ट्रीय सुख और समृद्धि मानव अधिकारों की उपलब्धता व उपभोग पर आधारित है। मानव की गरिमा और सम्मान को बनाए रखने के लिए आवश्यक न्यूनतम अधिकारों को मानवाधिकार के अन्तर्गत रखा जाता है। मानव से सम्बन्धित वह प्रत्येक मामला जो मानव के अबाधित विकास में सहायक हो तथा उसकी आत्मा व आत्मसम्मान को ठेस पहुंचाए बिना उसकी प्रगति मे सहायक हो, मानवाधिकार के अन्तर्गत आता है।

मानवाधिकार शिक्षा की आवश्यकता

यद्यपि मानवाधिकारो की रक्षा करना प्रत्येक देश की सरकार का दायित्व है परन्तु 54 वर्ष के कालखण्ड मे मानवाधिकारों पर अमल का इतिहास निराशाजनक और भयावह रहा है। इसके कार्यान्वयन के लिए नागरिकों में मानवाधिकारो के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना अनिवार्य है। यह कार्य शिक्षा के द्वारा ही किया जा सकता है। यूनेस्को तथा राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान, जापान के सयुक्त अध्ययन का यह निष्कर्ष अक्षरश सत्य है, 'बालकों को वर्तमान मे किस प्रकार की शिक्षा दी जा रही है' इसी तथ्य पर मानव जाति का भविष्य निर्भर करेगा क्योंकि अद्यतन सूचनाएं व उत्तम कौशल प्रदान करने के साथ-साथ बालकों में वांछित मनोवृत्तिया व विश्वासों का विकास करने की प्रक्रिया शिक्षा है। हमें यह स्वीकार करना होगा कि शिक्षण संस्थाओं का उत्तरदायित्व मात्र कुछ विषयों का अध्यापन करने या परीक्षा उत्तीर्ण कराने तक सीमित नहीं है, यह समय व्यक्तित्व के विकास व निर्माण के लिए लगातार सुनियोजित प्रयत्न करने का है और व्यक्तिव की पूर्णता के लिए आवश्यक है कि मानवीय मूल्यों व अधिकारों के प्रति सजगता का विकास निश्चित रूप से शिक्षण संस्थाओ मे किया जाए।

मानवाधिकारों की सार्वभौमिक संस्कृति का निर्माण करने के लिए ज्ञान व कौशल प्रदान करने तथा मनोवृत्तियों मे परिमार्जन लाने हेतु प्रशिक्षण, विस्तार व सूचना सम्बन्धी प्रयासों के रूप में मानवाधिकार शिक्षा को परिभाषित किया जाता है।

मानवाधिकारों की सार्वजनीन घोषणा (10 दिसम्बर, 1948) मे अपेक्षा की गई है, "शिक्षा मानव व्यक्तिव के पूर्ण विकास और मानवाधिकारो तथा मूल स्वतंत्रताओं के प्रति सम्मान की भावना को प्रबल बनाने की ओर अभिमुख होगी।"

मानवाधिकारो की शिक्षा की आवश्यकता पर सभी मानवाधिकार सम्बन्धी दस्तावेजो में बल दिया गया है। इसे 'भूमण्डलीय मानवाधिकार संस्कृति के विकास में आवश्यक योगदान' माना गया है। मानवाधिकार की सार्वभौमिक घोषणा की उद्देशिका का प्रथम वाक्य कहता है, "मानव परिवार के सभी सदस्यों की अन्तर्निहित गरिमा और समान तथा अभेद अधिकार विश्व में स्वतत्रता, न्याय और शान्ति के आधार है।" मानवाधिकार की सार्वभौमिक घोषणा की

धारा 26 (2) कहती है कि मानव व्यक्तित्व के पूर्ण विकास तथा मानवीय अधिकारों व आधारभूत स्वतंत्रताओ को दृढ़ता प्रदान करने की ओर शिक्षा को निर्देशित होना चाहिए। इससे यह प्रतिबिम्बित होता है कि सयुक्त राष्ट्र संघ एक ओर तो व्यक्तियों को 'अपने अधिकारों को जानो' का सदेश देना चाहता है तथा दूसरी ओर 'अन्य व्यक्तियों के अधिकारों के प्रति सम्मान' रखने की भी अपेक्षा करता है।

तेहरान में 1968 में सम्पन्न मानवाधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में यह निर्णय लिया गया कि नागरिकों मे मानवाधिकारों से सम्बन्धित समस्याओं के प्रति रुचि जागृत करने के लिए सभी राष्ट्र शिक्षा सम्बन्धी समस्त साधनों का प्रयोग करें। 1978 में पेरिस में यूनेस्को के सामान्य सम्मेलन में यह सुझाव दिया गया कि मानव व्यक्तित्व के सम्पूर्ण विकास तथा मानव अधिकारों व आधारभूत स्वतंत्रता के प्रति आदर भावना को दृढ़ता प्रदान करने के लिए शिक्षा को संचालित किया जाए। शिक्षा सभी देशों, जातीय व धार्मिक समूहों में समझ, सहनशीलता, मैत्री में अभिवृद्धि करेगी तथा शान्ति हेतु संयुक्त राष्ट्र की गतिविधियों को आगे बढ़ाएगी। मानवाधिकारों को सही अर्थो में प्राप्त करने के लिए वियना मे 1978 तथा माल्टा में 1987 में सम्पन्न अन्तर्राष्ट्रीय सभाओं में मानवाधिकार शिक्षण के निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किए गए—

- सहनशीलता की मनोवृत्ति का विकास करना।
- मानवाधिकारो के प्रति सम्मान की भावना का विकास करना।
- मानवाधिकारो का ज्ञान प्रदान करना।
- मानवाधिकारों के प्रति चेतना जागृत करने के साधनों व उपायों को विकसित करना।

मौन्ट्रियाल में मार्च 1993 में सम्पन्न अन्तर्राष्ट्रीय सभा में मानवाधिकारों की भूमण्डलीय कार्यान्वियन योजना को स्वीकार किया गया जिसमें व्यक्तियों को मानवाधिकार का ज्ञान प्रदान करने के लिए परिवार से लेकर संयुक्त राष्ट्र संघ तक संसाधनों की भूमण्डलीय गतिशीलता पर बल दिया गया जिससे मानवाधिकारों की अवहेलना करने वाले अनुपयुक्त व्यवहार को अस्वीकार किया जा सके। यूनेस्को की कार्य योजना में कहा गया है कि जातीयता, लैंगिकता, धार्मिक असहिष्णुता से मानवाधिकारो की गम्भीर अवहेलना होती है। इसे मानवाधिकार शिक्षा की उपयुक्त रणनीति द्वारा दूर करना होगा। 1993 में वियना में मानवाधिकारों पर हुए विश्व सम्मेलन में कहा गया कि राज्य की यह प्रतिबद्धता है कि वह सुनिश्चित करे कि शिक्षा के द्वारा मानवाधिकारों तथा आधारभूत स्वतंत्रताओ के प्रति आदर विकसित हो।

मानवाधिकार शिक्षा का स्वरूप

मानवाधिकार शिक्षा को चार स्तरो मे विभाजित करके देखना उपयुक्त होगा।

मानवाधिकार आन्दोलन के प्रत्यय व उपयोगिता के विषय में जानकारी देना

इसके लिए भारत में कार्य प्रारम्भ हो गया है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने नवीन पाठ्यक्रम में मानवाधिकार शिक्षा को स्थान दिया है। शिक्षकों को मानवाधिकार सम्बन्धी सूचनाएं प्रदान करने के लिए एकेडेमिक स्टाफ कालेज को अधिकृत किया गया है। इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय ने मानवाधिकार मे डिप्लोमा पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया है। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् तथा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने मानवाधिकार सम्बन्धी पुस्तको का प्रकाशन किया है। इस पहल को दृढ़ आधार प्रदान करने की आवश्यकता है।

विद्यार्थियों को जीविका अर्जित करने हेतु तैयार करना

विद्यार्थियों को भौतिक उन्नति के अवसर देने के लिए शिक्षा संस्थाओं में मात्र ज्ञानात्मक सूचनाएं नहीं बल्कि कार्यात्मक कौशल प्रदान करना आवश्यक है। यद्यपि इस दिशा में अभी बहुत कुछ अपेक्षित है परन्तु एक आशा की किरण दिखाई दी है क्योंकि महाविद्यालय की शिक्षा धीरे-धीरे व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की ओर मुड़ रही है। इसे व्यापकता प्रदान करने की आवश्यकता है।

मानवाधिकार शिक्षा से मूल्यों का संवर्द्धन किया जाए

मानवाधिकार शिक्षा मात्र सूचनाओं और कौशलों के विकास तक सीमित नहीं है बल्कि यह मूल्यों के संवर्द्धन से भी सम्बन्धित है। मूल्य प्रदान करने तथा मानवीय

आकाक्षाओं और उपलब्धियों के प्रति मनुष्य को सवेदनशील बनाने का सशक्त माध्यम शिक्षा है। हमारे शैक्षिक उद्देश्यो का विकास व पोषण प्रजातंत्र, धर्मनिरपेक्षता, समानता, सामाजिक न्याय, स्वतत्रता, सुरक्षा आदि भारतीय मूल्यों पर होना चाहिए। मूल्यो का विकास रचनात्मक रूप से कक्षा में व कक्षा के बाहर होना चाहिए तथा शिक्षको को स्वयं इस प्रकार के मूल्यों का प्रतिरूप बनना होगा। इस स्तर पर मानवाधिकार शिक्षा मूल्य शिक्षा का एक अग बन जाएगी जिससे जीवन के प्रति विशेष दृष्टि का विकास होगा।

मानवाधिकारों के प्रति सकारात्मक मनोवृत्ति का विकास

मानवाधिकार शिक्षा का चतुर्थ व अन्तिम स्तर मानवाधिकारो के प्रति सकारात्मक मनोवृत्ति के विकास से सम्बन्धित है। केवल जनमत से ही मनोवृत्ति में परिवर्तन नही करना है बल्कि सामाजिक आन्दोलन को प्रोत्साहित करना है जिससे प्रभावितों की रक्षा हो तथा उन्हें पुन कानून सम्मत स्थान मिल सके।

प्रथम दो स्तरों पर कार्य करना अपेक्षाकृत सरल है परन्तु कठिनाई तृतीय व चतुर्थ स्तर के साथ है। इसके लिए हमे आत्म निरीक्षण करके प्राथमिकताओ का पुन· निर्धारण करना होगा क्योंकि एक उत्तम शिक्षा व्यवस्था तब तक पूर्ण नहीं हो सकती जब तक वह स्वस्थ समाज की स्थापना को प्रोत्साहित न करे। इसे अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा आयोग की रिपोर्ट (1996) 'लर्निंग: द ट्रेजर विदइन' की भाषा में इस प्रकार रख सकते है— मानवाधिकारो को जान लेने तक ही मानवाधिकार शिक्षा समिति नहीं है बल्कि इसका व्यवहार और कर्म में उतरना आवश्यक है तभी हम साथ में रहने की कला सीखकर वास्तविक अर्थो में मनुष्य बन सकेंगे।

यहां उल्लेखनीय है कि मानवाधिकार शिक्षा प्रदान करने में मुख्य तथ्य यह ध्यान में रखना होगा कि किसी एक विषय या वेला के माध्यम से नही बल्कि विद्यालय के सम्पूर्ण कार्यक्रम— समय-सारणी, सभी विषयों के शिक्षण, पाठ्येतर क्रियाओं, संस्था के सम्पूर्ण वायुमण्डल में मानवाधिकार प्रतिबिम्बित/प्रतिध्वनित हो। इसे हम यूं कह सकते हैं कि विद्यालय परिसर में प्रवेश से लेकर छुट्टी की घटी बजने तक प्रत्येक क्रिया में मानवाधिकारों की झलक हो तथा प्रत्येक क्रिया मानवाधिकारो से नियंत्रित हो। इस प्रकार यदि सस्था की सम्पूर्ण संस्कृति मानवाधिकार की प्राप्ति की ओर निर्देशित व उनसे संचालित होगी तो व्यक्ति को स्वयं ही वह सारे अधिकार मिल जाएंगे जिन्हें हम मानवाधिकार कहते हैं।

निष्कर्ष

मानवाधिकार शिक्षा की आवश्यकता को संदेह से देखा जा सकता है और यह प्रश्न उठ सकता है कि मानवाधिकार को शिक्षा मे सम्मिलित करने से शिक्षा और बोझिल हो जाएगी, एक विषय और बढ़ जाएगा आदि। परन्तु मानवाधिकारो की शिक्षा की मूल अवधारणा उसे एक विषय तक सीमित करने की नहीं है बल्कि इसमे शिक्षा को ऐसी प्रक्रिया माना गया है जो विद्यार्थियों की मनोवृत्ति व मूल्यो में परिवर्तन/परिमार्जन लाकर मानवाधिकार के सदेश को दीर्घकाल तक जन-जन तक पहुंचाने में समर्थ है। मानवाधिकार शिक्षा को सही अर्थो में क्रियान्वित करने के लिए शिक्षकों और नियोजकों को यह अवश्य ध्यान रखना होगा कि इसमें अधिकारों के साथ-साथ मानव के कर्तव्यों पर भी समान रूप से बल दिया जाए। इसके लिए शिक्षा की प्रक्रिया में मौलिक परिवर्तनों से हमे दूर नहीं हटना चाहिए क्योंकि मानवाधिकारों के प्रति चेतना उत्पन्न करना आज मानव मात्र के अस्तित्व की अनिवार्यता है। ☐☐

कानपुर विद्या मन्दिर
महिला (पी.जी.) महाविद्यालय, कानपुर
उत्तर प्रदेश

कहानी– प्रभावशाली शिक्षण विधि के रूप में

❑ मीनू अग्रवाल

अगर कहानी शब्द मात्र से ही कहानी का अर्थ लिया जाए तो इंशाअल्ला खां की 'रानी केतकी की कहानी' हिन्दी की सर्वप्रथम मौलिक कहानी मानी जा सकती है। परन्तु कहानियों का वास्तविक आरम्भ लल्लूजी लाल सदल मिश्र एवं इंशाअल्ला खां के ग्रंथों के लगभग 100 वर्ष के पश्चात् माना जाता है।

कहानी कहने और सुनने की प्रवृत्ति मानव में आदिकाल से चली आ रही है। जिन जातियो या भाषाओं का कोई साहित्य नहीं है उनमें भी दन्तकथाओ के रूप मे कहानियो का प्रचलन है। हमारे प्राचीन वाडमय वेद, ब्राह्मण ग्रथ, उपनिषद, महाभारत, रामायण आदि में अनेक कथाएं बिखरी पड़ी हैं। इसी प्रकार बौद्ध जातक, पंचनंत्र, हितोपदेश, वृहत् कथा सरित्सागर, बैताल पचविशतिका, शुक सत्तशती, सिंहासन द्वात्रिंशिका, दशकुमार चरित्र आदि प्राचीन संस्कृत ग्रन्थो में अनेक प्रकार की कथाओं का संग्रह है।

अगर कहानी शब्द मात्र से ही कहानी का अर्थ लिया जाए तो इशाअल्ला खां की 'रानी केतकी की कहानी' हिन्दी की सर्वप्रथम मौलिक कहानी मानी जा सकती है। परन्तु कहानियों का वास्तविक आरम्भ लल्लूजी लाल सदल मिश्र एव इशाअल्ला खां के ग्रंथो के लगभग 100 वर्ष के पश्चात् माना जाता है।

आचार्य शुक्ल ने किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' जो 'सरस्वती' के प्रथम अंक में सन् 1957 में प्रकाशित हुई, को ही हिन्दी की सर्वप्रथम मौलिक कहानी माना है।

अमरीकी लेखक एडगर एलिन पो (सन् 1809 - 1849) ने कहानी की परिभाषा निम्न प्रकार से दी है–

छोटी कहानी एक ऐसा आख्यान है जो इतना छोटा है कि एक बैठक में पढ़ा जा सके और जो पाठक पर एक ही प्रभाव के उत्पन्न करने के उद्देश्य से लिखा गया हो। उसमें ऐसी सब बातो का बहिष्कार कर दिया जाता है जो उस प्रभाव को अग्रसर करने मे सहायक न हों। वह स्वत पूर्ण होती है।

सर ह्यूवालपोल के अनुसार– कहानी, कहानी होनी चाहिए अर्थात् उसमें घटित होने वाली वस्तुओं का लेखा-जोखा होना चाहिए। वह घटना और आकस्मिकता से पूर्ण हो, उसमे शिप्र गति के साथ अप्रत्याशित विकास हो जो कौतूहल द्वारा चरम बिन्दु और संतोषजनक अन्त तक ले जाए।

कहानी के तत्व

तत्वो की दृष्टि से विद्वानो ने कहानी के छः प्रमुख तत्व माने हैं–

- ❑ कथावस्तु
- ❑ चरित्र-चित्रण
- ❑ कथोपकथन
- ❑ देशकाल तथा वातावरण
- ❑ शैली
- ❑ उद्देश्य

❑ कथावस्तु–कहानी का कथानक आरम्भ होकर प्रायः किसी न किसी प्रकार के संघर्ष द्वारा क्रमशः उत्थान को प्राप्त होता हुआ चरम या तीव्रतम स्थिति को

पहुंचता है, वहां पर कौतूहल क्रमशः अपनी चरम सीमा को पहुंच जाता है और कौतूहल का चमत्कारिक और कुछ-कुछ अप्रत्याशित ढंग से अन्त हो जाता है। इसके पश्चात् कहानी का परिणाम या अन्त आता है। इस प्रकार कथानक के विकास की पांच अवस्थाएं– प्रारम्भ, आरोह, चरम स्थिति, अवरोह एव अन्त या उपसंहार हैं।

- **चरित्र-चित्रण**– चरित्र-चित्रण का सम्बन्ध पात्रों से है। पात्रों का चरित्र-चित्रण लेखक की अनुभूति, जीवन सम्बन्धी ज्ञान तथा अनुभव और उसके मनोवैज्ञानिक विश्लेषण पर निर्भर करता है। पाठक के हृदय में पात्रों के प्रति सहानुभूति का उदय होना सफल चरित्र का प्रतीक है। चरित्र-चित्रण चार प्रकार से किया जाता है– ● वर्णन द्वारा ● संकेत द्वारा ● वार्तालाप द्वारा ● घटनाओ द्वारा।
- **कथोपकथन**–कथोपकथन या वार्तालाप घटनाओं को गतिशील बनानें में, भाषा शैली का निर्माण करने में और पात्रों के दृष्टिकोण, आदर्श तथा उद्देश्य से परिचित कराने में सहायता करता है।
- **देशकाल तथा वातावरण**–कहानी में देशकाल की स्पष्टता लाने के लिए तथा कार्य से परिस्थिति की अनुकूलता प्रदर्शित करने के सन्दर्भ में वातावरण का स्वाभाविक, आकर्षक तथा पात्रों की मानसिक स्थिति के अनुकूल चित्रण किया जाता है।
- **शैली**–कहानी की वर्णन शैली सरल, सुबोध, सरस, प्रवाहपूर्ण और धारावाहिक होनी चाहिए। लक्षणा, व्यंजना इत्यादि शब्द शक्तियों तथा अलकार और मुहावरों द्वारा वर्णन शैली को उत्कृष्ट रूप दिया जा सकता है। भाषा की सजीवता व शक्तिमत्ता कहानी में गति उत्पन्न कर देती है।
- **उद्देश्य**– प्रत्येक कहानी मे कोई उद्देश्य या लक्ष्य अवश्य रहता है। सामान्यतः कहानी के निम्नलिखित उद्देश्य माने जा सकते हैं–
  - किसी विशिष्ट प्रवृत्ति को जगाकर हृदय को सवेदनशील बनाना।
  - किसी विचार या सिद्धान्त को अभिव्यक्त करना।
  - सुन्दर भावनाओं के श्रव्य प्रदर्शन से मनोरंजन करना।

कहानी– एक विधि के रूप में

सामान्यत. ज्ञान प्राप्त करते समय विद्यार्थी एक निष्क्रिय श्रोता के समान अनुभव व प्रयोग के अभाव में सीखने का प्रयास करता है। परिणामस्वरूप उसकी स्वय की बुद्धि का बहुत कम विकास हो पाता है। अतः कक्षाकक्ष के वातावरण को सक्रिय करने तथा अमूर्त विचारों को ऐसा मूर्तरूप देने में जिसमें बालक स्वयं रुचि ले सके, कहानी विधि का प्रयोग एक सशक्त माध्यम है। विषय की नीरसता को समाप्त करने व उसे विद्यार्थी के जीवन से सबन्धित करना ही शब्दों की चित्रात्मक अभिव्यक्ति कहानी की विशेषता है। हिन्दी, अग्रेजी व संस्कृत आदि भाषाओं मे कहानी के प्रयोग का समान्यतः प्रचलन है। परन्तु विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञानों में भी विषय-वस्तु को कहानी के माध्यम से सरल, सुबोध व रुचिपूर्ण बनाया जा सकता है। प्लेटो ने भी इस पद्धति को छोटे बच्चों के लिए लाभप्रद एवं उपयुक्त बताया था।

शिक्षाशास्त्री वसीली सुखोम्लीन्सकी के अनुसार बालक कथा-कहानियों के बिना, कल्पना के खेल के बिना जी नहीं सकता, इसके बिना यह संसार उसके लिए चित्रपट पर बनी एक सुन्दर तस्वीर मात्र होता है, कथा-कहानियां इस तस्वीर में प्राण फूंकती हैं। कथा-कहानियां उस ताजी हवा के झोंके के समान हैं जो बच्चों के चिन्तन और वाणी की सुलगती आग को भड़काता है।

कहानी के माध्यम से शिक्षण का प्रयास भारत में नया नहीं है। चिल्ड्रंस लिटरेचर एन्साइक्लोपीडिया के अनुसार, "यूरोप जब अंधकार युग में जी रहा था, तब भारत में पंचतंत्र की रचना हुई। भारतीय लोककथाओं और बालकथाओं से दुनिया के अनेक देशों ने प्रेरणा ली।"

श्री विष्णु शर्मा ने, पाटिलीपुत्र के राजा श्री सुदर्शन

के राजमहल में तीन शैतान राजकुमार शिष्यों को जानवरों की कहानियो के माध्यम से शिक्षा दी। उनके अनुसार आदमी की आवाज के स्थान पर जानवरों द्वारा कही गई बातें बच्चों पर अधिक प्रभाव डालती हैं। शिक्षक को अपने विषय से सम्बन्धित विषय-वस्तु का चयन कर लेना चाहिए जो कहानी के रूप मे कहा जा सके।

विज्ञान

विज्ञान के विषय मे बाल साहित्य के सप्तर्षियों में से एक रामवृक्ष बेनीपुरी जी की कृतियां "आविष्कार और आविष्कारक", "जानवरों का जीवन" श्री मनोहर वर्मा की "अंतरिक्ष में शटल", "शरीर के नौ रत्न", "जाने-पहचाने कीड़े", "आसपास की चिड़ियां", "मुलाकात विचित्र जानवरों से", "कबतूर से उपग्रह तक", श्री शंकर सुल्तानपुरी की "पप्पू की अंतरिक्ष यात्रा", "मंगल लोक पर एक दिन", "आकाशवाणी के चमत्कार" आदि के माध्यम से विभिन्न जानवरों, ग्रहो, आविष्कारो आदि की जानकारी को रोचक तरीके से प्रस्तुत किया जा सकता है। इसी प्रकार शिक्षक विभिन्न वैज्ञानिकों से सम्बन्धित घटनाओं एवं उनके आविष्कारों को कहानियों के रूप में प्रस्तुत कर विद्यार्थियों की रुचि सरलता से अपने विषय में कर सकता है।

मानव की कहानी, शेर की कहानी, कुत्ते की कहानी आदि बनाकर जैव विकास को समझाया जा सकता है। इसी प्रकार पानी की कहानी के माध्यम से पदार्थ की अवस्था को समझाया जा सकता है।

इतिहास

कहानी के माध्यम से इतिहास की जानकारी ऐसे प्रभावशली ढंग से रखी जा सकती है कि बालक इतिहास के पात्रों के पास खड़े-खड़े इतिहास का प्रत्यक्ष दर्शन करते हैं। इतिहास के विभिन्न पात्रों पर लिखी कहानियों की कमी नही है, जिनका उपयोग एक शिक्षक अपने शिक्षण में कर सकता है। उदाहरण के लिए अक्षय कुमार जैन की "साहसी ससार", "विश्व के महापुरुष", "छत्रपति शिवाजी", "ऐसे थे जवाहर", व्यथित हृदयजी की "राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन", "इंदिरा प्रियदर्शिनी", "मौलाना आजाद", "खान अब्दुल गफ्फ़ार खा", और शंकर सुल्तानपुरी की "कथा जवाहरलाल की", "रानी लक्ष्मीबाई", "स्वामी रामतीर्थ", "भारत की आत्मकथा", "हवामहल" आदि प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त शिक्षक इतिहास की घटना को स्वयं पढ़कर उसे कहानी के रूप एवं रग में सजाकर विद्यार्थियों के समक्ष पेश कर सकता है।

भूगोल

देश के महान बाल-शिक्षाविद् स्व. गिजुभाई बधेका के अनुसार कहानी के माध्यम से भूगोल के समान विषय भी जो पढ़ाने में बहुत नीरस माना जाता है, बहुत अच्छी तरह से पढ़ाया जा सकता है। उनके अनुसार भूगोल सिखाने के लिए शिक्षक निम्नलिखित शीर्षकों वाली कहानिया तैयार कर सकते हैं–

- द्वारिका से मुम्बई तक साइकिल यात्रा
- रामेश्वरम् से कश्मीर तक की विमान यात्रा
- कलकत्ते से मुम्बई तक की मोटर यात्रा
- हिन्दुस्तान के सिंह
- माचिस का व्यापार
- ऊंटों का सम्मेलन

ऐसी कहानियो में कुछ पात्रों की कल्पना करके उनके समक्ष आने वाले भौगोलिक दृश्यों, स्थितियों व तथ्यो को दृष्टिगत कर उन्हें यात्रा पर रवाना करना चाहिए। यह कहानी नक्शा दिखाते हुए सुनानी चाहिए। ऐसा करने से विद्यार्थी रोचक तरीके से विभिन्न स्थानों का परिचय पा लेता है। शिक्षक विभिन्न राज्यों के सन्दर्भ में, नदी, पहाड़ों के सन्दर्भ में स्वयं कहानी बनाकर विषय-वस्तु को रोचक बना सकता है।

नागरिक शास्त्र

विद्यार्थियो में आदर्श नागरिकों के गुणों का विकास करने की दृष्टि से कहानियों का सरलता से उपयोग किया जा सकता है। भारतीय साहित्य में ऐसी अनेक कथाएं है जो बालक में साहस, स्वाभिमान, आस्था, कर्तव्य परायणता का बीजारोपण करती हैं। नचिकेता, बालक

सुधन्वा, ध्रुव और अभिमन्यु, प्रह्लाद, पन्नाधाय आदि की कहानियों के माध्यम से अध्यापक उपरोक्त गुणों का छात्रों में विकास कर सकता है। अक्षय जी की "हमारे परमवीर सेनानी", "देश प्रेम की कहानियां", "कहानिया बलिदान की" और "प्रेरक प्रसंग" एवं इसी प्रकार की अन्य कहानियों के माध्यम से देश प्रेम की भावना का विकास किया जा सकता है। देश के प्रधानमंत्री व राष्ट्रपति के प्रेरक प्रसंगो से उनके प्रति व विषय के प्रति रुचि उत्पन्न की जा सकती है। शिक्षक नागरिक शास्त्र की विभिन्न विषय-वस्तुओ जैसे राष्ट्रीय एकता, भाषावाद, जातिवाद, साम्प्रदायिकता, समानता का अधिकार, शोषण के विरुद्ध अधिकार, सहकारिता, फौजदारी व दिवानी मुकदमे, चुनाव प्रक्रिया, नागरिक जीवन के घटक आदि से सम्बन्धित कहानियो का चयन कर या स्वयं कहानियां लिखकर उनके अमूर्त विचारो को बिंबरूप प्रदान कर सकता है।

सामाजिक विज्ञान

विभिन्न सामाजिक समस्याओं जैसे दहेज, पर्दा प्रथा, बाल-शोषण, भ्रष्टाचार, गरीबी, बेरोजगारी आदि को कहानियों के माध्यम से विद्यार्थियों के समक्ष रख उनके मन मस्तिष्क को उद्वेलित किया जा सकता है और उचित समाधान की दिशा में प्रेरित किया जा सकता है।

इस प्रकार नैतिक शास्त्र व भाषा के अतिरिक्त सभी विषयों का शिक्षण कहानी के माध्यम से कर विषय को रोचक, सरल व बोधगम्य बनाया जा सकता है। कहानियो के बिंब सजीव, सुस्पष्ट तथा ठोस से अमूर्त की ओर पहला कदम होते हैं।

कहानी पद्धति के गुण

वसीली सुखोम्लीस्की के अनुसार कहानियां बाल-चिंतन का, उदात्त भावनाओं और आकांक्षाओ का जीवनदायी स्रोत हैं। कहानियों के बिंबो के प्रभाव में बाल-आत्मा मे उत्पन्न होने वाली सौन्दर्य बोधात्मक, नैतिक और बौद्धिक अनुभूतिया विचारों के प्रवाह को सक्रिय बनाती हैं जो मस्तिष्क को सक्रिय कार्य की प्रेरणा देती हैं। चिन्तन के जीवंत "द्वीपो" को सुदृढ़ तारों से जोड़ता है। कहानियों के बिंबों के जरिए शब्द अपनी सुक्ष्मतम छटाओं के साथ बाल-चेतना मे प्रवेश करता है, वह बच्चे के आत्मिक जीवन का क्षेत्र, उसके विचारो और भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम, चिन्तन का सजीव यथार्थ बन जाता है। कथा-कहानियों के बिंबों द्वारा जगाई गई भावनाओं के प्रभाव मे बच्चा शब्दों के माध्यम से सोचना सीखता है। □□

लालबहादुर शास्त्री महिला
शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालय
जयपुर, राजस्थान

हिन्दी शिक्षण की समस्याएं

❑ सुषमा जोशी

हिन्दी भाषा के सम्बन्ध में सबसे प्रमुख समस्या है– हिन्दी के प्रति विद्यार्थियों में भावनात्मक निष्ठा का अभाव। आज छात्र हिन्दी भाषा को केवल एक विषय के रूप में पढ़ना मात्र ही स्वीकार करते हैं। उनकी दृष्टि में विदेशी भाषा (अंग्रेजी) उन्हें सफलता की सीढ़ी तक पहुंचा सकती है। किसी भी भाषा के साथ यह देखा गया है कि जब तक उस भाषा का सम्बन्ध व्यक्ति के साथ भावनात्मक रूप से नहीं होता तब तक वह अपने वास्तविक स्वरूप को प्राप्त नहीं कर सकती।

भाषा अभिव्यक्ति का एक सशक्त साधन है। यह एक ईश्वर प्रदत्त ऐसी निधि है जिसके कारण मनुष्य समस्त प्राणी वर्ग मे श्रेष्ठ माना जाता है। यह एक पैतृक सम्पत्ति नहीं वरन् अर्जित सम्पत्ति के रूप में सम्पर्क, अभ्यास और अनुकरण से ग्राह्य होती है, इसलिए चिरपरिवर्तनशील भी है। ध्वनि प्रधान होने के कारण भाषा वैज्ञानिकों ने इसकी सीमाएं भी व्याकरण के माध्यम से निर्धारित कर दी हैं।

भाषा की श्रेणी में हिन्दी भाषा की अहम् भूमिका सदैव से रही है। हिन्दी संस्कृत भाषा की वंशजा है। आधुनिक हिन्दी की ध्वनियों का प्राचीनतम रूप वैदिक ध्वनि समूह ही है। कुछ ध्वनियां जो वैदिक ध्वनियो से आई वे लुप्त हो गई और उनके स्थान पर कुछ अन्य भाषाओ के सम्पर्क से नवीन ध्वनियो का जन्म हुआ। हिन्दी भाषा का ध्वनि तत्व बड़ा वैज्ञानिक है और सम्भवतः इसी गुण के कारण हिन्दी भाषा अन्य भाषाओ की तुलना में अधिक समर्थ, लोकप्रिय और बोधगम्य है। यह न केवल राष्ट्रभाषा ही है, वरन् एक ऐसी भाषा है जिसमें 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना का सार गर्भित है एवं हमारी अन्य प्रान्तीय भाषाओं से मेल खाती है और यहा तक कि कुछ प्रान्तीय भाषाओं की तो लिपि भी देवनागरी ही है। यह हमारा दुर्भाग्य है कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा का स्थान दिए जाने के बावजूद भी यह आज तक न तो सम्पूर्ण भारत की राजकाज के प्रयोग की भाषा ही बन पाई और न ही इसका शिक्षण अनिवार्य हुआ। सबसे बड़ी विडम्बना तो यह है कि इतनी सशक्त और समर्थ भाषा के होते हुए भी हम विदेशी भाषाओं को अपनाने की ओर अग्रसर हो रहे हैं। स्वय हिन्दी भाषी भी हिन्दी का प्रयोग करने मे लज्जा का अनुभव करते हैं। अग्रेंजी आज श्रेष्ठता का मापदण्ड बनकर रह गयी है। लोगों की धारणा भी आज यहीं तक सीमित रह गयी है कि वैज्ञानिक और तकनीकी जगत में सफलता का अधिकार मात्र अंग्रेजी भाषा है। ऐसी रुग्ण मानसिकता ही हमारी हिन्दी के विकास में बाधक बन रही है। हमारे आज के शिक्षालय जो प्राचीन युग में 'आदर्श' के रूप में जाने जाते थे, आज स्वय ही ऐसे शिक्षको को तैयार कर सकने मे समर्थ नही हैं जो हिन्दी के मानक स्वरूप से पूरी तरह परिचित हो और यही कारण है कि आज हमारे हिन्दी के विद्यार्थी पूर्ण रूप से हिन्दी पर अधिकार प्राप्त नहीं कर पाते हैं। भारत के 11 राज्य ऐसे हैं जहां पूरी तरह से सरकारी काम हिन्दी में ही होता है, लेकिन वे राज्य भी हिन्दी के मानक रूप को सही स्वरूप प्रदान करने में अक्षम है।

यदि हम केवल उत्तर प्रदेश के संदर्भ में ही बात करें तो हमें कुछ ऐसे लोग भी मिलेगे जो हिन्दी भाषा के तीन रूपो– मातृभाषा, प्रादेशिक भाषा एव राष्ट्रभाषा से सम्बद्ध है। हिन्दी उनकी मातृभाषा है, उत्तर प्रदेश की प्रान्तीय भाषा होने के कारण भी वे हिन्दी से जुड़े है और राष्ट्रभाषा के नाते भी वे हिन्दी को स्वीकार करते है। लेकिन ऐसी स्थिति में भी हम दावे के साथ यह नही कह सकते कि वे हिन्दी के सही एवं शुद्ध स्वरूप से परिचित होगे। अत· हिन्दी भाषा की वर्तमान परिस्थितियों का अवलोकन करने के उपरान्त अब यह प्रश्न विचारणीय हो जाता है कि ऐसी कौन-कौन सी समस्याए हैं जो हिन्दी भाषा शिक्षण के विकास मे बाधक सिद्ध हो रही हैं।

हिन्दी भाषा के सम्बन्ध मे सबसे प्रमुख समस्या है– हिन्दी के प्रति विद्यार्थियों में भावनात्मक निष्ठा का अभाव। आज छात्र हिन्दी भाषा को केवल एक विषय के रूप मे पढना मात्र ही स्वीकार करते हैं। उनकी दृष्टि में विदेशी भाषा (अग्रेजी) उन्हे सफलता की सीढी तक पहुंचा सकती है। किसी भी भाषा के साथ यह देखा गया है कि जब तक उस भाषा का सम्बन्ध व्यक्ति के साथ भावनात्मक रूप से नहीं होता तब तक वह अपने वास्तविक स्वरूप को प्राप्त नही कर सकती। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम आने वाली पीढी को हिन्दी भाषा के महत्व, उसके अपरिमित गौरव एवं सस्कृति से परिचित कराए। तब कहीं जाकर हम भाषा के साथ भावनात्मक सम्बन्ध स्थापित करवाने में सफल होगे। यह हमारी भाषा है, सम्पूर्ण राष्ट्र की भाषा है, इसके प्रति अपरिमित आस्था रखना एव इसका उत्थान करना हमारा कर्तव्य है– इस प्रकार के विचार ही हिन्दी भाषा शिक्षण के लिए उपयुक्त वातावरण का सृजन कर सकते हैं।

दूसरी समस्या है व्याकरण सम्बन्धी। भाषा की शिक्षा मे व्याकरण भाषा के अनुशासन का कार्य करता है, उसका सगठन करता है। यद्यपि व्याकरण को भाषा का अपरिहार्य अग माना जाता है, फिर भी भाषा व्याकरण के नियमों से इधर-उधर हटती ही है, विशेषत संस्कृत भाषा मे व्याकरण के नियमो से हटना अर्थ का अनर्थ उपस्थित कर देता है। हिन्दी भाषा चुकि सामान्य बोलचाल की भाषा है, इसलिए जब हम भाषा का प्रयोग सामान्य बोलचाल के रूप में करते है तो व्याकरण के नियमो की विशेष आवश्यकता नहीं होती। हम अपनी सुविधानुसार उसमें परिवर्तन भी कर देते हैं। लेकिन जब हम अपने विचारो को लिखित रूप में व्यक्त करते है तो हमें उसके सर्वमान्य रूप का प्रयोग करना होता है। यद्यपि हिन्दी का व्याकरण संस्कृत भाषा के व्याकरण के आधार पर बनाया गया है किन्तु इसकी प्रकृति भिन्न होने के कारण कहीं-कही अग्रेजी व्याकरण की भी सहायता ली गई है। अन्तर यह है कि हिन्दी और अंग्रेजी जहां वियोगात्मक भाषाएं हैं वही संस्कृत भाषा सयोगात्मक है। वियोगात्मक भाषा से तात्पर्य है जिसमे विभक्ति, प्रत्यय, उपसर्ग वाक्य में अलग-अलग प्रयुक्त होते हैं जबकि संयोगात्मक भाषा मे इनका प्रयोग क्रिया पद के साथ किया जाता है। उदाहरणार्थ हिन्दी मे 'वृक्ष से पत्ते गिरते है' यह वाक्य संस्कृत मे–'वृक्षात् पत्राणि पतन्ति' हो जाता है। संस्कृत मे उपरोक्त लिखित वाक्य को यदि हम 'वृक्षात पतन्ति पत्राणि' करें या 'पत्राणि वृक्षात पतन्ति' भी करें तो वाक्य अशुद्ध नही माना जाएगा। किन्तु इसी प्रकार का परिवर्तन यदि हिन्दी के वाक्य में कर दे तो वार्क्य पूर्णत. अशुद्ध माना जाएगा। इसी प्रकार हिन्दी मे क्रिया वाक्य के अन्त मे आती है और कर्म क्रिया के पूर्व रहता है, जब कि अग्रेजी मे कर्म क्रिया के बाद आता है। इससे स्पष्ट है कि वाक्य रचना की दृष्टि से सभी भाषाओ के अपने नियम होते है। यह आवश्यक नही है कि एक भाषा का व्याकरण दूसरी भाषा का प्रतिमान बने। खेद का विषय तो यह है कि आज हिन्दी व्याकरण मे इतनी सामर्थ्य नहीं रह गई है कि वह हिन्दी को बचा सके। केवल अंग्रेजी भाषा ही नहीं वरन् अन्य अनेक भाषाओ के सम्पर्क के कारण इसमे काफी परिवर्तन आ गया है। अब भाषा शिक्षण मे शुद्धि या अशुद्धि पर इतना बल भी नहीं दिया जाता। अशुद्ध वाक्य को भी यह समझकर शुद्ध मान लिया जाता है कि यह शुद्ध का अपवाद स्वरूप

है, ऐसा भी शुद्ध माना जाएगा, अर्थात् अब अपनी सुविधा पर हिन्दी व्याकरण का महत्व सीमित रह गया है। अत. आवश्यकता इस बात की है कि प्रारम्भ से ही विद्यार्थियों को हिन्दी के मानक व्याकरण की जानकारी नियमतः दी जाए ताकि वे नियम की परिधि में चलें और भाषा को विकृत होने से बचाया जा सके।

हिन्दी भाषा शिक्षण मे जो समस्या बहुतायत से देखने को मिलती है वह है उच्चारण सम्बन्धी समस्या। अन्य भाषाओं की तुलना मे हिन्दी में उच्चारण दोष अधिक दिखाई देता है। इसका कारण यह है कि हिन्दी भाषा का ध्वनि तत्व बहुत ही वैज्ञानिक है। प्रत्येक ध्वनि का एक निश्चित स्थान व प्रयत्न है। यदि उस ध्वनि के उच्चारण मे हम जरा भी असावधानी बरतते हैं तो वह उच्चारण दोष हो जाता है। चूंकि लिखित भाषा मौखिक भाषा की प्रतिनिधि होती है इसलिए यह दोषपूर्ण उच्चारण लिखित अभिव्यक्ति मे भी दोषपूर्ण ही बना रहता है। इसके अतिरिक्त हिन्दी का प्रयोग एक ऐसे विस्तृत क्षेत्र के व्यापक जनसमुदाय के बीच होता है जिसमें हिन्दी भाषा भाषी से लेकर अहिन्दी भाषा भाषी और शिक्षित से लेकर अशिक्षित तक शामिल हैं। इसलिए स्थान भेद, व्यक्ति भेद, प्रान्त भेद तथा अन्य कारणो से उच्चारण दोषपूर्ण हो जाता है। इसके कुछ प्रमुख कारण निम्नवत है—

- शिक्षक द्वारा स्वय शुद्ध उच्चारण न किए जाने के परिणामस्वरूप छात्र भी उसी अशुद्ध उच्चारण का अनुकरण करता है। वह शुद्ध एवं अशुद्ध उच्चारण के मध्य पार्थक्य नही कर पाता और उस अशुद्ध भाषा की नीव पर ही उसकी भाषा का भव्य प्रासाद खड़ा होता है।
- प्रान्तीय प्रभाव भी अशुद्ध उच्चारण का कारण कहा जा सकता है। प्रान्त की बोली का प्रभाव किसी न किसी रूप में भाषा में आ ही जाता है। इसके बहुत से उदाहरण देखे जा सकते हैं, जैसे पर्वतीय क्षेत्र के लोगो को ही ले लें। वहां ज्यादातर लोग दन्त्य स के स्थान पर तालव्य श का प्रयोग करते है और तालव्य के स्थान पर दन्त्य का, जैसे आशीर्वाद-आसीर्वाद, शगुन-सगुन, साहब-शाहब, विकास-विकाश इत्यादि। इसी तरह पंजाब मे राजेन्द्र का उच्चारण राजिन्दर, कारण-कारन, औरत-ओरत, और-ओर। बिहार मे 'ड़' ध्वनि के स्थान पर रेफ का अधिक प्रयोग होता है। जैसे सड़क-सरक, घोड़ा-घोरा। बगाल में लिंगभेद सम्बन्धी अशुद्धियां देखने को मिलती है, जैसे मोहन खाना खाती है, सीता घर जाता है इत्यादि।
- विदेशी भाषाओं के सम्पर्क के कारण भी हिन्दी मे अशुद्धिया देखने को मिलती है जैसे किसी को बुलाने के लिए अग्रेजी भाषा में कॉल शब्द का प्रयोग करते हैं, लेकिन उसी को जब रोमन लिपि में उच्चारित करते है तो प्रायः लोग 'काल' शब्द इस्तेमाल करते है। इसी तरह अनेक शब्द है जिनका उच्चारण हिन्दी मे अशुद्ध तरीके से किया जाता है जैसे कॉलेज-कालेज, हॉस्पिटल-हास्पिटल, हॉल-हाल इत्यादि। ऐसी ही कुछ अशुद्धियां उर्दू भाषा से सम्बन्धित भी हिन्दी मे देखने को मिलती हैं जैसे गज़ल-गजल, नजाकत-नजाकत, इजाज़त-इजाजत इत्यादि। ऐसे और भी अनेक उदाहरण देखे जा सकते हैं जिनका प्रयोग लोग अज्ञानवश करते हैं।
- असावधानी या लापरवाही भी एक ऐसा कारक तत्व है जो भाषा को दोषपूर्ण बनाने का जिम्मेदार होता है जैसे आवश्यकता-आवश्कता, सांस्कृतिक-संस्कृतिक, तात्कालिक-तत्कालिक इत्यादि। प्रयत्नलाघव को भी इस श्रेणी के अन्तर्गत रखा जा सकता है। इसमे बहुधा व्यक्ति अपनी सुविधानुसार वाक्य मे उन शब्दों का प्रयोग करते है जो भले ही अर्थ को स्पष्ट करने में तो समर्थ होते है किन्तु भाषा की दृष्टि से उन्हें अशुद्ध माना जाता है जैसे— हम अपना लेख दिखाये, हमने अपना लेख दिखाया, पिताजी हमसे सारा वृतान्त कहे, पिताजी ने हमसे सारा वृतान्त कहा। इस तरह की अशुद्धियों को दृष्टिगत रखते हुए यह कहा जा सकता है कि कुछ हद तक हमारा समाज भी इन अशुद्धियो के लिए जिम्मेदार है। भाषा चूकि अनुकरण प्रधान और श्रुति-ग्राह्य होती है इसलिए बालक अपने

चतुर्दिक जैसी भाषा सुनता है वैसा ही अनुकरण करता है। इसलिए शुद्ध भाषा के विकास के लिए उचित सामाजिक परिवेश भी आवश्यक है।

- कभी-कभी मनोवैज्ञानिक परिस्थितियां भी अशुद्ध उच्चारण का कारण बन जाती हैं जैसे अत्यधिक भय की स्थिति का उत्पन्न होना, हीनता की भावना का प्रादुर्भाव, अत्यधिक प्रसन्नता की स्थिति आदि। ऐसे भावोद्वेग कभी-कभी उच्चारण को अशुद्ध बना देते हैं। किन्तु ये कारक परिस्थितिजन्य होते है, अतः इनका परिहार भी सम्भव है।
- ध्वनियंत्र के विकार का होना भी कभी-कभी उच्चारण दोष का कारण बना जाता है जैसे नाक से बोलना, हकलाना, तुतलाना, मुंह के भीतर बोलना, ओष्ठ से टकराकर श्वास का बाहर आना आदि और कभी-कभी किसी की नकल उतारते-उतारते भी विद्यार्थी अशुद्ध उच्चारण के अभ्यस्त हो जाते है।

हिन्दी भाषा शिक्षण मे उच्चारण की समस्या के अतिरिक्त एक और समस्या जो देखने को मिलती है वह है वर्तनी सम्बन्धी समस्या। प्रावः यह भी देखा जाता है कि यदि भाषा की वर्तनी अशुद्ध है तो उसका उच्चारण भी अशुद्ध होता है। उच्चारण और वर्तनी एक-दूसरे के पूरक होते हैं किन्तु यह हमारा दुर्भाग्य है कि विद्यार्थी तो क्या हिन्दी के शिक्षक भी वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियो पर ध्यान नहीं देते। शुद्ध लेख का तात्पर्य सुन्दर लेख से ही नहीं वरन् लेख की शुद्धता से भी है। उच्चारण की भाति वर्तनी सम्बन्धी समस्या के भी अनेक कारण कहे जा सकते है जिसमें प्रान्तीय प्रभाव को भी एक प्रमुख कारण के रूप मे स्वीकार किया जा सकता है। इसकी चर्चा उच्चारण के सदर्भ में पहले की जा चुकी है। भिन्न-भिन्न प्रान्तों के लोग जैसा उच्चारण करते है वैसा ही उसे लिखते भी है और भाषा की दृष्टि से यह त्रुटिपूर्ण माना जाता है।

लिपि की पूर्ण जानकारी का न होना भी भाषा को अशुद्ध बनाता है। आज भी हमारे विद्यालयों में जब वर्णमाला का प्रारम्भिक ज्ञान दिया जाता है तो प्रत्येक वर्ण के पार्थक्य को स्पष्ट नहीं किया जाता। परिणामतः विद्यार्थी आरम्भ से ही वर्ण के शुद्ध स्वरूप से अनभिज्ञ रहता है और इन वर्णो को लिखते समय जहां जिस वर्ण का प्रयोग करना होता है वहा भिन्न वर्ण का प्रयोग करता है, जैसे ध के स्थान पर घ, ब के स्थान पर व, म के स्थान पर भ, क्ष के स्थान छ इत्यादि।

अनुनासिक और अनुस्वार सम्बन्धी त्रुटियां भी देखने को मिलती हैं। अनुनासिक में, जिसे चन्द्रबिन्दु भी कहते है, ध्वनियों के उच्चारण मे नासिका का सहयोग रहता है और इसके लिए वर्ण के ऊपर एक विशेष प्रकार के चिन्हों का प्रयोग किया जाता है, जैसे चॉद। दूसरी ओर अनुस्वार मे बिन्दी का प्रयोग होता है जैसे संस्कृति, संस्मरण इत्यादि। इस अन्तर को स्पष्ट रूप से न जानने के कारण बहुधा इनमें त्रुटि देखने को मिलती है। जहां अनुस्वार का प्रयोग किया जाना है वहां अज्ञानवश अनुनासिक का और जहां अनुनासिक का प्रयोग किया जाना हो वहा अनुस्वार का प्रयोग देखने को मिलता है जैसे चॉद के स्थान पर चांद, संस्कृति के स्थान पर सॅस्कृति इत्यादि।

हिन्दी वर्तनी मे रेफ सम्बन्धी अशुद्धिया बहुत देखने को मिलती हैं। छात्र बिना रेफ का प्रयोग जाने उसे वर्ण के ऊपर चढा देते हैं। उच्चारण मे तो यह अशुद्धि स्पष्ट नही होती किन्तु लिखित रूप में की गई यह अशुद्धि स्पष्ट दिखाई देती है। अतएव प्रारम्भ से ही जब तक इस बात का ज्ञान नहीं दिया जाता कि रेफ (र का प्रयोग) उच्चारण स्थान से आगे के अक्षर पर किया जाता है तब तक छात्र सही ढग से रेफ का प्रयोग नही जानेंगे।

संयुक्ताक्षर से सम्बन्धित भी बहुत-सी अशुद्धियां देखने को मिलती हैं। इसका एकमात्र कारण यह है कि हमारे विद्यार्थी इस तथ्य से अनभिज्ञ रहते है कि क्ष, त्र, ज्ञ, ये तीन व्यजन ध्वनियां किन दो वर्णो के सयोग से बनी है, जैसे क्ष (क्+ष्), त्र (त्+र्), ज्ञ (ज+ञ)। इसकी अनभिज्ञता ही उनके उच्चारण को दोषपूर्ण बनाती है और परिणामस्वरूप उच्चारण दोष वर्तनी में भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। वे क्षत्रिय के स्थान पर छत्रिय,

ज्ञानी के स्थान पर ग्यानी, वृक्ष के स्थान पर वृच्छ प्रयोग करते है।

हिन्दी मे वचन सम्बन्धी अशुद्धियां भी देखने को मिलती हैं, एकवचन में जहां ई का प्रयोग होता है जैसे स्त्री, पत्नी, लडकी वहीं बहुवचन के प्रयुक्त होने पर मात्रा बदल जाती है जैसे स्त्रियां, पत्नियां, लड़किया हो जाता है।

हिन्दी शिक्षण मे उपरोक्त कथित समस्याओ के अतिरिक्त कुछ अन्य समस्याएं भी देखने को मिलती है जैसे हिन्दी की अच्छी पाठ्यपुस्तकों का अभाव एवं उच्च कोटि के साहित्य के प्रकाशन का अभाव। यद्यपि पाठ्यपुस्तकों की दिशा में हमारी राज्य एव केन्द्र सरकार दोनों ही प्रयत्नशील हैं, साथ ही राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् एव राज्य शैक्षिक अनुंसधान और प्रशिक्षण परिषद्, उत्तर प्रदेश, लखनऊ के अथक परिश्रम के फलस्वरूप आज हिन्दी पाठ्यपुस्तकों के स्वरूप मे पर्याप्त सुधार हुआ है। पाठ्यपुस्तको एवं सहायक पाठ्य-पुस्तको के आन्तरिक और बाह्य गुणों का अलग-अलग मूल्यांकन किया जा रहा है और यह प्रयास किया जा रहा है कि पाठ्यपुस्तकों के चयन में छात्रो की बौद्धिक क्षमता, अभिवृत्ति और वर्तमान मूल्यो को प्राथमिकता दी जाए। किन्तु अभी भी ये प्रयास हिन्दी की स्थिति को देखते हुए पर्याप्त नहीं हैं। आवश्यकता इस बात की है कि न केवल हिन्दी भाषा भाषी क्षेत्र वरन् अहिन्दी भाषा भाषी क्षेत्रों मे भी हिन्दी शिक्षण को रुचिपूर्ण बनाने के यथासम्भव प्रयास किए जाएं।

अन्त मे सभी समस्याओं के निराकरण हेतु हम जिन्हें पूर्ण उत्तरदायित्व सौप सकते है वे हैं हमारे हिन्दी शिक्षक। यदि कुशल प्रशिक्षित हिन्दी शिक्षक इस दिशा में अपना योगदान दे तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि भविष्य में हिन्दी भाषा को वही प्रतिष्ठा, सम्मान व गौरव प्राप्त हो सकेगा जो एक राष्ट्रभाषा को मिलना चाहिए। ☐☐

शिक्षा विभाग
वसन्ता महिला कॉलेज
राजघाट फोर्ट, वाराणसी
उत्तर प्रदेश

प्रभावशाली सम्प्रेषण– शिक्षक के लिए एक अनिवार्यता

❒ जयदेव डबास

यहां सम्प्रेषण के विविध रूपों की चर्चा की गई है जिससे शिक्षकों के सम्प्रेषण कौशल को विकसित कर शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाने में सहायता मिलेगी। शिक्षकों के शिक्षण तथा शिक्षार्थियों के अधिगम में गुणवत्ता लाने की दृष्टि इस कौशल की नितान्त आवश्यकता है।

कई बार देखा जाता है कि कुछ शिक्षक उच्च शैक्षिक योग्तया रखने के उपरान्त भी अपने शिक्षार्थियो को सतुष्ट नही कर पाते जबकि कुछ अन्य शिक्षक अधिक शैक्षिक योग्यता न होते हुए भी अपने शिक्षार्थियो को पूर्णत सन्तुष्ट करने मे सफल रहते है। इसके कारणों पर विचार करने पर ज्ञात हुआ है कि जो शिक्षक उच्च शैक्षिक योग्यता रखने के उपरान्त भी अपने शिक्षार्थियों को सतुष्ट नहीं कर पाते वे अपनी बात को सही ढग से शिक्षार्थियों तक नही पहुंचा पाते। कभी-कभी शिक्षार्थी भी अपने किसी शिक्षक की बहुत प्रशंसा करते हैं कि अमुक शिक्षक बहुत अच्छा पढ़ाते है। उनके इस कथन से यही समझना चाहिए कि उस शिक्षक का सम्प्रेषण कौशल बहुत अच्छा होता है।

क्या सभी शिक्षकों में यह सम्प्रेषण प्रभावशाली नही हो सकता? माना कि व्यक्ति मे कुछ कौशल जन्मजात होते हैं परन्तु कुछ अभ्यास से अर्जित किए जा सकते है। सम्प्रेषण एक ऐसा ही कौशल है जिसे अभ्यास से प्रभावशली बनाया जा सकता है।

सम्प्रेषण कौशल अर्जित करना कोई आसान काम नही है। इसके विविध रूप व प्रकार होते हैं। प्रभावशाली सम्प्रेषण के लिए बहुत-सी सावधानियां बरतनी पडती हैं। इसके बाधक तत्वों की जानकारी और उनके निवारण का ज्ञान भी अनिवार्य है। शिक्षार्थी बहुत-सी बाते इसलिए नहीं सीख पाते कि शिक्षक उन्हे ठीक से सिखा नहीं पाते। वे वही सीखते हैं जो उन्हे सिखाया जाता है। यदि सम्प्रेषण ही उचित न हो तो शिक्षार्थियो का क्या दोष? उन्हें तो सम्प्रेषित को ग्रहण करने के लिए सराहना मिलनी चाहिए लेकिन उन्हे गलत सीखने के लिए फटकार पड़ती है।

यहां सम्प्रेषण के विविध रूपों की चर्चा की गई है जिससे शिक्षको के सम्प्रेषण कौशल को विकसित कर शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाने में सहायता मिलेगी। शिक्षको के शिक्षण तथा शिक्षार्थियों के अधिगम मे गुणवत्ता लाने की दृष्टि इस कौशल की नितान्त आवश्यकता है।

सम्प्रेषण का अर्थ व स्वरूप

'प्रेषण' का अर्थ है प्रेषित करना, अर्थात् किसी वस्तु या विचार को एक जगह से दूसरी जगह भेजना। प्रेषण एक पक्षीय व्यवहार है जबकि 'सम्प्रेषण' का अर्थ व्यापकता युक्त है। सम्प्रेषण एक पक्षीय व्यवहार न होकर द्वि-पक्षीय व्यवहार होता है, अर्थात् इसमें विचारो का द्वि-पक्षीय या बहु-पक्षीय आदान-प्रदान होता है।

अंग्रेज़ी भाषा के 'कम्युनिकेशन' शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन शब्द 'कोम्यूनिस' से हुई है जिसका अर्थ है– परस्पर बाटना, देना और लेना तथा मैत्री-भाव।

दोनो भाषाओं की शब्द रचना को देखकर यही कहा जा सकता है कि सम्प्रेषण के द्वारा हम अपने

ज्ञान, सूचनाओ, विचारो, धारणाओ, अनुभवो, भावनाओ का इस प्रकार परस्पर आदान-प्रदान कर सकते है जिससे उनके उपयोग एव अर्थ को भली-भांति समझा जा सके। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया मे सम्प्रेषण कौशल से यह अभिप्राय है कि शिक्षक और शिक्षार्थी की पारस्परिक अन्त'क्रिया के द्वारा शिक्षार्थी के ज्ञान मे वृद्धि हो।

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सम्प्रेषण का महत्व एवं उपयोगिता

शिक्षा मुख्यत' सम्प्रेषण का विषय है। शिक्षकों के लिए यह जानना अनिवार्य है कि वे अपनी बात प्रभावपूर्ण ढग से शिक्षार्थियो तक कैसे पहुचाएं? पाठय-वस्तु को अपने शिक्षार्थियों तक समुचित रूप से प्रेषित कर उनके व्यवहार मे वाछित परिवर्तन किस प्रकार लाए? इसके लिए प्रभावशाली सम्प्रेषण का महत्व निर्विवाद है।

सम्प्रेषण कोई नई संकल्पना नही है। प्राचीन काल मे भी विभिन्न प्रकार की सूत्र, व्याख्या, भाष्य, वार्तालाप आदि शैलिया विभिन्न आयु-वर्ग व शिक्षित वर्ग के सम्प्रेषण का माध्यम थीं। शिक्षक से दो बातो की सबसे अधिक अपेक्षा की जाती रही है-- ज्ञान तथा उस ज्ञान को शिक्षार्थी तक भेजने की क्षमता। यही बात दो हजार वर्ष पूर्व सस्कृत के महान कवि कालिदास ने इस प्रकार कही है–

श्लिष्टा क्रिया कस्यचिदात्मसंस्था,
संक्रान्तिरन्यस्य विशेषयुक्ता।
यस्योभयं साधु स शिक्षकाणां,
धुनि प्रतिष्ठापयितव्य एव।।

–मालविकाग्निमित्रम् अंक-1, श्लोक-16

"किसी शिक्षक के पास ज्ञान बहुत है तथा किसी के पास ज्ञान को शिक्षार्थी तक सम्प्रेषण की कला परन्तु सर्वश्रेष्ठ शिक्षक वही है जिसके पास ज्ञान और सम्प्रेषण कला दोनों है"– कालिदास

विद्या एक दान की वस्तु है। कहा भी है –"सर्वेषामेव दानाना ब्रह्मदानं विशिष्यते" अर्थात् सभी दानो में विद्या का दान सबसे विशेष होता है। विद्या का यह दान 'सम्प्रेषण' ही होता है। साधारण धन, पदार्थ आदि के दान के बारे मे ही बहुत-सी सावधानिया बरतनी होती है कि वह किस प्रकार दिया जाए? सुयोग्य एवं सुपात्र को दिया जाए, आवश्यकता एवं उपयोगिता के अनुरूप दिया जाए, दी गई वस्तु लेने वाले तक पहुची या नही, वह ज्यो की त्यो पहुंची या बीच मे कुछ अंश इधर-उधर हो गया आदि। साधारण दान के बारे में इन बातो का जितना महत्व है उससे भी कही अधिक महत्व शिक्षा में प्रभावशाली सम्प्रेषण का है।

सम्प्रेषण की प्रक्रिया

सम्प्रेषण मानव की प्राचीनतम गतिविधि है। यह वह प्रक्रिया है जिससे सदेश प्रेपक तथा सदेश प्राप्तकर्ता दोनों एक-दूसरे को भली-भाति समझ सकते है तथा सतुष्ट हो सकते हैं। सम्प्रेषण की प्रक्रिया को इस प्रकार समझा जा सकता है–

- **सम्प्रेषण स्रोत**– जिस व्यक्ति से विचारों के आदान-प्रदान की शुरुआत की जाती है, अर्थात् जो व्यक्ति अपने विचारों को दूसरे तक पहुचाता है 'सम्प्रेषण स्रोत' कहलाता है।
- **सम्प्रेषण सामग्री**– वह विचार व संदेश जिसे प्रेषित किया जाता है 'सम्प्रेषण सामग्री' कहलाती है।
- **सम्प्रेषण माध्यम**– जिनकी सहायता से सदेश स्रोत से प्राप्तकर्ता तक पहुंचता है वे 'सम्प्रेषण माध्यम' कहलाते है। ये माध्यम शाब्दिक-अशाब्दिक, मौखिक-लिखित आदि कई प्रकार के हो सकते है। विभिन्न प्रकार की दृश्य सामग्री, शिक्षण विधियो, शिक्षण रणनीतियों को भी सम्प्रेषण माध्यम बनाया जा सकता है।
- **सदेश प्राप्तकर्ता**– स्रोत द्वारा प्रेषित संदेश को ग्रहण करने वाला 'सदेश प्राप्तकर्ता' कहलाता है। इसका भी उतना ही महत्व है जितना सम्प्रेषण स्रोत का। इसके बिना सारी प्रक्रिया व्यर्थ होगी।
- **अनुक्रिया**– स्रोत द्वारा भेजे गए सदेश पर प्राप्त कर्ता की क्या प्रतिक्रिया रही? यही प्रतिक्रिया 'अनुक्रिया' कहलाती है। इसे स्रोत तक पहुंचाने की भूमिका प्राप्तकर्ता द्वारा निभाई जाती है। सम्प्रेषण

जारी रहे या नही, यह इसी प्रतिक्रिया पर निर्भर करता है।

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में शिक्षक एक स्रोत के रूप मे कार्य करते है क्योकि वे शिक्षार्थियो तक सदेश पहुंचाते हैं। पढ़ाया जाने वाला पाठ, विषय-वस्तु, तथ्य तथा सूचनाए सम्प्रेषण सामग्री होती है। शिक्षक द्वारा अपनायी गई शिक्षण विधिया, शिक्षण रणनीतियां, सहायक सामग्री, भाषा आदि माध्यम होते है। शिक्षार्थी प्राप्त कर्ता के रूप मे कार्य करते है क्योकि उन्हे सूचना प्राप्त करनी होती है। शिक्षार्थियों से प्राप्त अनुक्रिया से ही यह ज्ञात होता है कि सम्प्रेषण कितना सफल रहा?

एक शिक्षक, शिक्षार्थी, शिक्षण के द्वारा किया गया सम्प्रेषण एवं सम्प्रेषण माध्यम तथा शिक्षार्थियो की अनुक्रिया शिक्षण मे सम्प्रेषण के मुख्य तत्व है। शिक्षक को इन सभी तत्वों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

सम्प्रेषण के प्रकार

माध्यम की दृष्टि से— शाब्दिक तथा अशाब्दिक

- ☐ **शाब्दिक सम्प्रेषण**— जिसमें भाषा के लिखित व मौखिक दोनो रूपो का प्रयोग हो, सम्प्रेषण का शाब्दिक प्रकार कहलाता है। इसमे स्रोत और प्राप्तकर्ता दोनो द्वारा उसी भाषा का प्रयोग हो जिसे वे समझते हों।
- ☐ **अशाब्दिक सम्प्रेषण**— एक-दूसरे की भाषा न जानने वाले, गूंगे, बहरे आदि इसी का प्रयोग करते हैं। सम्प्रेषण को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए अशाब्दिक सम्प्रेषण का प्रयोग किया जाता है। इसके कई रूप होते है—
- **मुख मुद्रा**— शिक्षक की मुस्कुराहट शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को रुचिकर बना सकती है। घृणा, विस्मय, चिन्ता, विषाद, प्यार जताना आदि भी सम्प्रेषण के माध्यम है। शिक्षक के चेहरे की अभिव्यक्ति शिक्षार्थियो को कक्षा मे सावधान रहने के लिए प्रेरित करती है।
- **आंखों की भाषा**— आखें दिखाना, आखे ऊची न होना, आख निकालना, आंखे तरेरना, आखें भारी होना, आंखो मे आंसू झलक आना आदि आखों के माध्यम से भी सम्प्रेषण किया जा सकता है।
- **शारीरिक भाषा**— अंग सचालन, मूक अभिनय, नृत्य द्वारा भावों की अभिव्यक्ति, दांत पीसना, मुक्का दिखाना, उंगुली उठाना, चुटकी बजाना, अगूठा दिखाना, टांग कापना, रोंगटे खड़े होना, चरण स्पर्श करना, अग-अग खिल उठना, हाथ जोड़ना, कान पकड़ना, गरदन झुकाना, गला भर आना, छाती पीटना, जुबान बद होना, जी घबराना, गर्दन हिलाना, पीठ थपथपाना आदि विभिन्न शारीरिक अगो के माध्यम से सम्प्रेषण को प्रभावी बनाया जा सकता है। शिक्षक के स्पर्श मात्र से जनित संवेगात्मक अनुभूति शिक्षार्थियो में उपलब्धि के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न कर सकती है।
- **ध्वनि संकेत**— हूं, ऊहूं, सीटी बजाना, गुनगुनाना, घटी बजाना आदि ध्वनि संकेत भी सम्प्रेषण की भूमिका निभाते हैं।

उपकरणों एवं यंत्रों की दृष्टि से— स्वाभाविक एवं यान्त्रिक

- **स्वाभाविक सम्प्रेषण**— जिसमे शिक्षक बिना किसी कृत्रिम साधन या उपकरण की सहायता के स्वाभाविक रूप से विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।
- **यान्त्रिक सम्प्रेषण**— यन्त्रो की सहायता से किया गया सम्प्रेषण यान्त्रिक सम्प्रेषण कहलाता है। इसमें टेलीफोन, वायरलैस, फैक्स, ई-मेल, ऑडियो-वीडियो रिकार्डिग, टी वी आदि के माध्यम से किया गया सम्प्रेषण होता है।

परिस्थितियों की दृष्टि से

- **द्वि-वैयक्तिक सम्प्रेषण**— जब शिक्षक किसी एक शिक्षार्थी से बात करते है तो वह द्वि-वैयक्तिक सम्प्रेषण कहलाता है।
- **लघु समूह सम्प्रेषण**— कक्षा, सदनो की बैठकों, हॉबी क्लबों, टिटोरियल्स, कार्यशालाओं आदि के अवसर पर किया गया सम्प्रेषण लघु समूह सम्प्रेषण

होता है।

- **विशाल समूह सम्प्रेषण**— प्रार्थना सभा, पाठ्य-सहगामी क्रियाओ आदि के अवसर पर किया गया सम्प्रेषण विशाल समूह सम्प्रेषण कहलाता है।

सम्बन्ध की दृष्टि से— औपचारिक सम्प्रेषण तथा अनौपचारिक सम्प्रेषण

- **औपचारिक सम्प्रेषण**— जब आप पद व आयु मे अपने से बडों से बात करते है तो औपचारिक हो जाते हैं। शिक्षार्थी भी शिक्षक से औपचिारक भाषा मे ही सम्प्रेषण करते है।
- **अनौपचारिक सम्प्रेषण**— जब आप अपने सहकर्मियों, पद व आयु में अपने से छोटों से बात करते हैं तो अनौपचारिक हो जाते है। शिक्षक अपने शिक्षार्थियों से भी अनौपचारिक सम्प्रेषण करते हैं।

सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने वाले तत्व

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया तभी सफल मानी जा सकती है जब शिक्षक का सम्प्रेषण प्रभावशाली हो। इसके लिए उसे अपने सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने वाले कुछ तत्वो का ध्यान रखना होगा। शिक्षक तथा शिक्षार्थी के मध्य प्रभावशाली सम्प्रेषण में वातावरण शान्त हो, दोनो अभिप्रेरणा युक्त हो तथा एक-दूसरे के प्रति अभिमुख हो। शिक्षक स्तरानुरूप व शुद्ध भाषा का प्रयोग करे तथा दोनो की भाषा भी समान हो। शिक्षक की सकेतात्मक अभिव्यक्ति में गुणवत्ता हो। उसके चेहरे की अभिव्यक्ति भावो के अनुरूप हो। उसका अपने प्रति, शिक्षार्थियो के प्रति व विषय के प्रति समुचित दृष्टिकोण हो। उसकी अपने शिक्षार्थियों के प्रति तदनुभूति अथवा समानानुभूति हो। दोनो में परस्पर विश्वास का भाव हो। वह शिक्षार्थियो की मानसिक स्थिति को समझे तथा उसके अनुरूप सम्प्रेषण में प्रवृत्त हो। शिक्षक को शिक्षार्थियों की आयु, लिंग व सामाजिक परिवेश आदि का ध्यान रखकर ही सम्प्रेषण करना चाहिए। वह शिक्षार्थियो की इच्छा, सुनने की क्षमता, प्रतिक्रिया आदि को ध्यान में रखकर ही सम्प्रेषण मे प्रवृत्त हो।

शिक्षक शिक्षार्थियों को पढ़ाते समय प्रभावशाली सम्प्रेषण के लिए निम्नलिखित विधियों का प्रयोग कर सकते हैं।

व्याख्यान

व्याख्यान, शिक्षण की सर्वाधिक प्रचलित विधि है इसलिए शिक्षक को लैक्चरार/प्रवक्ता कहा गया है। व्याख्यान के माध्यम से शिक्षण मे शिक्षक का सम्प्रेषण प्रभावशाली हो इसके लिए उसे व्याख्यान के दौरान चार्ट, मानचित्र पदार्थ, मॉडल, फ्लैश कार्ड्स आदि सहायक सामग्री का प्रयोग करना चाहिए।

सम्प्रेषण मे शिक्षक की भाषा सरल व स्तरानुरूप हो। उपयुक्त मुहावरे व लोकोक्तियां भी भाषा को चुस्त बनाते है अत· यथा अवसर उनका भी प्रयोग करें। कई बार कुछ शब्द वह अर्थ नही दे पाते जिसकी शिक्षक को अपेक्षा है। बहुत से शब्दों की आवृत्ति मात्र से ही अपेक्षित अभिव्यक्ति आ सकती है। 'गरम' शब्द वह अभिव्यक्ति नहीं दे पा रहा है जो गरम-गरम या गरमागरम शब्द दे रहे है। शिक्षक इस तरह के शब्दों का प्रयोग कर अपने सम्प्रेषण को प्रभावशाली बना सकते है।

व्याख्यान प्राय एक पक्षीय होने के कारण अरुचिकर होने लगता है इसलिए शिक्षक को इसमें अपनी मुखमुद्रा, आंखो व शारीरिक भाषा, अंग सचालन आदि अशाब्दिक रुचिकर तत्वों का समावेश करने का प्रयास करना चाहिए, तभी उसका सम्प्रेषण प्रभावशाली बन सकेगा।

व्याख्यान के दौरान शिक्षार्थी बहुधा बोर (ऊब) हो जाते हैं। इसके लिए कक्षा मे यदा-कदा हसी का वातावरण सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने में मदद करता है। हास्य सम्बन्धी बाते पाठ का अंग बनकर आए न कि विषय से हटकर। जिस प्रकार किसी बडी सभा मे बीच-बीच में 'भारत माता की जय', 'शिक्षक एकता जिन्दाबाद' आदि के नारे लगाने के तुरन्त पश्चात् सभी एकाग्र हो वक्ता की बात सुनने लगते हैं उसी प्रकार व्याख्यान के दौरान कोई छोटी-मोटी हंसी की बात हो जाए तो वे शिक्षार्थी, जिनका ध्यान पाठ में नही होता, नए सिरे से पाठ की ओर ध्यान देने लगते हैं। उस समय जो

नहीं हंसते, उनके बारे मे यह भी पता लग जाता है कि उनका ध्यान पाठ मे नही था। हंसी न आने के पीछे यदि शिक्षार्थी का कोई सवेगात्मक कारण हो तो उसका भी पता लगाया जाता है तथा समय रहते उसका उपचार किया जा सकता है। इस प्रकार हास्य के प्रयोग से न केवल सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने मे मदद मिलती है बल्कि शिक्षार्थियो का मनोवैज्ञानिक उपचार भी किया जा सकता है। ध्यान रहे, हास्य का प्रयोग सीमाओ में रहकर ही करें। सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने मे उतना ही हास्य आवश्यक है जितना भोजन मे नमक।

परिचर्चा

सम्प्रेषण को रुचिकर एव प्रभावशाली बनाने के लिए व्याख्यान से भिन्न विधियो के प्रयोग पर वल दिया जाता है। इन विधियों मे ही वास्तव मे सम्प्रेषण होता है। परिचर्चा मे द्वि-पक्षीय सम्प्रेषण होता है। इसमे शिक्षक शिक्षार्थियो को समूहो मे विभक्त करता है। समूह मे 6-20 शिक्षार्थी होने चाहिए। उसे समूह के नेता की भूमिका का भली प्रकार से निर्वाह करना होगा। इसमें शिक्षक को ध्यान रखना होगा है कि विषयान्तर न हो। वह प्रत्येक शिक्षार्थी को भागीदार बनाने का प्रयास करे। शिक्षक अन्त मे पूरी परिचर्चा का सार प्रस्तुत करे। अपने विचार स्पष्ट रूप से रखे तथा तर्कसगत टिप्पणी ही करे। शिक्षार्थियों की बात ध्यान से सुने। जब शिक्षार्थी बोले तब उन्हें अनावश्यक रूप से रोके-टोके नहीं। अपनी आलोचना को भी शालीनता से स्वीकार करे। निष्कर्ष पर पहुचने का प्रयास करे। इन सभी बातो पर आचरण करके शिक्षक अपने सम्प्रेषण को प्रभावशाली बना सकता है।

विचार गोष्ठी

यह किसी एक विषय पर व्याख्यानों की शृंखला होती है। इसमें प्रत्येक शिक्षार्थी या कुछ शिक्षार्थी निर्धारित विषय पर संक्षेप में अपने विचार व्यक्त करते हैं लेकिन इसमें परिचर्चा नहीं होती। अन्त में सभी शिक्षार्थी प्रश्न पूछ सकते हैं तथा अपना योगदान दे सकते है। शिक्षार्थियो के प्रश्न के बाद शिक्षक को पूरे सत्र मे आयोजित व्याख्यानो एव प्रश्नो के आधार पर साराश प्रस्तुत करना होता है। सभी व्याख्यानो तथा प्रश्नों को ध्यानपूर्वक सुनना तथा उनका तर्कसंगत सार एव निष्कर्ष निकालकर उसे प्रभावशाली ढग से प्रस्तुत करना शिक्षक के प्रभावशाली सम्प्रेषण पर ही निर्भर करता है।

कार्यशाला

कार्यशाला के अन्तर्गत कम से कम चार-पांच मीटिग की जाती हैं। इसमे समूह के अन्तर्गत व्यक्तिगत कार्य पर बल होता है। इसमें शिक्षक को चाहिए कि वह पूरे समूह को कुछ छोटे समूहो मे बाट दे। प्रत्येक समूह से कहे कि वह अपना एक नेता चुने। शिक्षक के मार्गदर्शन मे यह समूह विषय/समस्या के किसी एक पक्ष पर कार्य कर उसका समाधान सुझाता है। प्रत्येक शिक्षार्थी अपने समूह मे योगदान देता है। इसमे मैत्री-भाव तथा प्रजातान्त्रिक तरीके से अधिगम प्रक्रिया चलती है। कार्यशाला की सफलता शिक्षक के प्रभावशाली सम्प्रेषण तथा कुशल मार्गदर्शन पर निर्भर करती है।

भूमिका निर्वहन

रोल-प्ले इस धारणा पर आधिरित होता है कि बहुत-सी बाते ऐसी हैं जिन्हें शब्दो के माध्यम से अभिव्यक्त नही किया जा सकता। यदि स्थिति को समूह द्वारा अभिनीत कराया जाए तो सम्प्रेषण अधिक प्रभावशाली हो सकता है। जो शिक्षार्थियो का समूह, इसमें भूमिका निभाता है, वह अपने आपको उस स्थिति में रखकर अभिनय करता है। इस प्रकार भूमिका निर्वहन से शिक्षार्थी ज्यादा सीख पाते हैं। इसमें शिक्षक को भी विभिन्न भूमिकाओं का निर्वहन करना होता है तथा सभी भूमिकाओ को लेकर मार्गदर्शन करना होता है। इसमें शिक्षक को ध्यान रखना चाहिए कि शिक्षार्थियों की सख्या 20-25 से ज्यादा न हो। रोल-प्ले के बाद परिचर्चा का भी आयोजन करना चाहिए तथा अपने प्रभावशाली सम्प्रेषण से तथ्यों को प्रस्तुत करना चाहिए।

प्रदर्शन

प्रदर्शन के माध्यम से शिक्षार्थियो के मस्तिष्क पर अपेक्षाकृत अधिक प्रभाव पड़ता है तथा शिक्षक का सम्प्रेषण भी अधिक प्रभावपूर्ण हो जाता है। अतः सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने के लिए शिक्षक इसका प्रयोग कर सकते हैं।

शिक्षक उपर्युक्त विधियो का यथासमय अपने शिक्षण में उपयोग करके प्रभावशाली सम्प्रेषण को सुनिश्चित कर सकते हैं।

प्रभावशाली सम्प्रेषण में बाधक तत्त्व

प्रभावशाली सम्प्रेषण शिक्षक का अस्त्र तथा शस्त्र दोनों है। यह शस्त्र किसी भी तरह कुठित न हो पाए, इसके लिए उसे सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए। यहां कुछ ऐसे तत्वों की समीक्षा अत्यन्त आवश्यक हो जाती है जो शिक्षक सम्प्रेषण में बाधा उपस्थित करते हैं। शिक्षक इन तत्वो को पहचान कर ही इनके निराकरण का उपाय कर सकते है। सम्प्रेषण में बाधक कुछ तत्व इस प्रकार हैं–

- **शोर**– शोर शिक्षक के सम्प्रेषण में सबसे अधिक बाधा उत्पन्न करता है। यह शोर उसकी अपनी कक्षा का, साथ में बैठी कक्षा का तथा मैदान में खेलते बच्चों का हो सकता है। निकटवर्ती सड़क व रेलवे लाइन भी शोर का कारण हो सकती हैं। कई बार बाज़ार आदि बिल्कुल निकट होने से भी शोर आता रहता है। यह शोर उसकी पूरी बात को शिक्षार्थियो तक पहुंचने ही नही देता जिससे उसका सम्प्रेषण बाधित होता है। अपने सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने के लिए उसके लिए शोर का उपचार करना अत्यन्त अनिवार्य है।
- **शिक्षार्थियों का अभिप्रेरणा शून्य होना**– जब शिक्षार्थी अभिप्रेरणा शून्य हो जाते है तब भी शिक्षक का सम्प्रेषण प्रभावी नहीं रहता। अभिप्रेरणा शून्य होने के भी कई कारण होते है, शिक्षक को उनका पता लगाकर उनको दूर करने का प्रयास करना चाहिए। यदि विषय शिक्षार्थियों के लिए उपयोगी न हो, व उनके पूर्वज्ञान पर आधारित न हो, शिक्षक का विषय सम्बन्धी ज्ञान, अनुभव व उपलब्धि सीमित हो, उसकी भाषा शुद्ध व स्तरानुरूप न हो, उसकी संकेतात्मक अभिव्यक्ति में स्पष्टता न हो, शिक्षक व शिक्षार्थी मे अधिक दूरी हो, कक्षा में शिक्षार्थियों की संख्या अधिक हो तो शिक्षार्थी अभिप्रेरणा शून्य हो जाते हैं। प्रभावशाली सम्प्रेषण के लिए शिक्षक को सर्वप्रथम, इन कारणों का निवारण कर, शिक्षार्थियों को अभिप्रेरित करना चाहिए।
- **मनोवैज्ञानिक बाधाएं**– कई बार मनोवैज्ञानिक बाधाएं भी सम्प्रेषण को प्रभावित करती है। ये बाधाएं शिक्षक की भी हो सकती हैं। कई शिक्षक भी अधिकारियों की उपस्थिति में या बडे समूह के समक्ष प्रभावशाली ढंग से सम्प्रेषण नहीं कर पाते। कई बार शिक्षार्थी भी संवेगों का शिकार होते है। वे भय, चिन्ता, हीनभावना आदि से ग्रस्त होते हैं। इस स्थिति में शिक्षक को शिक्षार्थियो से समुचित अनुक्रिया प्राप्त नही होती तथा सम्प्रेषण प्रभावशाली नही हो पाता। शिक्षक के लिए इन कारणों को जानने तथा उनको दूर करने मे कुशल होना चाहिए इसी पर शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की सफलता निर्भर है।
- **शारीरिक परेशानी**– कई बार शिक्षार्थी किसी शारीरिक परेशानी से परेशान होते हैं जिसके कारण वे पाठ में ध्यान नही दे पाते तथा शिक्षक को अपेक्षित अनुक्रिया प्राप्त नहीं होती। इससे सम्प्रेषण निश्चित रूप से प्रभावित होता है। इसके कई कारण हैं जैसे– थकान, एक ही मुद्रा मे काफी लम्बे समय तक बैठना, सिर दर्द होना, आख-कान की गड़बड़ होना आदि। सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने के लिए इन कारणों का निवारण भी अनिवार्य है।

इनके अतिरिक्त शिक्षक द्वारा द्वि-अर्थी या बहु-अर्थी शब्दो का प्रयोग करना, शिक्षक को सदर्भ सम्बन्धी भ्रम होना, दिवा-स्वप्न लेना आदि बहुत-सी बाधाएं तो ऐसी

हैं जिनको शिक्षक थोडा ध्यान रखकर तथा पाठ को पूरी तरह तैयार करके आसानी से दूर कर सकते है।

प्रभावशाली सम्प्रेषण के माध्यम से शिक्षण को उन्नत बनाना

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया मे प्रभावशाली सम्प्रेषण एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अतः शिक्षार्थियों के समुचित शिक्षण के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षक तथा शिक्षार्थियो के मध्य प्रभावी सम्प्रेषण व्यवस्था हो। शिक्षक का सम्प्रेषण कौशल इस रूप में आंका जाता है कि वह अपने संदेश को शिक्षार्थियों तक पहुंचाने में सक्षम है या नहीं। उसके सदेश का शिक्षार्थियो तक सफल सम्प्रेषण इस बात पर निर्भर करता है कि वह सम्प्रेषण की बाधाओ पर विजय प्राप्त कर तथा प्रभावशाली सम्प्रेषण के सहायक तत्वो का उपयोग करते हुए अपनी बात उन तक पहुंचा पाता है।

इसके लिए शिक्षक का अपने प्रति, अपने विषय व अपने शिक्षार्थियों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण हो। साथ ही वह शिक्षार्थियो के कल्याण की भावना से प्रेरित हो। वह दृढ़ निश्चयपूर्वक कार्य करें तो निश्चय ही अपने सम्प्रेषण कौशल को विकसित कर न केवल अपने शिक्षार्थियों अपितु समूची शिक्षा के उन्नयन का मार्ग प्रशस्त कर सकता है तभी भावी पीढ़ी तथा देश का कल्याण सम्भव है। ☐☐

मंडलीय शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान
एफ. यू. ब्लॉक, पीतमपुरा
दिल्ली

व्यक्तित्व एवं शिक्षा

❑ लाल जी त्रिपाठी
❑ राजेश कुमार धर दुबे

शरीर से ही व्यक्तित्व की परिकल्पना होती है। धर्म का साधन, कर्म का आधार शरीर ही है– "शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्"। अतः भारतीय मनीषा ने जीवन के लक्ष्यों, पुरुषार्थो की प्राप्ति हेतु आश्रमों की नियोजना की थी। ब्रह्मचर्य आश्रम प्रायः सभी पुरुषार्थो की प्राप्ति का आधार था। ऋग्वेद में विद्यार्थी के लिए ब्रह्मचारी शब्द का प्रयोग है।

आचार्य द्वारा शिष्य के व्यक्तित्व की आन्तरिक प्रतिभा का जागरण शिक्षा है। तैत्तिरीय उपनिषद् की शिक्षा-वल्ली मे शिक्षा के तत्व का उद्घाटन किया है–

आचार्य: पूर्वरूपम्। अन्तेवास्युत्तर रूपम्। प्रवचनं सधानम्। शिक्षा सन्धि'।

शिक्षक पूर्व रूप है, शिष्य उत्तर रूप है, प्रवचन सधान है तथा शिक्षा संधि है।

यूरोपीय शिक्षाशास्त्री एडम्स की शिक्षा की परिभाषा है–

"Education is the bipolar process in which the educator affects the personality of the educand either by impression or by repression!"

"शिक्षा एक युग्मस्ताम्भिक प्रक्रिया है जिसमें आचार्य शिष्य के व्यक्तित्व को या तो आदर्श-सक्रान्ति के द्वारा अथवा निरोध के द्वारा करता है।" इसमें शिक्षा के दो स्तम्भ विलग है, दूर हैं– केवल आदर्श के संक्रमण अथवा आचार्य कृत निरोध प्रक्रिया से संबद्ध हैं। प्राचीन भारतीय अवधारणा मे 'संक्रान्ति' न होकर 'सन्धि' सम्पन्न होती है। इसीलिए अथर्ववेद में उपनयन संस्कार के विषय मे कहा गया कि– "आचार्य उपनयमान कृणुते गर्भमन्त."। आचार्य उपनयन के लिए आगत शिष्य को अपने विद्याज्योति के गर्भ मे संस्थापित करता है। उपनीत शिष्य आचार्य से इस प्रकार विद्वत्-जन्म प्राप्त करता है।

वैदिक वाङ्मय से ज्ञात होता है कि शिक्षा बालक एवं मानव के सर्वागीण विकास के लिए थी। 'शिक्षा' शब्द शिक्ष् धातु से व्युत्पन्न है। ऋग्वेद की अनेक ऋचाओं मे इस शब्द का प्रयोग दान के अर्थ मे हुआ है। तथा कुछ सन्दर्भो मे इसका अर्थ समीप ले जाने अथवा प्रेरित करने के अर्थ में भी मिलता है। ऋग्वेद के नवे तथा दसवें मण्डल के अनेक सन्दर्भों में शिक्ष् और शिक्षा का जो उल्लेख मिलता है उसकी व्याख्या करते हुए आचार्य सायण ने प्राय. सर्वत्र इसका अर्थ 'देना' अथवा 'दान करना' ही किया है।

नवें मण्डल के सन्दर्भ मे 'उपशिक्ष्' शब्द का प्रयोग है। जिसका अर्थ सायण ने समीप ले जाना अथवा वश में करना किया है। यद्यपि ऋग्वेदीय सन्दर्भ स्पष्टतः शिक्षा का प्रयोग शिक्षण कार्य के लिए नहीं करते, तथापि शिक्षा के अन्तर्गत गुरु द्वारा शिष्य को विद्यादान की परम्परा वैदिक काल से ही प्रचलित रही। ध्यानार्थ है कि ऋग्वेद मे शिक्षा के लिए 'दान' शब्द ही प्रयुक्त होता रहा। यहा यह भी ध्यातव्य है कि ऋग्वेदीय सन्दर्भो मे शिक्ष् धातु अथवा शिक्षा शब्द का प्रयोग किसी भौतिक वस्तु के दान के लिए नहीं अपितु हवि के दान के सन्दर्भ में अथवा विचार और मन को प्रेरित करने के अर्थ

मे मिलता है।

ऋग्वेद के एक सन्दर्भ मे मिलता है कि जो तुम्हारी सेवा कर रहा है, उसे तुम शिक्षा के द्वारा कल्याण प्रदान करो। यहा यह भी ध्यान देने योग्य है कि उपनिषदों मे उपनयन शब्द का प्रयोग अनेकत्र विद्यार्थी को गुरु के समीप ले जाने के अर्थ में ही मिलता है। ऋग्वेद मे भी 'उपशिक्ष्' शब्द का प्रयोग है, जिसका अर्थ 'समीपे कुरु' अर्थात् निकट ले जाने से है। यहा अवेस्ता में उपलब्ध कतिपय शब्दों के साक्ष्य विचारणीय हैं। अवेस्ता में 'साचय' का प्रयोग शिक्षण कार्य (टू टीच) के अर्थ में हुआ है, यह 'साचय' शव्द वैदिक शिक्षा के अत्यन्त समीप है क्योंकि शिक्षा और साचय मे न केवल ध्वनिसाम्य है, वरन् अर्थ की भी समानता है।

व्यक्तित्व भिन्न होते है। शिक्षार्थियों की प्रकृति विविध प्रकार की होती है। अत· आचार्य भिन्न शिष्यो के व्यक्तित्वों को विविध प्रकार से विकसित करता है।

व्यक्तित्व के प्रकारो का विभिन्न दर्शनो में पृथक-पृथक विवेचन किया है–

शरीर से ही व्यक्तित्व की परिकल्पना होती है। धर्म का साधन, कर्म का आधार शरीर ही है– "शरीरमाद्य खलु धर्मसाधनम्"। अत. भारतीय मनीषा ने जीवन के लक्ष्यों, पुरुषार्थो की प्राप्ति हेतु आश्रमो की नियोजना की थी। ब्रह्मचर्य आश्रम प्राय. सभी पुरुषार्थो की प्राप्ति का आधार था। ऋग्वेद में विद्यार्थी के लिए ब्रह्मचारी शब्द का प्रयोग है।

शरीर निर्माण के आधारभूत तत्व त्रिधातु वात-पित्त-कफ हैं। इन तत्वों के सम-विषम अनुपात से शरीर, स्वभाव का निर्धारण होता है। त्रिधातु के आधार से सप्तविध व्यक्तित्वो का आयुर्वेद मे प्रतिपादन है। ये व्यक्तित्व इस प्रकार हैं– वातधातु प्रधान, पित्तधातु प्रधान, कुधातु प्रधान, वात एवं पित्तधातु प्रधान, पित्त एव कुधातु प्रधान, वात एव कफधातु प्रधान और समधातु प्रधान व्यक्तित्व। यूरोपीय विद्वान् हिप्पोक्रेटीज ने भी रक्त, श्यामपित्त, पीतपित्त एवं कफ का विवेचन करते हुए उनके अलग-अलग स्वभावों का उल्लेख किया है।

'प्राकृत गुण' आन्तरिक वृत्तियों एवं बाह्य कर्म– दोनो से सम्बन्ध रखते हैं। जागतिक, सामाजिक पक्ष के अन्तर्गत व्यक्तियों मे परिवर्तन, गुणों मे विकास अथवा ह्रास के माध्यम से घटित होता है। सर्वप्रथम त्रिगुण का अथर्ववेद मे उल्लेख उपलब्ध होता है। कहा गया है– 'यह नव द्वार शरीर त्रिगुणों से आवृत्त है।' "पुण्डरीक नौ द्वारं त्रिभिर्गुणेभिरावृतम्। तस्मिन् यद् यक्षमात्मन्वत तद्वै ब्रह्मविदोविदु ।"

तैत्तिरीय आरण्यक मे लोहित, शुक्ल एवं कृष्ण के भेद से रजोगुण, सत्वगुण एव तमोगुण का विवरण है।

प्रकृति का परिणामी स्वरूप भाव है। भू धातु से व्युत्पन्न भाव का अर्थ है– भवन् अर्थात् होना। गुण वैभिन्य से भाव में वैचित्र्य उत्पन्न होता है। सत्, रज एव तम के अपने विशिष्ट भाव है इन्हे ही मूलतः स्वभाव के नाम से पुकारा जाता है। गीता मे कहा गया है– "कर्माणि प्रविभक्तानि स्वप्रभवैर्गुणैः"। अर्थात् स्वभाव से उत्पन्न गुणों के कारण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र के कर्म विभक्त है।

अत· व्यक्तित्व वैभिन्यता को ध्यान में रखकर ही बालको को शिक्षा देने की व्यवस्था होनी चाहिए। प्राय यह देखा गया है कि एक ही पिता से उत्पन्न हुई अनेक सतानें भी स्वभाव, गुण, कर्म मे एक-दूसरे से भिन्न होती हैं। यही कारण है कि भारतीय आश्रम व्यवस्था में विविध कामनाओं की पूर्ति हेतु ब्रह्मचर्य आश्रम में प्रवेश के लिए अलग-अलग आयु निर्धारित की गई थी।

व्यक्तित्व के शारीरिक वैशिष्ट्य त्रिधातु, गुणकर्म, स्वभावपरक विभिन्नताओ के सक्षिप्त अवलोकन के उपरान्त बौद्ध दर्शन में उल्लिखित चर्यामूलक व्यक्तित्व एवं ऋग्वेद के देवासुर व्यक्तित्वो का संक्षिप्त विवेचन भी यहां अपेक्षित है।

चर्या व्यवहार मूलक व्यक्तित्व

दूसरे व्यक्ति की चित्तवृत्तियो का भली-भाति ज्ञान करना साधारणतः दुष्कर कार्य है। आचार्य के लिए यह आवश्यक है कि वह शिष्य की चित्तवृत्तियो का भली-भांति परिज्ञान करे। अतः वह चर्या के आधार पर शिष्य के आचरण, व्यवहार को देखकर उसका वर्गीकरण करता है और

तदनुरूप देशना में प्रवृत्त होता है।

बौद्ध साहित्य में चर्याधारित व्यक्तित्व-मीमासा उल्लेखनीय और महत्वपूर्ण है, क्योकि समाजशास्त्री भी व्यवहार के आधार पर व्यक्तित्व का विवेचन करते हैं।

विसुद्धिमग्ग अभिधम्मत्थ-संगहों में मूलतः चर्या के आधार पर व्यक्तित्व का विवेचन षष्ठविध अकुशल एवं कुशल व्यक्तित्व के रूप मे प्राप्त होता है। इनमे रागचरित, द्वेषचरित एवं मोहचरित अकुशल व्यक्तित्व और श्रद्धाचरित, बुद्धिचरित तथा वितर्कचरित कुशल व्यक्तित्व हैं। सम्प्रयोग एवं सन्निपात से चर्या के त्रेसठ और इससे भी अधिक प्रकार देखे जाते हैं। चर्या के आधार पर व्यक्तित्व विभेद कर सकने हेतु आचार्य कल्याणमित्र का उल्लेख बौद्ध ग्रन्थों मे प्राप्त होता है। कल्याणमित्र चर्या, आचरण-व्यवहार का प्रधान आचार्य है। वह कर्मस्थान का दायक है और प्रमाद स्थान से निवृत्त करना, करणीय-अकरणीय कार्यो में भेद प्रदर्शित करना और शिष्य को प्रशिक्षित करना कल्याणमित्र का धर्म है। प्रिय, गुरु, गम्भीर, वक्ता, वाक्कौशल से युक्त, कथाकर्ता, उचित स्थानों में नियोजित करने वाला, मित्र एवं मित्र की कामना से युक्त और अनुकम्पा से युक्त कल्याणमित्र है। कल्याणमित्र का आधार शीलगुण है– 'कल्याणमित्ता शीलान आहारो'।

चर्यामूलक व्यक्तित्व की अवधारणा मे बौद्ध दर्शन में व्यक्तित्व का विश्लेषण तथा भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के दोषों को दूर कर उनमें गुणों के आरोपण तथा आन्तरिक गुणों के प्रकटीकरण हेतु आचार्य कल्याणमित्र की कल्पना तत्कालीन शिक्षा क्षेत्र की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि थी। यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि कल्याणमित्र के लिए जो-जो गुण निर्धारित किए गए थे, वे आज भी शिक्षको के लिए मानक हैं। चरित्र के अनुकरण से व्यक्तित्व में सुधार होता है, अत. कल्याणमित्र, शीलवान, क्षमतावान, विशारद एवं वाक्कौशल से युक्त व्यक्तित्व है।

देवासुर व्यक्तित्व

व्यक्तित्व के केन्द्रीय गुणों के आधार पर देवासुर व्यक्तित्व का विकास हुआ। कार्ल युग तथा मर्सिया इलियाद द्वारा व्याख्यात आद्य व्यक्तित्व देव एवं असुर है। ऋग्वेद में सर्वप्रथम देव और असुर के बीच सग्राम का उल्लेख मिलता है। देव मे दान, दीपन, सत्य, अहिसा और तेज आदि गुण तथा असुर मे असत्य, रात, अन्धकार, अज्ञान, हिंसा एव नास्तिक आदि गुणों का समावेश है।

देव एवं असुर व्यक्तित्व का विवेचन भगवद्गीता मे सूत्रवत् है, जिसमे निर्भयता, मन की शुद्धता, ज्ञान एवं योग में निरन्तर दृढ़ स्थिति, दान, तप, अहिसा आदि गुण देवो के माने गए हैं। इसके विपरीत दम्भ, दर्प, अभिमान, अहंकार, क्रोध, पारुष्य, अपवित्र, आचारहीनता आदि दुर्गुणों से युक्त व्यक्तित्व असुर माना गया है। भगवान् श्रीकृष्ण ने भगवद्गीता में इन्हीं गुणों एवं कर्मो के आधार पर चातुर्वर्णो की उत्पत्ति का भी उल्लेख किया है–"चातुर्वर्ण्य यथा– सृष्टः गुणकर्मविभागश.।" जैन ग्रन्थों में भी भगवान ऋषभदेव जी द्वारा गुण-कर्माधारित वर्ण-विभाजन का उल्लेख प्राप्त होता है।

यूरोपीय विद्वान भी व्यक्तित्व भिन्नता का आधार कमोबेश इन्हीं आधारभूत गुणों को मानते हैं। कार्ल युंग व्यक्तित्व के पुरा प्रकार को स्वीकारते है, तो हिप्पोक्रेटीज धातु-वैभिन्यता की, क्रेसमर–पुष्टकाय, कृषकाय एवं तुंदिल प्रकार तथा मिश्र प्रकार का भेद करते हुए व्यक्तित्व में शरीर-वैशिष्ट्य को महत्व देते दिखाई देते हैं। शेल्डन ने भी शरीर बनावट के अनुसार व्यक्तित्व भिन्नता को ही स्वीकार किया है।

उपर्युक्त विश्लेषणों से यह सर्वमान्य तथ्य प्रकट होता है कि व्यक्तित्व में भिन्नता होती है, यद्यपि विभिन्न दर्शनों और विद्वानों ने वैयक्तिक भिन्नता का विश्लेषण भिन्न-भिन्न प्रकार से किया है, तथापि वे सभी इस एक सर्वमान्य तथ्य पर सहमत है कि व्यक्तित्व वैभिन्य एक शाश्वत सत्य है। मनोवैज्ञानिकों ने बालकों का वर्गीकरण करने हेतु उनकी मानसिक वैभिन्यता को आधार बनाया है। इसी आधार पर विशिष्ट, उत्तम, मध्यम तथा मन्दबुद्धि बालकों का वर्गीकरण किया गया है।

जहां व्यक्तित्व के आधार के रूप में व्यक्ति का शारीरिक वैशिष्ट्य प्रमुख है, वही उसके आन्तरिक गुण, धर्म, स्वभाव, बुद्धि, कर्म, आचार-विहार आदि का भी

व्यक्तित्व-निर्धारण मे प्रमुख योगदान है। प्रकृति के आधारभूत गुणों– सत, रज, तम के अनुसार व्यक्ति में गुणों का आरोपण होता है तथापि वात, पित्त, कफ रूपी त्रिधातु की भी व्यक्तित्व निर्माण में भूमिका कुछ कम नही। बौद्ध दर्शन में जहां चर्यामूलक व्यक्तित्व मीमासा एवं महापुरुष व्यक्तित्व का विश्लेषण है, वहीं हिन्दू दर्शन में देवासुर तथा योनिमूलक व्यक्तित्व की अवधारणा का भी महत्वपूर्ण स्थान है।

वस्तुतः व्यक्तित्व-वैभिन्य एवं तद्नुरूप उसमें गुण-कर्म स्वभाव का प्रस्फुटीकरण करना ही शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। उदाहरणार्थ यदि किसी बालक की रुचि क्षत्रियजन्य कार्यो (युद्ध) में हो तो उसका मन किसी अन्य व्यवसाय में नियोजित नही हो सकेगा। साथ ही जन्मना क्षत्रिय भी यदि अपने मूल स्वभाव से अलग रुचि वाला हो तो उसे युद्ध आदि क्षत्रियजन्य कार्यो में नियोजित नहीं किया जा सकता। उदाहरणार्थ बुद्ध तथा ऋषभदेव जी क्षत्रिय होते हुए भी विशुद्ध ऋषितुल्य व्यक्तित्व थे।

भारतीय साहित्य मे उपलब्ध विविध व्यक्तित्वों में देव-व्यक्तित्व विशिष्ट आदर्श है। सत्य, धर्म, स्वाध्याय, श्रद्धा, कठोर श्रम, विद्या, ज्ञान जागृति, मधुर वाणी, सदाचार आदि व्यक्तित्व का आधार हैं। ऋग्वेद में मन्त्रदृष्टा ऋषि का विचार ही है– हम कल्याणमार्ग के पथिक हो– स्वस्ति पंथामनुचरेम्। असतो मा सद्गमय, तमसो मां ज्योतिर्गमय, मृत्योमामृतर्गमय का उद्घोष व्यक्ति को असत् से सत् की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर, और मृत्यु से अमरता की ओर जाने की प्रेरणा देता है। ज्ञान को आधार बनाकर व्यक्तित्व का उत्कर्ष करना भारतीय दृष्टि है। अथर्ववेद में लिखा है– 'समानगति, समानकर्म, समान नियम वाले बनकर परस्पर कल्याणकारी वाणी बोलो'-

"सम्मचः सव्रता भूत्वा वाचम् वदत भद्रया" ❑❑

शिक्षा विभाग
दी.द.उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर, उत्तर प्रदेश

कागज की यात्रा

•

❑ वेद प्रकाश गुप्ता

कागज बनाने के लिए सबसे पहले सैल्युलोसिक पदार्थ की लुगदी बनाई जाती है। इसके लिए फटे-पुराने कपड़े, कपड़ों की कटिंग, कपास, बांस या अन्य वृक्षों की लकड़ी का प्रयोग किया जाता है। कपास तथा पुराने कपड़ों को बारीक काटकर अच्छी तरह झाड़ लिया जाता है ताकि धूल आदि को हटाया जा सके। बांस, ताड़ या अन्य वृक्ष की लकड़ी के छोटे-छोटे टुकड़े कर लिए जाते हैं। इसके बाद सैल्युलोसिक पदार्थ को दो भाग पानी के साथ उबाला जाता है। गंदगी आदि को हटाने तथा अच्छी पल्प बनाने के लिए कास्टिक, चूना या ब्लीचिंग पाउडर का इस्तेमाल किया जाता है। इसके बाद पल्प को पानी से धोकर भाप मशीनों पर से फिर गुजारा जाता है।

कागज की खोज से पहले अपने विचारों तथा संदेशो को चिरस्थाई बनाने के लिए मानव पुराने समय मे शिलालेखों का प्रयोग करता था। महाराजा अशोक ने बुद्धधर्म के प्रचार के लिए उत्तर भारत से लेकर दक्षिण भारत में मैसूर राज्य तक शिलालेखों का प्रयोग किया। ईटों, मिट्टी के बर्तनो, मोम की तख्तियों तथा ताम्र पत्रों का प्रयोग भी सदेशों तथा शाही आदेशो के लिए किया जाता था।

चीनी यात्री ह्वेनस्वांग और फाहियान के अनुसार 12वीं सदी में भारत वर्ष में ताम्रपत्रों तथा पट्टिकाओं का प्रचलन था। हमारे ऋषि-मुनियो ने वेदों और पुराणों की रचना भोजपत्र तथा ताड़पत्रों पर की थी। मिस्र की एक सबसे पुरानी पुस्तक "दि बुक ऑफ दि डैड" नील नदी के किनारे उगने वाले पैपिरस नामक पौधे के पत्तों पर तैयार की गई थी जो आज भी इंग्लैड के संग्रहालय में सुरक्षित रखी हुई है।

कागज की खोज के बारे मे लेखकों के अलग-अलग मत हैं। साई लुंग के अनुसार कागज का प्रचलन सबसे पहले चीन में 105 ई. मे हुआ। एक बौद्ध भिक्षुक डोकियो ने 610 ई. में कागज बनाने की कला का प्रचार जापान में किया। 751 ई मे इस कला का प्रचलन तुर्किस्तान में हुआ और समरकन्द में कागज बनाने का कारखाना खोला गया। इसके बाद बगदाद में 793 ई मे, यूरोप मे 1150 ई. में, इटली मे 1276 ई. मे तथा फ्रांस में 14वीं शताब्दी में कागज बनाने के कारखाने खोले गए। भारत मे कागज के आगमन के विषय में दो अलग-अलग मत हैं। एक मत के अनुसार भारत मे कागज का प्रचलन 11वीं शताब्दी मे महमूद गजनवी के उत्तर भारत पर आक्रमण के समय हुआ। महमूद गजनवी ने प्रसिद्ध विद्वान अलबेरुनी को भारत भेजा जिसने कई वर्षो तक भारत मे रहकर भारत के सबंध मे अति सुन्दर पुस्तक की रचना की। यूनानी लेखक नैखोसजो, अलक्जेन्डर के भारतवर्ष पर आक्रमण के समय ईसा से 327 वर्ष पूर्व भारत में आया। उसके अनुसार भारत में कपास से कागज बनाने का प्रचलन था। इसलिए यह कहना कि कागज की खोज भारतवर्ष में किस समय हुई अपने आप में एक अनुसंधान का विषय है।

भोजन और पानी के समान कागज आज हमारे

जीवन का अभिन्न अंग बन गया है। आज के सभ्य समाज का इन्सान इसके बिना अधूरा-अधूरा सा महसूस करता है। सुबह उठते ही देश-विदेश के समाचार जानने के लिए हम समाचार-पत्र की बडी बेताबी से प्रतीक्षा करते हैं।

विभिन्न विषयो के बढ़ते हुए ज्ञान रूपी सागर मे डुबकी लगाने के लिए हम पुस्तको का मंथन करते हैं। बालकों को पाठशाला के पहले दिन से ही कागज की आवश्यकता पड़ती है। खाली समय गुजारने के लिए पत्रिकाओं के अध्ययन हेतु भी हमे कागज रूपी पदार्थ की शरण मे आना पड़ता है। घर, बाहर, बैंक, दफ्तर, स्कूल, कॉलेज में या बस, ट्रेन हवाई जहाज की यात्रा करने के लिए हमे कागज पर निर्भर रहना पड़ता है। दैनिक जीवन चलाने के लिए भी हमे मुद्रा रूपी कागज की आवश्यकता होती है। बच्चे का जन्मदिन हो या मुंडन संस्कार, शादी हो या पार्टी सभी मे कागज रूपी पदार्थ अपना खेल दिखाता है।

कागज बनाने के लिए कपास, फटे-पुराने कपड़े, चावल या गेहू का भूसा, बांस, पटसन, गाजा, भांग तथा दूसरे सैल्युलोस युक्त पदार्थ काम में लाए जाते हैं। कपास मे सबसे अधिक सैल्युलोस होता है। कपास में 85 से 90 प्रतिशत, गांजे तथा भाग के पौधे मे 60 से 64 प्रतिशत सैल्युलोस होता है। पटसन में 58 से 60 प्रतिशत, बांस मे 43 से 48 प्रतिशत सैल्युलोस होता है। चावल के भूसे में 34 से 38 प्रतिशत और गेहू के भूसे मे 32 से 34 प्रतिशत सैल्युलोस होता है। कपास का प्रयोग अच्छी क्वालिटी का पेपर बनाने मे किया जाता है। कपास के रेशे काफी मजबूत तथा एक इच लम्बे होते है। जिसके कारण इससे बना कागज मजबूत तथा लिखने में बहुत अच्छा होता है। काफी समय तक इसके रंग मे भी कोई परिवर्तन नही आता। फटे-पुराने कपड़ों मे भी सैल्युलोस की मात्रा काफी होती है। इसके रेशे भी कपास के समान लंबे परन्तु मोटे होते हैं। इन कपडो को कपास के साथ मिलाकर प्रयोग में लाया जाता है। भूसे का प्रयोग कार्ड बोर्ड बनाने के लिए किया जाता है। अठारहवीं शताब्दी में जब पेपर के विकास से इसकी माग एकदम बढ गई तो आलू, बंदगोभी तथा बीन्ज से कागज बनाने के प्रयोग किए गए परन्तु उनके रेशे भी छोटे तथा चटखदार होने के कारण उनसे बना पेपर बहुत ही घटिया पाया गया तथा इन पदार्थो का प्रयोग छोड़ दिया गया। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान भूसे का प्रयोग प्रिंटिंग तथा लिखने के लिए काम मे आने वाले कागज बनाने के लिए किया गया परन्तु भूसे के रेशे छोटे तथा कमजोर होने के कारण इससे बना कागज भी मजबूत नहीं पाया गया।

105 ई. से 1798 ई. तक जब निकोलॉस लुई रोबॅर्ट ने पेपर बनाने की मशीन का अविष्कार किया, पहले कागज हाथ से ही बनाया जाता था। हाथ से बना कागज बहुत मजबूत होता है क्योकि इसमें सैल्युलोस के रेशे एक-दूसरे को सभी दिशाओं में जोड़कर रखते है जबकि मशीन से बने कागज की मजबूती एक ही दिशा में रहती है। कागज की मांग बढ़ जाने से अब अधिकतर कागज मशीनों द्वारा ही बनाया जाता है।

कागज बनाने के लिए सबसे पहले सैल्युलोसिक पदार्थ की लुगदी बनाई जाती है। इसके लिए फटे-पुराने कपड़े, कपड़ों की कटिंग, कपास, बास या अन्य वृक्षों की लकड़ी का प्रयोग किया जाता है। कपास तथा पुराने कपड़ो को बारीक काटकर अच्छी तरह झाड़ लिया जाता है ताकि धूल आदि को हटाया जा सके। बांस, ताड़ या अन्य वृक्ष की लकड़ी के छोटे-छोटे टुकड़े कर लिए जाते हैं। इसके बाद सैल्युलोसिक पदार्थ को दो भाग पानी के साथ उबाला जाता है। गंदगी आदि को हटाने तथा अच्छी पल्प बनाने के लिए कास्टिक, चूना या ब्लीचिंग पाउडर का इस्तेमाल किया जाता है। इसके बाद पल्प को पानी से धोकर भाप मशीनों पर से फिर गुजारा जाता है। स्याही को फैलने से रोकने के लिए फिटकरी तथा रोजिन का प्रयोग भी किया जाता है। सफेद कागज बनाने के लिए नील तथा पेपर में चिकनाई लाने के लिए साबुन तथा जैलेटिन का प्रयोग भी किया जाता है। इसके बाद पानी को पूरी तरह से सुखाने के लिए कागज की शीट्स को कपड़े से ढक देते हैं। पूरी तरह से सूखने पर कागज को विभिन्न आकार की

शीट्स में काट लिया जाता है।

नोट बनाने वाला कागज दूसरे प्रकार के कागजो से दस गुना अच्छी क्वालिटी का होता है। आप सबने 1,2,5,10,20,50 और 100 रु के नोट देखे ही है। प्रत्येक नोट मे अशोक स्तम्भ का निशान होता है। 5 रुपए तथा 5 से बड़े नोटो के बीच मे एक धागा भी रहता है। यह प्रक्रिया नोट बनाते समय ही की जाती है।

आइए अब हम आपको कागज कितने प्रकार के हैं इसके बारे मे थोड़ा-सा बता दें। पत्राचार, टाइपिग तथा प्रिंटिंग में काम आने वाला कागज दोनों ओर से एक समान होता है पर अधिक चिकना नही होता। राइस पेपर का नाम भी आपने सुना होगा। इसे चाइना पेपर भी कहते है। इसका इस्तेमाल पार्टियो में नैपकिन के तौर पर होता है। यह कागज बहुत ही मुलायम होता है। इस कागज को बास की लुगदी से बनाया जाता है। करेंसी पेपर के बारे में हम आपको पहले ही बता चुके है यह कागज काफी मजबूत होता है। इसे कपास तथा कपड़ो की कतरनों से बनाया जाता है। बारहवी से चौदहवी शताब्दी के बीच हमारे देश मे कागज पर जैन चित्रकला का काफी कार्य हुआ। चित्रकला के लिए प्रयोग में आने वाला कागज अधिकतर बास, पटसन, कपास, भाग, गांजा, या हशीश के पौधे से बनाया जाता है। कागज को मोटा बनाने के लिए 2-3 शीट्स आपस में जोड़ दी जाती है।

मुगलकालीन पेंटिंग बनाने के लिए सियालकोट तथा कश्मीर में बना कागज इस्तेमाल मे लाया जाता है। इस काम के लिए कुछ कागज ईरान से भी मंगवाया जाता है। अखबारी कागज सैल्युलोस की ऐसी लुगदी से बनाया जाता है जिसमें रसायन पदार्थो का प्रयोग बहुत कम किया गया है। यह कागज ज्यादा अच्छी क्वालिटी का नहीं होता तथा रखा रहने पर पीला पड़ जाता है और खराब हो जाता है। बैको तथा कार्यालयों में कैश बुक तथा हिसाब-किताब के रजिस्टरों में प्रयोग में आने वाला कागज बहुत अच्छी क्वालिटी का होता है। इसे कपड़ो की कतरनो से बनाया जाता है। ब्लोटिंग पेपर स्याही सुखाने में तथा विलेय पदार्थ को अविलेय पदार्थ से अलग करने में इस्तेमाल किया जाता है। कुछ पदार्थो के अवशेष इतने महीन होते हैं कि इन्हें साधारण फिल्टर पत्र द्वारा अलग नही किया जा सकता। परन्तु वॉहटमैन फिल्टर पत्र स 41,42 इत्यादि का प्रयोग इसमे सहायक होता है। इन फिल्टर पत्रों मे अन्तर इनमें विद्यमान छिद्रो के कारण ही होता है। गिफ्ट पेपर से भी आप भली-भाति परिचित होंगे। यह पेपर बहुत पतला, मुलायम, रंगहीन या रंगदार और अल्प-पारदर्शक होता है। रजिस्ट्री द्वारा भेजने में प्रयोग में आने वाला लिफाफा भी आपने देखा होगा। इसमें अन्दर की ओर हल्का सा कपड़ा चढ़ा रहता है। इसे बनाते समय रोलर पर बारीक कपड़े की तह कागज के ऊपर चढा दी जाती है। निमन्त्रण-पत्रो मे प्रयोग होने वाला कागज एक तरफ से चिकना तथा चमकीला होता है। इसे बनाते समय जैलेटिन तथा साबुन का प्रयोग करके इसके अन्दर की ओर वाली सतह को चिकना कर दिया जाता है।

फाइल कवर, कापियो तथा किताबों की जिल्दों, मिठाई के डिब्बों तथा क्राफ्ट पेपर से आप सभी परिचित है। भोपाल स्थित एक मिल इन तीनो का निर्माण करती है। स्ट्रा बोर्डज, गेहू के भूस से बनाए जाते हैं। मिल बोर्डज बनाने में वेस्ट पेपर का प्रयोग किया जाता है। इस मिल मे भूरे रग का क्राफ्ट पेपर बनाया जाता है जिसके लिए 50 प्रतिशत गेहूं के भूसे तथा 50 प्रतिशत आयातित वेस्ट पेपर को काम मे लिया जाता है। मिल से निकलने वाले द्रवीय पदार्थो को कास्टिक, चूना तथा फिटकरी से क्रिया द्वारा पल्प को अलग करके फिर से प्रयोग में लाया जा सकता है।

भोपाल के अतिरिक्त मध्य प्रदेश में नेपानगर, आमला तथा होशंगाबाद मे तीन मुख्य पेपर मिल हैं। होशंगाबाद स्थित सिक्योरिटी पेपर मिल मे प्रतिवर्ष 20,000 टन से अधिक विशेष प्रकार का क्वालिटी पेपर बनाया जाता है जिसका प्रयोग बैंक मुद्रा बनाने में किया जाता है। ओरियन्ट पेपर मिल्स, आमला मे 75,000 टन से अधिक कागज का निर्माण प्रतिवर्ष हो रहा है। देश का सबसे बड़ा कारखाना टीटागढ़ पेपर मिल कोलकाता में है जिसमें प्रतिवर्ष 83,000 टन पेपर का निर्माण होता है।

छठी पचवर्षीय योजना के दौरान देश में 15 लाख 40 हजार टन कागज की खपत के मुकाबले 15 लाख टन कागज का उत्पादन हुआ। सन् 1982-83 में एक लाख 2 हजार टन से अधिक अखबारी कागज का निर्माण भी हुआ जबकि 1981-82 में केवल 64,000 टन अखबारी कागज का उत्पादन हो सका था।

बिरला इन्स्टीट्यूट ऑफ टैक्नोलॉजी एन्ड साइन्स, पिलानी (राजस्थान), फौरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट, देहरादून तथा इन्स्टीट्यूट ऑफ पेपर टैक्नोलॉजी, सहारनपुर (उत्तर प्रदेश) में पेपर तकनीकी में डिप्लोमा और डिग्री तक की शिक्षा का प्रावधान है। फौरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट, देहरादून और रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पुणे के अतिरिक्त देश के बडे-बडे पेपर मिलो मे कागज तकनीक के विकास तथा उत्पादन मे वृद्धि के लिए अनुसंधान कार्य चल रहा है।

किसी भी देश मे कागज की होने वाली खपत उसकी उन्नति की द्योतक है। 1980 मे किए गए सर्वे के अनुसार अमेरिका, स्वीडन तथा कनाडा के नागरिकों द्वारा क्रमशः 272 किग्रा, 205 किग्रा तथा 192 किग्रा. की तुलना में औसत भारतीय नागरिक ने प्रतिवर्ष 2 किग्रा. कागज का प्रयोग किया। इससे साफ जाहिर है कि इन देशो की तुलना में हमे कितना और आगे बढ़ना है। हमे पूर्ण विश्वास है कि देश मे चल रहे अनुसधान कार्य से हम कागज उद्योग में न केवल आत्मनिर्भर बन सकेगे बल्कि शीघ्र ही कागज का निर्यात भी कर सकेगे।

कंप्यूटर के आगमन से भले ही लोग कागज विहीन समाज की बातें करने लगे हैं परन्तु इसके महत्व को कम नहीं किया जा सकता। प्लास्टिक के अधाधुध प्रयोग से होने वाले खतरो को देखते हुए अब हम लोग एक बार फिर कागज की ओर आकर्षित हो रहे है जिसके कारण हमें और अधिक मात्रा मे कागज की आवश्यकता होगी और हमें कागज बनाने के लिए वैकल्पिक पदार्थों की खोज करनी होगी। □□

क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान
अजमेर, राजस्थान

जन पर्यावरण साक्षरता– क्यों और कैसे?

❑ कैलाश चन्द्र व्यास

औद्योगिकीकरण, आधुनिकीकरण, प्रकृति से सामंजस्य की कमी एवं शहरीकरण के फलस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों के अन्धाधुंध दोहन के फलस्वरूप पर्यावरण में अत्यधिक प्रदूषण के फैलाव से गम्भीर समस्या उपस्थित हो गई है। इनका निदान एवं सकारात्मक रुचि एवं अभिवृत्ति विकास हेतु जन-साक्षरता अभियान राष्ट्रीय स्तर पर औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों के माध्यम से संचालित करना अति आवश्यक है। प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों, विभिन्न अनौपचारिक केन्द्रों अथवा औपचारिक शिक्षण संस्थाओं द्वारा समुदाय को आधारित कर पर्यावरण शिक्षा जैसे कार्यक्रमों से सूक्ष्म-चिन्तन से सार्थक परिणामों को प्राप्त किया जा सकता है।

औद्योगिकीकरण, आधुनिकीकरण, प्रकृति से सामंजस्य की कमी एव शहरीकरण के फलस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों के अन्धाधुंध दोहन के फलस्वरूप पर्यावरण में अत्यधिक प्रदूषण के फैलाव से गम्भीर समस्या उपस्थित हो गई है और विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों की तीव्र गति से निरन्तर वृद्धि हो रही है। जिस द्रुतगति से आधुनिकीकरण हो रहा है और भौतिक विकास की दौड़ के कारण मानव का लालच उत्तरोत्तर बढ रहा है उससे स्वयं सभ्यता के सामने एक प्रश्न चिह्न लग गया है। विभिन्न प्रदूषणो की चुनौती केवल महानगरों एवं नगरो तक ही सीमित नहीं रही है बल्कि कस्बों तथा गावों में भी इसकी चिन्ता निरन्तर बढ़ रही है। चिन्ता करने मात्र से तो चिन्ता नहीं मिटती, उसके लिए जन-चेतना की जरूरत होती है। चेतना होगी तो चिंतन की जड़ता समाप्त होगी, सोच के नए संस्कार जागेगे, सकल्पबद्धता की शिक्षा मिलेगी और प्रत्येक व्यक्ति प्रयत्नशील रहेगा कि वह किसी भी स्तर पर और किसी भी परिस्थिति मे पर्यावरण को नहीं बिगाड़े। अत: जन-पर्यावरण शिक्षा का राष्ट्रीय स्तर पर इसके संरक्षण एवं सुरक्षा हेतु चेतना अभियान औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षण ऐजेन्सियों के माध्यम से प्रारम्भ करने की महती आवश्यकता है। अनभिज्ञतावश वनों का विध्वंस करना, भूमि का कटाव, वायुमण्डल में एसिडीकरण, जहरीले रसायनों को छोड़ने जैसी वृत्ति में उपयुक्त ढंग से पर्यावरण चेतना अभियान से निजात पाई जा सकती है। अभियान में प्राकृतिक संसाधनो की सुरक्षा एवं संरक्षण के विभिन्न पक्षो का विश्लेषणात्मक अधिगम प्रक्रिया द्वारा पर्यावरण के प्रदूषण से रोकने सम्बन्धी घरेलू जीवन मे उपायो का विश्लेषण पर्यावरण चेतना अभियान का अभिन्न अंग बनाया जाना भी वांछित है। पर्यावरण विनाश को रोकने में भारतीय महिलाओ की भूमिका के महत्व को नज़रन्दाज नही करके उनका सम्भागित्व निश्चित करने से अपेक्षाकृत अधिक सकारात्मक प्रतिफल प्राप्त हो सकते है। ऐसी विकास की द्रुतगति की दौड़ तथा प्राकृतिक संसाधनों का असीमित दोहन विनाश के स्टेशन पर ही पहुंचाएगा।

मातृभूमि ने हमें जीवनदायी संसाधन जैसे सूर्य की रोशनी, हवा, मृदा, जल आदि प्रदान किए हैं। सूर्य की ऊर्जा स्वतः ही पारिस्थितिकी को सन्तुलित रखने की

जबरदस्त क्षमता रखती है। नाना प्रकार के रत्नों व धातुओं से जुडी मातृभूमि, विविध प्रकार के वटवृक्ष आदि के बीजो मे अति सूक्षम रचना, असंख्य हरित, श्वेत, पीत, कृष्ण चित्रमय रूपों से युक्त पत्र, पुष्प, फल, मूल निर्माण, मिस्ट, क्षार, कुद्रम, कषाय, तिक्त, अम्लादि विविध रस, सुगन्धित पत्र, पुष्प, फल, अन्न, कदमूलादि की रचना अनेकानेक भूगोल, सूर्य, चंद्रादि लोक निर्माण, धारणा, भ्रमण नियमों की रचना हुई है। इनका आनन्द प्राप्त करने के लिए समुदाय के उन पुरुषो व महिलाओ को भी ज्ञानात्मकता एवं अवबोधात्मकता के उद्देश्य से शिक्षित करना है ताकि वे पर्यावरण को सुरक्षित रखने मे सहयोगी हो सकें। आज आवश्यकता है पूर्व मे निर्धारित प्राकृतिक संसाधनो के प्रति आस्था और मूल्यो को धीरे-धीरे प्रौढो को पर्यावरण सुरक्षित व संरक्षित रखने हेतु हमारे पूर्व की सास्कृतिक आस्थाओं, विश्वासो तथा मूल्यों के प्रभावी सम्प्रेषण से ही प्रकृति की सुरक्षा एवं सरक्षण सम्भव हो सकता है। अज्ञानवश या व्यक्तिगत तुरन्त लाभ प्राप्ति की दृष्टि से प्राकृतिक ससाधनो का अत्यधिक दोहन करते हैं। उन्हे संरक्षित रखने से कालान्तर मे होने वाले विभिन्न लाभो के बारे मे समुदाय के समस्त पुरुषो एवं महिलाओ को अवबोधित अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रो के माध्यम से समझाना अत्यन्त आवश्यक है। प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रो व अन्य अनौपचारिक शिक्षा व्यवस्था के माध्यम से समुदाय आधारित पर्यावरण चेतना हेतु शिक्षा प्रक्रिया से आम जनता मे पर्यावरण संरक्षण एव सकारात्मक अभिवृत्ति का विकास सहज ही सम्भव हो सकता है। पर्यावरण चेतना हेतु चलाए जाने वाले अभियान द्वारा आम जनता या तथ्य हृदयंगम करवाने की चेष्टा होनी चाहिए कि विकास की गति विनाश की धारणाओ के साथ नही चल सकती। ऐसी विकास की द्रुतगति की दौड तथा प्राकृतिक ससाधनों का असीमित दोहन विनाश के स्टेशन पर ही पहुचाएगा।

प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रो अथवा अनौपचारिक शिक्षा संस्थानो के माध्यम से सामुदायिक आधारित पर्यावरण शिक्षा स्थानीय रूप से पर्यावरण असन्तुलन के बारे मे सूक्ष्म रूप से चिन्तन के द्वार खोलने मे सक्षम सिद्ध होगी जो निश्चय ही स्थानीय समुदाय के लिए अत्यन्त उपादेय सिद्ध हो सकती है। यद्यपि विभिन्न क्षेत्रो मे सस्कृति एव परम्पराओ मे भिन्नता है फिर भी एक महत्वपूर्ण बिन्दु प्राकृतिक ससाधनों का सरक्षण करते हुए पर्यावरण संरक्षण की अभिरुचि समस्त भारत में समान रूप से परिलक्षित हुई है। पर्यावरण की शुद्धि का आग्रह और प्रदूषण फैलाने वालो के प्रतिकूल घृणा के स्तर तक विरोध समस्त भारतीय भाषा-साहित्यो में स्पष्टत. परिलक्षित होता है। पर्यावरण के प्रति इस समान दृष्टि को भारतीय समाज को उत्प्रेरित करने का कार्य गांवो, कस्बों व शहरों में प्रौढ़ शिक्षण संस्थाओ द्वारा सहज ही निष्पादित किया जा सकता है। ऐसे प्रौढ़ जिन्होंने औपचारिक शिक्षा से अलग-थलग रह चुके पुरुषों एवं महिलाओ को चिन्तन के नए द्वार खोलने में प्रभावी भूमिका अदा करने मे सहज ही सक्षम सिद्ध होगी। प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रो के प्राकृतिक ससाधनो की सुरक्षा एव सरक्षण की अभिवृत्ति विकसित करने हेतु सचार माध्यमो से भी वातावरण बनाने की विधि को काम मे लेने से जन साधारण की रचनात्मक एव सकारात्मक अभिरुचि व अभिवृत्ति का विकास करने की दिशा मे उत्तरोत्तर वृद्धि होने की सम्भावना बढ़ सकती है।

भारत जैसे विकासशील देश के लिए समुदाय के समस्त लोगो का उत्तरोत्तर विकास योजनाओं एवं पर्यावरण चेतना जैसे अभियान मे सम्भागित्व अत्यन्त आवश्यक है। इसके सरक्षण व विकास जैसी गम्भीर समस्या का निदान तथा समाधान हेतु जागृति ज्ञान अभिवृत्ति ग्रास रूट से लेकर महानगरों तक के लिए उत्प्रेरित करने का दायित्व औपचारिक शिक्षा के साथ-साथ औपचारिक शिक्षा संस्थाओं के माध्यम से ही सम्भव हो सकता है।

देश मे प्राकृतिक ससाधनो का अत्यधिक दोहन न करके उन्हे सरक्षित करते हुए उससे सम्भावित उपोदयता से लाभान्वित होने के बारे में ज्ञानवश देश के प्रत्येक नागरिक मे पैदा करने के लक्ष्य की पूर्ति शहरी एव ग्रामीण क्षेत्र के नागरिकों को प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों से ही सहज सम्भव हो सकती है। पारिस्थितिकी मे असंतुलन एवं जीव-जन्तुओ के समाप्त करने से आम जनता ही

वर्तमान व भविष्य में होने वाली हानियों के बारे में ज्ञान न होने से भी ऐसी विकृत अभिवृत्ति के कारण प्राकृतिक संसाधनो को नष्ट कर बैठते हैं। जब तक भारतीय समाज के समस्त नागरिक इस तथ्य से अवबोधित नही हो जाएंगे कि पारिस्थितिकी तथा प्राकृतिक ससाधनो के विध्वंस करने के फलस्वरूप कालान्तर में हमारे लिए तथा आने वाली पीढी के लिए समस्याए बनकर सामने आएंगी, तब तक प्राकृतिक संतुलन सम्भव नही होगा। यह जन समुदाय को जन पर्यावरण अभियान में समभागित्व न होने तथा पर्यावरण शिक्षा को सभी स्तरों व समस्त उम्र समूह के नागरिकों को नहीं दी जाएगी। ग्रामीण महिलाओं तथा पुरुषों को जब तक यह नहीं समझाया जाएगा कि पारिस्थितिकी को सुरक्षित रखने में उन्हें तथा उनकी आने वाली पीढ़ी को क्या लाभ होगा, तब तक यह कवायद ऊबाने वाली ही सिद्ध होगी।

समुदाय की सामुहिक रुचि एक ही प्रकार के हितों का साधन चाहते है अत· वे साथ-साथ रहने मे विश्वास करते हैं। विभिन्न समुदायो का विकास भी तो प्राकृतिक पर्यावरण मे सम्भव हुआ है। पर्यावरण का विध्वंस करने की हिमाकत करने वाला एक प्रकार से पूरे समुदाय को नुकसान पहुंचाने जैसा कृत्य है। अत· विभिन्न समुदायों को चाहिए कि, वे अपनी बिरादरी के स्तर पर सीधे रूप में पर्यावरण सुरक्षा हेतु नियोजित कार्यक्रम को प्रभावी एव त्वरित क्रियान्वित रूप देने से ही पारिस्थितिकी को पुन पूर्व की स्थिति मे सहज ही लाया जा सकता है। वृक्षों एवं विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करने के पीछे सच्ची भावना का विकास हुआ होता तो हमारे वनो का इतना निर्ममता से विनाश नहीं हुआ होता।

इतिहास के पन्ने गवाह हैं कि लोगों ने वृक्षो को बचाने के लिए प्राण दिए है। एक नही, अनेक व्यक्तियों ने प्राण दिए पर वृक्षो को कटने नही दिया। ऐसे व्यक्तियो को जब याद करते हैं तो सर्वोपरि नाम आता है— पेडो के लिए प्राणोत्सर्ग करने वाली शहीद महिला अमृतादेवी का। अमृतादेवी एक प्रतीक है महिलाओं के अपूर्व बलिदान की, पर्यावरण के प्रति प्रेम की और धरती माता के प्रति अटूट अनुराग की, आस्था की। 267 वर्ष पुरानी यह घटना आज भी लोगो के लहू मे गर्मी का संचार करती है। यह एक ऐसी घटना है जिसके समानान्तर घटनाएं विरल ही होती है। जहां एक-एक करके 363 व्यक्ति शहीद हो जाए, ऐसा दृष्टान्त निश्चय ही जन समुदाय के लिए उत्प्रेरणादायक हो सकेगा। आज के पर्यावरण सरक्षक क्या इस अमर कथा को भूल सकेंगे? इसी प्रकार हिमालय पर्वत के क्षेत्र मे जब पेड़ो को काट-काट कर ऐसी स्थिति पैदा कर दी कि उस क्षेत्र में बाढ़ बेरोकटोक आने लगी। इस भयकर परिस्थिति का सामना करने के लिए चिपको आन्दोलन वही के स्थानीय पुरुषो एव महिलाओ द्वारा चलाया गया और पेड कटने से खतरनाक ढलान जो बनकर बाढ को आमन्त्रित कर रही थी उसे रोकने के लिए उत्तर प्रदेश की सरकार को 1200 किलोमीटर के उक्त क्षेत्र में पेड़ न काटने के ओदश प्रसारित करने को विवश होना पड़ा। उक्त क्षेत्र के नौजवानो ने 'पेड मित्र' नाम से पेडो की सुरक्षा हेतु सगठन बनाकर पर्यावरण संरक्षणता हेतु प्रभावी एवं उत्प्रेरणादायक दायित्व बोध का अनूठा व अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत करने मे सफलता प्राप्त की। यदि खेजडली गाव के लोगों का पेडों के लिए बलिदान होने तथा 'चिपको' तथा 'वृक्ष मित्र' जैसे अभियान देश के विभिन्न भागों में चेतना अभियान के रूप में सगठित एवं संचालित होते है तो पारिस्थितिकी तन्त्र स्वत. ही सरक्षित एवं सुरक्षित रह सकता है। स्थानीय समुदाय जब पर्यावरण संरक्षण हेतु सम्भागित्व करने की योजना बनाकर प्रबन्धन करता है तो व्यक्तियों में भावात्मक, आर्थिक व पर्यावरण सरक्षण जैसे उद्देश्यो की सम्पूर्ति सहज ही सम्भव हो सकती है। स्थानीय जन समुदाय द्वारा पर्यावरण संरक्षण हेतु नियोजनकर्ता, दिशा निर्देशकों तथा प्रबन्धको को स्थानीय पर्यावरण समस्या के बारे मे उपादेय सुझाव देकर पुनः विचार के लिए विवश भी कर सकते हैं। जिससे अपेक्षाकृत प्रदूषण निवारण मे अधिकाधिक उपादेय सिद्ध हो सकते हैं।

पर्यावरण सुरक्षा हेतु प्रभावी कदम उठाने के लक्ष्य की पूर्ति के लिए औपचारिक शिक्षण सस्थाओ के पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग तो बनाना आवश्यक है लेकिन

ऐसे पुरुष तथा महिलाएं, जिन्होंने शिक्षण सस्थाओं में कभी प्रवेश ही नही किया है अथवा कुछ वर्षो के उपरान्त स्कूल से अलविदा कर दिया है, ऐसे लोगों को अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों के माध्यम से पर्यावरण शिक्षा प्रदान करना अतिवाछित है। पर्यावरण संरक्षण हेतु ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों के लोगो से सम्पर्क कार्यक्रम औपचारिक शिक्षण संस्थाओं द्वारा आयोजित करके उन्हे पर्यावरण संरक्षण से होने वाले लाभो के बारे मे ज्ञान देना चाहिए। कार्यक्रम को क्रियान्वित रूप प्रदान करने हेतु स्थानीय नेता, जैसे गाव का मुखिया, सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता, किसान, खण्ड स्तर के स्वास्थ्य केन्द्र के व्यक्तियो, विकास अधिकारी, खण्ड स्तर के शिक्षा अधिकारी तथा शाला अध्यापकों आदि को संयुक्त रूप से आसपास के 10-15 गांवों के ग्रामीणो को पर्यावरण सरक्षण हेतु कार्य योजना का निर्माण करके एक अभियान के रूप में संचालित किए जाने से सकारात्मक प्रतिफल प्राप्त होने की प्रबल सम्भावनाए बन सकती हैं। खण्ड स्तर पर समस्त ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत औपचारिक शिक्षाकर्मियों को समय-समय पर पर्यावरण विषय से सम्बन्धित अभिनव प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना तथा प्रत्येक दो-तीन माह के अन्तराल में बैठक आयोजित करके अपेक्षाकृत उत्कृष्ट कार्य योजना पर कार्यरत होने के संकल्प को दोहराने से सकारात्मक प्रतिफल प्राप्ति की प्रबल सम्भावनाएं सुनिश्चित हो सकती हैं। खण्ड स्तर के शिक्षक पर्यवेक्षक तथा जन स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रम से सम्बन्धित अधिकारियों द्वारा पर्यावरण सरक्षण एवं स्वास्थ्य कार्यक्रम में सम्भागित्व करने की सुनिश्चितता से उत्कृष्ट परिणाम प्राप्त होने की परिकल्पना की जा सकती है।

पर्यावरण शिक्षा का अभियान व चेतना अभियान कार्यक्रम में किसानो, मछली पालक, विभिन्न लघु उद्योगो से जुड़े व्यक्तियों, वनकर्मियो, औद्योगिक इकाइयों से सम्बन्धित व्यक्तियों को प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा से होने वाले लाभों के बारे में ज्ञान प्रदान करने हेतु सन्देश देकर उन्हें उसके सरक्षण करने का सकल्प लेने हेतु उत्प्रेरित करने का हर सम्भव प्रयत्न करना परम आवश्यक है। इन्हें सीधे रूप से प्राकृतिक संसाधनो के महत्व समझाने के साथ-साथ इस प्रसंग में निर्मित एवं प्रसारित अधिनियमों व कानूनों के बारे मे ज्ञान भी प्रदान करवाया जाए ताकि अनभिज्ञ लोग स्वतः ही कानून की मर्यादाओ का उल्लंघन करने से अपने-आपको बचाने का प्रयत्न कर सकें। पर्यावरण शिक्षा कार्यक्रम मे विधायको, सांसदो, प्रशासको, विकास अभिकर्मियो, अध्ययनरत बालक-बालिकाओ तथा परियोजना क्षेत्र के उन व्यक्तियों का सम्भागित्व सुनिश्चित किए जाने से प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा व संरक्षण के लिए पूर्व में निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति का होना सहज ही सम्भव हो सकता है। पर्यावरण शिक्षाविदों द्वारा प्रमुख रूप से पारिस्थितिकी की शुद्धता से पर्यावरण की शुद्धता के बने रहने के सम्प्रत्यय को समुदाय के विभिन्न लोगों को सम्प्रेषित करने से भी ठोस, प्रभावी व सकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। अतः पर्यावरणविदों का उत्तरदायित्व है कि वे कभी भी प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा एवं सरक्षण के तथ्यों को जनसमुदाय को हृदयंगम करवाने के अवसर को हाथ से न जाने दे। विधायकों, प्रशासको, विकासकर्मियों तथा पर्यावरणविदों की सतर्कता व इच्छा शक्ति के आधार पर समुदाय से संसाधनों की सुरक्षा हेतु निर्धारित नीति से अच्छे प्रतिफल प्राप्त हो सकते है। पर्यावरण शिक्षा की परियोजना मे स्थानीय लोगों में संसाधनों की सुरक्षा तथा संरक्षण के लिए अवबोधित करवाते हुए उनको पहल करने तथा सहयोग प्राप्त करने की सफल चेष्टा के प्रतिमान को सदैव सम्मुख रखकर क्रियान्वित रूप देने की आवश्यकता है। साक्षरता अभियान को भी पर्यावरण चेतना कार्यक्रम के पूरक कार्यक्रम का अभिन्न भाग बनाते हुए स्थानीय लोगों को संसाधनों की सुरक्षा हेतु उनकी समझ मे इजाफा किया जा सकता है।

औपचारिक शिक्षण संस्थाओं में अध्ययनरत भावी पीढ़ी, जो कालान्तर मे समुदाय के उपादेय नागरिक बनेंगे, उन्हे अध्यापकों द्वारा पर्यावरण सरक्षण के बारे मे स्थानीय परिवेश को केन्द्र में रखकर ज्ञान, संचेतना तथा कौशलों का विकास करने के लिए पाठ्य-सामग्री तथा विभिन्न सहगामी क्रियाओं द्वारा वन जीवन व प्रकृति के प्रसंग मे सास्कृतिक तथा सामाजिक मूल्यों के प्रतिमानों को दृष्टि में रखकर सहज व सरल प्रविधि से ज्ञान प्रदान

करने का सफल प्रयत्न करना वांछित है। निरक्षर व अर्द्ध साक्षर महिलाओं व पुरुषों की विभिन्न अनौपचारिक अथवा औपचारिक शिक्षा केन्द्रों द्वारा प्राकृतिक संसाधनो की सुरक्षा से वर्तमान तथा भविष्य मे होने वाले लाभों के सम्बन्ध में उनके अवकाश के समय उनके व्यर्थ के समय अथवा उनकी सुविधानुसार उनके द्वारा प्रदान किए गए समय में प्रदान करने का हर सम्भव प्रयत्न करने से अच्छे प्रतिफल प्राप्त हो सकते हैं। यदि किसी ग्रामीण क्षेत्र में अनौपचारिक शिक्षा की इकाई कार्यरत नहीं है तो औपचारिक शिक्षा संस्थाओं का उत्तरदायित्व है कि उक्त ग्राम के अर्द्ध साक्षर व निरक्षर प्रौढ़ महिलाओं एवं पुरुषों के लिए जन साक्षरता कार्यक्रम को सचालित करे तथा उन्हे पर्यावरण चेतना के बारे मे भी ज्ञानात्मक सम्प्रेषण प्रदान कर स्थानीय स्तर पर स्थित विभिन्न प्राकृतिक ससाधनों की सुरक्षा एवं संरक्षण हेतु प्रभावी प्रेरणा देने का सफल प्रयत्न करें। ऐसे उपागम से स्थानीय स्तर पर छात्रो व प्रौढ़ों दोनों को ही एक साथ 'पर्यावरण हितैषी दल' के रूप में तैयार होकर प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा व संरक्षण के कार्य में हिस्सेदारी दर्ज करवाकर त्वरित, प्रभावी तथा सकारात्मक स्थाई प्रतिफल सहज ही प्राप्त किए जा सकते है। यदि स्थानीय स्तर पर जन्तुआलय, पार्क, म्यूजियम, पर्यावरण क्लब आदि उपलब्ध हों तो छात्रों तथा प्रौढ़ों को देखने हेतु उत्प्रेरित करके उनके दिल और दिमाग में प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा व संरक्षण के उद्देश्यों को सहज ही अवबोधित करवाया जा सकता है।

भारत की वर्तमान परिस्थिति में स्थानीय समुदाय के प्रौढ़ों के लिए शिक्षण सस्थाओं मे अध्ययनरत बालक-बालिकाओ का प्राकृतिक पर्यावरण की सुरक्षा का ज्ञान शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं द्वारा पर्यावरण शिक्षा के पाठ्यक्रम में सहगामी कार्यक्रम के माध्यम से पर्यावरण संचेतना प्रदत्त करने का ज्ञान शिक्षण संस्थाओ के साथ-साथ समुदाय के विभिन्न वर्गो द्वारा अवबोधित करवाना अपना कर्तव्य समझने से ही समुदाय निश्चित रूप से लाभान्वित हो सकता है। औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षण संस्थाओं को चाहिए कि आधुनिकीकरण, शहरीकरण और विकास के सम्बन्ध में पर्यावरण प्रबन्धन आधारित जन पर्यावरण शिक्षा की व्यूह रचना ऐसे ढंग से करे जिससे तुरन्त लाभ के लिए प्राकृतिक ससाधनों का अत्यधित दोहन कराने से प्रकृति का जो शोषण हो रहा है उसे रोकने के लिए सार्थक एंव प्रभावी प्रयत्न सफल सिद्ध हो सकें और इन प्रयत्नों में ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के समस्त उम्र समूह के पुरुष व महिला वर्ग की सहयोगवृत्ति में भी इजाफा अवश्य होगा। □□

राजकीय उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान
बीकानेर, राजस्थान

कक्षा के सामाजिक तथा भावात्मक वातावरण का अधिगम पर प्रभाव

❑ अर्चना अग्रवाल

कक्षा का सामाजिक-भावात्मक वातावरण शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित करता है। विद्यार्थी अपने प्रयत्नों व प्राप्त सफलताओं के परिणामस्वरूप ही सीखते हैं। कक्षा का सकारात्मक वातावरण तथा शिक्षक के प्रोत्साहन भरे शब्द विद्यार्थियों में सीखने की चाह तथा लगन उत्पन्न करते हैं। इसके विपरीत कक्षा में सहपाठियों के मध्य कटु सम्बन्ध तथा शिक्षक का आलोचनापूर्ण व्यवहार कक्षा के वातावरण को तनावपूर्ण बना देते हैं। ऐसा वातावरण विद्यार्थियों में क्रोध, झुंझलाहट व तनाव को बढ़ाता है तथा उनके सीखने की क्षमता व गति को सीमित कर देता है।

विद्यालय मे प्रधानाध्यापक व शिक्षको का प्रोत्साहन भरा व्यवहार तथा सहपाठियों के बीच हुई पारस्परिक क्रियाएं शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया मे विशेष स्थान रखती है। बच्चे प्रतिदिन लगभग 6-7 घण्टे विद्यालय मे व्यातीत करते हैं। उनका सामाजिक जीवन मुख्यत विद्यालय तथा विद्यालय के संगी-साथियो के सम्बन्धो पर केन्द्रित रहता है। समूह की क्रियाए, समूह में विद्यार्थियो के पारस्परिक सम्बन्ध, इन क्रियाओं मे शिक्षकों की भूमिका तथा शिक्षक का व्यवहार कक्षा के सामाजिक एव भावात्मक वातावरण को निर्मित करते है। कक्षा का ये सामाजिक एवं भावात्मक वातावरण न केवल अधिगम की मात्रा तथा गुणात्मकता को प्रभावित करता है बल्कि विद्यार्थियो के व्यवहार, उनकी कक्षा मे कार्य के प्रति प्रतिक्रिया तथा विद्यालय के प्रति अभिवृत्ति को भी प्रभावित करता है। शिक्षा के क्षेत्र मे समूह प्रक्रिया का विशेष महत्व है। समूह प्रक्रिया के द्वारा विद्यार्थियों के सीखने तथा इनके व्यवहार में परिवर्तन की प्रक्रिया में शीघ्र लाभदायी परिणाम प्रकट होते है। ये क्रियाएं विद्यार्थियों में आत्मबोध, आत्मविश्वास तथा आत्मनियन्त्रण को विकसित करती हैं।

बालक का सम्पूर्ण विद्यालय अनुभव ही उसका सामाजिक अधिगम होता है जो उसके व्यक्तित्व विकास को प्रभावित करता है, परन्तु कक्षा मे होने वाली क्रियाएं-प्रतिक्रियाए सबसे अधिक विद्यार्थी को प्रभावित करती है। कक्षा का यह सामाजिक, भावात्मक वातावरण विभिन्न तत्वों के सयोग से विकसित होता है–

- कक्षा में शिक्षक-शिष्य के मध्य सम्बन्ध
- विद्यार्थियों के आपसी सम्बन्ध
- शिक्षको के आपसी सम्बन्ध
- कक्षा की भौतिक स्थिति
- विद्यार्थी की सामाजिक तत्परता
- विद्यार्थी की शिक्षक व विद्यालय के प्रति अभिवृत्ति

परिवार बालक की प्रथम पाठशाला है। बालक परिस्थिति विशेष में किस प्रकार की प्रतिक्रिया करेगा यह उसके पूर्व अनुभवो पर निर्भर करता है। परिवार से उसे जो संस्कार मिलते हैं, जिस प्रकार के अनुभव होते हैं तथा जिस प्रकार के सम्बन्ध परिवार के सदस्यों के बीच होते है वे सब विद्यार्थियो के सीखने की तत्परता को प्रभावित करते हैं। एक ही परिस्थिति विशेष के प्रति दो विद्यार्थी अलग-अलग रूप में प्रतिक्रिया करेंगे क्योंकि परिवार में प्राप्त होने वाले अनुभव अलग-अलग प्रकार के है। उसका व्यवहार परिस्थिति विशेष में किस प्रकार का होगा यह इस बात पर निर्भर करता है कि

वह अपने परिवार मे प्राप्त अनुभव को किस प्रकार विश्लेषित करता है। उदाहरण के लिए, घर में अधिक दबाव मे रहने वाला बालक, विद्यालय मे भी शिक्षक व अन्य विद्यार्थियो के दबाव में आ जाने वाला हो सकता है या इसके विपरीत कक्षा में अन्य विद्यार्थियों के ऊपर रौब जमाने वाला हो सकता है।

विद्यार्थी, परिवार तथा कक्षा में क्रमश अपने परिजनों, सहयोगियो तथा शिक्षकों से स्वीकृति चाहते हैं। वे चाहते हैं कि कक्षा में सभी उसे महत्व दे तथा दूसरे लोग उनकी प्रशसा करें और उन्हे समूह का एक महत्वपूर्ण अंग मानें। वे सबका ध्यान व प्यार भी प्राप्त करना चाहते है। शिक्षको व सहपाठियो से प्राप्त स्वीकृति व प्यार विद्यार्थियों के सीखने की मात्रा व गति को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं। नकारात्मक परिस्थितिया जैसे पक्षपातपूर्ण व्यवहार, प्रतिद्वन्द्वता, कटाक्ष, कुछ विद्यार्थियो को अधिक महत्व देना इत्यादि कक्षा के वातावरण को बोझिल बना देती है तथा विद्यार्थियों के स्वस्थ सामाजिक विकास में बाधक सिद्ध होती हैं। जी.जी. थॉम्पसन (1949) ने अध्ययन के लिए विद्यार्थियों को दो समूहों में विभाजित किया। प्रथम समूह को शिक्षको द्वारा अधिक प्रशंसा तथा थोड़ी-सी अस्वीकृति दी गई जबकि दूसरे समूह के विद्यार्थियों को अधिक अस्वीकृति तथा थोड़ी प्रशंसा दी गई। अध्ययन में पाया गया कि वे विद्यार्थी, जिनको शिक्षकों से अधिक अस्वीकृति मिली, उन्होंने अधिक प्रशंसा व स्वीकृति प्राप्त करने वाले विद्यार्थियो की तुलना मे व्यक्तित्व समायोजन तथा सहपाठियों से स्वीकृति में कम अंक प्राप्त किए।

अधिगम क्रिया के लिए अत्यावश्यक है कार्य में विद्यार्थी को सन्तोष प्राप्त होना। यदि विद्यार्थी किसी समस्या को सुलझाकर या सही उत्तर देकर अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है तो उसको आत्मसन्तोष प्राप्त होता है। ऐसी स्थिति में अधिगम अधिक मात्रा में व तीव्र गति से होता है साथ ही उनका आत्मविश्वास भी बढ़ता है जो अधिगम के लिए अति आवश्यक है। इस प्रकार अधिगम की मात्रा व गति, विद्यार्थी को उपलब्धि से प्राप्त उसके आत्मसन्तोष पर निर्भर करती है।

कक्षा का लोचपूर्ण व लोकतान्त्रिक वातावरण, विद्यार्थियो को कक्षा में प्राप्त स्वतन्त्रता तथा सहपाठियों के साथ मिलजुल कर कार्य करने व विचार-विमर्श करने के अवसर, विद्यार्थियो की शैक्षिक उपलब्धि को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते है। एन. ए. फ्लैण्डर्स (1951) ने अपने अध्ययन में पाया कि विद्यार्थियों की क्षमता, नाम बताने, विस्तार मे बताने, प्रयोग तथा पुनर्स्मरण सिद्धान्तों मे, छात्र-केन्द्रित चक्रों मे, शिक्षक-केन्द्रित चक्रो की अपेक्षा अधिक थी। के. जे. रिहेग(1951) ने भी अध्ययन से स्पष्ट किया कि कक्षा 2 से 8 तक की सामाजिक विज्ञान की कक्षाओ में, शिक्षक-छात्र योजना वाले विद्यार्थी शिक्षक-केन्द्रित कक्षाओं के विद्यार्थियो की अपेक्षा वैध तथा निरर्थक कारणों के बीच अन्तर करने मे अधिक योग्य थे। रोज़ेनशाइन (1971) ने भी पाया कि कक्षा का नकरात्मक सामाजिक वातावरण विद्यार्थियों की उपलब्धि में बाधा उत्पन्न करता है।

कक्षा का सकारात्मक सामाजिक वातावरण विद्यार्थियों मे उत्तरदायित्व वहन करने की क्षमता में वृद्धि करता है। विद्यार्थियों को यदि उपयुक्त निर्देशन दिया जाए तो वे अपने उत्तरदायित्वो को भली-भांति निभाने की क्षमता रखते है। इसके विपरीत शिक्षक के अधिक आलोचनात्मक व्यवहार व निर्णय से, बच्चों मे उत्तरदायित्व वहन करने व निर्णय लेने की क्षमता कम होने तथा लुप्त होने की संभावना बनी रहती है।

समस्या समाधान की योग्यता भी छात्र-केन्द्रित कक्षाओं मे अधिक विकसित होती है। प्राथमिक स्तर के विद्यार्थी भी, सामुहिक क्रियाओं के प्रभाव से अपनी समस्याओं का समाधान स्वय अधिक कुशलता के साथ करना सीख लेते हैं। एच. वी. परकिन्स (1951) ने विद्यार्थियों को दो समूहों मे विभाजित किया– पहला शिक्षक-केन्द्रित तथा दूसरा समूह-केन्द्रित। अधिगम की मात्रा के आधार पर तुलना की गई और पाया गया कि यद्यपि दोनो समूहों ने बराबर संख्या में तथ्यो को याद किया परन्तु समूह-केन्द्रित कक्षा अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करने में शिक्षक-केन्द्रित कक्षा से अधिक उच्च कोटि के थे। अध्ययनो से यह भी ज्ञात होता है कि

कक्षा में होने वाली सामूहिक क्रियाए, सहपाठियों के मध्य आपसी समझ तथा सहयोग की भावना विकसित करती हैं। ई. डब्ल्यू. बोवार्ड (1951) ने समूह-केन्द्रित कक्षा की नेता-केन्द्रित कक्षा से तुलना की। परिणामों से स्पष्ट हुआ कि समूह-केन्द्रित कक्षा के विद्यार्थी कक्षा के बाहर भी समूह में रहते थे तथा सामूहिक क्रियाओ मे भाग लेते थे जबकि शिक्षक-केन्द्रित कक्षा के विद्यार्थी कक्षा छोड़कर जाने के लिए उत्सुक रहते थे।

कक्षा का सामाजिक-भावात्मक वातावरण, कक्षा में होने वाली गतिविधियो, शिक्षक का छात्र के साथ व्यवहार तथा शिक्षक-छात्र के मध्य सम्बन्धों पर निर्भर करता है। शिक्षक के अधिक कटाक्षपूर्ण तथा अति आलोचक होने पर विद्यार्थियो में हीनता की भावना, क्रोध तथा पढ़ाई या विषय विशेष के प्रति अरुचि उत्पन्न हो सकती है। ऐसे शिक्षक मात्र पाठ पढ़ाने तक ही सीमित रहते हैं तथा विद्यार्थियों की आवश्यकताओं, भावनाओं तथा कार्य करने की क्षमताओं से अनभिज्ञ रहते हैं। साथ ही कक्षा में सामन्जस्य पूर्ण वातावरण तथा सम्बन्धों को बनाए रखने में असमर्थ रहते हैं। लोचपूर्ण समय तालिका का अभाव, डर तथा कठोर नियन्त्रण विद्यार्थियों के बीच आपसी सम्बन्धों को तथा परस्पर विचारो के आदान-प्रदान को सीमित कर देता है। शर्मीले व अन्तर्मुखी विद्यार्थी समूह से अलग हो जाते है। इस प्रकार का नियन्त्रण न केवल विद्यार्थियों में क्रोध, झुंझलाहट तथा तनाव को उत्पन्न करता है बल्कि उनकी नेतृत्व क्षमता तथा सामाजिक अधिगम के प्रशिक्षण को भी नियन्त्रित कर देता है।

कक्षा के सकारात्मक वातावरण में ही विद्यार्थियो की सोचने-समझने, चिन्तन, निरीक्षण व निर्णय लेने की शक्तियां विकसित होती हैं। कक्षा में विभिन्न विषयों में अच्छे अंक पाना, खेलों को कुशलता के साथ खेलना, सन्तोषप्रद परिणाम पाना या लक्ष्यों को प्राप्त करना, अपने सहपाठी या शिक्षक को उनके किसी कार्य मे सहयोग देना, कक्षा की किसी क्रिया का नेतृत्व करना तथा अपने अच्छे कार्यों व सहभागिता के लिए प्रशसा पाना इत्यादि स्थितियां हैं जिनके द्वारा विद्यार्थी अपने समूह में अपनी पहचान बनाते हैं। वे अपने को समूह का एक महत्वपूर्ण अंग समझते है। इसके विपरीत, त्रुटिपूर्ण व अधूरे कार्य, गलत उत्तर तथा सहपाठियों व शिक्षको से प्रशसा न पाना इत्यादि स्थितियां विद्यार्थियों मे हीनता व अस्तित्वहीनता की भावना को पैदा करती हैं।

कक्षा का सकारात्मक वातावरण बनाने में शिक्षक की भूमिका

कक्षा का सामाजिक-भावात्मक वातावरण एक ओर तो शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया की प्रभावशीलता को प्रभावित करता है तो दूसरी ओर विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण प्रक्रिया को। शिक्षण-अधिगम परिस्थितियों मे विद्यार्थियो की सहभागिता कितनी व किस प्रकार की होगी यह काफी हद तक इस बात पर निर्भर करता है कि कक्षा का सामाजिक-भावात्मक वातावरण कैसा है। शिक्षक केवल विषय का ज्ञाता ही न हो बल्कि उसे कक्षा की विभिन्न परिस्थितियों का भी ज्ञान हो। कक्षा के वातावरण की प्रभावोत्पादकता, विद्यार्थियों की अधिगम की मात्रा तथा उसकी गुणवत्ता से निर्धारित होती हैं। निम्नलिखित क्रियाएं शिक्षक को कक्षा के सकारात्मक वातावरण को बनाने में सहायक होती हैं—

स्वयं का समझना

शिक्षक मे अपने को समझने व जानने की क्षमता होनी चाहिए। उसे अपनी कमियों व अच्छाइयो को जानना चाहिए जैसे उसका अपना व्यवहार लोकतांत्रिक है या कड़े नियन्त्रक जैसा, सहनशक्ति अधिक है या चिड़चिड़ापन, प्रोत्साहित करने वाला है या कटु आलोचक।

विद्यार्थियों को जानना

कुशल शिक्षक को अपने विद्यार्थियो की रुचियो, भावुकताओं, योग्यताओं, उद्देश्यों तथा अभिवृत्तियों को भली प्रकार समझना चाहिए। उनमे उन मनोवैज्ञानिक क्षणों को पहचानने की क्षमता होनी चाहिए जिस समय उनके द्वारा स्वीकृति या पुनर्बलन दिए जाने पर विद्यार्थी सबसे अधिक आत्म सन्तोष प्राप्त कर सकेगा। ये स्वीकृति शब्दों में, भाव द्वारा, मुस्कान से, सिर हिलाकर, पीठ थपथपाकर या लिखित रूप में दी जा सकती है। प्रत्येक

विद्यार्थी अपने प्रयत्नों तथा सफलताओं के परिणामस्वरूप ही सीखता है। शिक्षक को अपने विद्यार्थियों को समझना व प्रोत्साहित करना चाहिए। उसको कुशल निरीक्षक होना चाहिए जिससे वह समझ सके कि विद्यार्थियों में किस समय सीखने की तत्परता अधिक है।

शिक्षक को सदैव ध्यान रखना चाहिए कि विद्यार्थियों की सामाजिक आवश्यकताओ की सन्तुष्टि हो सके। इसलिए आवश्यक है कि शिक्षको में बच्चों की सामाजिक आवश्यकताओं को जानने की योग्यता, अस्वीकृति प्राप्त विद्यार्थियों और समूह से अलग रहने वाले बच्चों को समझने की योग्यता, समस्यात्मक व्यवहार को पहचानने की योग्यता तथा विभिन्न प्रकार के बच्चो के लिए अलग-अलग कार्यक्रम को तैयार करने की योग्यता होनी चाहिए।

विद्यार्थियों पर ध्यान देना

कक्षा में अपनी पहचान बनाने की चाह प्रत्येक विद्यार्थी की होती है। वे चाहते है कि शिक्षक व सहपाठी उनको पहचानें तथा उनके कार्यो की प्रशंसा करें। इसलिए आवश्यक है कि शिक्षक विद्यार्थियों के सही कार्य की ओर ध्यान दे व उनकी यथोचित प्रशसा करें। वेदनयगम (1989) के अनुसार प्रशंसा की प्रभावोत्पादता को बढ़ाया जा सकता है यदि विद्यार्थियों के अच्छे तथा संशोधित सही व्यवहार को बहुत शीघ्र ही, जब वह व्यवहार घटित होता है, के बाद ही प्रशंसित किया जाए। प्रशंसा किसी भी रूप में की जा सकती है जो कि विद्यार्थी द्वारा उत्तर देने की प्रकृति पर निर्भर करती है।

शिक्षक को विद्यार्थियों के व्यवहार का सम्यक तथा सूक्ष्म अध्ययन करना चाहिए। विद्यार्थी के किसी एक कार्य अथवा कुछ थोडे से कार्यो को देखकर उसके सम्पूर्ण व्यवहार का मूल्यांकन नहीं कर लेना चाहिए। उनकी व्यक्तिगत विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए उनकी क्षमता के अनुकूल कार्य करने पर प्रशंसा व प्रोत्साहन देना चाहिए। ब्रोफी (1981) के अनुसार कुछ विद्यार्थी अधिक प्रशसा पाने पर अधिक लाभान्वित होते हैं।

शिक्षक की सकारात्मक सोच तथा अभिवृत्ति

कक्षा के सकारात्मक वातावरण के लिए आवश्यक है शिक्षक की सोच व अभिवृत्ति कक्षा में होने वाली गतिविधियों तथा विद्यार्थियो के प्रति सकारात्मक हो। उसका व्यवहार मधुर, मित्रवत तथा पक्षपात रहित होना चाहिए तथा नकारात्मक क्रियाएं जैसे विद्यार्थियो के व्यवहार की आलोचना, कटाक्ष, निन्दा तथा जातीय पक्षपात इत्यादि नहीं करना चाहिए।

छात्र सहभागिता को बढ़ाना

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया तभी सफल हो सकती है जब शिक्षक-छात्र मिलकर कार्य करे। अत· शिक्षकों को कक्षा में होने वाली विभिन्न क्रियाओं मे अपना सहयोग देते हुए विद्यार्थियो के मध्य अन्तर्क्रियाओ तथा उनकी सहभागिता को बढ़ावा देना चाहिए। इससे विद्यार्थियों में आपस में मिलजुल कर कार्य करने तथा एक-दूसरे को समझने के अवसर प्राप्त होते है जो कि कक्षा के सकारात्मक सामाजिक-भावात्मक वातावरण को विकसित करने के लिए आवश्यक हैं।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि शिक्षक कक्षा में कड़े नियन्त्रण से विद्यार्थियों के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास नहीं कर सकता। कक्षा का रोचक, शान्त व उत्साहपूर्ण वातावरण ही प्रत्येक विद्यार्थी को अपनी क्षमता व योग्यतानुसार विकसित होने का अवसर प्रदान कर सकता है। विद्यालय की प्रत्येक कली (विद्यार्थी) को यदि अपने पूर्ण रूप, रंग व सुगन्ध के साथ विकसित करना है तो निश्चय ही शिक्षक को प्रेम, सहानुभूति पूर्ण व्यवहार, प्रोत्साहन तथा पक्षपात रहित निर्णय इत्यादि मंत्रों का प्रयोग उचित प्रकार से करना होगा। ☐☐

शिक्षा संकाय
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
उत्तर प्रदेश

शिक्षक कार्य संतुष्टि पर लिंग, वासस्थली एवं विद्यालय प्रबन्ध का प्रभाव

❑ अशोक कुमार तिवारी

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जो समाज और वातावरण के साथ अपना अद्धितीय समायोजन स्थापित करता है तथा शिक्षा सामाजिक नियंत्रण का एक सशक्त माध्यम है। शिक्षा की प्राप्ति हेतु जो क्रिया सम्पन्न की जाती है, उसे शिक्षण कहते हैं। जिसमें शिक्षक का स्थान सर्वोपरि होता है। छात्रों के सर्वागीण विकास का श्रेय शिक्षक को ही है क्योंकि वह अपने निर्देशन से कुसमायोजित छात्र को भी समायोजित तथा शिक्षा मनोविज्ञान की सहायता से छात्रों की पहचान कर उत्तम शिक्षण विधि का प्रयोग कर छात्रों को स्वयं, समाज व राष्ट्र के कल्याण के लिए तैयार करता है। एक योग्य शिक्षक भौतिक साधनों के अभाव में भी विद्यार्थियों को उत्तम शिक्षा प्रदान कर सकता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जो समाज और वातावरण के साथ अपना अद्धितीय समायोजन स्थापित करता है तथा शिक्षा सामाजिक नियत्रण का एक सशक्त माध्यम है। शिक्षा की प्राप्ति हेतु जो क्रिया सम्पन्न की जाती है, उसे शिक्षण कहते है। जिसमें शिक्षक का स्थान सर्वोपरि होता है। छात्रों के सर्वागीण विकास का श्रेय शिक्षक को ही है क्योंकि वह अपने निर्देशन से कुसमायोजित छात्र को भी समायोजित तथा शिक्षा मनोविज्ञान की सहायता से छात्रो की पहचान कर उत्तम शिक्षण विधि का प्रयोग कर छात्रो को स्वय, समाज व राष्ट्र के कल्याण के लिए तैयार करता है। एक योग्य शिक्षक भौतिक साधनो के अभाव में भी विद्यार्थियों को उत्तम शिक्षा प्रदान कर सकता है। शिक्षक के शिक्षण कार्य को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक शिक्षक की कार्य सतुष्टि है क्योकि यदि शिक्षक की कार्य संतुष्टि शिक्षण व्यवसाय मे उच्च होगी तभी शिक्षक प्रभावी शिक्षण कर सकता है जिसके द्वारा शिक्षा मे सकारात्मक विकास किया जा सकता है। परन्तु शैक्षिक प्रक्रिया के विकास के क्षेत्र में वर्तमान शिक्षक की स्थिति सवर्था भिन्न है। यह निर्धनता, उपेक्षा, असुरक्षा तथा अनुशासनहीनता से पीड़ित है। अतः उसकी कार्य सलग्नता तथा रुचि मे कमी है। फलतः कार्य संतुष्टि की अनुभूति भी निरन्तर कम होती जा रही है। शिक्षकों की इन समस्याओं का अध्ययन कर उनमें अपेक्षित सुधार आवश्यक है ताकि वे अपने उत्तरदायित्व का निष्ठापूर्वक निर्वाह कर सकें और शिक्षा में परिवर्तन एवं परिमार्जन कर समाज एवं राष्ट्र को उन्नति के शिखर पर पहुंचा सकें।

वर्तमान अध्ययन की आवश्यकता

कार्य सन्तुष्टि एक सुखद संवेगात्मक अवस्था है जो अध्यापक के कार्य के स्वरूप को निर्धारित करती है। वर्तमान शिक्षक समुदाय अपने कार्य के प्रति कितने संतुष्ट हैं तथा छात्रों को कितनी निष्ठा और ईमानदारीपूर्वक प्रभावशाली ढग से शिक्षित करते हैं। यदि शिक्षक समुदाय में शिक्षण व्यवसाय के प्रति सकारात्मक प्रवृति नहीं पाई जाती तो अनेक समस्याओं जैसे शिक्षण स्तर में ह्रास, छात्र अनुशासन आदि बहुआयामी एवं जटिल विद्यालयी दुर्व्यवस्था उत्पन्न हो जाती है जिसकी सभी स्तर पर

तर्कपूर्ण ढंग से वैज्ञानिक शोध की आवश्यकता है। अतः इस समस्या पर देश तथा विदेशों मे विभिन्न शोधकर्ताओ द्वारा अनेक शोध कार्य किए गए हैं।

ब्रेफील्ड एव क्रोकेट (1955) ने कार्य संतुष्टि का कर्मचारी के कार्य की गति पर प्रभाव का अध्ययन किया तथा प्राप्त किया कि कार्य सतुष्टि से कार्य की गति प्रभावित होती है।

कार्नहाउजेन (1965) ने मानसिक स्वास्थ्य तथा कार्य संतुष्टि के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन किया तथा प्राप्त किया कि मानसिक स्वास्थ्य एवं कार्य संतुष्टि के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध है।

के.यू. लिविंगिया (1974) ने अध्यापको की कार्य सतुष्टि का मापन किया तथा पाया कि पुरुष शिक्षकों की तुलना में स्त्री शिक्षको मे उच्च कार्य संतुष्टि थी।

सरोज सक्सेना (1984) ने लिंग के आधार पर शिक्षकों की व्यावसायिक संतुष्टि का अध्ययन किया तथा पाया कि लिग भेद के आधार पर शिक्षको की व्यावसायिक संतुष्टि में सार्थक अन्तर नही है।

दीक्षित (1986) ने प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालयो के शिक्षकों की कार्य सतुष्टि का मापन किया तथा पाया कि माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की तुलना मे प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक अधिक संतुष्ट हैं।

उपर्युक्त परस्पर विरोधी निष्कर्षों ने इस दिशा मे शोध की प्रेरणा दी। इस शोध अध्ययन मे शोधकर्ता द्वारा 2 × 2 × 2 एनोवा कारकीय अभिकल्प को आधार बनाया गया है।

उद्देश्य

- ☐ शिक्षक कार्य सतुष्टि पर लिंग के मुख्य प्रभाव का अध्ययन करना।
- ☐ शिक्षक कार्य संतुष्टि पर वासस्थली के मुख्य प्रभाव का अध्ययन करना।
- ☐ शिक्षक कार्य सतुष्टि पर विद्यालय प्रबन्धन के मुख्य प्रभाव का अध्ययन करना।
- ☐ शिक्षक कार्य संतुष्टि पर लिग व वासस्थली के द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव का अध्ययन करना।
- ☐ शिक्षक कार्य सतुष्टि पर लिग व विद्यालय प्रबन्धन के द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव का अध्ययन करना।
- ☐ शिक्षक कार्य संतुष्टि पर वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन के द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव का अध्ययन करना।
- ☐ शिक्षक कार्य संतुष्टि पर लिंग, वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन के त्रिविध अन्तर्क्रिया प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पना

प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्ता द्वारा निम्नलिखित शून्य परिकल्पनाओ का परीक्षण किया गया है—

- ☐ पुरुष व स्त्री शिक्षकों के कार्य संतुष्टि प्राप्तांको के मध्यमानों के मध्य सार्थक अन्तर नही है।
- ☐ शहरी व ग्रामीण शिक्षकों के कार्य संतुष्टि प्राप्तांकों के मध्यमानों के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है।
- ☐ सरकारी व निजी विद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतुष्टि प्राप्तांको के मध्यमानो के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है।
- ☐ कार्य संतुष्टि प्राप्ताकों पर शिक्षको के लिंग व वासस्थली का द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव सार्थक नहीं है।
- ☐ कार्य संतुष्टि प्राप्ताकों पर शिक्षको के लिंग व विद्यालय प्रबन्धन का द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव सार्थक नहीं है।
- ☐ कार्य सतुष्टि प्राप्तांकों पर शिक्षकों के वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन का द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव सार्थक नही है।
- ☐ कार्य संतुष्टि प्राप्तांको पर शिक्षको के लिंग, वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन का द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव सार्थक नही है।

शोध विधि

प्रस्तुत शोध अध्ययन सर्वेक्षण विधि द्वारा पूर्ण किया गया है जिसमें बलिया जनपद के शिक्षण कार्य सतुष्टि पर लिग, वासस्थली एव विद्यालय प्रबन्धन के प्रभाव

का अध्ययन है।

शोध अभिकल्प

इस अध्ययन मे 2×2×2 कारकीय अभिकल्प का प्रयोग किया गया है। इस अभिकल्प मे प्रत्येक कारक के कम से कम दो मूल्यो को लेकर उन्हे उपचार सयुक्तियो के रूप में गठित किया गया है। प्रत्येक उपचार सयुक्ति में 10 प्रयोज्यो का प्रयोग किया गया है। इसमें 80 प्रयोज्यो का उपयोग करने के बाद कारक लिंग, वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन के पृथक्-पृथक् प्रभावो तथा इसके साथ ही तीन द्विविध अन्तर्क्रियात्मक और एक त्रिविध अन्तर्क्रिया सम्बन्ध के स्वरूप का निर्धारण किया गया है।

न्यादर्श

इस अध्ययन में बलिया जनपद के समस्त ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र में स्थित प्राथमिक व शिशु मंदिर विद्यालयो के शिक्षक अनुसंधान की जनसंख्या है। परन्तु अध्ययन में 80 शिक्षकों को प्रतिदर्श के रूप में लिया गया है जिसमें 40 सरकारी तथा 40 निजी विद्यालयों के शहरी व ग्रामीण, स्त्री व पुरुष शिक्षको को 10 की सख्या मे प्रतिदर्श का स्तरीकृत यादृच्छिकी विधि द्वारा चयन किया गया है।

उपकरण

डा. प्रमोद कुमार एवं डा डी एन. मूथा द्वारा निर्मित कार्य सतुष्टि प्रश्नावली (शिक्षकों के लिए) नामक परीक्षण प्रपत्र का प्रयोग किया गया है।

आंकड़ों का संकलन

शिक्षक कार्य संतुष्टि पर लिंग, वासस्थली एवं विद्यालय प्रबन्धन का प्रभाव ज्ञात करने के लिए उपरोक्त प्रश्नावली (शिक्षकों के लिए) की सहायता से आकड़ों का सकलन किया गया। परीक्षण प्रपत्र शिक्षकों को देकर आवश्यक निर्देश दिए गए। शिक्षकों द्वारा परीक्षण प्रपत्र पूरा कर लेने के पश्चात् उन्हे वापिस लेकर आसानी से आंकड़े एकत्रित कर लिए गए।

प्रयुक्त सांख्यिकी

आंकड़ों के विश्लेषण में निम्नांकित सांख्यिकी विधियो का प्रयोग किया गया–

- इस अध्ययन में शिक्षक कार्य सतुष्टि पर लिंग, वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन आदि चरो के मुख्य प्रभावों व इनके अन्तर्क्रियात्मक प्रभावों को एक साथ ज्ञात करने के लिए प्रसरण विश्लेषण (एफ-अनुपात) का प्रयोग किया गया है।
- कार्य सतुष्टि के प्राप्तांकों के मध्यमानो में सार्थक अन्तर ज्ञात करने के लिए क्रांतिक अनुपात (सी. आर. टेस्ट) का प्रयोग किया गया।

आंकड़ों का विश्लेषण

इस अध्ययन में शिक्षक कार्य संतुष्टि प्रश्नावली से प्राप्त प्राप्तांकों के विश्लेषण के उपरान्त निम्न आकडे परिलक्षित होते हैं–

विश्लेषण

सारणी 1 में शिक्षकों की कार्य सतुष्टि के प्राप्तांकों से सम्बन्धित मुख्य, द्विविध व त्रिविध अन्तर्क्रियात्मक प्रभावों पर आधारित एफ-अनुपात का मान प्रस्तुत किया है।

मुख्य प्रभाव

- **शिक्षक कार्य संतुष्टि पर लिंग के प्रभाव की सार्थकता की जांच**– सारणी 1 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि एफ-अनुपात का आकलित मान 32.36, (1 व 72) स्वतंत्रता के अंशो पर .01 स्तर पर एफ-अनुपात का मान (7.01) से बहुत अधिक है। इससे सिद्ध होता है कि शिक्षक कार्य संतुष्टि पर लिंग का सार्थक प्रभाव पड़ता है अर्थात् शून्य परिकल्पना–पुरुष व स्त्री शिक्षको के कार्य संतुष्टि प्राप्तांको के मध्यमानो के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है। अस्वीकृत की जाती है।
- **शिक्षक कार्य संतुष्टि पर वासस्थली के प्रभाव की सार्थकता की जांच**– सारणी 1 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि एफ-अनुपात का आकलित मान 0.72, (1 व 72) स्वतंत्रता के अंशों पर .05 स्तर

सारणी 1

2×2×2 प्रसरण विश्लेषण शिक्षक कार्य संतुष्टि के प्राप्तांक

विचलन के स्रोत	वर्गों का योग	स्वतंत्रता के अंश	वर्ग मध्यमान	एफ-अनुपात	सार्थकता का स्तर
1. मुख्य प्रभाव					
• लिग (स्त्री व पुरुष)	348.6	1	348.6	32.36	.01★
• वासस्थली (ग्रामीण व शहरी)	7.8	1	7.8	0.72	—
• विद्यालय प्रबन्धन (सरकारी व निजी)	37.8	1	37 8	3.50	—
2. द्विविध अन्तर्क्रियात्मक प्रभाव					
• लिंग वासस्थली	2.15	1	2.15	0 19	—
• लिग विद्यालय प्रबन्धन	49.65	1	49.65	4.61	.05★
• वासस्थली विद्यालय प्रबन्धन	21.05	1	21.05	1.95	—
3. त्रिविध अन्तर्क्रियात्मक प्रभाव					
• लिंग वासस्थली विद्यालय प्रबन्धन	46.45	1	46.45	4.31	.05★
4. प्रकोष्ठ के अन्तर्गत (त्रुटिपद)	775 5	72	10 77	—	
योग	1289	79			

★ 1 तथा 72 स्वतंत्रता के अंश पर .05 स्तर पर एफ-अनुपात का मान 3.98 तथा .01 स्तर पर एफ का मान 7.01

पर एफ-अनुपात के मान (3.98) से बहुत कम है। इससे सिद्ध होता है कि शिक्षक कार्य सतुष्टि पर वासस्थली का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है अर्थात् शून्य परिकल्पना— शहरी व ग्रामीण शिक्षकों के कार्य संतुष्टि प्राप्ताको के मध्यमानो के मध्य सार्थक अन्तर नही है। स्वीकृत की जाती है।

- **शिक्षक कार्य संतुष्टि पर विद्यालय प्रबन्धन के प्रभाव की सार्थकता की जांच**— सारणी 1 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि एफ-अनुपात का आकलित मान 3 50, (1 व 72) स्वतंत्रता के अंशों पर 05 स्तर पर एफ-अनुपात का मान (3.98) से बहुत कम है। इससे सिद्ध होता है कि शिक्षक कार्य सतुष्टि पर विद्यालय प्रबन्ध का कोई प्रभाव नहीं पडता है अर्थात् शून्य परिकल्पना— सरकारी व निजी विद्यालयों के शिक्षकों के कार्य संतुष्टि के मध्यमानो के मध्य सार्थक अन्तर नही है। स्वीकृत की जाती है।

द्विविध अन्तर्क्रियात्मक प्रभाव

- **शिक्षक कार्य संतुष्टि पर लिंग व वासस्थली के प्रभाव की सार्थकता की जांच**— सारणी 1 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि एफ-अनुपात का आकलित मान 0.19 सांख्यिकी सारणी में (1 व 72) स्वतंत्रता के अंशों पर .05 स्तर पर एफ-अनुपात का मान (3.98) से बहुत कम है। इससे सिद्ध होता है कि शिक्षकों के कार्य संतुष्टि पर लिंग व वासस्थली का द्विविध अन्तर्क्रियात्मक प्रभाव नहीं पडता है अर्थात् शून्य परिकल्पना—कार्य संतुष्टि प्राप्तांको पर शिक्षकों के लिंग व वासस्थली का

द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव सार्थक नही है। स्वीकृत की जाती है।

- **शिक्षक कार्य संतुष्टि पर लिग व विद्यालय प्रबन्धन के प्रभाव की सार्थकता की जांच**— सारणी 1 से स्पष्ट होता है कि एफ-अनुपात का आकलित मान 4.61 साख्यिकी सारणी में (1 व 72) स्वतंत्रता के अशो पर .05 स्तर पर एफ-अनुपात का मान (3.98) से अधिक है। इससे सिद्ध होता है कि शिक्षको के कार्य संतुष्टि पर लिंग व विद्यालय प्रबन्धन का द्विविध अन्तर्क्रियात्मक प्रभाव सार्थक है अर्थात् शून्य परिकल्पना—कार्य संतुष्टि प्राप्ताकों पर शिक्षको के लिग व विद्यालय प्रबन्धन का द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव सार्थक नही है। अस्वीकृत की जाती है।
- **शिक्षक कार्य संतुष्टि पर वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन के प्रभाव की सार्थकता की जांच**— सारणी 1 से स्पष्ट होता है कि एफ-अनुपात का आकलित मान 1.95 साख्यिकी सारणी मे (1 व 72) स्वतत्रता के अशो पर 05 स्तर पर एफ-अनुपात का मान (3 98) से बहुत कम है। इससे सिद्ध होता है कि शिक्षको के कार्य संतुष्टि पर वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन का द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव नही पड़ता है अर्थात् शून्य परिकल्पना— कार्य सतुष्टि प्राप्ताको पर शिक्षकों के वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन का द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव सार्थक नहीं है। स्वीकृत की जाती है।

त्रिविध अन्तर्क्रियात्मक प्रभाव

- **शिक्षक कार्य संतुष्टि पर लिंग, वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन के प्रभाव की सार्थकता की जांच**— सारणी 1 से स्पष्ट होता है कि एफ-अनुपात का आकलित मान 4 31 सांख्यिकी सारणी मे (1 व 72) स्वतत्रता के अशों पर .05 स्तर पर एफ-अनुपात का मान (3 98) से अधिक है। इससे सिद्ध होता है कि शिक्षको के कार्य संतुष्टि पर लिग, वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन का त्रिविध अन्तर्क्रियात्मक प्रभाव सार्थक है। अर्थात् शून्य परिकल्पना—कार्य संतुष्टि प्राप्तांको पर शिक्षको के लिंग, वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन त्रिविध अन्तर्क्रिया प्रभाव सार्थक नहीं है। अस्वीकृत की जाती है।

आगे दी गई सारणी 2 से स्पष्ट होता है कि स्त्री शिक्षकों का मध्यमान 24.2 है जो पुरुष शिक्षको के मध्यमान 19 8 से अधिक है। क्रान्तिक अनुपात का मान 5.78 है। जो द्विपुच्छ परीक्षण के लिए 78 स्वतत्रता के अंश पर .01 स्तर पर सांख्यिकी की सारणी मे क्रान्तिक अनुपात का मान 2.64 से अधिक है अतः दोनों समूहों के मध्यमानो मे सार्थक अन्तर है। इस परिणाम के आधार पर शून्य परिकल्पना—पुरुष व स्त्री शिक्षको के कार्य सतुष्टि प्राप्तांकों के मध्यमानो के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है। अस्वीकृत की जाती है। यही परिणाम सारणी 1 मे भी परिलक्षित होता है।

सारिणी 3 से स्पष्ट होता है कि शहरी शिक्षकों का मध्यमान 21.95 है जो ग्रामीण शिक्षकों के मध्यमान 22 35 के लगभग बराबर है। क्रान्तिक अनुपात का मान 0.48 है जो द्विपुच्छ परीक्षण के लिए 78 स्वतत्रता के अश पर .05 स्तर पर साख्यिकी की सारणी मे क्रान्तिक अनुपात का मान 1.99 से बहुत कम है। अतः दोनो समूहो के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नही है। इस परिणाम के आधार पर शून्य परिकल्पना—शहरी व ग्रामीण शिक्षकों के कार्य संतुष्टि प्राप्तांको के मध्यमानो के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है। स्वीकृत की जाती है। यही परिणाम सारणी 1 मे भी परिलक्षित होता है।

सारणी 4 से स्पष्ट होता है कि सरकारी शिक्षको का मध्यमान 22 9 है जो निजी शिक्षकों के मध्यमान 21.3 के लगभग बराबर है। क्रान्तिक अनुपात का मान 1 79 है जो द्विपुच्छ परीक्षण के लिए 78 स्वतंत्रता के अश पर .05 स्तर पर साख्यिकी की सारणी मे क्रान्तिक अनुपात का मान 1.99 से कम है। अतः दोनो समूहो के मध्यमानो में सार्थक अन्तर नहीं है। इस परिणाम के आधार पर शून्य परिकल्पना—सरकारी व निजी शिक्षको के कार्य सतुष्टि प्राप्ताको के मध्यमानो के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है। स्वीकृत की जाती है। यही परिणाम सारणी 1 में भी परिलक्षित होता है।

सारणी 2

शिक्षक कार्य संतुष्टि पर लिंग के प्रभाव की सार्थकता की जांच

चर		शिक्षको की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	अन्तर की प्रमाणिक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता का स्तर
लिंग	पुरुष	40	19.8	3.52			
	स्त्री	40	24.2	3.28	0.76	5.78	.01*

सारणी 3

शिक्षक कार्य संतुष्टि पर वासस्थली के प्रभाव की सार्थकता की जांच

चर		शिक्षकों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	अन्तर की प्रमाणिक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता का स्तर
वासस्थली	शहरी	40	21.95	3.78	0.84	0.48	—
	ग्रामीण	40	22.35	3.76			

सारणी 4

शिक्षक कार्य संतुष्टि पर विद्यालय प्रबन्धन के प्रभाव की सार्थकता की जांच

चर	शिक्षकों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	अन्तर की प्रमाणिक त्रुटि	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता का स्तर
सरकारी विद्यालय प्रबन्धन	40	22.9	3.52	0.89	1 79	—
निजी विद्यालय प्रबन्धन	40	21.3	4.4			

निष्कर्ष

प्रस्तुत आंकड़ों के विश्लेषण के पश्चात् निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए—

- शिक्षक कार्य संतुष्टि पर लिंग का सार्थक प्रभाव पड़ता है। स्त्री शिक्षको में पुरुष शिक्षकों की अपेक्षा उच्च कार्य संतुष्टि पाई गई।

- शिक्षक कार्य सतुष्टि पर वासस्थली का कोई प्रभाव नही पडता है।
- शिक्षक कार्य सतुष्टि पर विद्यालय प्रबन्धन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।
- शिक्षक कार्य सतुष्टि पर लिग व वासस्थली का द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव नहीं पडता है।
- शिक्षक कार्य संतुष्टि पर लिंग व विद्यालय प्रबन्धन का द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव पड़ता है।
- शिक्षक कार्य सतुष्टि पर वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन का द्विविध अन्तर्क्रिया प्रभाव नही पड़ता है।
- शिक्षक कार्य सतुष्टि पर लिग, वासस्थली व विद्यालय प्रबन्धन का त्रिविध अन्तर्क्रिया प्रभाव नही पड़ता है।

शैक्षिक अनुप्रयोग

कोई भी शैक्षिक शोध केवल सैद्धान्तिक अभ्यासमात्र नहीं वरन् उसके आधर पर कुछ न कुछ शैक्षिक नव प्रयोग किए जा सकते है जो अधोलिखित प्रकार का हो सकता है–

- लिंग का कार्य संतुष्टि पर सार्थक प्रभाव पाया गया। स्त्री शिक्षको में पुरुष शिक्षकों की अपेक्षा उच्च कार्य संतुष्टि पाई गई। अत· पुरुष शिक्षकों की कार्य सतुष्टि उनकी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति कर सामान्य की जा सकती है।
- कार्य संतुष्टि पर वासस्थली का प्रभाव सार्थक नही है। अतः अभिभावको को यह संदेश प्राप्त होता है कि शहरी विद्यालयो के प्रति उनका रुझान अनावश्यक है।
- कार्य संतुष्टि पर विद्यालय प्रबन्धन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अतः यह स्पष्ट है कि निजी क्षेत्र के विद्यालयों में भी छात्रो का भविष्य उत्तम हो सकता है।
- इस शोध अध्ययन द्वारा उच्च कार्य सतुष्टि वाले शिक्षकों का लाभ संस्था प्रधान व समाज द्वारा लिया जा सकता है।
- इस शोध अध्ययन की उपयोगिता विद्यालय प्रबन्धन को भी है। वे विद्यालयों में उच्च कार्य संतुष्टि वाले शिक्षको का चयन कर लाभ उठा सकते है।
- जिस लिग, वासस्थली एव विद्यालय प्रबन्धन के शिक्षको की कार्य सतुष्टि उच्च होगी उन विद्यालयों मे शिक्षा का स्तर भी उच्च कोटि का होगा। अत: इसका लाभ छात्र व अभिभावक उठा सकते हैं।

भावी अध्ययन हेतु सुझाव

प्रस्तुत शोध अध्ययन को आधार मानकर भावी शोधकर्ता निम्नलिखित विषयो पर अपना ध्यान केन्द्रित कर सकते है–

- प्रस्तुत शोध अध्ययन बहुत छोटे न्यादर्श पर किया गया है, अत. बड़े न्यादर्श पर अध्ययन किया जा सकता है।
- भविष्य में दुश्चिन्ता, कुण्ठा एव अन्तर्द्वन्द्व का शिक्षकों की कार्य सतुष्टि पर प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन।
- अल्पसख्यक विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों की कार्य संतुष्टि पर लिंग, जाति एवं कार्य अनुभव के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन।
- अल्पसख्यक विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों की कार्य सतुष्टि का मापन करना।
- शिक्षक कार्य संतुष्टि पर सामाजिक-आर्थिक स्थिति, शैक्षिक उपलब्धि एव प्रशिक्षण के प्रभाव का अध्ययन।
- शिक्षण कार्य सतुष्टि पर शिक्षण माध्यम एव शिक्षण विधि के प्रभाव का अध्ययन आदि पर शोध कार्य कर सकते हैं। □□

— **शिक्षा संकाय**
वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर
उत्तर प्रदेश

विद्यालय सहगामी क्रियाओं के सन्दर्भ में राष्ट्रीय कैडेट कोर की उपादेयता

❑ के. एस. तोमर

वर्तमान युग गतिशीलता व परिवर्तन का युग है। इस वैज्ञानिक तथा ज्ञानयुक्त युग का प्रभाव बालक के शारीरिक व मानसिक स्वरूप पर भी पड़ रहा है। फलतः बदलते समय के अनुरूप पाठ्य सहगामी क्रियाओं का चयन एवं निष्पादन करना अनिवार्य एवं अवश्यम्भावी-सा हो गया है। प्रत्येक शिक्षक का यही प्रयत्न रहता है कि उसके छात्रों का सर्वाधिक सर्वागीण विकास हो। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु विद्यालयों में वर्ष भर बहुत-सी सहगामी क्रियाओं का आयोजन किया जाता है। इन क्रियाओं में राष्ट्रीय कैडेट कोर का विद्यालयों में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रहा है जो बालकों में देशप्रेम, भाईचारा, अनुशासन, समयपालन, प्रतिस्पर्द्धा आदि गुणों को विकसित करने में सहायक रही है। प्रस्तुत लेख में एन.सी.सी. के इतिहास, उद्देश्य व क्रियाकलापों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

वर्तमान समय मे विद्यालयों व शिक्षकों का कार्य न केवल विद्यार्थी को लिखने, पढ़ने की शिक्षा प्रदान करना है बल्कि विद्यार्थियों को इस प्रकार की शिक्षा देने का प्रयास करना है कि शिक्षा के द्वारा उनके व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास हो और बालक का सर्वांगीण विकास तभी सम्भव है जब शिक्षा के साथ-साथ उसे विभिन्न क्रियाओं मे भाग लेने को प्रोत्साहित किया जाए और वे क्रियाए ऐसी हो जिनको करने से बालक का मानसिक, शारीरिक व नैतिक विकास हो सके। कक्षा कक्ष मे बालक का नैतिक, मानसिक एव शारीरिक विकास केवल अप्रत्यक्ष रूप मे हो सकता है। प्रत्यक्ष रूप में बालक के सर्वागीण विकास के लिए यह आवश्यक है कि कक्षा में शिक्षण के अतिरिक्त कुछ अन्य क्रियाओं का विद्यालय मे आयोजन किया जाए। इन क्रियाओ मे मुख्य रूप से एन.सी.सी., खेलकूद, स्काउटिंग, गाइडिंग, बागवानी, चित्रकला, काष्ठकला आदि को सम्मिलित किया जा सकता है। इन क्रियाओं में शैक्षिक मूल्य निहित होते हैं और जिन क्रियाओ मे शैक्षिक मूल्यों की प्रधानता होती है वे क्रियाएं पाठयक्रम का एक अंग होनी चाहिए।

अत. वे सभी क्रियाए जो बालक के कक्षा अध्ययन से सम्बन्धित न हों लेकिन जिनमे भाग लेकर विद्यार्थी अपना शारीरिक एव नैतिक विकास कर सके, पाठ्यक्रम का एक अंग होनी चाहिए।

वर्तमान युग गतिशीलता व परिवर्तन का युग है। इस वैज्ञानिक तथा ज्ञानयुक्त युग का प्रभाव बालक के शारीरिक व मानसिक स्वरूप पर भी पड़ रहा है। फलतः बदलते समय के अनुरूप पाठ्य सहगामी क्रियाओं का चयन एवं निष्पादन करना अनिवार्य एवं अवश्यम्भावी-सा हो गया है। प्रत्येक शिक्षक का यही प्रयत्न रहता है कि उसके छात्रों का सर्वाधिक सर्वागीण विकास हो। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु विद्यालयों में वर्ष भर बहुत-सी सहगामी क्रियाओ का आयोजन किया जाता है। इन क्रियाओं में राष्ट्रीय कैडेट कोर का विद्यालयो मे अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रहा है जो बालकों में देशप्रेम,

भाईचारा, अनुशासन, समयपालन, प्रतिस्पर्द्धा आदि गुणो को विकसित करने में सहायक रही है। प्रस्तुत लेख मे एन.सी.सी के इतिहास, उद्देश्य व क्रिया कलापो को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

परिचय

राष्ट्रीय कैडेट कोर की उत्पत्ति 'यूनीवर्सिटी कोर' से हुई जिसका गठन भारतीय रक्षा अधिनियम सन् 1917 ई. के अन्तर्गत सैनिकों की कमी को पूरा करने के लिए किया गया। सन् 1920 मे भारतीय प्रादेशिक अधिनियम के पारित हो जाने से "यूनिवर्सिटी कोर" का स्थान "यूनिवर्सिटी ट्रेनिग कोर" (यू.टी सी.) ने ले लिया। सन् 1942 मे यू.टी.सी का नाम बदलकर युनिवर्सिटी ऑफीसर्स ट्रेनिग कोर (यू.ओ.टी.सी.) रखा गया। हमारे नेताओ ने महसूस किया कि युवा छात्र व छात्राओ को रक्षा सेनाओं सहित जीवन के सभी क्षेत्रों में देश के बेहतर नागरिक एवं भावी नेता के रूप मे विकसित करने का प्रशिक्षण देने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर एक युवा संगठन के गठन की आवश्यकता है। हमारे प्रथम प्रधानमंत्री स्वर्गीय पडित जवाहरलाल नेहरु के आदेश पर सन् 1946 में पं हृदयनाथ कुजरू की अध्यक्षता मे एक समिति का गठन किया गया। 16 जुलाई, 1948 के एन.सी.सी. अधिनियम 31 के द्वारा रक्षा मत्रालय के अधीन राष्ट्रीय कैडेट कोर की स्थापना की गई। स्कूल, कॉलेजों के अधिक से अधिक छात्रो को प्रशिक्षण देने के लिए सन् 1960 मे एन सी.सी. रायफल की स्थापना की गई। 1962 में चीन के भारत पर आक्रमण के पश्चात् जुलाई 1963 से कॉलेज के सभी स्वस्थ छात्रों के लिए एन.सी सी का प्रशिक्षण अनिवार्य कर दिया। 2 अप्रैल, 1964 में एन.सी.सी रायफल्स का एन सी.सी में विलय कर दिया गया तथा छात्रों की प्रशिक्षण की अनिवार्यता समाप्त कर दी गई।

उद्देश्य

आज राष्ट्रीय कैडेट कोर को राष्ट्रीय युवा आदोलन में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त है। इसके प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

- देश के युवाओं में चरित्र सहयोगी भाव, सेवा के आदर्श तथा नेतृत्व की क्षमता का विकास करना।
- युवाओ को सेना के समान प्रशिक्षण देकर देश की रक्षा मे रुचि उत्पन्न करना।
- राष्ट्रीय आपात स्थिति में सशस्त्र सेनाओ के शीघ्र विस्तार के लिए एक आरक्षित बल बनाए रखना।

प्रवेश

एन.सी.सी में भर्ती स्वैच्छिक आधार पर की जाती है तथा छात्र/छात्रा विद्यार्थी 13 वर्ष की उम्र मे कनिष्ठ प्रभाग/कनिष्ठ स्कध (कक्षा 8वी से 10वीं) तथा वरिष्ठ प्रभाग/वरिष्ठ स्कन्ध मे 11वीं कक्षा से एन.सी.सी. मे प्रवेश ले सकते है।

विकास

यह कार्यक्रम स्कूल तथा विश्वविद्यालय दोनो के छात्रों के लिए उपलब्ध है। कोर का आरम्भ 32,500 वरिष्ठ प्रभाग तथा 1,35,000 कनिष्ठ प्रभाग कैडेटो के लक्ष्य से किया गया। इस समय इसकी स्वीकृति नफरी में वरिष्ठ प्रभाग मे 4.33 लाख कैडेट तथा 7.30 लाख कैडेट कनिष्ठ प्रभाग में हैं। 754 एन.सी.सी. यूनिटें पूरे भारत मे 4560 कॉलेजों तथा 7048 स्कूलो के माध्यम से फैली हुई हैं।

सन् 1950 में राष्ट्रीय कैडेट कोर मे वायुसेना स्कन्ध तथा 1952 में नौसेना स्कंध के जुड़ जाने पर इसे अतर सेवा का स्वरूप दिया गया। कनिष्ठ प्रभाग के कैडेटो को प्रारम्भिक सैन्य प्रशिक्षण दिया जाता था जबकि वरिष्ठ प्रभाग के कैडेटों को सेना के सक्षम अफसरों की भांति प्रशिक्षण दिया जाता था। इस उद्देश्य के लिए एन.सी सी में सेना के ढंग से कवचित कोर, तोपखाना, इंजीनियर, सिग्नल, इन्फेन्ट्री तथा चिकित्सा कोर की यूनिट गठित की गई। सन् 1949 में स्कूल, कॉलेजों की छात्राओं को छात्रों के समान अवसर देने के लिए छात्रा प्रभाग आरम्भ किया गया था। 1952 मे सामुदायिक विकास को इस पाठ्यक्रम

मे शामिल कर इसे विस्तृत कर दिया गया।

एन.सी.सी. के उद्देश्य को युवाओ की आकांक्षाओं के अनुसार बनाने के लिए रक्षा मत्रालय द्वारा एक कार्यक्रम बनाया गया। 1972 मे पुणे विश्वविद्यालय के कुलपति डा. जी.एस. महाजनी की अध्यक्षता में एक मूल्याकन समिति का गठन किया गया। समिति ने जनवरी 1974 में अपनी रिपोर्ट रक्षा मंत्रालय को दी। भारत सरकार द्वारा समिति की सिफारिशों को आंशिक रूप से स्वीकार करके लागू कर दिया गया।

सलाहाकार समितियां

एन सी.सी. के कार्यो के लिए केन्द्र तथा राज्य दोनों जिम्मेदार हैं।

केन्द्रीय सलाहाकार समिति

एन सी.सी. का कार्य संचालन एन.सी सी. अधिनियम की धारा 12 के प्रावधानो के अन्तर्गत गठित केन्द्रीय सलाहकार समिति की पूरी देखरेख मे होता है। इसके अध्यक्ष रक्षामत्री है। इस समिति की बैठक दो वर्ष में एक बार होती है जो भारत सरकार को एन.सी.सी. के गठन तथा प्रशासन के सम्बन्ध मे सलाह देती है।

राज्य सलाहाकार समिति

प्रत्येक राज्य में केन्द्रीय सलाहकार समिति जैसी ही एक राज्य सलाहकार समिति है। राज्य सरकार के वरिष्ठ अधिकारी एवं राज्य के एन.सी.सी. उपमहानिदेशक इसके सदस्य हैं। राज्य सलाहकार समिति की प्रतिवर्ष बैठक होती है जिससे उस राज्य की एन.सी.सी. कार्यविधि पर निगरानी रखी जाती है तथा सलाह दी जाती है।

प्रशासन— एन.सी सी संगठन की प्रशासनिक व्यवस्था रक्षा मत्रालय के माध्यम से की जाती है। रक्षा सचिव, रक्षा मंत्रालय इसके पूर्ण रूपेण प्रभारी है जो एन सी. सी. के सुचारू रूप से संचालन तथा अन्य पूर्ण मामलों के लिए भारत सरकार के प्रति उत्तरदायी हैं।

संगठनात्मक संरचना— एन.सी.सी. के प्रमुख महानिदेशक लेफ्टिनेंट जनरल रैंक के थलसेना अधिकारी होते हैं। वह दिल्ली में स्थित राष्ट्रीय कैडेट कोर मुख्यालय के माध्यम से देशभर मे एन.सी.सी. के कार्य सचालन के लिए जिम्मेदार हैं। एन.सी.सी. मुख्यालय मे महानिदेशक के सहायक दो अपरमहानिदेशक होते हैं, एक थल सेना के मेजर जनरल तथा दूसरे नौसेना में रियर एडमिरल या वायु सेना के एयर वाइस मार्शल / ब्रिगेडियर तथा समकक्ष रैंक के पांच उपमहानिदेशक— तीन ब्रिगेडियर तथा एक कमोडोर/एयर कमोडोर तथा एक सिविलियन— अधिकारी होते हैं।

वितरण— राज्य स्तर पर देश को सोलह निदेशालयों में विभाजित किया गया है जो सभी राज्यों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों के लिए कार्य करते है। इन निदेशालयो के प्रमुख ब्रिगेडियर तथा अन्य सेवाओ से उनके समकक्ष रैंक के अफसर होते हैं। प्रत्येक राज्य मुख्यालय के नियंत्रण में दो से चौदह तक एक ग्रुप मुख्यालय होते है। जिनके प्रमुख कर्नल या समकक्ष रैक के होते है। देश मे कुल 91 ग्रुप मुख्यालय है जो 646 थल सेना स्कंध यूनिटों तथा 58 एयर स्कवाड्रनों तथा 58 नौसेना स्कंध यूनिटों का नियन्त्रण करते हैं। इन यूनिटों की कमान मेजर/ले कर्नल या उनके समकक्ष अफसर संभालते हैं। इसके अतिरिक्त एन.सी.सी. की दो प्रशिक्षण सस्थाएं हैं। ऑफिसर ट्रेनिग स्कूल (ओ. टी.एस.) काम्पटी तथा महिला ऑफिसर प्रशिक्षण स्कूल (डब्लयू.ओ टी.एस) ग्वालियर, जहा कॉलेजों व स्कूलों के प्रोफेसर व अध्यापकों को कैडेटों को प्रेशिक्षण देने के लिए सहयोगी एन.सी सी. ऑफिसर (ए.एन.ओ.) के रूप में प्रशिक्षण दिया जाता है।

सिविलियन स्टाफ— दक्षतापूर्वक कार्य करने के लिए सभी निदेशालयो के पास विभिन्न श्रेणियों का सिविलियन स्टाफ है। निदेशालयों मे इस स्टाफ के लिए वित्त की व्यवस्था केन्द्र सरकार करती है। ग्रुप मुख्यालयों और एन.सी.सी. यूनिटों के स्टाफ के लिए फंड राज्य सरकारे उपलब्ध कराती हैं। वर्तमान में केन्द्र सरकार के अन्तर्गत 1247 लोगो का और राज्य सरकारो के अन्तर्गत 15281 लोगों का सिविलियन स्टाफ शामिल है।

क्रियाकलाप— अपने प्रारम्भ से लेकर आज तक एन.सी. सी क्रियाकलापों में बहुत अधिक बदलाव आया है। प्रारम्भिक ड्रिल तथा शस्त्र प्रशिक्षण से लेकर इस समय एन. सी.सी. क्रियाकलाप काफी फैले हुए है जिनमें खेल तथा

क्रीड़ा शामिल है। मौटे तौर पर इन्हे पांच अलग-अलग भागो मे विभाजित किया जा सकता है जैसे— संस्थागत प्रशिक्षण, सामुदायिक विकास, युवा आदान-प्रदान कार्यक्रम, खेलकूद तथा साहसिक प्रशिक्षण आदि।

● **संस्थागत प्रशिक्षण**— ड्रिल, निशानेबाजी, शारीरिक स्वस्थता, मानचित्र पठन, प्राथमिक उपचार, ग्लाइडिंग/शक्ति चालित उड़ान, नौका खेना, शिविर प्रशिक्षण इसके अंग हैं। शिविरों में युवा कैडेटों को घर से बाहर तथा सामुहिक रूप से रहने की प्रसन्नता तथा रोमांच का अनुभव होता है। इसके अलावा अखिल भारतीय शिविर जैसे राष्ट्रीय एकीकरण, नेतृत्व, नौसैनिक, वायुसैनिक, सेना सम्बद्धता, गणतन्त्र दिवस शिविर तथा स्वतन्त्रता दिवस शिविर, जिनमें देश के सभी भागों के कैडेट इकट्ठे काम करते है, राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने मे बहुत सहायक होते है। इन शिविरों से युवा कैडेटो का दृष्टिकोण विस्तृत होता है तथा उन्हें राष्ट्रीय एकता को सुदृढ करने में बहुत सहायक होते हैं। इन शिविरों से युवा कैडेटो का दृष्टिकोण विस्तृत होता है तथा उन्हे राष्ट्रीय भ्रातृत्व को मजबूत करने का अवसर मिलता है। इन शिविरों मे सांस्कृतिक अंतर कम हुए हैं। क्षेत्र, धर्म व भाषा सम्बन्धी रुकावटें दूर हुई है तथा युवा कैडेट एक-दूसरे के निकट आए हैं।

संस्थागत प्रशिक्षण मे थल सेना, नौसेना व वायु सेना से सम्बन्धित विषयों को बुनियादी प्रशिक्षण दिया जाता है। इस शिक्षण का उद्देश्य युवाओं को सैन्य स्वरूप के जीवन की जानकारी देकर उनमें अनुशासन, कर्त्तव्यपरायणता, व्यक्तित्व, चुस्ती-फुर्ती, अधिकारी के प्रति सम्मान की भावना उत्पन्न करना है। शिविर प्रशिक्षण से युवा लड़के, लड़कियो को घर के बाहर के जीवन का रोमांच व प्रसन्नता का अनुभव होता है तथा सहयोगी भाव, टीम भावना, सामूहिक मेल मिलाप, चरित्र व नेतृत्व के गुण, आत्मविश्वास तथा आत्मनिर्भरता के गुणो का विकास करने में सहायता मिलती है।

● **सामुदायिक विकास**— इन क्रियाकलापों के आयोजन का उद्देश्य कैडेटों को उनके देशवासी साथियों की आवश्यकता व समस्याओं को समझना तथा सामूहिक करना और सामुदायिक जीवन में सार्थक योगदान देना है। एन सी.सी. जरूरतमंदों की सहायता के लिए सबसे आगे रही है। कुछ प्रमुख क्रियाकलाप हैं— रक्तदान, प्रौढ़ शिक्षा, दहेज विरोध, कुष्ठ निवारण, नशा मुक्ति, वृक्षारोपण, निराश्रित गृहो में कार्य, नेत्रदान और सड़को का निर्माण आदि। पर्यावरण सम्बन्धी कार्यक्रम विशेषतः बजर भूमि के विकास और वन लगाने पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है। वर्ष 1991-92 से अब तक एन.सी सी. कैडेटो ने देशभर में 450 लाख से अधिक पौधे लगाए हैं। पिछले पांच वर्षो में एन सी सी कैडेटो ने लगभग 30 मिलियन घन सेमी. रक्तदान दिया।

● **युवा आदान-प्रदान कार्यक्रम**— अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समझ तथा जानकारी बढ़ाने के लिए एन.सी.सी. नौ देशों अर्थात् आस्ट्रेलिया, बांग्लादेश, भूटान, कनाडा, मालदीव, नेपाल, सिंगापुर, श्रीलका, त्रिनिदाद व टैबेगो तथा युनाइटेड किगडम आदि देशों के युवा सगठनो/एन.सी सी. के साथ आदान-प्रदान कार्यक्रम में पारस्परिक रूप से 24 कैडेट एक सप्ताह से तीन महीने तक की अवधि के लिए एक-दूसरे के देश में जाते हैं। कैडेट वहां सामुदायिक विकास सम्बन्धी कार्य करते है तथा उस युवा आदान-प्रदान कार्यक्रम से सदस्य देश के इतिहास, संस्कृति व सामाजिक, आर्थिक स्थितियों का अध्ययन करते हैं।

● **खेलकूद**— केन्द्रीय सलाहाकार समिति ने एन.सी.सी के छात्रों के लिए अधिक आकर्षक बनाने तथा खिलाड़ियों के अप्रयुक्त स्रोत खोलने के लिए नवम्बर 96 में एन.सी. सी. पाठयक्रम में खेलकूद को शामिल करने का निर्णय लिया। पहले एन.सी सी. खेल राष्ट्र की स्वतन्त्रता की 50वीं वर्षगांठ मनाने के साथ-साथ जवाहरलाल नेहरु स्टेडियम में 9 से 15 अगस्त, 1997 तक दिल्ली में आयोजित किए गए। रक्षामत्री ने खेलो का उद्घाटन किया तथा प्रधानमत्री ने समापन समारोह की अध्यक्षता की। देश के सभी भागो से 1350 से अधिक छात्र व छात्रा कैडेटो ने इसमें भाग लिया। इसका परिणाम बहुत उत्साहजनक रहा तथा इसकी व्यापक प्रशंसा हुई। ये खेल स्वतन्त्रता दिवस शिविर (आई. डी. सी.) के नाम से प्रतिवर्ष अगस्त माह मे आयोजित किए जाते हैं।

● **साहसिक कार्य सम्बन्धी प्रशिक्षण**— कैडेटों मे साहस नेतृत्व, साहसिक कार्य व खेल भावना, सहयोगी भाव, मिलकर काम करना तथा आत्मविश्वास के गुण विकसित करने के लिए साहसिक क्रियाकलापों का आयोजन किया जाता है जैसे— ट्रेकिग, शैलारोहण, पैरा जम्पिंग, स्कूबा डाइविंग, ग्लाइडर तथा माक्रोलाइट उडान। एन.सी.सी. 41 पर्वतारोहण और 1300 ट्रेकिंग अभियान संचालित कर चुकी है। पर्वतारोहण में अब तक 1600 कैडेट और ट्रेकिंग मे 1,30,000 कैडेट भाग ले चुके हैं।

कैडेट कल्याण खेलकूद एवं साहसिक क्रियाकलाप समिति

इसका गठन फरवरी 1985 में हुआ था। कैडेटों के कल्याण के लिए निम्न उपायों की घोषणा की गई है—

- एन.सी.सी. द्वारा आयोजित क्रियाकलापों के दौरान कैडेटों की मृत्यु या 100 प्रतिशत अपंगता की स्थिति मे अधिकतम 1.25 लाख रु. तक वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना। इसके अतिरिक्त विशेष चिकित्सा पर खर्च के लिए एक लाख रु. तक अदा किए जाते है।
- 100 प्रतिशत अपंगता की स्थिति मे चिकित्सा अधिकारियो द्वारा निरन्तर देखभाल की सिफारिश करने पर 20,000 रु. राशि भी दी जाती है।
- पूरी तरह ठीक हो सकने वाली चोट के मामले मे विशेष चिकित्सा हेतु 50,000 रु तक दिए जाते हैं।
- शिक्षा के क्षेत्र में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले 500 एन.सी.सी. कैडेटों को 2000 रु. वार्षिक की छात्रवृत्तिया प्रदान की जाती हैं।
- कनिष्ठ प्रभाग/कनिष्ठ स्कंध, वरिष्ठ प्रभाग/वरिष्ठ स्कंध में प्रत्येक के सर्वश्रेष्ठ चार कैडेटों को एक-एक हजार रु. के पुरस्कार दिए जाते है।

प्रोत्साहन— एन.सी.सी. कैडेटो के लिए केन्द्र और राज्य सरकारे समय-समय पर विभिन्न प्रोत्साहन की घोषणा करती रहती है। इन प्रोत्साहनो में रोजगार और साथ ही शिक्षा के क्षेत्र में प्रोत्साहन, मैडल, ट्रॉफियां, नकद पुरस्कार आदि शामिल हैं। एन सी.सी. कैडेटो को रोजगार व शिक्षा के क्षेत्र में निम्नलिखित अवसर प्रदान किए जाते है—

- सुरक्षा बलों मे कमीशन के लिए एन सी सी. 'सी' प्रमाण-पत्र धारकों हेतु आरक्षित रिक्तियां।
- 64 आई एम.ए. देहरादून मे सघ लोक सेवा आयोग और सेना चयन बोर्ड के माध्यम से।
- नौसेना प्रत्येक पाठयक्रम में 6 रिक्तियां, कोई संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षा नही केवल एस एस. बी. द्वारा।
- भारतीय वायुसेना उड़ान प्रशिक्षण सहित सभी पाठयक्रमो में 10 प्रतिशत केवल एस.एस.बी. द्वारा।
- ओ.आर. सेलर, वायुसैनिक (एयरमैन)
- एयर मैनो की भर्ती के लिए 5 से 10 प्रतिशत बोनस अंक दिए जाते हैं।
- अर्धसैनिक बल की भर्ती के लिए 2 से 10 प्रतिशत बोनस अक दिए जाते हैं।
- दूरसचार विभाग की भर्ती के लिए बोनस अंक दिए जाते है।
- केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल—तृतीय श्रेणी डिग्री धारक एन.सी.सी. कैडेट राजपत्रित पद पर भर्ती के पात्र होगे।
- बी.एड., एल एल.बी व अन्य प्रवेश परीक्षाओं में प्रतिभार अंक प्रदान किए जाते हैं।

एन.सी.सी. फंड

रक्षा मंत्रालय— यह समस्त स्टाफ के वेतन व भते, सभी एन.सी.सी. को दिए जाने वाले छोटे शस्त्रों के लिए गोला, बारूद, कैडेटो के लिए वस्त्र व वर्दी की मदों, साहसिक क्रियाकलापों के लिए सहायक सभी मुख्य उपस्करो जैसे ग्लाइडर, ट्रेकिंग व पर्वतारोहण सम्बन्धी किट, घोड़े, नौकाओं इत्यादि के लिए सम्पूर्ण बजट प्रदान करता है। सभी शिविरों पर 50 प्रतिशत व्यय प्रदान करता है।

राज्य सरकार— राज्य सरकारों की ओर से ए.न.ओ. का पूरा प्रशिक्षण धुलाई व पालिश भत्ते, ईधन पर होने वाला निरंतर व्यय, ग्रुप मुख्यालय और एन.सी.सी यूनिटो आदि के भवनों का किराया और शिविरो का 50 प्रतिशत व्यय वहन किया जाता है।

मुख्य घटनाक्रम

एन.सी.सी. दिवस– नवम्बर माह के चौथे रविवार को मनाया जाता है। अमर जवान ज्योति, इंडिया गेट पर माल्यार्पण समारोह, किसी समयायिक विषय पर एन. सी.सी. व्याख्यान और साहसिक अभियानों जैसे कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं।

गणतन्त्र दिवस शिविर (आर.डी.सी.)– प्रतिवर्ष यह शिविर 5 जनवरी से गैरीसन परेड ग्राउन्ड, दिल्ली छावनी में आयोजित किया जाता है। इसमें देश के लगभग 1700 कैडेटो के साथ सभी 16 निदेशालय तथा युवा आदान-प्रदान कार्यक्रम के अन्तर्गत कुछ मित्र देशों के कैडेट भी भाग लेते हैं।

स्वतन्त्रता दिवस शिविर (आई.डी.सी.)– एन.सी.सी. पाठ्यक्रम में खेलो को शामिल करने के साथ स्वतन्त्रता दिवस शिविर का आयोजन प्रतिवर्ष अगस्त माह मे राष्ट्रीय स्तर पर किया जाता रहा है। सभी एन.सी सी. निदेशालयो से चुने हुए खिलाड़ी इसमें भाग लेते हैं। पहली बार एन.सी.सी खेल दिल्ली में 6 अगस्त से 15 अगस्त, 1997 तक आयोजित किए गए थे।

बेसिक लीडरशिप कैंप(बी.एल.सी.)– यह कैंप नवम्बर माह मे आयोजित किया जाता है। सभी निदेशालयों के कैडेटों को इस शिविर में निशानेबाजी, मानचित्र पठन, नाइट मार्च, डे मार्च, आदि का प्रशिक्षण दिया जाता है।

निष्कर्ष

सन् 1948 में छोटे स्तर पर आरम्भ होने के साथ राष्ट्रीय कैडेट कोर ने अब तक बहुत प्रगति की है। आजकल राष्ट्रीय कैडेट कोर अपने 'एकता और अनुशासन' के आदर्श के साथ 21वी सदी के समय को मद्देनजर रखते हुए स्थिर गति से आगे बढ़ रही है।

एन.सी.सी. के लिए यह गर्व की बात है कि इसके भूतपूर्व कैडेट आज ऊंचे पदों पर है और जीवन के हर क्षेत्र मे उन्होने शानदार काम किया है। इससे सिद्ध होता है कि देश के युवाओं को भविष्य के बेहतर नेतृत्वकर्ताओं के रूप में ढालने का कार्य भली-भाति किया गया है। अब एन.सी.सी. का पहला कार्य होगा कि अपनी उपलब्धियो का समग्र रूप से लेखा-जोखा प्रस्तुत करे तथा युवाओ के विकास से सम्बन्धित कार्य के प्रति अपनी वचनबद्धता को सुदृढ़ करे। ❑❑

शिक्षा विभाग
चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय
मेरठ, उत्तर प्रदेश

विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन

❑ राधारानी सक्सेना
❑ मृदुला त्रिपाठी

भारतीय संविधान में हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा का स्तर प्रदान किया गया है। हिन्दी भाषा के विभिन्न घटकों से सम्बन्धित अनेक अध्ययन हुए हैं यथा– एस. आर. भट्ट द्वारा भारतीय व विदेशी बच्चों तथा सामान्य बच्चों की भाषा ज्ञान का, वकील द्वारा बच्चों के शब्द भण्डार का, वैद्यनाथ का वर्तनी अशुद्धी सम्बन्धी अध्ययन। परन्तु अधिकतर शोध अध्ययन छोटी कक्षा स्तर के बच्चों पर हुए। माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति सम्बन्धी अध्ययन कम दृष्टिगत हुए। अतः यह जानने की जिज्ञासा हुई कि बालकों के लिखित अभिव्यक्ति स्तर व उसे प्रभावित करने वाले कौन से कारक होते हैं। लिखित अभिव्यक्ति के द्वारा ही किसी जाति या समाज का ज्ञान सुरक्षित रहता है।

भाषा अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी भाषा द्वारा अभिव्यक्ति से सन्तोष प्राप्त होता है, चाहे वह मौखिक हो या लिखित।

लिखित अभिव्यक्ति व्यक्ति को अपने इतिहास, कला, सस्कृति को समझते हुए उसके प्रति गर्व व सराहना भाव जागृत करती है तथा नैतिक मूल्यो के वांछित विकास का मार्ग प्रशस्त करती है। अत लिखित अभिव्यक्ति ही ज्ञान दीप को प्रज्ज्वलित कर नए साहित्य को नवीन रूप प्रदान करती है। लिखित अभिव्यक्ति से बालक मे स्वतंत्र चिन्तन करने की क्षमता विकसित होती है तथा मानसिक शक्तियो– तर्क, विवेक, स्मृति आदि को बल मिलता है।

हिन्दी भाषा के विभिन्न घटको से सम्बन्धित अनेक अध्ययन हुए है यथा– एस आर. भट्ट द्वारा भारतीय व विदेशी बच्चों तथा सामान्य बच्चो की भाषा ज्ञान का, वकील द्वारा बच्चो के शब्द भण्डार का, वैद्यनाथ का वर्तनी अशुद्धी सम्बन्धी अध्ययन। परन्तु अधिकतर शोध अध्ययन छोटी कक्षा स्तर के बच्चों पर हुए। माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति सम्बन्धी अध्ययन शोधकत्री को कम दृष्टिगत हुए। अत शोध से यह जानने की जिज्ञासा हुई कि बालकों के लिखित अभिव्यक्ति स्तर व उसे प्रभावित करने वाले कौन से कारक होते है। लिखित अभिव्यक्ति के द्वारा ही किसी जाति या समाज का ज्ञान सुरक्षित रहता है। भारतीय सविधान में हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा का स्तर प्रदान किया गया है। यद्यपि राजस्थान हिन्दी भाषी राज्य है परन्तु यहा की भाषा में अनेक स्थानीय बोलियों का प्रभाव दिखाई देता है, वे सभी बोलियां छात्रों की भाषा, लिखित अभिव्यक्ति में अशुद्धियो का कारण बनती हैं। लिखित अभिव्यक्ति के दुर्बल पक्ष क्या हो सकते हैं व सम्पूर्ण रूप में हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति को कौन-कौन से कारक प्रभावित करते है। इन्ही बिन्दुओ को दृष्टिगत रखते हुए विद्यार्थियों की हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति पर शोध करने का विचार किया।

उद्देश्य

- विद्यार्थियों की हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति पर सामाजिक, आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन करना।
- विद्यार्थियो की हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति पर भाषा अभियोग्यता के प्रभाव का अध्ययन करना।
- विद्यार्थियों की हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति पर शिक्षण माध्यम के प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पना

- विभिन्न सामाजिक, आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियो की हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति में भिन्नता पाई जाती है।
- विभिन्न भाषा अभियोग्यता वाले विद्यार्थियों की हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति में भिन्नता पाई जाती है।
- विभिन्न शिक्षण माध्यम वाले विद्यार्थियों की हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति मे भिन्नता पाई जाती है।

परिसीमाएं

- इस अध्ययन में जयपुर के माध्यमिक स्तर के नवीं कक्षा में अध्ययनरत विद्यार्थियो को ही लिया गया है।
- अग्रेजी माध्यम वाले विद्यालयों मे कॉन्वेट स्कूल के विद्यार्थियो को चयनित नही किया गया है।
- विद्यार्थियों मे छात्र एव छात्रा दोनों ही शामिल हैं।
- लिखित अभिव्यक्ति का मापन समग्र रूप में किया है इसके विभिन्न घटको का अलग-अलग रूप में अध्ययन नहीं किया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त सम्प्रत्ययों की व्याख्या

- **लिखित अभिव्यक्ति–** प्रस्तुत अध्ययन में हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति के अन्तर्गत हिन्दी भाषा के वाक्य रचना, वर्तनी शुद्धता, उपयुक्त शब्द चयन, व्याख्या, विषय-वस्तु, प्रस्तुतीकरण, शैली सम्बन्धी पक्षो का मापन किया गया है। हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति मे उपरोक्त मापन सम्बन्धी परीक्षण तैयार किया गया तथा अभिव्यक्ति की जांच तीन स्तरों पर की गई– उत्कृष्ट कोटि (31 से 45) अंक विस्तार, सामान्य कोटि (16 से 30) अक विस्तार, निम्न कोटि (0 से 15) अंक विस्तार, कुल पूर्णाक 45 हैं।
- **सामाजिक-आर्थिक स्तर परिसूची–** डा. गोपीनाथ शर्मा द्वारा निर्मित 'सामाजिक-आर्थिक स्तर परिसूची' को प्रयोग में लाया गया। इसके विभिन्न घटक, शिक्षा, व्यवसाय, मासिक आय, मकान, पत्र-पत्रिकाएं तथा गृह सुविधाएं हैं। शोधकत्री ने अपने लघु शोध मे इस मापनी द्वारा विद्यार्थियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर को मापा है। यह परिसूची निम्न श्रेणी (0 से 17), सामान्य श्रेणी (18 से 31), उच्च श्रेणी (32 से 51) प्राप्तांको के आधार पर वर्गीकृत है।
- **भाषा अभियोग्यता परीक्षण–** डा. जे. एम. ओझा द्वारा निर्मित "डिफरेन्शल एटीट्यूड टेस्ट्स" बैस्ट्री में से "हिन्दी भाषा अभियोग्यता परीक्षण" द्वारा भाषा अभियोग्यता स्तर की जाच की गई है– जांच तीन स्तरों पर की गई है उच्च स्तर 70 से ऊपर, औसत 35 से 70 तथा निम्न प्रतिशतांक मैनुअल तालिका के आधार पर तीन वर्गो मे बाटा गया।

माध्यम– हिन्दी माध्यम के विद्यालयो के विद्यार्थी तथा अंग्रेजी माध्यम वाले विद्यालयों के विद्यार्थियों को अध्ययन का विषय बनाया गया है।

विधि– सर्वेक्षण विधि।

अध्ययन के चर

- **स्वतन्त्र चर–** सामाजिक-आर्थिक स्तर श्रेणी, भाषा अभियोग्यता एवं माध्यम।
- **आश्रित चर–** हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति।

न्यादर्श

देव निदर्शन विधि।

अध्ययन के उपकरण

- डा गोपीनाथ शर्मा, द्वारा निर्मित सामाजिक-आर्थिक स्तर मापनी परिसूची (शहरी)।

न्यादर्श

क्र सं.	विद्यालय का नाम	माध्यम	कक्षा	चयनित विद्यार्थी	कुल स.
1.	टैगोर विद्या भवन शास्त्री नगर, जयपुर	हिन्दी	9	50	100
2	आदर्श विद्या भवन अम्बाबाड़ी, जयपुर	हिन्दी	9	50	
3.	टी. पी. एस. शास्त्री नगर, जयपुर	अंग्रेजी	9	50	100
4.	डी. वी एस, जयपुर	अग्रेजी	9	50	
	योग				200

- डा. जे एम ओझा द्वारा निर्मित भाषा अभियोग्यता परीक्षण।
- शोधक द्वारा निर्मित "हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति परीक्षण"

प्रयुक्त सांख्यिकी– प्रतिशत

क्षेत्र– विद्यार्थियो की लिखित अभिव्यक्ति पर सामाजिक-आर्थिक स्तर का प्रभाव।

प्राकल्पना– विभिन्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों की हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति मे भिन्नता पाई जाती है।

तालिका 1

हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति की श्रेणिया	कोटि अक विस्तार	सामाजिक-आर्थिक स्तर श्रेणी					
		उच्च श्रेणी वि.सं. (एन 68)	प्रतिशत	मध्यम श्रेणी वि. सं (एन 100)	प्रतिशत	निम्न श्रेणी वि. स. (एन 32)	प्रतिशत
उत्कृष्ट श्रेणी	31–45	38	55.88%	10	10%	2	6.25%
सामान्य श्रेणी	16–30	20	29 41%	70	70%	10	31.25%
निम्न श्रेणी	0–15	10	14.70%	20	20%	20	62.5%

पीछे की तालिका से स्पष्ट होता है कि उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर श्रेणी वाले विद्यार्थियों का लिखित अभिव्यक्ति पर सर्वाधिक प्रतिशत उत्कृष्ट कोटि पर है, तथा मध्यम श्रेणी के विद्यार्थियो का लिखित अभिव्यक्ति की सामान्य कोटि पर प्रतिशत अधिक, और निम्न सामाजिक, आर्थिक श्रेणी वाले विद्यार्थियो की लिखित अभिव्यक्ति निम्न कोटि की है, अर्थात् निम्न सामाजिक, आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति निम्न है।

इससे प्राकल्पना की पुष्टि होती है कि विभिन्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति भिन्न होती है।

खण्ड 'ब'

क्षेत्र— विद्यार्थियो की लिखित अभिव्यक्ति पर भाषा अभियोग्यता का प्रभाव

प्राकल्पना— विभिन्न भाषा अभियोग्यता स्तर वाले विद्यार्थियो की हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति में भिन्नता पाई जाती है।

प्रदत्तो के अवलोकन से सम्बन्धित परिणाम यह प्राप्त हुए कि उच्च स्तरीय भाषा अभियोग्यता वाले विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति भी उच्च कोटि की होती है तथा औसत एवं निम्न स्तरीय भाषा अभियोग्यता वाले विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति निम्न कोटि की पाई गई। अतः प्राकल्पना स्वीकृति होती है कि विभिन्न भाषा अभियोग्यता वाले विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति मे भिन्नता पाई जाती है।

खण्ड 'स'

क्षेत्र— विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति पर शिक्षण माध्यम का प्रभाव ।

प्राकल्पना— विभिन्न शिक्षण माध्यम स्तर वाले विद्यार्थियो की हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति में भिन्नता पाई जाती है।

तालिका 2

हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति की श्रेणियां	*कोटि अंक विस्तार*	*भाषा अभियोग्यता स्तर*					
		उच्च स्तर (एन 30)	*प्रतिशत*	*औसत स्तर (एन 138)*	*प्रतिशत*	*निम्न स्तर (एन 32)*	*प्रतिशत*
उत्कृष्ट श्रेणी	31—45	20	66.67%	6	4 35%	...	...
सामान्य श्रेणी	16—30	6	20%	14	10.14%	6	18.75%
निम्न श्रेणी	0—15	4	13 33%	118	85 50%	26	81.25%

तालिका 3

हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति की श्रेणियां	*कोटि अंक विस्तार*	*शिक्षण माध्यम*				
		हिन्दी माध्यम (एन 100)	*प्रतिशत*	*अंग्रेजी माध्यम (एन 100)*	*प्रतिशत*	*योग*
उत्कृष्ट श्रेणी	35—45	20	20%	12	12%	200
सामान्य श्रेणी	16—30	65	65%	72	72%	
निम्न श्रेणी	0—15	15	15%	16	16%	

पीछे की सारणी के आधार पर स्पष्ट होता है कि हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम वाले विद्यार्थियों की हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति तीनो कोटियों मे से सामान्य कोटि की अधिक पाई गई, प्रतिशत की दृष्टि से हिन्दी माध्यम वाले विद्यार्थियो की अग्रेजी माध्यम वाले विद्यार्थियो की तुलना में अधिक पाई गई। हिन्दी लिखित अभिव्यक्ति की सामान्य कोटि पर दोनों ही माध्यम के विद्यार्थियों का प्रतिशत सर्वाधिक रहा।

अतः निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि विभिन्न माध्यम वाले विद्यार्थियो की लिखित अभिव्यक्ति भी भिन्न होती है।

विवेचन

उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति उत्कृष्ट कोटि की पाई गई। इसका सम्भावित कारण यह हो सकता है कि उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों के विद्यालयों में समस्त सुविधाएं उपलब्ध होना अथवा निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले विद्यार्थियों का सुविधाओ से वंचित रहना हो सकता है।

उच्च स्तरीय भाषा अभियोग्यता वाले विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति भी उच्च कोटि की पाई गई। इसका कारण यह हो सकता है कि उच्च भाषा अभियोग्यता होने के कारण विद्यार्थी भाषा सम्बन्धी तथ्यों को भी शीघ्र ग्रहण कर लेते होगे।

हिन्दी माध्यम वाले विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति पर प्रतिशत अंग्रेजी माध्यम वाले विद्यार्थियों की तुलना में अधिक पाया गया। इसका कारण यह हो सकता है कि हिन्दी माध्यम के विद्यार्थी प्रत्येक विषय का अध्ययन हिन्दी माध्यम से ही करते हैं अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थी अन्य विषयों का अध्ययन अंग्रेजी माध्यम से करते हैं इस कारण यह अंतर रहा है।

उपलब्धियों से सम्बन्धित सुझाव

- ☐ विद्यालयों में विद्यार्थियों की दत्तकार्य लिखित प्रकृति का अधिकाधिक अभ्यास कार्य कराया जाए ताकि विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति को स्तरीय बनाने में सहायक हो सके।
- ☐ विद्यार्थियों की वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियों, वाक्य रचना, विषय-वस्तु को शुद्ध व क्रमिक रूप से प्रस्तुत करने से सम्बन्धित अभ्यास कार्य लिखित रूप से कराया जाए।
- ☐ विद्यार्थियों में कहानी लेखन, कविता लेखन, प्रतियोगिताओं आदि का आयोजन विद्यालय में किया जाए।
- ☐ विद्यालय के पुस्तकालय में विविध सामग्री अध्ययन हेतु उपलब्ध कराई जाए। ☐☐

(1) शिक्षा संकाय
वनस्थली विद्यापीठ
(2) छात्रा
वनस्थली विद्यापीठ
राजस्थान

प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर हिंदी शिक्षण में भाषा विज्ञान की सहभागिता

❑ राम निवास

भाषा शिक्षकों के लिए भाषा विज्ञान के अध्ययन का महत्व निर्विवाद है। विश्व की किसी भी भाषा का शिक्षण प्रशिक्षण चाहे किसी भी स्तर पर किया जाए भाषा विज्ञान सदा केंद्र में ही रहता है। स्वर, व्यंजन, ध्वनियों के परिचय, वर्णीकरण, विश्लेषण के लेकर शब्द और उसकी उत्पत्ति प्रयोग एवं अर्थ वाक्यों को रचना विधान सीखने और सिखाने में भाषा विज्ञान की अनदेखी नहीं की जा सकती। प्राथमिक और उच्च प्राथमिक स्तर पर जब शिक्षक विद्यार्थियों को शब्द रचना और उनके अर्थ के साथ संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया-विशेषण सहित व्याकरण के विभिन्न अंगों की शास्त्रीय जानकारी और उनका प्रयोग एवं अभ्यास कराते हैं। तब भाषा शिक्षण में अंतर्निहित भाषा विज्ञान ही काम कर रहा होता है। जिसकी ओर अधिकांशतः भाषा शिक्षक पर्याप्त ध्यान नहीं देते। भाषा शिक्षकों को जो सेवारत प्रशिक्षण दिया जाता है, उसमें अध्यापक प्रशिक्षकों द्वारा व्याकरण शिक्षण पर तो अतिरिक्त बल दिया जाता है परन्तु भाषा विज्ञान जिस पर भाषा रूपी समस्त भवन खड़ा है उसकी ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता। भाषा विज्ञान की पर्याप्त जानकारी के अभाव में भाषा शिक्षण के एकांगी बनने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता।

आज कम्प्यूटर और प्रौद्यागिकी का युग है। संचार माध्यमों की सुलभता से हम एक-दूसरे के निकट आ गए हैं जिसे भूमंडलीकरण, ग्लोबल, वैश्वीकरण का नाम दिया गया है। विज्ञान ने दूरी कम कर दी है। जिसके परिणामस्वरूप शिक्षा जगत में भी अनुसधान हो रहे हैं। नई शिक्षण विधि, नए प्रयोग, फील्ड सर्वे कर पश्चिमी देशों में शिक्षा के क्षेत्र मे पर्याप्त उन्नति हुई है। पश्चिमी देशों में मुख्यत· ब्रिटेन और अमेरिका की शिक्षा नीतियों, कार्यक्रमों और विभिन्न प्रयोजनाओ का मिला-जुला प्रभाव भारतीय आधुनिक शिक्षा पर भी पड़ा है। यह स्वीकार करने मे हमें कोई संकोच नहीं है कि ब्रिटेन और अमेरिका जैसी समुन्नत और व्यावसायिक दृष्टि से उपयोगी शिक्षा के लक्ष्यो की प्राप्ति मे हम आज भी इन देशों से काफी पीछे हैं जो निश्चित ही हमारी शिक्षा नीतियों पर प्रश्न चिह्न है।

भाषा सम्प्रेषण का महत्वपूर्ण साधन है। भाषा भी उतनी ही पुरानी है जितना कि स्वयं मानव। भाषा संबधी नियमो और सिद्धांतों का क्रमबद्ध अध्ययन करके जो वैज्ञानिक रूप दिया गया है उसे 'भाषा विज्ञान' के नाम से जाना जाता है। इसके अंतर्गत भाषा मात्र के साधारण नियमों के साथ ही उस भाषा की शब्दावली, वाक्य रचना, अर्थ, ध्वनि, पद आदि का विवेचन किया जाता है। भाषा की मौखिक और लिखित अभिव्यक्ति जैसी भी होगी उसका प्रभाव अन्य भाषेतर विषयों के शिक्षण पर भी पड़ता है।

प्राथमिक स्तर के भाषा शिक्षकों से लेकर उच्च स्तर के शिक्षकों, साहित्य अध्येताओं की भाषा विज्ञान प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से सहायता करता है।

प्राथमिक स्तर पर हिन्दी भाषा शिक्षण में वर्णमाला के प्रथम परिचय के अतर्गत स्वरों एव व्यजनों का ज्ञान जब हम छात्र-छात्राओ को कराते हैं तो भाषा विज्ञान की पर्याप्त जानकारी शिक्षक की अध्यापन कला को प्रभावी और रुचिपूर्ण बनाती है।

उदाहरण 1

क् ख् ग् घ् ङ् (कठ्य)

ये कंठ्य वर्ण हैं, इनका उच्चारण कठ से होता है। इनमे प्रथम वर्ण 'क्' और तीसरा वर्ण 'ग्' अल्पप्राण हैं। 'क्' और 'ग्' के उच्चारण मे स्वरतत्री मे अधिक कपन नही होता इसलिए ये दोनो अल्पप्राण है। जबकि इसी वर्ग के दूसरे और चौथे वर्ण 'ख्' और 'घ्' के उच्चारण मे स्वरतंत्री मे अधिक कंपन होता है इसलिए ये दोनों महाप्राण है। कक्षा शिक्षण में इनका उच्चारण करते समय शिक्षक अपने कंठ पर उंगली रखकर इस ध्वनि भेद को स्पष्ट करते हुए विद्यार्थियों को भी अल्पप्राण और महाप्राण ध्वनियों की जानकारी दे सकता है। 'ङ्' के उच्चारण में कंठ के साथ नासिका भी स्थान लेती है, यह अनुनासिक है।

'श', 'ष', 'स' इनका उच्चारण अधिकांशत. विद्यार्थी ही नहीं शिक्षक भी ठीक नहीं कर पाते, यहां हम भाषा विज्ञान के आधार पर इनके उच्चारण स्थानो का पता लगाते हैं–

श	तालव्य
ष	मूर्धन्य
स	दन्त्य

'श' का उच्चारण स्थान हमारे मुख में स्थित वाक अवयव तालू है वहीं से यह ध्वनि उत्पन्न की जाती है। 'ष' का उच्चारण स्थान मूर्धा है जीभ मूर्धा का स्पर्श कर इसकी ध्वनि उच्चरित करती है। 'स' इसके उच्चारण में जीभ दांतों का हल्का-सा स्पर्श कर इस ध्वनि को उत्पन्न करती है। हिंदी वर्णमाला की ध्वनियों के नियम उच्चारण स्थानों (वाक अवयवों) तथा मानक उच्चारण की शिक्षा मे प्राथमिक स्तर के भाषा शिक्षको को भाषा विज्ञान की जानकारी अपेक्षित है।

भाषा विज्ञान के ज्ञान के अभाव में हिंदी पढने और पढ़ाने वाले छात्र एवं अध्यापक ध्वनि परिवर्तन को आसानी से पहचान नही पाते। वे संयुक्ताक्षरों के उच्चारण में भी प्राय. अशुद्धि करते देखे गए हैं। किसी शब्द के उच्चारण में स्वरागम कर देते हैं तो किसी शब्द में स्वर अथवा व्यंजन का लोप करते पाए गए हैं।

उदाहरण 2

स्वरागम– सकूल (स्कूल) अस्नान (स्नान), इस्त्री (स्त्री)
आदि व्यंजन लोप– टेसन (स्टेशन) मसान (शमशान)
मध्य ध्वनि लोप– पिय (प्रिय)

यह उच्चारण दोष श्रुति के कारण ही है जो पूर्व श्रुति के अंतर्गत आता है। जिसमें मुखसुख और प्रयत्न लाघव का प्रभाव भी दिखाई देता है, जो ध्वनि विकार के आंतरिक कारणो में दृष्टव्य है। भाषा विज्ञान की दूसरी शाखा रूप विज्ञान है जिसके-अंतर्गत शब्दों की संरचना एवं वाक्य में शब्दो के प्रयोग का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। रूप विज्ञान हमें भाषा की व्याकरणीय सरचना, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि सभी तत्वों की सही और वैज्ञानिक जानकारी देता है। प्रारंभ में कुछ शब्द व्याख्यात्मक थे जो गुण का बोध कराते थे वे ही शब्द कालांतर मे सज्ञा के लिए प्रयोग किए जाने लगे।

उदाहरण 3

नेत्र	प्रकाशित करने वाला
गो	चलने वाला
सर्प	रेगने वाला

गुण विशेष का बोध कराने वाले ये शब्द वस्तु विशेष और प्राणी विशेष के लिए प्रयुक्त हुए। लिग भेद, वचन भेद और क्रिया भेद तथा एक भाषा से दूसरी भाषा में एक ही शब्द का कैसे लिंग परिवर्तन

होता है यह भाषा शिक्षण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। एक भाषा के शब्द का लिंग विपर्यय उस भाषा के समानार्थी शब्दों के लिग के अनुसार होता है जैसे– सस्कृत के पवन, वायु, अग्नि, आत्मा हिदी मे स्त्रीलिग हो गए हैं। वचनभेद स्पष्ट करने के लिए शब्द के अंत में कभी प्रत्यय तो कभी समूह वाची शब्द जोड़ा जाता है। उसी शब्द की पुनरुक्ति से भी बहुवचन का संकेत दिया जाता है यथा– लडकी लडकी। हिन्दी में ए, ओ के योग से भी बहुवचन बनता है।

समस्या– समस्याएं (एं)
लड़का– लडकों (ओ)
कठिनाई– कठिनाइया (या, आं)
अध्यापकवृन्द (वृन्द)
बाल समूह (समूह)
भक्तजन (जन)

प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर हिन्दी भाषा शिक्षण में अध्यापक इन उदाहरणों को आधार बनाकर अभ्यास मालाए बनाए तथा कक्षा मे उनका अभ्यास करना भी अपेक्षित है। बिना अभ्यास के भाषा शिक्षण में न्यूनतम अधिगम स्तर प्राप्त नहीं होता। भाषा प्रयोग और व्यवहार की वस्तु है।

गद्य एवं काव्य शिक्षण में अर्थ स्पष्टीकरण का विशेष महत्व है। शब्द और अर्थ का आपस मे क्या सम्बन्ध है? शब्दो के अर्थो का विकास और उनकी ग्रहणशीलता की प्रक्रिया क्या है? वे कौन से कारण हैं जो शब्दों के अर्थ को बदल देते हैं। अर्थ विज्ञान हमें स्पष्ट करता है कि प्रकरण और साहचर्य के कारण अर्थ विकसित होता है। सैन्धव शब्द 'नमक' और 'घोड़ा' अर्थ में प्रकरण के अनुसार अलग-अलग ग्रहण किया जाता है। सबसे पहले तम्बाकू विदेश से सूरत बदरगाह के रास्ते भारत आया। सूरत से तम्बाकू का संबंध होने के कारण इसे 'सूरती' कहने लगे। आज सूरती शब्द तम्बाकू ही हो गया है। अब 'श्रेष्ठ' शब्द को लीजिए जिसका अर्थ है 'उत्तम व्यक्ति', परंतु इसका तद्भव रूप 'सेठ' है जिसका अर्थ बदलकर धनी व्यक्ति हो गया है। 'साधु' शब्द का अर्थ सन्यासी व्यक्ति, इससे बना तद्भव रूप 'साहू' का अर्थ महाजन है। वैज्ञानिक आविष्कारो से संबंधित नए हिंदी शब्द भी आज प्रयोग में आ रहे है ये नए शब्द नए अर्थो के सूचक है–

उदाहरण 4

Cell	कोशिका
Atom	परमाणु
Satellite	उपग्रह
Energy	ऊर्जा
Heat	उष्मा
Hypothesis	परिकल्पना
Scheme	योजना
Structure	सरचना
Engineer	अभियंता

हिन्दी अपने स्वरूप एव प्रकृति की सरलता के कारण एक विशाल जनसमुदाय की सुस्थापित और पूर्णतया विकसित भाषा है। इसका अध्ययन अध्यापन भारत के बाहर एक सौ छियालीस देशो मे हो रहा है। विश्व की अन्य विकसित भाषाओ की तरह दूसरी भाषाओं के शब्दों को आवश्यकता के अनुसार ग्रहण करना तथा अपनी स्वय की शब्दावली निर्मित करने का गुण इसमें विद्यमान है। इस नई वैज्ञानिक शब्दावली की जानकारी छात्रों को देने के लिए 'साहचर्य' का ध्यान रखा जाए। अंग्रेजी के कुछ शब्द ऐसे हैं जो आसानी से समझे जाते हैं, पढ़े, लिखे ही नहीं अशिक्षित व्यक्ति भी उन्हें बोलते है। ऐसे जनप्रचलित शब्दों को जान-बूझकर हिन्दी में न बदला जाए। उदाहरण के लिए रेल, बल्ब, स्टेशन, हैलीकॉप्टर इत्यादि शब्दो की बनी हुई दुरूह हिंदी शब्दावली का प्रयोग कक्षा शिक्षण मे करने की आवश्यकता नहीं है। जान-बूझकर किए गए ऐसे नव प्रयोग का अंधानुकरण शिक्षण को बाधित करता है। मेरा कहना यह नही कि नई शब्दावाली से बचा जाए अपितु जहा जिस रूप में जितनी आवश्यक समझी जाए उसका भरपूर उपयोग किया जाए। यह भाषा शिक्षकों के स्वयं के विवेक पर निर्भर है।

प्राथमिक एव उच्च प्राथमिक कक्षाओं के भाषा शिक्षक वाक्य तथा उसकी संरचना संबंधी नियमों से

भली-भांति परिचित होने चाहिए। शिक्षक जो कुछ भी कक्षा में प्रस्तुत करता है वह वाक्यों के द्वारा ही बोधगम्य होता है। व्याकरण की दृष्टि से वाक्य शुद्ध एवं पूर्ण होने आवश्यक हैं। उनमे योग्यता, आकांक्षा और समीपता होनी चाहिए। 'सूर्य' और 'चन्द्रमा' दोनो का गुण प्रकाशित करना है। यदि हम कहें– 'चन्द्रमा की किरणें पडते ही रीना के सिर मे दर्द होने लगा'। यह वाक्य व्यावहारिक दृष्टि से दोषपूर्ण है क्योकि चन्द्रमा की किरणे सदैव शीतल होती हैं उनसे सिर मे दर्द नहीं हो सकता। इसके स्थान पर यदि कहा जाए– 'सूर्य की किरणें पड़ते ही रीना के सिर मे दर्द होने लगा।' यह वाक्य हर दृष्टि से ठीक है। सूर्य की किरणें सदैव ताप बिखेरती हैं उनके ताप से सिर में दर्द होना स्वाभाविक है।

वाक्य विज्ञान हमे इस तथ्य से भी परिचित कराता है कि वाक्य में शब्दों का क्रम व्याकरण के नियमों का ध्यान रखते हुए बदला जाए तो अर्थ बोध में कोई बाधा नही आती।

उदाहरण 5

'मोहन ने इस पुस्तक को रमेश से लेकर पढ़ा।'

'इस पुस्तक को, रमेश से लेकर मोहन ने पढ़ा।'

'रमेश से लेकर मोहन ने इस पुस्तक को पढ़ा।'

उपर्युक्त वाक्य में तीन प्रकार से शब्द क्रम का प्रयोग होने पर भी अर्थ में कोई बाधा नही पहुंचती। इसके विपरीत यदि 'ने', 'को', 'से' कारक चिह्नों को अपने स्थान पर ही रहने दिया जाए और केवल शब्दों का क्रम ही बदलें तो अर्थ बिलकुल ही उलट जाएगा, यथा–

'अर्जुन ने धनुषबाण से जयद्रथ को मारा।'

'जयद्रथ ने धनुषबाण से अर्जुन को मारा।'

उपर्युक्त वाक्य में शब्द संरचना समान होते हुए अर्थ बदल गया है। भाषा विज्ञान हमें स्पष्ट करता है कि वाक्य संरचना में संज्ञा, सर्वनाम तथा क्रिया को एक निश्चित क्रम मे रखना चाहिए। केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय ने देवनागरी लिपि में सुधार करते हुए कुछ नियम बनाए हैं। बोलने, लिखने मे सरलता और शुद्धता का ध्यान रखा गया है। जिसमे उच्चारण तथा मानक वर्तनी के नियम निर्धारित किए गए हैं। भाषा विज्ञान की सामान्य जानकारी शिक्षकों की अध्यापन कला को निश्चित ही रुचिपूर्ण बनाती है। प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर के सेवारत हिंदी शिक्षको को जो विषय सबंधी प्रशिक्षण दिया जाता है, उसमे व्याकरण शिक्षण पर तो विशेष बल प्रशिक्षको द्वारा दिया जाता है परतु भाषा विज्ञान की सामान्य जानकारी की चर्चा नही की जाती जबकि भाषा विज्ञान ही शब्दो, ध्वनियों, वाक्यों के सम्यक् ज्ञान का आधार है। भाषा विज्ञान के ज्ञान से भाषा शिक्षक में आत्मविश्वास बढ़ता है। भाषा शिक्षण मुख्यतः व्याकरण का अध्यापन भी उसके लिए सरल और रुचिपूर्ण बन जाता है।

यह स्वीकार करने में मुझे कोई सकोच नहीं है कि प्राथमिक और उच्च प्राथमिक कक्षाओ के विद्यार्थी प्रत्यक्ष रूप से भाषा विज्ञान से जुडे नही हैं। लेकिन इन कक्षाओं को पढ़ाने वाले अध्यापक अप्रत्यक्ष रूप से भाषा विज्ञान से जुड़े होते हैं, जो भाषा शिक्षण में इसका उपयोग करते हैं। अतः भाषा शिक्षण मे परोक्ष रूप से प्रयोग किए जाने वाले ज्ञान की जानकारी शिक्षक को प्रत्यक्ष होनी ही चाहिए। प्रस्तुत आलेख को लिपिबद्ध कर शिक्षकों तक पहुंचाने का कारण भी यही है।

क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, अजमेर
राजस्थान

ग्रामीण पारिवारिक जीवन पर सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के प्रभाव का अध्ययन

❑ प्रशान्त अग्निहोत्री
❑ नीरज उपाध्याय

पारिवारिक जीवन को बेहतर बनाना शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य होता है जिसकी प्रति के लिए साक्षरता कार्यक्रमों के द्वारा स्त्री तथा पुरुषों में परिवार को नियोजित करने, किशोरावस्था से सम्बन्धित भ्रान्तियों को दूर करने, स्वास्थ्य तथा सामाजिक जीवन से सम्बन्धित समस्याओं का निराकरण करने के प्रति जागरूकता उत्पन्न की जाती है।

शिक्षा व्यक्ति के विचारो को सुविकसित और उदार बनाती है। शिक्षा व्यक्ति के लिए संसार को अपेक्षाकृत अधिक सौन्दर्य, वैविध्य, सहानुभूति तथा समझ-बूझ से देखने के आयाम का अवलम्बन प्रस्तुत करती है। अतः यह महती आवश्यकता बन जाती है कि हम शिक्षा का प्रसार करें। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए राष्ट्रीय साक्षरता अभियान का प्रारम्भ एक सराहनीय प्रयास है। लेकिन इसकी सार्थकता को स्वीकृति तभी मिल सकती है जब इसका सकारात्मक व्यावहारिक प्रभाव निरक्षरो के जीवन पर पड़े।

स्वतन्त्रता के पूर्व से ही निरक्षरता के उन्मूलन हेतु प्रयास किए जा रहे हैं। सन् 1937 में बनने वाली प्रान्तीय स्वदेशी सरकारों ने शिक्षा प्रसार विभाग स्थापित करके, इस दिशा में संगठित प्रयास प्रारम्भ किए। सन् 1947 मे भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त होने पर प्रौढ़ शिक्षा प्रसार की आवश्यकता अनुभव की गई क्योंकि प्रौढ़ व्यक्तियो के सक्रिय सहयोग के अभाव मे विश्वसनीय रूप से बालकों को शिक्षित नहीं किया जा सकता। फलतः पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत प्रौढ़ शिक्षा के लिए अलग से प्रावधान किया गया है। बाद में अनुभव किया गया कि सार्वभौमिक सार्थकता का अभाव हमारे विकास मे बाधक है। अतः सन् 2005 तक सम्पूर्ण साक्षरता का लक्ष्य प्राप्त करने हेतु अथक प्रयास किए जा रहे हैं जिसके लिए 1987 में केन्द्रीय सरकार ने राष्ट्रीय साक्षरता मिशन की योजना बनाई। जिसके अर्न्तगत 15-35 आयु वर्ग के सभी लोगों को 1995 तक साक्षर बनाने का लक्ष्य था। 5 मई, 1988 को तत्कालीन प्रधानमत्री ने 6 तकनीकी मिशनों के अन्तर्गत राष्ट्रीय साक्षरता मिशन का शुभारम्भ किया।

पारिवारिक जीवन को बेहतर बनाना शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य होता है जिसकी प्रति के लिए साक्षरता कार्यक्रमों के द्वारा स्त्री तथा पुरुषो में परिवार को नियोजित करने, किशोरावस्था से सम्बन्धित भ्रान्तियों को दूर करने, स्वास्थ्य तथा सामाजिक जीवन से सम्बन्धित समस्याओं का निराकरण करने के प्रति जागरूकता उत्पन्न की जाती है।

सामाजिक विकास की प्रक्रिया मे परिवार एक महत्वपूर्ण इकाई है क्योकि यही वह प्रामाणिक इकाई है जो समुदाय के चरित्र, इच्छा शक्ति तथा आत्मशक्ति का निर्धारण करती है। पारिवारिक जीवन अनेक समस्याओं से घिरा हुआ है। साक्षरता इन समस्याओं को दूर करने का सशक्त माध्यम है। पूर्व शोध अध्ययन भी इस ओर इगित करते हैं कि कार्यात्मक साक्षरता का प्रभाव जन्मदर में कमी, लघु परिवार मानक की स्वीकृति, विवाह की उम्र, नियोजित मातृत्व तथा पितृत्व, शिशु मृत्युदर में कमी, स्वास्थ्य तथा स्वच्छता के प्रति

जागरूकता, पर्यावरण प्रदूषण आदि तत्वों पर पड़ा है। प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से, ग्रामीण नवसाक्षरों के पारिवारिक जीवन पर सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के प्रभाव का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन के सन्दर्भ मे परिवार नियोजन, स्वास्थ्य तथा सामाजिक समस्याओ के प्रति जागरूकता को पारिवारिक जीवन के प्रमुख घटक के रूप में लिया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन से पूर्व मरियप्पन (1981), आईकारा एवं हेनरी क्विज (1982), सामाजिक विकास परिषद् (1982), गांगुली (1983), मुश्ताक अहमद (1984), कुन्टू (1985), सत्यनारायण (1986), प्रीति सिंह (1987), ने अपने सभी अध्ययनों मे साक्षरता अभियान के विभिन्न पक्षो, यथा– क्रियान्वयन, पाठ्यक्रम, साक्षरता प्रतिरूप आदि का अनुशीलन किया है। परन्तु प्रस्तुत अध्ययन नवसाक्षरों के पारिवारिक जीवन (परिवार नियोजन, स्वास्थ्य, सामाजिक समस्याओं) पर साक्षरता के पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करने का प्रयास है।

समस्या कथन

ग्रामीण पारिवारिक जीवन पर सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के प्रभाव का अध्ययन
(शाहजहांपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्र के विशेष सन्दर्भ में)

समस्या का परिभाषीकरण

पारिवारिक जीवन

पारिवारिक जीवन के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले लोगों की परिवार नियोजन, स्वास्थ्य और सामाजिक समस्याओं को सामूहिक रूप में सम्मिलित किया गया है।

(अ) परिवार नियोजन– परिवार नियोजन के अन्तर्गत केवल परिवार को सीमित रखना ही शामिल नही है वरन् परिवार का कल्याण, माता तथा शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा भी समाहित हैं।

(ब) स्वास्थ्य– पारिवारिक जीवन का दूसरा महत्वपूर्ण घटक स्वास्थ्य है। जिसमें बीमारियो से सुरक्षा के साथ-साथ मानव का शारीरिक, मानसिक व सामाजिक स्वास्थ्य भी सम्मिलित है।

(स) सामाजिक समस्याएं– सामाजिक समस्याओं के अंतर्गत वे समस्याएं समाहित हैं जो ग्रामीण पारिवारिक जीवन में बाधा उत्पन्न करती है। इनमे से मुख्य समस्याएं– लैगिक असमानता, दहेज प्रथा, जाति भेद, नशाखोरी हैं।

सम्पूर्ण साक्षरता अभियान

केन्द्र सरकार ने 1987 में देश के 15-35 आयु-वर्ग के निरक्षरों को साक्षर करने हेतु राष्ट्रीय साक्षरता मिशन का गठन किया। इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण साक्षरता अभियान द्वारा सन् 2005 तक 15-35 आयु-वर्ग के सभी निरक्षरों को साक्षर बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

(अ) नवसाक्षर– राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के द्वारा सचालित सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के अन्तर्गत साक्षर बनाए गए व्यक्तियो को नव साक्षर माना गया है।

(ब) निरक्षर– निरक्षर वे व्यक्ति हैं जो किसी भी भाषा को लिख या पढ़ नही सकते तथा जो सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के अन्तर्गत लाभान्वित नहीं हुए हैं।

आरक्षित वर्ग

इसके अन्तर्गत अनु. जाति, जन जाति तथा पिछडी जाति के वे नवसाक्षर एवं निरक्षर सम्मिलित हैं, जिन्हें जातीय आधार पर आरक्षण मिलता है।

अनारक्षित वर्ग

इसके अन्तर्गत सामान्य जाति के वे नवसाक्षर व निरक्षर शामिल हैं जिन्हें जातीय आधार पर आरक्षण का लाभ नहीं मिलता है।

अभिवृत्ति

प्रस्तुत अध्ययन में अभिवृत्ति का तात्पर्य सम्पूर्ण साक्षरता अभियान द्वारा साक्षर हुए व्यक्तियों के परिवार नियोजन, स्वास्थ्य, सामाजिक समस्याओं के प्रति विचारों मे हुआ परिवर्तन तथा निरक्षर व्यक्ति की उपर्युक्त तथ्यो के विषय में विचारधारा से है।

परिकल्पनाएं

सहायक परिकल्पनाएं

(अ) परिवार नियोजन के सन्दर्भ में ग्रामीण नवसाक्षरों तथा

निरक्षरों की अभिवृत्ति मे कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

- ☐ परिवार नियोजन के सन्दर्भ में नवसाक्षर ग्रामीण पुरुषों तथा निरक्षर ग्रामीण पुरुषों की अभिवृत्ति के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
- ☐ परिवार नियोजन के सन्दर्भ मे नवसाक्षर ग्रामीण महिलाओं तथा निरक्षर ग्रामीण महिलाओं की अभिवृत्ति के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
- ☐ परिवार नियोजन के प्रति अनारक्षित वर्ग के ग्रामीण नवसाक्षरों तथा ग्रामीण निरक्षरों की अभिवृत्ति के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
- ☐ परिवार नियोजन के प्रति आरक्षित वर्ग के ग्रामीण नवसाक्षरों तथा ग्रामीण निरक्षरों की अभिवृत्ति के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(ब) स्वास्थ्य के सन्दर्भ मे ग्रामीण नवसाक्षरों तथा ग्रामीण निरक्षरों की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

- ☐ स्वास्थ्य के प्रति ग्रामीण नवसाक्षर तथा ग्रामीण निरक्षरो की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नही है।
- ☐ स्वास्थ्य के प्रति ग्रामीण महिला नवसाक्षरों तथा ग्रामीण महिला निरक्षरों की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
- ☐ स्वास्थ्य के सन्दर्भ में अनारक्षित वर्ग के ग्रामीण नवसाक्षरों तथा निरक्षरो की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नही है।
- ☐ स्वास्थ्य के सन्दर्भ में आरक्षित वर्ग के ग्रामीण नवसाक्षरो तथा ग्रामीण निरक्षरों की अभिवृत्ति मे कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(स) सामाजिक समस्याओं के सदर्भ में ग्रामीण नवसाक्षरों तथा निरक्षरो की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

- ☐ सामाजिक समस्याओं के प्रति ग्रामीण पुरुष नवसाक्षरों तथा ग्रामीण पुरुष निरक्षरों की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
- ☐ सामाजिक समस्याओं के प्रति ग्रामीण महिला नवसाक्षरों तथा ग्रामीण महिला निरक्षरो की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
- ☐ सामाजिक समस्याओं के सन्दर्भ में अनारक्षित वर्ग के ग्रामीण नवसाक्षरों तथा ग्रामीण निरक्षरों की अभिवृत्ति मे कोई सार्थक अन्तर नही है।
- ☐ सामाजिक समस्याओं के सन्दर्भ में आरक्षित वर्ग के ग्रामीण नवसाक्षरों तथा निरक्षरों की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नही है।

मुख्य परिकल्पना

सम्पूर्ण साक्षरता अभियान का ग्रामीण पारिवारिक जीवन पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है।

शोध प्रविधि एवं प्रक्रिया

विधि एवं प्रकृति— यह अनुसंधान विश्लेषणात्मक प्रकृति का सर्वेक्षण आधारित सूक्ष्म अनुसंधान है। इसके अन्तर्गत उत्तर प्रदेश के शाहजहांपुर जनपद के ग्रामीण क्षेत्र का सर्वेक्षण, सम्पूर्ण साक्षरता अभियान का ग्रामीण पारिवारिक जीवन पर प्रभाव जानने के उद्देश्य से किया गया है। विभिन्न आयामों के अनुरूप समंको के मध्य विद्यमान सम्बन्धो तथा अन्तर का परीक्षण किया गया है। प्राप्त आंकड़ों का वर्गीकरण कर तुलनात्मक अध्ययन भी किया गया है।

समग्र जनसंख्या—प्रस्तुत अध्ययन के अन्तर्गत समग्र से आशय शाहजहांपुर जनपद के ग्रामीण क्षेत्रों के सभी नवसाक्षरों तथा निरक्षरों से है।

न्यादर्श एवं निदर्शन तकनीक— अध्ययन में न्यादर्श का चयन द्विस्तरित दैव न्यादर्श विधि से किया गया है। प्रथम स्तर पर समग्र के 14 विकास खण्डों में से प्रत्येक से दो-दो गाव दैव प्रतिचयन के आधार पर चुने गए हैं। प्रथम स्तर पर चयनित इन ग्रामों में से प्रत्येक से 15-35 आयु-वर्ग के 25 नवसाक्षरों तथा 25 निरक्षरों का चयन यादृच्छिक न्यादर्श विधि से किया गया है। इस प्रकार 700 नवसाक्षरो तथा 700 निरक्षरो का चयन द्वितीय स्तर पर किया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त चर

(अ) नियन्त्रित चर

- परिवार नियोजन के प्रति अभिवृत्ति
- स्वास्थ्य के प्रति अभिवृत्ति
- सामाजिक समस्याओं के प्रति अभिवृत्ति

(ब) स्वतन्त्र चर

- सम्पूर्ण साक्षरता अभियान

उपकरण— ग्रामीण पारिवारिक जीवन पर सम्पूर्ण साक्षरता अभियान के प्रभाव के अध्ययन हेतु स्वनिर्मित अभिवृत्ति मापनी का प्रयोग किया गया। 83 कथनों वाली इस

तालिका 1

परिवार नियोजन सम्बन्धी परिकल्पनाओं की विश्लेषण सारणी

परिकल्पना संख्या (H.No)	*आधार (hyp Base)*	*ग्रामीणों की संख्या (Number)*	*माध्य अभिवृत्ति (Mean)*	*प्रमाप विचलन (S D)*	*क्रान्तिक अनुपात (t Value)*
(अ)	ग्रामीण नवसाक्षर	700	60.99	5.41	17.55
	ग्रामीण निरक्षर	700	55.39	6.50	अस्वीकृत
1.	ग्रामीण नवसाक्षर पुरुष	382	61.14	4 85	7.17
	ग्रामीण निरक्षर पुरुष	304	57.66	7.26	अस्वीकृत
2.	ग्रामीण नवसाक्षर महिला	318	60.52	6.49	9.84
	ग्रामीण निरक्षर महिला	396	55.51	7.068	अस्वीकृत
3	अनारक्षित वर्ग ग्रामीण नवसाक्षर	256	61.02	6.317	1.27
	अनारक्षित वर्ग ग्रामीण निरक्षर	171	60.13	7 538	स्वीकृत
4.	आरक्षित वर्ग ग्रामीण नवसाक्षर	444	60.77	5 244	9.68
	आरक्षित वर्ग ग्रामीण निरक्षर	529	56.95	7.046	अस्वीकृत

सार्थकता स्तर 5% = 1.96

मानकीकृत अनुसूची मे परिवार नियोजन से सम्बन्धित 22 कथन, स्वास्थ्य सम्बन्धित 18 कथन और सामाजिक समस्याओं सम्बन्धी 43 कथन सम्मिलित हैं।

आंकड़ों का संग्रहण— अनुसूची के प्रशासन के उपरान्त अनुसूची मे शामिल सकारात्मक कथनों से सहमत, तटस्थ अथवा असहमत होने पर क्रमशः 3, 2, 1 अंक प्रदान किए गए। जबकि नकारात्मक कथन के लिए ठीक उलट असहमत के लिए 3, तटस्थ के लिए 2 तथा सहमत के लिए 1 अक प्रदान किया गया। इस प्रकार सम्पूर्ण अनुसूची पर प्राप्त अकों का अध्ययित आयामो के सन्दर्भ मे अलग-अलग योग प्राप्त कर लिया गया। इस योग के आधार पर अभिवृत्ति की दिशा का बोध हुआ।

सांख्यिकीय विश्लेषण— प्रस्तुत अध्ययन में प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण करने के लिए माध्य, प्रमाप विचलन, प्रमाप विभ्रम, टी-परीक्षण, प्रसरण अनुपात परीक्षण का प्रयोग कर परिकल्पनाओ का परीक्षण किया गया है।

निष्कर्ष

उपरोक्त सारणी के अनुसार प्रदत्त विश्लेषण—

(अ) साक्षरता अभियान में लाभान्वित ग्रामीण नवसाक्षरों की परिवार नियोजन के प्रति अभिवृत्ति में सकारात्मक बदलाव हुआ है।

गहन विश्लेषण हेतु जाची गई परिकल्पनाओं से प्राप्त निष्कर्ष के अनुसार —

- नवसाक्षर ग्रामीण पुरुषों की परिवार नियोजन के प्रति अभिवृत्ति अपेक्षाकृत अधिक सकारात्मक है।
- परिवार नियोजन के प्रति ग्रामीण नवसाक्षर महिलाओं की अभिवृत्ति ग्रामीण निरक्षर महिलाओं की तुलना मे अधिक अनुकूल है।
- परिवार नियोजन के प्रति अनारक्षित वर्ग के ग्रामीण नवसाक्षरो तथा ग्रामीण निरक्षरों की अभिवृत्ति के मध्य लगभग समानता है। इसका कारण इस वर्ग

तालिका 2

स्वास्थ्य सम्बन्धी परिकल्पनाओं की विश्लेषण सारणी

परिकल्पना संख्या (H No)	आधार (hyp Base)	ग्रामीणों की संख्या (Number)	माध्य अभिवृत्ति (Mean)	प्रमाप विचलन (S.D)	क्रान्तिक अनुपात (t.Value)
(ब)	ग्रामीण नवसाक्षर	700	47.41	5.88	5.016
	ग्रामीण निरक्षर	700	45.86	5.66	अस्वीकृत
1.	ग्रामीण नवसाक्षर पुरुष	382	49.36	4.58	7.404
	ग्रामीण निरक्षर पुरुष	304	46.28	6.00	अस्वीकृत
2.	ग्रामीण नवसाक्षर महिला	318	49.54	4.51	3.344
	ग्रामीण निरक्षर महिला	396	48.28	5.57	अस्वीकृत
3.	अनारक्षित वर्ग ग्रामीण नवसाक्षर	256	50.63	3.90	4.089
	अनारक्षित वर्ग ग्रामीण निरक्षर	171	48.85	4.71	अस्वीकृत
4.	आरक्षित वर्ग ग्रामीण नवसाक्षर	444	48.76	4.74	5.176
	आरक्षित वर्ग ग्रामीण निरक्षर	529	46 95	6.14	अस्वीकृत

सार्थकता स्तर 5% = 1.96

की अधिकांश रिश्तेदारिया या मित्रता साक्षरों से होना है। उनका यह दृष्टिकोण साक्षरता की अपेक्षा बाह्य तत्वों से अधिक प्रभावित है।

- ☐ परिवार नियोजन के प्रति आरक्षित वर्ग के नवसाक्षर ग्रामीणो की अभिवृत्ति वर्ग के निरक्षर ग्रामीणों की तुलना में अधिक सकारात्मक है।

निष्कर्ष

तालिका 2 के आधार पर—

(ब) नवसाक्षर ग्रामीणों की स्वास्थ्य के प्रति अभिवृत्ति सकारात्मक रूप से बढ़ी है। सम्पूर्ण साक्षरता अभियान ग्रामीणों की स्वास्थ्य के प्रति अभिवृत्ति पर अपने उद्देश्य के अनुरूप प्रभाव डालने मे सफल रहा है।

- ☐ स्वास्थ्य के प्रति ग्रामीण पुरुषों की अभिवृत्ति पर सम्पूर्ण साक्षरता अभियान ने महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है।
- ☐ सम्पूर्ण साक्षरता अभियान ने ग्रामीण महिलाओं की स्वास्थ्य के प्रति अभिवृत्ति पर सार्थक रूप से महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है।
- ☐ सम्पूर्ण साक्षरता अभियान ने अनारक्षित वर्ग के ग्रामीणों की स्वास्थ्य के प्रति अभिवृत्ति को निर्धारित लक्ष्य के अनुरूप प्रभावित किया है।
- ☐ सम्पूर्ण साक्षरता अभियान का आरक्षित वर्ग की स्वास्थ्य के प्रति अभिवृत्ति पर वांछित प्रभाव पड़ा है।

निष्कर्ष

(स) सम्पूर्ण साक्षरता अभियान ग्रामीणों की सामाजिक समस्याओं के प्रति दृष्टिकोण ने वांछित बदलाव लाने में सफल रहा है।

- ☐ सम्पूर्ण साक्षरता अभियान ने ग्रामीण पुरुषों की सामाजिक समस्याओं के प्रति अभिवृत्ति को एक वांछित सकारात्मक दिशा प्रदान की है।
- ☐ सम्पूर्ण साक्षरता अभियान ने ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक समस्याओं के प्रति अभिवृत्ति पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है।
- ☐ अभियान ने अनारक्षित वर्ग के ग्रामीणों की सामाजिक समस्याओं के प्रति दृष्टिकोण को सार्थक

तालिका 3

सामाजिक समस्याओं के प्रति अभिवृत्ति प्राप्तांकों की विश्लेषण सारणी

परिकल्पना संख्या (H.No.)	*आधार (hyp. Base)*	*ग्रामीणों की सख्या (Number)*	*माध्य अभिवृत्ति (Mean)*	*प्रमाप विचलन (S.D.)*	*क्रान्तिक अनुपात (t Value)*
(स)	ग्रामीण नवसाक्षर	700	117.74	12.79	19 24
	ग्रामीण निरक्षर	700	104.10	13.82	अस्वीकृत
1.	ग्रामीण नवसाक्षर पुरुष	382	117.30	12.82	12 60
	ग्रामीण निरक्षर पुरुष	304	102.89	16.28	अस्वीकृत
2.	ग्रामीण नवसाक्षर महिला	318	118.27	12.78	14.39
	ग्रामीण निरक्षर महिला	396	105.03	11.47	अस्वीकृत
3.	अनारक्षित वर्ग ग्रामीण नवसाक्षर	256	120.898	11.41	9 897
	अनारक्षित वर्ग ग्रामीण निरक्षर	171	109.15	12.41	अस्वीकृत
4.	आरक्षित वर्ग ग्रामीण नवसाक्षर	444	115.92	13.197	15.478
	आरक्षित वर्ग ग्रामीण निरक्षर	529	102.47	13 87	अस्वीकृत

सार्थकता स्तर 5% = 1.96

तालिका 4

मुख्य परिकल्पना से सम्बन्धित परिगणित मूल्य

प्रसरण स्रोत	*वर्ग योग*	*स्वतन्त्रांश*	*वर्ग माध्य*	*प्रसरण अनुपात*
अन्तर समूह विचरण	3984.50	1	3984.50	600.98 > 21.20
अन्तः समूह विचरण	26.50	4	6.63	(1% सार्थकता स्तर)

रूप से प्रभावित किया है।

- साक्षरता अभियान ने आरक्षित वर्ग के ग्रामीणों की सामाजिक समस्याओं के प्रति अभिवृत्ति को वांछित दिशा प्रदान की है।

मुख्य परिकल्पना की विस्तृत जांच हेतु 25 सहायक परिकल्पनाएं स्थापित की गई है। इनमें से केवल एक परिकल्पना को छोड़कर सभी अस्वीकृत हुई हैं। अतः मुख्य परिकल्पना स्वाभाविक रूप से अस्वीकृत होगी किन्तु गणितीय परीक्षण की दृष्टि से प्रसरण परीक्षण (F Ratio Test) का प्रयोग करके निष्कर्ष प्राप्त किया गया है। इस सम्बन्ध में परिगणित मूल्य तालिका 4 में दिया गया है।

निष्कर्ष

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि नवसाक्षर और निरक्षर समूहों के मध्य स्पष्ट सार्थक अन्तर है। अत. ग्रामीण पारिवारिक जीवन पर सम्पूर्ण साक्षरता अभियान का सार्थक प्रभाव पड़ा है। ◻◻

(1) प्राथमिक शिक्षा विभाग
पिहानी, हरदोई, उत्तर प्रदेश
(2) शोध छात्र, लखनऊ विश्वविद्यालय
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

पर्यावरण बोध पर आर्थिक स्तर का प्रभाव

❑ प्रेम छाबड़ा
❑ उषा भटनागर

एक विद्यालय में सभी प्रकार के आर्थिक स्तर से जुड़े बालक-बालिकाएं अध्ययन के लिए आते हैं। उनके परिवेश में परिवर्तन ला पाना, जिससे उनके पर्यावरण बोध में परिवर्तन आए, कठिन है। परन्तु विद्यालय परिसर द्वारा पर्यावरण की शुद्धता की प्रतिस्थापना, प्रदूषण रहित, स्वच्छ, संगठित, वातावरण प्रदान किया जाना चाहिए। इससे किसी भी आर्थिक स्तर के बालक-बालिकाओं को पर्यावरण के प्रति सजगता जागृत करने में सहायता मिलेगी, साथ ही पर्यावरण बोध की क्षमता भी बढ़ाई जा सकती है।

विद्यालय बालक के सर्वागीण विकास के केन्द्र बिन्दु होते है। विद्यालय के परिवेश का प्रभाव बालक के विकास को प्रभावित करता है। विद्यालय परिवेश की स्वच्छता, शुद्धता बालकों में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से अच्छी आदतों और पर्यावरण कैसा हो, इसका प्रशिक्षण देती है। विद्यालय में सभी प्रकार के आर्थिक स्तर के बालक अध्ययन करते हैं। उन सभी का रहन-सहन भिन्न होता है। सामान्य तौर पर यह माना जाता है कि उच्च आर्थिक स्तर के बालको में पर्यावरण बोध निम्न आर्थिक स्तर के बालको के पर्यावरण बोध से अधिक स्पष्ट होता है तथा उनके घर एवं आसपास का परिवेश भी अधिक स्वच्छ होता है। वे पर्यावरण के प्रति सजग होते है। ऐसे कई तथ्य है जो इस बात की ओर संकेत करते हैं कि उच्च आर्थिक स्तर के बालकों का पर्यावरण बोध अधिक होता है, परन्तु इसके विपरीत देखने में यह भी आता है कि निम्न आर्थिक स्तर के बालकों के क्रियाकलाप, व्यवहार उच्च आर्थिक स्तर के बालकों से अधिक अच्छा प्रदर्शित करते है।

इस प्रकार के तथ्य यह जिज्ञासा उत्पन्न करते हैं कि क्या उच्च एवं निम्न आर्थिक स्तर के विद्यार्थियो का पर्यावरण बोध भिन्न होता है? क्या आर्थिक स्तर पर्यावरण बोध को प्रभावित करता है? इसके समाधान के लिए प्रस्तुत शोध कार्य किया गया जिसकी समस्या निम्नानुसार है–

समस्या

प्राथमिक स्तर के उच्च एवं निम्न आर्थिक स्तर के बालकों मे पर्यावरण बोध का तुलनात्मक अध्ययन करना।

उद्देश्य

- ❑ उच्च एवं निम्न आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरण बोध के आधार पर परस्पर तुलना करना।
- ❑ उच्च आर्थिक स्तर के बालकों एवं निम्न आर्थिक स्तर के बालकों की पर्यावरण बोध के आधार पर परस्पर तुलना करना।
- ❑ उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं एवं निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओं की पर्यावरण बोध के आधार पर परस्पर तुलना करना।
- ❑ उच्च आर्थिक स्तर के बालकों एवं निम्न आर्थिक

स्तर की बालिकाओं की पर्यावरण बोध के आधार पर परस्पर तुलना करना।

- निम्न आर्थिक स्तर के बालकों एवं उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं की पर्यावरण बोध के आधार पर परस्पर तुलना करना।

परिकल्पना

- उच्च एवं निम्न आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों के पर्यावरण बोध मे कोई अन्तर नहीं होगा।
- उच्च आर्थिक स्तर के बालकों एव निम्न आर्थिक स्तर के बालकों के पर्यावरण बोध में कोई अंतर नहीं होगा।
- उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं एवं निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओं के पर्यावरण बोध में कोई अंतर नहीं होगा।
- उच्च आर्थिक स्तर के बालकों एवं निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओं के पर्यावरण बोध में कोई अंतर नहीं होगा।
- निम्न आर्थिक स्तर के बालकों एवं उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं के पर्यावरण बोध मे कोई अंतर नही होगा।

न्यादर्श

प्रस्तुत शोध अध्ययन में यादृच्छिकृत विधि द्वारा उज्जैन नगर के दो विद्यालयों के कक्षा चार के 9+ आयु समूह के विद्यार्थियो का चयन किया गया। न्यादर्श मे 85 विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया जो कि सारणी 1 में प्रस्तुत है–

उपकरण–प्रस्तुत अध्ययन हेतु यादृच्छिकृत विधि द्वारा चयनित कक्षा चार के 9+ आयु समूह के बालको के पर्यावरण बोध परीक्षण के प्रशासन के पूर्व बालकों के आर्थिक स्तर से सबंधित जानकारी एकत्र की गई।

सांख्यिकीय विश्लेषण– प्रस्तुत शोध का उद्देश्य उच्च एव निम्न आर्थिक स्तर के विद्यार्थियो के पर्यावरण बोध की जांच करना था। अतः न्यादर्श पर प्रशासित पर्यावरण बोध परीक्षण के प्राप्तांकों का साख्यिकीय विश्लेषण मध्यमान, प्रामाणिक विचलन एवं टी परीक्षण द्वारा किया गया।

उद्देश्यों एवं परिकल्पनाओ पर आधारित विश्लेषण निम्नानुसार है–

सारणी 2 से विदित होता है कि 'टी' परीक्षण का मान 4.28 है जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है जबकि स्वतंत्र अंश 83 है। इसका अर्थ है कि उच्च आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों के पर्यावरण बोध के मध्यमान एवं निम्न आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों के पर्यावरण बोध के मध्यमान में सार्थक अंतर है। इस आधार पर परिकल्पना 1 उच्च एवं निम्न आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों के पर्यावरण बोध में कोई अतर नहीं होगा, निरस्त की जाती है अर्थात् उच्च एवं निम्न आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों के पर्यावरण बोध में अतर है।

सारणी से स्पष्ट है कि उच्च आर्थिक स्तर के विद्यार्थियो का पर्यावरण बोध मध्यमान 64.63 है तथा निम्न आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों का पर्यावरण बोध मध्यमान 51.72 है। दोनों आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों की तुलना करने से ज्ञात होता है कि उच्च आर्थिक स्तर के विद्यार्थियो का पर्यावरण बोध मध्यमान सार्थक

सारिणी 1

परीक्षण के प्रशासन के लिए न्यादर्श

क्रमांक	*विद्यालय का नाम*	*बालक*	*बालिकाएं*	*कुल*
1.	चाइल्ड हाउस	41	9	50
2.	पुष्कर प्राथमिक विद्यालय	19	16	35

सारणी 2
उच्च एवं निम्न आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों के संदर्भ में पर्यावरण बोध के मध्यमान, प्रामाणिक विचलन व टी-मान

परिवर्त्य	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	टी-मान
उच्च आर्थिक स्तर के विद्यार्थी	64 63	14 88	4.28
निम्न आर्थिक स्तर के विद्यार्थी	51.72	11.62	

0.01 स्तर पर सार्थक स्वतंत्र अंश 83

सारणी 3
उच्च एवं निम्न आर्थिक स्तर के बालकों के संदर्भ में पर्यावरण बोध के मध्यमान, प्रामाणिक विचलन व टी-मान

परिवर्त्य	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	टी-मान
उच्च आर्थिक स्तर के बालक	64.89	16 29	3.35
निम्न आर्थिक स्तर के बालक	48 25	9.75	

0.01 स्तर पर सार्थक स्वतंत्र अंश 33

उच्च है, इसका अर्थ है कि उच्च आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों में पर्यावरण बोध अधिक है।

इससे ज्ञात होता है कि 'टी' परीक्षण का मान 3 35 है जो कि 0 01 स्तर पर सार्थक है जबकि स्वतत्र अश 33 है। इसका अर्थ है कि उच्च आर्थिक स्तर के बालकों के पर्यावरण बोध मध्यमान एवं निम्न आर्थिक स्तर के बालकों के पर्यावरण बोध मध्यमान में सार्थक अंतर है। इस आधार पर परिकल्पना 2 उच्च एवं निम्न आर्थिक स्तर के बालकों के पर्यावरण बोध मध्यमान में कोई अतर नही होगा, निरस्त की जाती है अर्थात् उच्च एवं निम्न आर्थिक स्तर के बालको के पर्यावरण बोध मे अंतर है।

इससे स्पष्ट है कि उच्च आर्थिक स्तर के बालकों का पर्यावरण बोध मध्यमान 64.89 है तथा निम्न आर्थिक स्तर के बालको का पर्यावरण बोध मध्यमान 48.25 है। दोनों आर्थिक स्तर के बालकों की तुलना करने पर ज्ञात होता है कि उच्च आर्थिक स्तर के बालको का पर्यावरण बोध मध्यमान सार्थक उच्च है। इसका अर्थ है कि उच्च आर्थिक स्तर के बालकों का पर्यावरण बोध अधिक है।

सारणी 4 से विदित होता है कि 'टी' परीक्षण का मान 1 43 है जो कि सामान्य रूप से सार्थक नहीं है जबकि स्वतंत्र अश 48 है। मध्यमानों के आधार पर उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं एव निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओं के पर्यावरण बोध मे अंतर है, परन्तु टी-मान सार्थक नहीं है। इस आधार पर परिकल्पना उच्च एवं निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओ के पर्यावरण बोध मे कोई अंतर नहीं होगा, स्वीकृत की जाती है।

सारणी 4 से स्पष्ट होता है कि उच्च आर्थिक स्तर

सारणी 4

उच्च एव निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओं के संदर्भ में पर्यावरण बोध के मध्यमान, प्रामाणिक विचलन व टी-मान

परिवर्त्य	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	टी-मान
उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाए	64 51	14.18	1.43
निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाएं	57.88	12.12	

सार्थक नहीं स्वतंत्र अंश 48

सारिणी 5

उच्च आर्थिक स्तर के बालकों एवं निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओं के संदर्भ में पर्यावरण बोध के मध्यमान, प्रामाणिक विचलन एवं टी-मान

परिवर्त्य	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	टी-मान
उच्च आर्थिक स्तर के बालक	64.89	16.29	3.62
निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाए	57.88	12.12	

0.01 स्तर पर सार्थक स्वतंत्र अंश 26

की बालिकाओं का पर्यावरण बोध मध्यमान 64.51 है तथा निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओ का पर्यावरण बोध मध्यमान 57.88 है। दोनों की तुलना करने पर ज्ञात होता है कि उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं का पर्यावरण बोध मध्यमान उच्च है, परन्तु जब हम टी-मान की दृष्टि से सार्थकता देखते हैं तो दोनों आर्थिक स्तर की बालिकाओं के प्राप्तांकों में अंतर नहीं है। अतः निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओ मे पर्यावरण बोध अधिक है।

सारणी 5 से स्पष्ट होता है कि टी-परीक्षण का मान 3.62 है जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है जबकि स्वतंत्र अंश 26 है। इसका अर्थ है कि उच्च आर्थिक स्तर के बालकों के पर्यावरण बोध मध्यमान एवं निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओं के पर्यावरण बोध मध्यमान में सार्थक अंतर है। इस आधार पर परिकल्पना 4 उच्च आर्थिक स्तर के बालको एवं निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओ के पर्यावरण बोध में कोई अंतर नही होगा, निरस्त की जाती है अर्थात् उच्च आर्थिक स्तर के बालकों एवं निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओं के पर्यावरण बोध मे सार्थक अंतर है।

सारणी 5 से ज्ञात होता है कि उच्च आर्थिक स्तर के बालकों का पर्यावरण बोध मध्यमान 64.89 है तथा निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओं का पर्यावरण बोध मध्यमान 57.88 है। उच्च आर्थिक स्तर के बालकों एवं निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओ के पर्यावरण बोध की तुलना करने से ज्ञात होता है कि उच्च आर्थिक स्तर के बालकों का पर्यावरण बोध मध्यमान सार्थक उच्च है। इसका अर्थ है कि उच्च आर्थिक स्तर के बालको में पर्यावरण बोध अधिक है।

सारणी 6 से विदित होता है कि टी परीक्षण का

सारणी 6
निम्न आर्थिक स्तर के बालकों एवं उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं के संदर्भ में पर्यावरण बोध के मध्यमान, प्रामाणिक विचलन व टी-मान

परिवर्त्य	*मध्यमान*	*प्रामाणिक विचलन*	*टी-मान*
निम्न आर्थिक स्तर के बालक	48.25	9.75	4.93
उच्च आर्थिक स्तर के बालिकाएं	64.51	14 18	

0 01 स्तर पर सार्थक स्वतत्र अंश 55

मान 4.93 है जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है जबकि स्वतंत्र अश 55 है। इसका अर्थ है कि निम्न आर्थिक स्तर के बालकों एव उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं के पर्यावरण बोध मध्यमान मे सार्थक अंतर है। इस आधार पर परिकल्पना 5 निम्न आर्थिक स्तर के बालको एवं उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं के पर्यावरण बोध में कोई अतर नहीं होगा, निरस्त की जाती है अर्थात् निम्न आर्थिक स्तर के बालको एवं उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं के पर्यावरण बोध में अंतर है।

सारणी 6 से यह भी ज्ञात होता है कि निम्न आर्थिक स्तर के बालको का पर्यावरण बोध मध्यमान 48.25 है तथा उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं का पर्यावरण बोध मध्यमान 64 51 है। दोनों की तुलना करने से ज्ञात होता है कि उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं का पर्यावरण बोध मध्यमान उच्च है। इसका अर्थ है कि उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं में पर्यावरण बोध तुलनात्मक रूप से अधिक है।

निष्कर्ष

- उच्च एवं निम्न आर्थिक स्तर के विद्यार्थियो के पर्यावरण बोध परीक्षण के प्राप्ताकों में तुलनात्मक रूप से अंतर है अर्थात् उच्च आर्थिक स्तर के विद्यार्थियो के पर्यावरण बोध परीक्षण प्राप्ताक अधिक हैं जो यह प्रदर्शित करते हैं कि उच्च आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों में पर्यावरण बोध अधिक है। अतः परिकल्पना 1 निरस्त की जाती है।
- उच्च आर्थिक स्तर एवं निम्न आर्थिक स्तर के बालकों के पर्यावरण बोध परीक्षण प्राप्तांकों में तुलना करने से ज्ञात होता है कि उच्च आर्थिक स्तर के बालकों में पर्यावरण बोध अधिक है। अतः परिकल्पना 2 भी निरस्त की जाती है।
- उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं एवं निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओं के प्राप्ताक यह प्रदर्शित करते हैं कि उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओ एवं निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओं के पर्यावरण बोध में कोई अंतर नहीं है। अतः परिकल्पना 3 स्वीकृत की जाती है।
- उच्च आर्थिक स्तर के बालकों एवं निम्न आर्थिक स्तर की बालिकाओं के परीक्षण के प्राप्तांकों की तुलना करने से ज्ञात होता है कि उच्च आर्थिक स्तर के बालकों में पर्यावरण बोध अधिक है। अतः परिकल्पना 4 निरस्त की जाती है।
- निम्न आर्थिक स्तर के बालकों एवं उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं के पर्यावरण बोध परीक्षण के प्राप्ताकों की तुलना करने से ज्ञात होता है कि उच्च आर्थिक स्तर की बालिकाओं में पर्यावरण बोध अधिक है। अतः परिकल्पना 5 भी निरस्त की जाती है।

उपरोक्त निष्कर्ष यह सकेत दे रहे हैं कि बालिकाएं निम्न आर्थिक स्तर की हों या उच्च आर्थिक स्तर की,

दोनो के पर्यावरण बोध का स्तर समान है। सम्पूर्ण प्रादर्श में निम्न और उच्च आर्थिक स्तर सारणी का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि दोनो में अतर है। उच्च आर्थिक स्तर के सम्पूर्ण प्रादर्श मे पर्यावरण बोध अधिक है और निम्न आर्थिक स्तर के प्रादर्श में पर्यावरण बोध तुलनात्मक रूप से कम है। इस प्रकार के निष्कर्ष इस ओर सकेत करते है कि इस अंतर के पीछे मुख्य कारण आर्थिक स्तर से प्रभावित परिवार तथा आसपास का परिवेश उत्तरदायी है। एक विद्यालय में सभी प्रकार के आर्थिक स्तर से जुड़े बालक-बालिकाए अध्ययन के लिए आते हैं। उनके परिवेश में परिवर्तन ला पाना, जिससे उनके पर्यावरण बोध मे परिवर्तन आए, कठिन है। परन्तु विद्यालय परिसर द्वारा पर्यावरण की शुद्धता की प्रतिस्थापना, प्रदूषण रहित, स्वच्छ, संगठित, वातावरण प्रदान किया जाना चाहिए। इससे किसी भी आर्थिक स्तर के बालक-बालिकाओं को पर्यावरण के प्रति सजगता जागृत करने में सहायता मिलेगी, साथ ही पर्यावरण बोध की क्षमता भी बढाई जा सकती है। ❑❑

लोकमान्य तिलक शिक्षा महाविद्यालय
उज्जैन, मध्य प्रदेश

तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा – वर्तमान युग की मूलभूत आवश्यकता

❑ राजीव कुमार
❑ नरेन्द्र कुमार

आज के इस युग में विद्यालयों में दी जाने वाली सैद्धान्तिक शिक्षा कितनी उपयोगी सिद्ध हुई है। जो ज्ञान हमारे जीवन का एक अंग नहीं बन सकता वह निश्चय ही निरर्थक है। यह एक प्रमाणिक तथ्य है कि विद्यालयों में दी जाने वाली सैद्धान्तिक शिक्षा के आधार पर हम स्वयं को साक्षर तो बना सकते हैं परन्तु इस प्रकार की शिक्षा रोजगार दिलाने में सफल नहीं हुई है। आज यदि एक साधारण डिग्रीधारक युवा एवं एक व्यावसायिक डिग्रीधारक युवा किसी पद के लिए आवेदन करते हैं तो निश्चय ही व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त युवक को ही प्राथमिकता दी जाएगी।

"विज्ञान एवं तकनीकी पर आधारित इस विश्व में जनता की सुरक्षा, समृद्धि, वैभवता व्यावसायिक शिक्षा पर निर्भर करती है। वर्तमान समाज का आधार विज्ञान आधारित तकनीकी है। इसका प्रभाव मानव के सामाजिक व सांस्कृतिक जीवन पर अवश्य पड़ता है। इसलिए आज भारत में शिक्षा कुछ चुने हुए व्यक्तियों के लिए न होकर सबके लिए है, जबकि शिक्षा का प्रत्यक्ष सम्बन्ध उत्पादन से है अर्थात् मानव की उत्पादन क्षमता में शिक्षा द्वारा वृद्धि होती है। अतः देश की औद्योगिक आवश्यकता को दृष्टिगत रखते हुए तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा के विस्तार की अत्यधिक आवश्कयता है।"

तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा का अर्थ

तकनीकी व व्यवसाय दो ऐसे शब्द हैं जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हम सभी के साथ जुड़े हैं। व्यवसाय से आशय वाणिज्य व उद्योग के सम्पूर्ण जटिल क्षेत्र, आधारभूत उद्योगों, प्राविधिक व निर्माणी उद्योग तथा सहायक सेवाओ के वृहत् जाल– वितरण, बैकिंग आदि से है। तकनीकी शिक्षा व्यावसायिक शिक्षा का अग है। किसी भी समाज की अर्थव्यवस्था उसके व्यावसायिक विकास पर निर्भर करती है। व्यावसायिक शिक्षा व्यक्ति को किसी कार्य या व्यवसाय से सम्बन्धित तकनीकी प्रशिक्षण प्रदान करती है ताकि वह उस व्यवसाय के द्वारा अपनी जीविका का उपार्जन कर सके।

तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा के उद्देश्य

यूनेस्को के 12वें अधिवेशन मे तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा के अधोलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए–

- ❑ तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा के समस्त कार्यक्रमों मे सामान्य, वैज्ञानिक एवं विशिष्ट विषयों में समुचित सन्तुलन होना चाहिए।
- ❑ इस शिक्षा के समस्त कार्यक्रम तेज गति से विकसित होने वाले शिल्प-विज्ञान की प्रकृति के अनुरूप होने चाहिए।
- ❑ इस शिक्षा के कुछ कार्यक्रम ऐसे भी होने चाहिए जो शारीरिक या मानसिक दृष्टि से दोषपूर्ण व्यक्तियों के लिए उपयुक्त हों ताकि वे समाज तथा उनके व्यवसायों में समायोजित हो जाएं।
- ❑ इस शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर शारीरिक कार्य के महत्व की भावना होनी चाहिए तथा उत्पादन की विधियों

में इस महत्व को स्वीकार किया जाना चाहिए।

- इस शिक्षा का लक्ष्य केवल आधारभूत कौशल का विकास करना ही नहीं होना चाहिए वरन् आधारभूत वैज्ञानिक ज्ञान प्रदान करना भी होना चाहिए।
- इस शिक्षा का संगठन इस प्रकार किया जाना चाहिए कि व्यक्ति अपनी शिक्षा को उस समय तक जारी रख सके जब तक उसकी कुशलताओं का पूर्णतः विकास सम्भव न हो जाए।

तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व

आज के इस युग में विद्यालयों में दी जाने वाली सैद्धान्तिक शिक्षा कितनी उपयोगी सिद्ध हुई है। जो ज्ञान हमारे जीवन का एक अंग नहीं बन सकता वह निश्चय ही निरर्थक है। यह एक प्रमाणिक तथ्य है कि विद्यालयों में दी जाने वाली सैद्धान्तिक शिक्षा के आधार पर हम स्वयं को साक्षर तो बना सकते है परन्तु इस प्रकार की शिक्षा रोजगार दिलाने में सफल नहीं हुई है। आज यदि एक साधारण डिग्रीधारक युवा एवं एक व्यावसायिक डिग्रीधारक युवा किसी पद के लिए आवेदन करते है तो निश्चय ही व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त युवक को ही प्राथमिकता दी जाएगी।

भारतीय शिक्षाविद् प्रो. हुमायू कबीर ने अपने एक लेख में संसार के कुछ प्रमुख देशों के उदाहरण देकर तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा के महत्व एवं आवश्यकता को प्रमाणित किया है। उनका मत है कि किसी देश की उन्नति का आधार विज्ञान एवं तकनीकी विषयों की शिक्षा है। यदि किसी देश में इस शिक्षा की सफल एवं समुचित व्यवस्था है और यदि यह शिक्षा प्रगति की ओर अग्रसर हो रही है, तो उस देश की प्रगति अवश्य होती है।

अमेरिका, सोवियत रूस, जर्मनी और जापान इसके उदाहरण हैं। आज से लगभग सौ वर्ष पूर्व संयुक्त राज्य अमेरिका एक पिछड़ा हुआ और अविकसित देश था। परन्तु तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा का उत्कृष्ट आयोजन करने के कारण आज वह संसार का सबसे धनी देश है और अनेक देश उसके ऋण भार से दबे हुए हैं। सन् 1918 में जब रूस में गणतन्त्र को प्रतिष्ठित किया गया तब उसका स्थान संसार के निर्बल एवं अप्रगतिशील देशों में था। किन्तु तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा का सुन्दर नियोजन करने के कारण आज उसका स्थान संसार के सबल एव सुदृढ़ देशो में है। द्वितीय विश्वयुद्ध ने जर्मनी और जापान की अर्थव्यवस्था को तहस-नहस कर दिया परन्तु उन्होंने तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा के आधार पर अपनी पूर्व स्थिति को बहुत कुछ पुनः प्राप्त कर लिया है।

तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा पर बल दिए जाने का कारण यह है कि आज का युग विज्ञान का युग है। विज्ञान के आविष्कारों ने संसार के स्वरूप में और मानव जीवन की दशाओं में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिए हैं। व्यक्तियों में यह धारणा अत्यन्त बलवती हो गई है कि विज्ञान उनके जीवन को सुखमय बना सकता है। इसके फलस्वरूप तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा की मांग मे निरन्तर वृद्धि हो रही है। अतः इस शिक्षा की व्यवस्था न केवल पृथक शिक्षा सस्थाओं में की जा रही है बल्कि स्कूलों और कालेजों के पाठ्यक्रमो में भी तकनीकी एवं व्यावसायिक विषयों को स्थान प्रदान किया जा रहा है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि देश की समृद्धि के लिए सबसे अधिक आवश्यकता इस बात की है कि उसकी जनशक्ति वैज्ञानिक, तकनीकी एवं व्यावसायिक ज्ञान में दक्ष हो।

तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा का ऐतिहासिक विकास

भारतवर्ष तकनीकी तथा व्यावसायिक क्षेत्र में सर्वदा अग्रणी रहा है, परन्तु दुर्भाग्य की बात यह है कि समय के साथ-साथ भारत इस क्षेत्र में पीछे रह गया है। भारत में ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत सर्वप्रथम तकनीकी व औद्योगिक शिक्षा पर बल दिया गया। अतः उन्होने 1847 में रुड़की में इंजीनियरिंग कॉलेज की स्थापना की। बाद में 1857-58 मे मद्रास तथा कलकत्ता में दो इंजीनियरिंग कॉलेज की स्थापना की गई। 1854 के वुड घोषणा-पत्र तक तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा पर बल देने का सुझाव प्रस्तुत किया गया। सन् 1902 के पश्चात् इस क्षेत्र में विशेष प्रगति की गई। सन् 1904 में 'वैज्ञानिक तथा व्यावसायिक शिक्षा विकास संघ' की स्थापना की गई।

सन् 1918 तथा 1929 के बीच विभिन्न स्थलों पर तकनीकी संस्थानों व विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई। इसके पश्चात् 1937 में एबट तथा वुड रिपोर्ट ने औद्योगिक व तकनीकी के सम्बन्ध में सुझाव प्रदान किए। जिसके आधार पर विभिन्न स्थानों पर पॉलीटैक्नीक स्कूलो की स्थापना की गई। 1945 में अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् की स्थापना की गई। 1947 में एक वैज्ञानिक मानव-शक्ति समिति का गठन किया गया और देश के विभिन्न स्थानों पर भारतीय तकनीकी सस्थानों की स्थापना की गई।

स्वतन्त्र भारत में तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा

हमारे देश में स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय से ही हमारे राष्ट्रीय नेता भारत का औद्योगिक विकास करने के लिए कटिबद्ध हैं। यह तभी सम्भव है, जब देश के प्रत्येक उद्योग को अपनी आवश्यकता के अनुसार प्रशिक्षित व्यक्ति उपलब्ध हो सकें। इस विषय में स्वतन्त्र भारत में नियुक्त किए जाने वाले शिक्षा आयोगों ने अत्यन्त महत्वपूर्ण सुझाव दिए हैं।

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948-1949) मे तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1951) ने एक मुख्य उद्देश्य छात्रों में व्यावसायिक कुशलताओं की उन्नति करना बताया।

शिक्षा आयोग (1964-1966) ने देश के औद्योगीकरण को सफल बनाने के लिए तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा की उत्कृष्ट व्यवस्था को आवश्यक बताया।

इन्हीं प्रेरणाओं के परिणामस्वरूप पचवर्षीय योजनाओं में तकनीकी एव व्यावसायिक शिक्षा की सुविधाओं की पर्याप्तता को प्राथमिकता दी गई है। इसी कारण वर्तमान में उद्योग-धन्धे केवल निजी क्षेत्र में ही नहीं बल्कि जनकल्याण की दृष्टि से सार्वजनिक क्षेत्रों मे भी स्थापित किए गए हैं।

तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा को प्रशिक्षण के आधार पर निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जाता है। इंजीनियरिंग, कानून, चिकित्सा, पशु चिकित्सा, कृषि, वाणिज्य, शिक्षण आदि।

इन क्षेत्रो में शिक्षा के प्रावधान के लिए हमारे देश में पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से इनके उचित विकास से सम्बन्धित निरंतर प्रयत्न किए जा रहे है। भारत में व्यावसायिक शिक्षा के लिए संस्थाओं के रूप मे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, क्षेत्रीय इंजीनियरिंग कालेज, विश्वविद्यालय, राजकीय इजीनियरिंग कालेज, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा, प्रबन्ध शिक्षा संस्थान, पॉलिटेक्नीक कालेज, मेडिकल कालेज, कृषि विश्वविद्यालय आदि संस्थाएं है जिनमें विभिन्न स्तर पर व्यावसायिक प्रशिक्षण उपलब्ध हैं।

समालोचना एवं निष्कर्ष

यह तो स्पष्ट है कि व्यावसायिक शिक्षा यथार्थ जगत मे व्यक्ति को नए सोपान उपलब्ध कराती है क्योंकि किसी भी व्यवसाय में एक व्यक्ति विभिन्न पक्षो पर खड़ा रहता है। उसका सम्बन्ध कर्मचारी वर्ग से, ऑफीसरों से, श्रमिक वर्ग आदि से होता है, जिससे उसे तालमेल करना होता है, यह कार्य उसे तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा सिखाती है। यह व्यक्ति को इस योग्य बनाती है कि वह स्वयं एक परिवार का जीवन-यापन अच्छी प्रकार से कर सके।

आज के वैज्ञानिक युग में आधुनिक आविष्कारों का लाभ उठाने के लिए व्यावसायिक शिक्षा अनिवार्य है। भारत मे तकनीकी शिक्षा, जिसमें प्रबन्ध शिक्षा भी शामिल है मानव संसाधन विकास के बहुत ही महत्वपूर्ण घटकों में से एक है जिसमें उत्पादों और सेवाओं का महत्व बढ़ाने तथा लोगों के जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार करने की भारी क्षमता है।

अतः हम कह सकते हैं कि आज के प्रगतिशील युग में व्यापार, वाणिज्य, चिकित्सा, कृषि, कानून व उद्योग की समृद्धि व वैज्ञानिक प्रगति हेतु तकनीकी व्यावसायिक शिक्षा का उचित विकास किया जाए ताकि हमारा युवा वर्ग देश के विकास में सकारात्मक योगदान प्रदान कर सके तथा हमारा भारत आज के वैज्ञानिक युग में विकसित देशों के साथ खड़ा हो सके। ☐☐

शिक्षा विभाग
चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ
उत्तर प्रदेश

भारतीय आधुनिक शिक्षा

र्ष : 22 अक 1 जुलाई 2003

इस अंक में

पर्यावरण संरक्षण में मानवीय मूल्यों का योगदान

❑ रमा मैखुरी

पर्यावरण, आज के वैज्ञानिक युग में एक सामान्य-सा कहा जाने वाला शब्द है जिसे हर कोई वक्त-बेवक्त अपने-अपने ढंग से परिभाषित कर रहा है व साथ ही साथ पर्यावरण संरक्षण हेतु सुझाव व पर्यावरणीय असंतुलन हेतु दुश्चिन्ताओं पर दृष्टिपात कर रहा है। यदि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो क्या पर्यावरण ऐसा शब्द है जो आज के युग में विकृत रूप धारण कर स्वयं दृष्टिगोचर हो रहा है, या सही मायनों में देखा जाए तो कहीं ऐसा तो नहीं कि पर्यावरण व सभी जायज दुश्चिन्ताओं के प्रति आधुनिक मानव स्वयं ही जिम्मेदार हो। यदि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो पर्यावरण संरक्षण में मानव मूल्यों का जो योगदान रहा है, उनमें कमी आई है और परिणामतः पर्यावरण वीभत्स रूप में आज सबके सम्मुख खड़ा है।

पारिस्थितिकविदो के अनुसार पर्यावरण "सम्पूर्ण बाह्य परिस्थितियों और उनका जीवधारियों पर पड़ने वाला प्रभाव है", जो जैविक जगत के जीवन चक्र का नियामक है। पर्यावरण को मुख्यतः दो भागो मे विभाजित किया जा सकता है— प्राकृतिक पर्यावरण एव सामाजिक पर्यावरण। प्राकृतिक पर्यावरण में प्राकृतिक परिदृश्य, नदी, पहाड़, भूमि, जलवायु इत्यादि सभी आते है। सामाजिक पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ है समाज का वातावरण एव प्रभाव जो समाज को उत्कृष्ट दिशा देते हैं। वस्तुतः यदि समन्वित दृष्टिकोण से देखा जाए तो पर्यावरण के उपरोक्त दोनो घटक एक ही है, किन्तु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्राकृतिक पर्यावरण का धीरे-धीरे ह्रास होता जा रहा है। कारण मानव के जो कर्तव्य/मूल्य पर्यावरण संरक्षण की दिशा में थे या होने चाहिए थे उनमे स्वाभाविक रूप से कमी आती जा रही है। विश्व पर्यावरण आयोग 1987 के अनुसार प्रतिवर्ष विश्व में 110 लाख हेक्टेयर वन नष्ट हुए जा रहे हैं व 60 लाख हेक्टेयर उपजाऊनुमा भूमि अनुपयोगी होती जा रही है।

जनसख्या बढने, प्राकृतिक संसाधनो की आवश्यकता बढने तथा पूर्ति उस अनुपात मे न होने से वन सम्पदा का क्रमागत ह्रास हो रहा है और इसका दुष्प्रभाव प्रकृति व अन्य बहुमूल्य ससाधनो जैसे जल, मिट्टी इत्यादि पर भी पड रहा है। हिमालय क्षेत्र की महत्वपूर्ण जड़ी-बूटियों का गलत तरीके से दोहन कर उनका विनाश किया जा रहा है। वही दूसरी ओर बहुमूल्य परम्परागत फसलों की सकल बुआई क्षेत्र में दिन-प्रतिदिन कमी आ रही है। सम्पूर्ण भारतवर्ष में केवल धान की ही 30,000 उपज प्रजातियां थी किन्तु आज 200-250 ही उपज प्रजातिया उगाई जा रही हैं। फलस्वरूप कृषि तत्र पर गहराता संकट पैदा होना शुरू हो गया है। किन्तु आज इन पुरातन मानवीय विचार मूल्यों की आधुनिक मानव ने अवहेलना कर स्वय को संकट में फसाता जा रहा है। यदि हम 3-4 दशक पूर्व देखे तो उस समय मानव प्राकृतिक संसाधनो का उचित ढग से दोहन करता था व अपना अमूल्य योगदान भूमि व अपने इर्द-गिर्द के पर्यावरण प्रबन्धन को भी देता था। परन्तु आधुनिक

समय मे मानव समाज की सोच प्राकृतिक संसाधनो को सुरक्षित एव सरक्षित रखने की दिशा मे काफी हद तक सिमट गई है।

आज मानव समाज की बौद्धिक, चिन्तन, व्यावहारिक एव मौलिक सोच स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पूर्णतया बदल चुकी है। आचार सहिता, समान न्याय/समान लाभ आदि सोचने की क्षमता समाप्त हो चुकी है। परिणामस्वरूप वर्तमान मे पूरे पर्यावरण के घटक जल, जमीन, जगल, हवा इत्यादि को काफी नुकसान हुआ है। अत आज मानव समाज को अपने अधिकार व कर्तव्यों को सही दिशा मे सोचने के लिए अत्यधिक प्रयास करने होगे कि किस प्रकार से मानव अपने कर्तव्यों का निर्वाह कर पर्यावरण सरक्षण मे अहम भूमिका निभा सकता है। इस दिशा मे पर्यावरण शिक्षा की अहम भूमिका होगी।

पर्यावरण दो शब्दो से मिलकर बना है, परि+ आवरण। परि का शाब्दिक अर्थ है अच्छी तरह और आवरण का अर्थ है आच्छादन अर्थात् अपने चारों ओर का आवरण जो जीवन को सकारात्मक व नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है।

पर्यावरण इसोपनिषद मे उल्लेख है कि "ईषावष्यमिद सर्व यात्किंच जगत्या जगत्" अर्थात् ईश्वर की सृष्टि मे जो कुछ भी है वह पर्यावरण है।

पारिस्थितिकविद् "हर्सकोविट्स" के अनुसार पर्यावरण "सम्पूर्ण बाह्य परिस्थितियों और उनका जीवधारियों पर पड़ने वाला प्रभाव है", जो जैविक जगत के जीवन चक्र का नियामक है। पर्यावरण को मुख्यतः दो भागो मे विभाजित किया जा सकता है— ● प्राकृतिक पर्यावरण एवं ● सामाजिक पर्यावरण।

सामाजिक पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ है समाज का वातावरण एव प्रभाव जो समाज को उत्कृष्ट दिशा देते है और प्राकृतिक पर्यावरण मे प्राकृतिक परिदृश्य, नदी, पहाड़, भूमि, जलवायु इत्यादि सभी आते है।

वृक्ष (वन के अवयव को) कठोपनिषद् में निम्नलिखित रूप से परिभाषित किया गया है।

ऊं शनिदेवो अभिष्टो आपो भवन्तु न पिवते, मूले ब्रह्मा त्वचा विष्णु, शाखायाम् तु शकरम्, पत्रे-पत्रे देवानाम् वृक्ष राज नमस्तुते।

वन एव वृक्ष को देवता मानकर हमारी सांस्कृतिक मान्यता पर्यावरण सरक्षण का वैज्ञानिक आधार देती है। आज अधिकाश पवित्र वृक्ष, पवित्र वन इसी कारण मानव हित हेतु जगह-जगह संरक्षित हैं, व स्वतः ही वर्तमान मे उनके प्रति आज तक मानव का भी ममत्व भाव है। साथ ही साथ विश्व पर्यावरण आयोग (1987) यह भी स्पष्ट करता है कि 60 लाख हेक्टेयर उपजाऊ युक्त भूमि अनुपयोगी होती जा रही है जबकि आज तक मानव ने अपना अमूल्य योगदान भूमि के प्रबंधन हेतु भी दिया है, जिसे उपेक्षित किया जा रहा है यथा— उचित भूमि प्रबन्धन, फसल चक्र, ऋतु चक्र इत्यादि।

प्रकृति में जहा-जहां भी जैव विविधता का भण्डार है और साथ ही वह क्षेत्र संवेदनशील भी है वहा भी सरल प्रयासों से पारिस्थितिक तन्त्र को सरक्षित किया जा रहा है। उदाहरण पर्वत पूजा, पर्वतो के ससाधनों का उपयोग एक निश्चित समय सीमा के अन्दर ही इत्यादि।

मानवीय सोच एवं पर्यावरण संरक्षण

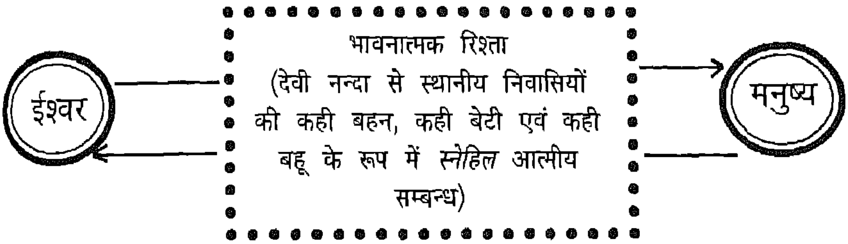
देव वन—संसार भर में विद्यमान किसी भी वन भूमि/सामुदायिक भूमि को देव वन घोषित करने के पीछे हमारे पूर्वजों की जो सोच थी वह मनुष्य के मन में प्रकृति के प्रति प्यार, त्याग एव निष्ठा की भावना पैदा कर सामाजिक नियम, कानूनों एव परम्परागत विश्वास द्वारा आसानी से प्राकृतिक अधिवासों को सरक्षित करना था। उसके परिणाम आज भी सामने है, जहां-जहां देव वन विद्यमान है, वहा के निवासियो के मन मे उन व के प्रति कोई वैमनस्य/मनमुटाव का भाव नहीं है, कि आज जहां भी संरक्षित क्षेत्र (जिसे कि देव वन की आवधारणा को ही आधार मानकर वैज्ञानिक रूप स्थापित किया जा रहा है) वहा के निवासियों उस संरक्षित क्षेत्र की तरफ कोई सकारात्मक दृष्टिको नहीं है और न ही ऐसे संरक्षित क्षेत्र सफल कहे रहे हैं।

अतः आज का समाज भी उन्हीं मूल्यों का अ

है जिन्हे पूर्वजों ने चुकाया था।

मध्य हिमालय का ऐतिहासिक महाकुम्भ

जिसमें कि प्रकृति एवं संस्कृति को साथ लेकर आज भी पर्यावरण सरक्षण के प्रति सच्ची निष्ठा दृष्टिगोचर होती है। नन्दा राजजात के गहन अध्ययन से उसके सास्कृतिक महत्व के साथ-साथ विराट पर्यावरणीय महत्व भी दृष्टिगोचर होता है। यदि नन्दा राजजात का केवल सांस्कृतिक दृष्टिकोण देखा जाए तो उसे निम्न प्रकार चित्रित किया जा सकता है।



यदि परम्परागत ज्ञान को महत्व देते हुए उसे पारिस्थितिक परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो उसका महत्व बरबस ही वर्तमान में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा की तरफ ध्यान आकृष्ट कर देता है। अत. यह न केवल एक सांकेतिक पहलू है जो लोगो को सामुहिक, सांस्कृतिक एकता मे खीचता है, वरन पर्यावरणीय नीतियो का निर्धारण भी है, जो स्थानीय निवासियों के जीविकोपार्जन से भी सम्बन्धित है।

पर्वत पूजा

मध्य हिमालय में कही-कहीं पर्वत शिखरों की प्रति वर्ष पूजा की जाती है व पर्वतो से बेमौसम जड़ी-बूटियां निकालना पाप समझा जाता है। ऐसा करने से माना जाता है कि प्राकृतिक आपदाए आ सकती है। गांव के लोग प्राकृतिक आपदाओं से बचने के लिए बेमौसम जड़ी-बूटी लेने वालो को कोसते हैं। इसके पीछे भी मानव जाति के कल्याण हेतु पर्यावरण का संरक्षण ही निहित है। हो सकता है, जड़ी बूटियों को सरक्षित करने की यह उनकी अपनी एक विशेष प्रकार की परम्परागत संरक्षण की पद्धति हो। क्षेत्र के निवासियो के अनुभवी और दूरदृष्टि वाले पूर्वजो को यह आभास जरूर रहा होगा कि भविष्य मे मानव अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए प्रकृति के साथ क्रूर व्यवहार भी कर सकता है और पर्यावरण असंतुलित हो सकता है। इसलिए हम कैसे इस क्षेत्र की सम्पदा को, जिसे हम अपने पसीने से सींचते आ रहे है, बचाएगे। फिर उन्होंने शुरू की होगी पर्वत पूजा।

प्राकृतिक संसाधनों के दोहन की समय सीमा एवं कुछ मौलिक नियम

किसी को भी जंगली पादपों के दोहन पर सितम्बर के आखिरी सप्ताह से पहले सख्त मनाही होती थी और उस पर भी उन्हे सबसे पहले अपने देवालयों मे चढ़ाया जाता रहा है। क्योकि तब तक सभी पादप लगभग परिपक्वता पर पहुंच चुके होते हैं और बीजों का प्रकीर्णन भी होना शुरू हो जाता है और साथ ही साथ बीजो को एकत्र कर भविष्य के लिए भी सुरक्षित रखा जा सकता है।

चटकीले, रगीन वस्त्रो को पहनकर बुग्यालों मे जाने पर सख्त मनाही थी। यदि कोई पालन नहीं करेगा तो चेतावनी। परियां(स्थानीय भाषा मे आछरी) प्राण हर लेगी। इसके पीछे छिपा तथ्य यह है कि चटकीले रंग परागकण करने वाले कीटो को बाधा पहुंचा सकते है जो कि बुग्यालों मे पहले ही बहुत कम संख्या मे होते है। शोर पर सख्त मनाही यहां तक कि ढोल, दमाऊ (परम्परागत

हिमालयी महाकुम्भ पारिस्थितिक चित्रण

सास्कृतिक विविधता एव जैविक विविधता, प्राकृतिक आवास एव सस्कृति, सास्कृतिक पहचान एवं पारिस्थितिक तंत्रों के बीच स्वस्थ पारस्परिक सम्बन्ध– सतत् विकास हेतु आवश्यक कारक।

रीति-रिवाज एव धार्मिक मान्यताओ द्वारा पर्यावरणीय नीतियों का निर्धारण एव मनुष्य के व्यवहार को प्राकृतिक संसाधनों के उचित उपयोग हेतु प्रेरित करना।

पशुधन– प्रतीक चार सीग वाला भेड, पहाड़ो के आर्थिक प्रवहन तत्र की महत्वपूर्ण इकाई।

प्रकृति एवं प्राकृतिक सम्पदा का सरक्षण– उपयोगी वनस्पतियों को पवित्र मानकर पूजन एवं उपयोग हेतु निश्चित समय के संकेत-उद्देश्य– भविष्य की पीढियो के लिए अमूल्य धरोहर सजोकर रखना।

वाद्य यन्त्र) का उपयोग भी नही किया जाता। क्योकि परागकण करने वाले कीटो को हानि एव परागकण मे बाधा। ये दुर्लभ पारिस्थितिक तंत्रों के पर्यावरण को सरक्षित करने के आसान उपाय थे।

पारम्परिक कृषि

पारम्परिक कृषि, वह भी हिमालय की (जो कि फसल चक्रों को) उचित प्रबन्धन द्वारा मृदा की उर्वरता को बनाए रखते हेतु आज भी बदस्तूर जारी है। कही कही पर (शोध द्वारा प्रमाणित है) जहां परम्परागत कृषि की अवहेलना की गई व फसल चक्रो के साथ अनावश्यक छेडछाड की गई वहां पर मृदा का आत्मघाती असंतुलन पैदा हो गया है।

पारम्परिक उपज प्रजातियां

कृषि में पारम्परिक उपज प्रजातियो का महत्वपूर्ण योगदान है, अर्थात् जो उपज प्रजातिया जहा उगाई जा रही हैं वे वहीं उगें क्योंकि उन प्रजातियों मे उस स्थान विशेष की जलवायु/पर्यावरण के अनुसार अनुकूल क्षमता आ जाती है। फिर उन्हीं मे से उसे कुछ महत्वपूर्ण उपज प्रजातियों को पवित्र मानकर भगवान के भोजन हेतु उगाना, जिन्हें स्थानीय निवासी किंचित कारणवश कम मात्रा मे उगाते हैं क्योकि ईश्वर के नाम पर उन प्रजातियो का अस्तित्व विद्यमान रहेगा। सम्पूर्ण भारत वर्ष मे केवल धान की ही 30,000 उपज प्रजातिया थी, किन्तु आज 200-250 ही उपज प्रजातियां उगाई जा रही हैं। फलस्वरूप कृषि तत्र पर गहरा सकट पैदा होना शुरू हो गया है। और स्थानीय भाषा में सभी जगह प्रायः सभी उपज प्रजातियो के नाम महिलाओ के नाम पर रखे जाते थे यथा– मध्य हिमालय मे ही ले तो झुमरी, बिन्दुली, जिरूली, नन्दिनी, राजमति इत्यादि धान की प्रजातियों को बहू-बेटी के रूप में मानकर उसकी गुणवत्ता बनाए रखना व सतत् उपज के लिए प्रयासरत रहना। किन्तु आज इन पुरातन मानवीय विचारधाराओं की आधुनिक मानव अवहेलना कर स्वय ही जाल में फंसता चला जा रहा है और इसी का परिणाम है कि प्रतिवर्ष विश्व भर में 60 लाख हेक्टेयर उपजाऊ भूमि मरुस्थल में बदलती जा रही है।

मांसाहार पर प्रतिबन्ध

माघ (फरवरी-मार्च) एव सावन (अगस्त-सितम्बर) के महीनो मे मासाहार वर्जित था क्योकि बहुत से पशु-पक्षियों

(जलचर/स्थलचर) में क्रमश: गर्भाधान एव सन्तति उत्पन्न करने का समय होता है। यदि इन महीनो में मासाहार पर रोक न लगाई जाए तो पशु तत्र के अस्तित्व पर संकट पैदा हो सकता है और पर्यावरणी असंतुलन पैदा हो सकता है। अतः इन विचारधाराओं को समाज मे लागू किया गया।

देवालयों में हवन

मन्दिरो में हवन करना व "ऊ वनस्पति शान्ति" फिर स्वाहा कहना अर्थात् वनस्पतियो के कल्याण हेतु स्वास्तिवाचन, यानि जो भी हम मन्दिरो में हवन कुण्ड में अर्पित करते है उसका तात्पर्य यह है कि इसके अग्नि मे जलने के पश्चात् जो वायु वायुमण्डल की तरफ जाए वह भी वनस्पतियो के कल्याण हेतु जाए व उत्पन्न कार्बन डाइऑक्साइड को पेड़-पौधे ग्रहण कर पर्यावरण को समृद्धि दें।

किसी भी वन क्षेत्र, चारागाह एवं सामुहिक भूमि की पोषक क्षमता के प्रबन्धन हेतु मन्दिर में पशुओं का बलिदान एव उनमें से भी नर पशु यथा— बकरा, मेंढ़ा, भैंसा इत्यादि को आज भी मुख्यत. देवालयों मे चढ़ाया जाता है मादा को नहीं। क्योंकि अधिक संख्या मे नर पशु जिनको कि सन्तति उत्पन्न करने के अतिरिक्त अन्य उपयोग मे नही लाया जा सकता उन्हीं का बलिदान, भूमि की पोषक क्षमता पर अतिरिक्त दबाव न पड़े इसलिए किया जाता रहा है।

चिपको आन्दोलन की परिकल्पना एवं वर्तमान प्राकृतिक दुर्घटनाएं

उत्तराखण्ड के रैणी ग्राम में जन्मा बहुचर्चित चिपको आन्दोलन केवल पेडो को काटने से ही रोकना नही था, वरन् एक उत्कृष्ट विचार भी था जिसका सार्वभौमिक परिणाम भविष्य की पीढ़ियों को प्राकृतिक संसाधनों से परिपूर्ण करना था व साथ ही साथ इसमे सवेदनशील स्थानों का संरक्षण एव चिरस्थाई सुरक्षा सम्बन्धी जीवत विचार भी समाहित थे। किन्तु आज हिमालयवर्ती क्षेत्र मे प्राकृतिक ससाधनों के निहित स्वार्थ हेतु अधाधुध दोहन से कई पर्यावरणीय समस्याएं सामने आ रही है। बहुत दूर न जाकर निकट पूर्व मे हुए मालपा और ऊखीमठ के भयावह भूस्खलन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इन्ही मौलिक मूल्यों के ह्रास से ही घटित हुए है।

उड़ीसा के समुद्रतटीय भागो मे भयकर चक्रवात की आवृत्ति शनै: शनै. बढ़ती जा रही है और अपूरणीय क्षति होती जा रही है। इसके कारण वहां पर मैंग्रूव वनस्पतियो का तीव्रता से दोहन होना है। इस प्रकार की दुर्घटनाओ को केवल एक उत्कृष्ट मानवीय सोच द्वारा ही रोका जा सकता है।

निष्कर्ष

आज के इस वैज्ञानिक युग में जहां संस्कृति, परम्परागत ज्ञान-विज्ञान एव प्रकृति-मानव अन्तर्सम्बन्धो में जहा लोगो के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिवेश मे हो रहे परिवर्तनों से धीरे-धीरे अमूल्य मानवीय मूल्यों का जो कि प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से मानव हित हेतु ही निर्धारित किए गए थे, धीरे-धीरे ह्रास होता चला जा रहा है। आज हर जगह जहा सरकारी तंत्र अपनी भागीदारी स्वय ही सुनिश्चित कर लोगों को उदासीनता की ओर अग्रसर कर रहे है, वही पर्यावरण सरक्षण की अमूल्य विचारधाराओं को नजरंदाज किया जा रहा है। पर्यावरण सरक्षण हेतु ऐसा नहीं कि सरकारी तंत्र द्वारा जो भी क्रियाकलाप किए जा रहे हैं, वे मानव हित में न हों, सोच वहा पर भी मानव एवं उसके सम्पूर्ण पर्यावरण का ही हित है। किन्तु आज के परिप्रेक्ष्य मे किसी भी स्थान विशेष की विचारधाराए उस स्थान के मानव-प्रकृति अन्तर्सम्बन्धों अर्थात् पर्यावरण के संरक्षण की दिशा में बहुत ही प्रभावकारी है, तुलना में उसी के लिए बाह्य कारकों द्वारा थोपी गई नीतियों के।

यदि मानव मूल्यों का एक उत्कृष्ट ढंग से मूल्याकन किया जाए और उन्हीं को स्थान विशेष के हित में देखकर क्रियावयन हेतु बढावा दिया जाए तो आज की शिक्षित पीढ़ी कही अधिक सक्षम भूमिका पर्यावरण सरक्षण हेतु अपना योगदान देकर कर सकती है।

यही समय है जब सरकारी तत्र को पर्यावरण सरक्षण हेतु मानव मूल्यो की प्राथमिकता के बारे में गम्भीरता से सोचना है। राजनीति एवं सरकारी तत्र को अपनी अनावश्यक भागीदारी से स्वय को किनारा कर स्थान विशेष के निवासियो को प्रोत्साहित कर पर्यावरण सरक्षण हेतु पूरा नियत्रण का अधिकार दे देना चाहिए। कई बार यह होता है कि किंचित राजनीतिक कारणो से सरकारी तंत्र की भागीदारी के स्थान विशेष के निवासी स्वयं को अलग-थलग एव उदासीन महसूस करने लगते है और उनमें अपने चारो ओर के आवरण अर्थात् पर्यावरण के संरक्षण हेतु यह सोच पैदा हो जाती है कि शायद हमारे कर्तव्यों से ऊपर सरकार के कर्तव्य है जो कि पर्यावरण संरक्षण हेतु जिम्मेदार है। उदाहरणार्थ जो कभी हमारे धार्मिक पर्यटन हुआ करते थे, वे चाहे किसी भी देश एवं धर्म का व्यक्ति यदि हिमालयी क्षेत्रों में आता था तो स्थानीय निवासियों को साथ लेकर स्थानीय रीति-रिवाजो की सीमा के अन्तर्गत स्वय की यात्रा उनके निर्देशन में पूरी करता था। और उस तरह के पर्यटन से कभी भी पर्यावरणीय असुंतलन पैदा होने का खतरा नहीं महसूस किया गया। किन्तु आज उसी धार्मिक पर्यटन को साहसिक पर्यटन के रूप में बढावा देकर परिणामस्वरूप जगह-जगह पर्यावरणीय असंतुलन पैदा होने के खतरो से फिर सख्त नियम कानून लागू करना और अंत में स्थानीय निवासियों के साथ मतभेद पैदा कर इस असतुलन को और भी बढावा दिया जा रहा है। यह तो एक उदाहरण है, अन्य भी कई मौलिक नियम जगह-जगह नजरंदाज किए जा रहे हैं।

अत· पर्यावरण संरक्षण के लिए इस दिशा मे विद्वानो स्वयंसेवी सस्थाओ, वैज्ञानिको एवं स्थानीय निवासियों को गंभीरता से पर्यावरण संरक्षण की भागीदारी मे अपनी-अपनी भूमिका सुनिश्चित करनी होगी और मानवीय मूल्यों व धार्मिक, सामाजिक पद्धतियों को महत्व देते हुए और उनकी उपयोगिता को वैज्ञानिक दृष्टि से देखने पर भी पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्यो की उपलब्धियो को प्राप्त किया जा सकता है। ☐☐

शिक्षा विभाग
एच.एन.बी. गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर
गढ़वाल, उत्तरांचल

उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य, कुंठा की प्रवृति एवं शैक्षिक स्तर पर संगीत में रुचि के प्रभाव का अध्ययन

❑ अशोक कुमार शर्मा
❑ प्रतीक्षा शर्मा

संगीत का प्रभाव प्राचीन काल से ही चला आ रहा है। वर्तमान काल में संगीत का प्रचार करने का श्रेय भातखण्डे व पलुस्कर को जाता है। इस प्रकार प्राचीन काल से वर्तमान तक संगीत का प्रभाव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पड़ा। आधुनिक युग में व्यक्ति शारीरिक रोगों के साथ-साथ मानसिक रूप से भी अस्वस्थ रहने लगा है और यह मानसिक अस्वस्थता हजार नए रोगों को जन्म देती है। आयुर्वेद में यह बताया गया है कि संगीत से सात्विकता की वृद्धि होती है और सात्विकता से मानसिक स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

कवि टैगोर का कथन है— "स्वर्गीय सौन्दर्य का कोई साकार रूप व सजीव प्रदर्शन है तो उसे सगीत ही होना चाहिए। हमारे अन्त. स्थल की घोर व्यथाओ को गुजित करने वाले गीत ही हमारे सबसे मधुरतम गीत होते हैं।" संगीत भावाभिव्यक्ति का सबल साधन है। संगीत का ललित कलाओ मे प्रमुख स्थान माना जाता है इसलिए संगीत का मानव जीवन मे विशेष स्थान है।

सगीत का प्रभाव प्राचीन काल से ही हर काल में रहा है। वर्तमान काल मे सगीत का प्रचार करने का श्रेय भातखण्डे व पलुस्कर को जाता है। इस प्रकार प्राचीन काल से वर्तमान तक संगीत का प्रभाव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे पडा। आधुनिक युग मे व्यक्ति शारीरिक रोगो के साथ-साथ मानसिक रूप से भी अस्वस्थ रहने लगा है और यह मानसिक अस्वस्थता हजार नए रोगों को जन्म देती है। आयुर्वेद में यह बताया गया है कि सगीत से सात्विकता की वृद्धि होती है और सात्विकता से मानसिक स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

वर्तमान समय में नगरों, विशेषत. महानगरों की दिनचर्या व रात्रिचर्या, आहार-विहार में विकृतियां आ जाने से प्रत्येक व्यक्ति का जीवन व शरीर विकृत होता जा रहा है। फलस्वरूप वह अपने पारिवारिक जीवन की ओर ध्यान नहीं दे पाते। किशोर-छात्र-छात्राओं को सही समय पर उचित निर्देशन दिया जाए तो उनका भविष्य सवारा जा सकता है। परन्तु माता-पिता अपनी व्यस्तता के कारण उनकी ओर ध्यान नहीं दे पाते इससे वे कुंठित हो जाते है तथा सद्वृत का पालन नही करने से मानसिक रूप से भी अस्वस्थ हो जाते हैं। इन्हीं बातों को ध्यान मे रखते हुए सगीत का प्रभाव मानसिक स्वास्थ्य व कुंठा पर जानने का प्रयास किया है कि किशोर छात्र व छात्राओं की कुंठा की प्रवृति, मानसिक स्वास्थ्य व शैक्षिक स्तर पर संगीत का क्या प्रभाव पड़ता है।

अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य है—

❑ उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र व छात्राओं मे संगीत की रुचि का अध्ययन करना।

- उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र व छात्राओ की कुठा प्रवृति का अध्ययन करना।
- उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र व छात्राओ के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन करना।
- उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र व छात्राओ की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।
- उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र व छात्राओ की सगीत में रुचि का उनके मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव का अध्ययन करना।
- उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र व छात्राओं की संगीत मे रुचि का उनकी कुंठा की प्रवृति पर प्रभाव का अध्ययन करना।
- उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र व छात्राओं की सगीत मे रुचि का उनके शैक्षिक स्तर पर प्रभाव का अध्ययन करना।
- उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र व छात्राओ की सगीत में रुचि, मानसिक स्वास्थ्य, कुठा की प्रवृति एव शैक्षिक स्तर पर तुलनात्मक अध्ययन करना।

विधि

शोध अध्ययन के लिए सामान्य सर्वेक्षण विधि प्रयुक्त की गई है।

जनसंख्या

जनसंख्या का क्षेत्र जयपुर महानगर है। इस महानगर के सभी उच्च माध्यमिक स्तर के सरकारी विद्यालयों को सम्मिलित किया गया है। प्रत्येक विद्यालय के कक्षा 11 के छात्र व छात्राओ का चयन न्यादर्श के रूप में किया गया है।

न्यादर्श

शोध कार्य हेतु प्रतिदर्श का चयन पुंजानुसार प्रतिचयन विधि से किया गया है। इसमें जयपुर महानगर से प्रतिदर्श का चयन किया गया है। इसमे जयपुर महानगर के सम्पूर्ण भौगोलिक क्षेत्रो मे से विद्यालयों का चयन किया गया है। ये सभी विद्यालय सरकारी हैं अर्थात् जो राज्य सरकार द्वारा संचालित होते है। इनमे 400 छात्र व 400 छात्राओ को न्यादर्श रूप में लिया गया है।

अध्ययन के चर– प्रस्तुत शोध कार्य मे निम्न चर सम्मिलित किए गए है–

- स्वतन्त्र चर
  - ★ संगीत की रुचि
- परतन्त्र चर
  - ★ मानसिक स्वास्थ्य
  - ★ कुंठा की प्रवृति
  - ★ शैक्षिक स्तर
- नियंत्रित चर
  - ★ सामाजिक व आर्थिक स्तर
  - ★ शैक्षिक स्तर (केवल उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्र व छात्राएं)

सामाजिक, आर्थिक स्तर के चर को नियत्रित करने के लिए आकार के आधार पर उच्च एव निम्न दो समूह बनाए गए।

उपकरण

प्रस्तुत शोधकार्य में निम्न उपकरणो का चयन किया है–

- मानसिक स्वास्थ्य कुंठा मापनी – डा. (श्रीमती) कमलेश शर्मा
- संगीत रुचि मापनी – श्रीमती जी. नायक

सांख्यिकी विधियां

शोध मे टी परीक्षण एवं सह सम्बन्ध गुणांक प्रयुक्त किया है।

प्रदत्तों की गणना एवं सांख्यिकी विश्लेषण

शोध अध्ययन के लिए निराकरणीय परिकल्पनाओं का निर्माण किया गया।

परिकल्पना 1

संगीत मे उच्च व निम्न रुचि रखने वाली छात्राओ के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी 1

संगीत में उच्च व निम्न रुचि रखने वाली छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानो में अन्तर

क्र.सं.	*समूह (छात्राए)*	*N*	*मध्यमान*	*प्रमाणिक विचलन*	*प्रमाणिक त्रुटि*	*टी-मूल्य*
1.	सगीत में निम्न रुचि वाले समूह का मानसिक स्वास्थ्य	165	77 030	15.589	1.214	5.20
2	संगीत मे उच्च रुचि वाले समूह का मानसिक स्वास्थ्य	235	84.9702	13.693	893	

सार्थकता-- .05 स्तर पर t का मान = 1.97
.07 स्तर पर t का मान = 2.59

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि t का गणना से प्राप्त मान 5 20 है जो .01 स्तर पर t सारणी के अकित मूल्य 2.59 से कही अधिक है। अत· उपरोक्त परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है अर्थात् संगीत में उच्च रुचि रखने वाली व रुचि न रखने वाली छात्राओं के मध्यमानो मे सार्थक अन्तर है। अतः कहा जा सकता है कि सगीत की रुचि की भिन्नता का किशोर छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव पडता है। इसके लिए यह माना जा सकता है कि संगीत मानसिक द्वन्द्वों को दूर कर व्यक्ति को मानसिक रूप से स्वस्थ रखता है।

परिकल्पना 2

संगीत मे निम्न रुचि रखने वाली किशोर छात्राओ की कुठा की प्रवृति के मध्यमानो में सार्थक अन्तर नही है।

सारणी 2

संगीत मे उच्च व निम्न रुचि रखने वाली छात्राओं की कुंठा के मध्यमानों में अन्तर

क्र सं	*समूह (छात्राए)*	*N*	*मध्यमान*	*प्रमाणिक विचलन*	*प्रमाणिक त्रुटि*	*टी-मूल्य*
1	संगीत मे निम्न रुचि वाले समूह की कुंठा की प्रवृति	165	31 6909	7 411	577	6.90
2	संगीत में उच्च रुचि वाले समूह की कुठा की प्रवृति	235	36 5532	6.594	430	

सार्थकता— .05 स्तर पर t का मान = 1 97
.01 स्तर पर t का मान = 2.59

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि T का गणना से प्राप्त मान 6.90 है जो .01 स्तर पर T सारणी के अपेक्षित मूल्य से अधिक है। अत' परिकल्पना 2 अस्वीकृत की जाती है। सगीत में उच्च व निम्न रुचि रखने वाली किशोर छात्राओं की कुंठा की प्रवृति के मध्यमानो मे सार्थक अन्तर है। अत संगीत की रुचि की भिन्नता का छात्राओ की कुठा की प्रवृति पर प्रभाव पड़ता है। अतः सगीत में कुठा को कम करने की सामर्थ्य है।

परिकल्पना 3

संगीत मे निम्न रुचि रखने वाली किशोर छात्राओ की शैक्षिक उपलब्धि तथा संगीत में उच्च रुचि रखने वाली छात्राओ की शैक्षिक उपलब्धि के मध्यमानों मे सार्थक अन्तर नही है।

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि T का गणना से प्राप्त मान 17 है जो 05 स्तर पर T सारणी के मूल्य 1 97 से कम है। अत. परिकल्पना 3 स्वीकृत की जाती है। सगीत मे उच्च व निम्न रुचि रखने वाली किशोर छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि के मध्यमानो में सार्थक अन्तर नही है। अतः संगीत की रुचि का छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव नहीं पड़ता है।

परिकल्पना 4

सगीत में निम्न रुचि रखने वाले किशोर छात्रो के मानसिक स्वास्थ्य तथा संगीत में उच्च रुचि रखने वाले छात्रो के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानो मे सार्थक अन्तर नही है।

सारणी 3

संगीत में उच्च व निम्न रुचि रखने वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि के मध्यमानो में अन्तर

क्र.स.	*समूह (छात्राएं)*	*N*	*मध्यमान*	*प्रमाणिक विचलन*	*प्रमाणिक त्रुटि*	*टी-मूल्य*
1	संगीत मे निम्न रुचि वाले समूह की शैक्षिक उपलब्धि	165	52 5107	11 686	810	17
2.	संगीत में उच्च रुचि वाले समूह की शैक्षिक उपलब्धि	235	52.3234	10.785	.704	

सार्थकता— 05 स्तर पर t का मान = 1.97
.01 स्तर पर t का मान = 2 59

सारणी 4

संगीत में उच्च व निम्न रुचि रखने वाले छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य के मध्यमानो में अन्तर

क्र सं	*समूह (छात्र)*	*N*	*मध्यमान*	*प्रमाणिक विचलन*	*प्रमाणिक त्रुटि*	*टी-मूल्य*
1.	संगीत मे निम्न रुचि वाले समूह का मानसिक स्वास्थ्य	187	79.5613	12.723	930	6.01
2	सगीत में उच्च रुचि वाले समूह का मानसिक स्वास्थ्य	235	52 5587	13.749	.942	

सार्थकता— .05 स्तर पर T का मान = 1 97
07 स्तर पर T का मान = 2 59

प्रस्तुत सारणी से स्पष्ट है कि T का गणना से प्राप्त मान 6 01 है जो .01 स्तर पर T के मूल्य से अधिक है। अत. परिकल्पना 4 अस्वीकृत की जाती है। सगीत मे उच्च व निम्न रुचि रखने वाले किशोर छात्रो के मध्यमानों मे सार्थक अन्तर है। अत कह सकते हैं कि संगीत की रुचि का छात्रो के मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव पडता है।

परिकल्पना 5

सगीत मे निम्न रुचि रखने वाले किशोर छात्रो की कुठा की प्रवृति के मध्यमानो मे सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी 5 स्पष्ट करती है कि T का गणना से प्राप्त मान 6.47 है जो 01 स्तर पर T सारणी के मूल्य से अधिक है। अर्थात् सगीत मे निम्न व उच्च रुचि रखने वाले किशोर छात्रो की कुंठा की प्रवृति मे सार्थक अतर है। अत सगीत मे रुचि का किशोर छात्रों की प्रवृति पर प्रभाव पडता है।

परिकल्पना 6

संगीत मे निम्न रुचि रखने वाले किशोर छात्रो की शैक्षिक उपलब्धि तथा सगीत मे उच्च रुचि रखने वाले किशोर छात्रो की शैक्षिक उपलब्धि के मध्यमानो मे सार्थक अन्तर नही है।

सारणी 5

संगीत मे उच्च व निम्न रुचि रखने वाले छात्रों की कुंठा की प्रवत्ति के मध्यमानो में अन्तर

क्र.स.	*समूह (छात्र)*	*N*	*मध्यमान*	*प्रमाणिक विचलन*	*प्रमाणिक त्रुटि*	*टी-मूल्य*
1	सगीत मे निम्न रुचि वाले समूह की कुठा की प्रवृत्ति	187	31.9412	7 280	532	6 47
2	संगीत में उच्च रुचि वाले समूह की कुंठा की प्रवृत्ति	213	36 4178	6.555	449	

सार्थकता– .05 स्तर पर T का मान = 1.97
.07 स्तर पर T का मान = 2 59

सारणी 6

संगीत में उच्च व निम्न रुचि रखने वाले छात्रो की शैक्षिक उपलब्धि के मध्यमानों मे अन्तर

क्र स	*समूह (छात्र)*	*N*	*मध्यमान*	*प्रमाणिक विचलन*	*प्रमाणिक त्रुटि*	*टी-मूल्य*
1	सगीत मे निम्न रुचि वाले समूह की शैक्षिक उपलब्धि	187	48.187	9.442	690	1.74
2.	संगीत मे उच्च रुचि वाले समूह की शैक्षिक उपलब्धि	213	49 622	10 440	715	

सार्थकता– .05 स्तर पर T का मान = 1.97
01 स्तर पर T का मान = 2.59

प्रस्तुत सारणी से स्पष्ट है कि T का गणना से प्राप्त मान 1.74 है जो 0.5 स्तर पर T सारणी के मूल्य से कम है। संगीत में उच्च व निम्न रुचि रखने वाले किशोर छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्यमानो मे सार्थक अन्तर नहीं है। अतः संगीत की रुचि का किशोर छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि कोई पर प्रभाव नहीं पडता है।

शैक्षिक निहितार्थ

प्रस्तुत शोध अध्ययन से—

- छात्र-छात्राओ के मानसिक स्वास्थ्य को उच्च बनाने या अच्छे मानसिक स्वास्थ्य के लिए संगीत शिक्षण को शिक्षा का अंग बनाए जाने हेतु नई दिशा विकसित हुई है।
- सगीत की रुचि शैक्षिक उपलब्धि को बढाने में सहायक है। अत. संगीत का ज्ञान छात्र-छात्राओ को कराया जाना उचित प्रतीत होता है।
- संगीत विषय केवल किशोरावस्था मे नही अपितु पूर्व-प्राथमिक स्तर से ही पाठ्यक्रम का अग होना चाहिए।
- संगीत से सम्बन्धित विभिन्न विधाएं जैसे नृत्य, गायन, वादन आदि को पाठ्य-सहगामी क्रिया के रूप में ही स्थान मिलता है। प्रस्तुत शोध के आधार पर इन्हें पाठ्यक्रम में प्रमुख स्थान मिलना चाहिए।
- संगीत के महत्व को ध्यान में रखते हुए प्रार्थना सभा को प्रभावी बनाया जा सकता है।
- किशोर-किशोरियो की सगीत में रुचि पैदा कर उनकी आपराधिक प्रवृतियों को नियत्रित किया जा सकता है।
- सगीत शिक्षा विद्यार्थियों की मूल प्रवृतियों को परिष्कृत करने में सहायक सिद्ध होगी।
- सवेगो के सन्तुलन में सगीत का योगदान लिया जा सकता है।
- संगीतमय वातावरण अधिगम को सहज बनाता है। थार्नडाइक ने भी कहा है कि मानसिक तत्परता के लिए सहज वातावरण की नितान्त आवश्यकता है।
- संगीतमय वातावरण कठोर शिक्षको की दण्ड देने की प्रवृति में परिवर्तन लाने में सक्षम होगा क्योंकि सम्भवत· देखा गया है कि सगीत की उपस्थिति कठोर वातावरण को सहज बनाने मे सहायता करती है।
- सगीत का ज्ञान व अभ्यास निश्चित रूप से काम प्रवृति के शोधन में सहायक सिद्ध होगा।
- प्रस्तुत शोध ने नवीन शोधो के लिए नवीन क्षेत्र व मार्ग प्रशस्त किया है।
- प्रस्तुत शोध ने शिक्षा के क्षेत्र मे उपेक्षित व लुप्त होते जा रहे क्षेत्र की ओर शिक्षाविदो का ध्यान आकर्षित किया है।

अन्य सुझाव

बालकों का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा रखने के लिए संगीत की रुचि बढ़ाने के लिए कुछ सुझाव प्रस्तुत किए गए है—

- अभिभावको द्वारा परिवार का वातावरण इस प्रकार बनाया जाए कि बालक को किसी भी प्रकार का मानसिक द्वन्द्व न उत्पन्न हो।
- अभिभावको द्वारा बालको की संगीत की रुचि को विकसित करने का प्रयास किया जाना चाहिए।
- बालकों को योग व खेलकूद के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए ताकि वे शारीरिक व मानसिक दोनों तरह से स्वस्थ रहें।
- विद्यालय मे पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
- अध्यापकों द्वारा सभी विद्यार्थियो को सहगामी क्रियाओ में सहभागिता के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।
- अध्यापक द्वारा विद्यार्थियों को व्यक्तिगत रूप से जानकर उसके मानसिक द्वन्द्वों को दूर करना चाहिए।
- बालकों को सद्वृत्त से यहां तात्पर्य नैतिक मूल्यों का पालन करने से है।

- मानसिक रूप से अस्वस्थ बालको के लिए पृथक शिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए।
- छात्रो के साथ मित्रवत् व्यवहार करना चाहिए जिससे छात्र अपनी सभी प्रकार की समस्याओं को अध्यापकों के समक्ष अभिव्यक्त कर सकें।
- परिवार मे बालक को भारतीय सस्कृति का ज्ञान दिया जाए जिसके अन्तर्गत शाम को संध्या वदन आदि करे।

(1) श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय
केशव विद्यापीठ, जामडोली, जयपुर
राजस्थान
(2) संजय शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय
लालकोठी, जयपुर
राजस्थान

माध्यमिक शिक्षा को राष्ट्रीय स्वरूप देने की आवश्यकता

❏ कुंवर पाल सिंह

सारे देश में हाईस्कूल तक एक सरल सामान्य उपयोगी पाठ्यक्रम का प्रसार करने की आवश्यकता है जिसके माध्यम से छात्रों एवं छात्राओं का शारीरिक, मानसिक, नैतिक सर्वांगीण विकास सुनिश्चित किया जा सके। उनमें देशभक्ति, राष्ट्रीय एकता तथा राष्ट्रीय चरित्र की भावना का विकास किया जा सके। उन्हें जातिवाद, साम्प्रदायिकता, अंधविश्वास, रूढ़िवाद, कट्टरता तथा मन्दिर, मस्जिद, गिरजे, गुरुद्वारों की संकीर्ण दीवारों से ऊपर उठाया जा सके। उनमें लोकतन्त्र, पंथ निरपेक्षता, सर्वधर्म समभाव तथा शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व जैसी अवधारणाओं के प्रति आस्था का विकास किया जा सके।

भारत आज अनेक समस्याओं से घिर गया है। इन समस्याओं को हल करने के लिए, राष्ट्रीय विकास, सुरक्षा और एकता का उच्चतम लक्ष्य प्राप्त करने के लिए हमे राष्ट्रीय शिक्षा और राष्ट्रीय चरित्र की आवश्यकता है। राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण माध्यमिक स्तर तक एक सार्वभौम सर्वांगीण राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली तथा पथ निरपेक्ष राष्ट्रीय शिक्षा नीति के द्वारा ही किया जा सकता है। माध्यमिक शिक्षा को राष्ट्र की आकाक्षाओं के अनुकूल राष्ट्रीय स्वरूप देकर तथा उसका प्रकाश भारत के प्रत्येक कुटीर तक पहुंचाकर ही हम राष्ट्रीय चरित्र निर्माण कर सकते है। शिक्षा को सरकारी तथा निजी दोनो क्षेत्रो मे विकसित होने का अवसर दिया जाना चाहिए। राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली तथा पथ निरपेक्ष राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रभावशाली ढंग से लागू करने के लिए सरकारी, निजी तथा सरकारी सहायता प्राप्त अशासकीय शिक्षण संस्थाओं पर लोकतांत्रिक सरकार का समुचित नियन्त्रण होना चाहिए। माध्यमिक शिक्षा को जन-जन तक पहुंचाकर ही हम राष्ट्र को सही अर्थो में शिक्षित कर सकते हैं। साक्षरता अभियान से राष्ट्र को शिक्षित करने का लक्ष्य प्राप्त नही किया जा सकता। शिक्षा का प्रकाश भारत के कुटीर तक पहुंचाने के लिए 93वे संवैधानिक संशोधन द्वारा 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को नि:शुल्क एव अनिवार्य शिक्षा देने का प्रावधान किया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 तथा सशोधित नीति 1992 द्वारा प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा मे कुछ सुधार किए गए है। इन सुधारो को सतत् रूप मे जारी रखने के लिए शिक्षा के बजट मे पर्याप्त वृद्धि करने की आवश्यकता है। सकल राष्ट्रीय उत्पाद का 6 प्रतिशत शिक्षा के लिए जुटाने हेतु राष्ट्र की आम सहमति प्राप्त करने की आवश्यकता है। प्राथमिक, पूर्व-माध्यमिक तथा माध्यमिक शिक्षा को— सरकारी, अर्द्धसरकारी तथा निजी— प्रत्येक क्षेत्र मे विकसित होने का अधिकतम अवसर दिया जाना चाहिए। साधन विहीन निजी स्कूलो को भी पर्याप्त सरकारी अनुदान तथा सहायता दी जानी चाहिए ताकि सभी विद्यालयो का स्तर राष्ट्रीय मध्यमान तक उठाया जा सके। शिक्षा शुल्क को सीमा में रखा जा सके। राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली तथा पंथ निरपेक्ष राष्ट्रीय शिक्षा नीति को सभी शिक्षण संस्थाओ पर लागू किया जा सके। हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, गरीब, अमीर

बच्चों की शिक्षा मे भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए।

हमारे विद्यालय ही राष्ट्र की भावनात्मक एकता के पवित्रतम केन्द्र हैं जहां विभिन्न धर्मो, सम्प्रदायों, जातियो, वर्गो तथा क्षेत्रों के बच्चे मिलकर एक साथ अध्ययन करते है। मिलकर खेलते, खाते और गाते है और मिलकर एक साथ प्रार्थना करते हैं। सरस्वती के प्रांगण मे बालकों के कोमल मस्तिष्कों मे ऊंच-नीच, जात-पांत, पंथ-सम्प्रदाय, अल्पसंख्यक-बहुसख्यक के आधार पर भेदभाव प्रवेश न होने दे तो प्रजातान्त्रिक समाज तथा पथ निरपेक्ष भारत के निर्माण के लिए सुदृढ आधार तैयार किया जा सकेगा। बालकों मे देशभक्ति, राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रीय चरित्र की भावना का विकास शिक्षण संस्थाओं से आरम्भ किया जा सकता है। जब तक राष्ट्रीय विद्यालयो में विभिन्न सम्प्रदायो, जातियों, वर्गो तथा क्षेत्रो के बालक-बालिकाएं मिलकर अध्ययन करते रहेगे, मिलकर खेलते, खाते, गाते रहेंगे, मिलकर प्रार्थना करते रहेगे, कदम से कदम मिलाकर आगे बढ़ते रहेगे, संसार की कोई भी शक्ति भारत की एकता, अखण्डता और सम्प्रभुता को चुनौती नही दे सकेगी।

शिक्षा को समवर्ती सूची मे रखते हुए माध्यमिक स्तर तक एक सर्वागीण राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली तथा पंथ निरपेक्ष राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रसार करने की आवश्यकता है। हाईस्कूल तथा इण्टरमीडिएट शिक्षा के समुचित विकास के लिए प्रत्येक राज्य बोर्ड के संसाधनो में पर्याप्त वृद्धि की जानी चाहिए। सभी राज्य बोर्डो में समन्वय तथा सहयोग का विकास करने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर केवल एक केन्द्रीय बोर्ड का गठन करना उपयुक्त होगा। सभी केन्द्रीय बोर्ड एक ही केन्द्रीय बोर्ड से सम्बद्ध किए जा सकते हैं। केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड तथा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद् के संरक्षण में प्रत्येक राज्य मे स्थित राज्य शैक्षिक संस्थान के माध्यम से राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली, राष्ट्रीय पाठ्यक्रम, राष्ट्रीय पाठ्यपुस्तके सामुहिक ड्रिल तथा स्काउट/गाइड शिक्षा की राष्ट्रीय पद्धति राष्ट्रगान-राष्ट्रीय गीत-मार्चिंग गीत के लिए राष्ट्रीय कैसेट, सामुहिक प्रतिज्ञा एवं राष्ट्रीय गणवेश का प्रसार करने की महती आवश्यकता है। शिक्षको के लिए राष्ट्रीय स्तर का प्रशिक्षण, राष्ट्रीय चयन, राष्ट्रीय वेश, राष्ट्रीय वेतनमान तथा राष्ट्रीय सम्मान सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। प्रत्येक राज्य में पूर्व-माध्यमिक, माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक शिक्षको के चयन के लिए 'माध्यमिक शिक्षक चयन आयोग' को अधिक व्यापक एवं बहुआयामीय स्वरूप देने की आवश्यकता है। कक्षा 6 से 10 तक अध्यापन करने वाले सभी शिक्षक प्रशिक्षित स्नातक होने चाहिए। सभी के लिए यह आवश्यक होना चाहिए कि उन्होने संस्थागत छात्रों के रूप में शिक्षा प्राप्त की हो।

शारीरिक शिक्षा समस्त शिक्षा की आधारशिला है। उसे पर्याप्त महत्व देने की आवश्यकता है। प्रत्येक विद्यालय मे आवश्यकतानुसार एक या दो शिक्षक शारीरिक शिक्षा में प्रशिक्षित स्नातक होने चाहिए। प्रत्येक विद्यालय में पार्क, पेयजल, शौचालय, प्रयोगशाला, पुस्तकालय, वर्कशाप, कैन्टीन, खेल का मैदान इत्यादि की व्यवस्था परिस्थिति तथा साधनों के अनुसार की जा सकती है। भविष्य मे नियुक्त किए जाने वाले सभी चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी किसी न किसी ट्रेड में प्रशिक्षित होने चाहिए। कारपेन्टर, प्लम्बर, राज मिस्त्री, मकेनिक, इलैक्ट्रिशियन, पेन्टर, पुस्तककला दस्तकार इत्यादि को वरीयता दी जानी चाहिए ताकि प्रत्येक कर्मचारी संस्था के सहकारी विकास में सक्रिय योगदान दे सके। शिक्षको के चयन में उनकी शैक्षिक, गैर शैक्षिक तथा सह पाठ्यक्रमीय उपलब्धियो, सर्वागीण क्षमताओं, नैतिक मूल्यो, शिक्षा एव राष्ट्र के प्रति समर्पण की भावना, एन. सी. सी., खेलकूद तथा स्काउटिंग मे प्रशिक्षण इत्यादि का समुचित मूल्यांकन किया जाना चाहिए। विद्यालय में शिक्षको की कमी पूरी करने के लिए कुछ अंशकालिक अथवा अस्थायी शिक्षक नियुक्त किए जा सकते हैं। नियुक्ति के समय प्रत्येक शिक्षक को किसी न्यायाधीश द्वारा शपथ दिलाई जा सके तो शिक्षक को राष्ट्र निर्माता के रूप में राष्ट्रीय मान्यता मिल सकेगी। शपथ का प्रारूप प्रस्तुत है—

"राष्ट्र निर्माता शिक्षक के रूप मे मैं विश्वास व्यक्त करता हूं कि भारतीय शिक्षा की महान परम्पराओं, राष्ट्रीय आदर्शो तथा नैतिक मूल्यों के प्रति

समर्पित रहूगा। शिक्षण सस्था के प्रति अपना कर्तव्य पूर्ण निष्ठा, ईमानदारी एव परिश्रम से पूरा करूंगा।"

सारे देश मे हाईस्कूल तक एक सरल सामान्य उपयोगी पाठ्यक्रम का प्रसार करने की आवश्यकता है जिसके माध्यम से छात्रो एव छात्राओं का शारीरिक, मानसिक, नैतिक सर्वागीण विकास सुनिश्चित किया जा सके। उनमें देशभक्ति, राष्ट्रीय एकता तथा राष्ट्रीय चरित्र की भावना का विकास किया जा सके। उन्हें जातिवाद, साम्प्रदायिकता, अंधविश्वास, रूढ़िवाद, कट्टरता तथा मन्दिर, मस्जिद, गिरजे, गुरुद्वारे की सकीर्ण दीवारो से ऊपर उठाया जा सके। उनमें लोकतन्त्र, पथ निरपेक्षता, सर्वधर्म समभाव तथा शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व जैसी अवधारणाओं के प्रति आस्था का विकास किया जा सके।

कक्षा 9 तक सभी परीक्षाए गृह परीक्षाओ के रूप मे आयोजित की जा सकें तो शिक्षक और छात्र प्रत्येक कक्षा मे समान उत्तरदायित्व से काम करेगे। कक्षा 10 की परीक्षा राज्य बोर्ड या केन्द्रीय बोर्ड द्वारा आयोजित की जा सकती है जिसमे कक्षा 9 तथा कक्षा 10 का सम्पूर्ण पाठ्यक्रम सम्मिलित किया जा सकता है। इसके उपरान्त कक्षा 11 तथा 12 की प्रत्येक परीक्षा बोर्ड या विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित की जा सकती है। कक्षा 10 तक सभी छात्रों एव छात्राओं के लिए एक सरल, सामान्य पाठ्यक्रम उपयुक्त होगा। छात्रो का विभिन्न वर्गो, साहित्यिक, वैज्ञानिक, कृषि, वाणिज्य, व्यावसायिक इत्यादि मे विभाजन इण्टरमीडिएट स्तर पर किया जा सकता है। कक्षा 9 तथा 10 के लिए एक सामान्य पाठ्यक्रम (हाईस्कूल परीक्षा पाठ्यक्रम) में निम्न विषय सम्मिलित किए जा सकते हैं–

विषय	सप्ताह में पीरियड
• हिन्दी (हिन्दी क्षेत्रो मे) अथवा क्षेत्रीय भाषा (अहिन्दी क्षेत्रों में)	6
• अंग्रेजी अथवा कोई अन्य भाषा (सस्कृत, उर्दू, पंजाबी, कश्मीरी अथवा किसी पड़ोसी राज्य की भाषा)	6
• सामान्य गणित / गणित अथवा गृह विज्ञान एव गृह शिल्प	9
• सामाजिक विज्ञान (रोचक, उपयोगी एव सरल पाठ्यक्रम)	9

इसके अन्तर्गत निम्न उपविषय सम्मिलित किए जा सकते है–

- विश्व भूगोल की रूपरेखा (सरल, सक्षिप्त एवं रोचक अध्ययन)
- स्वतन्त्रता सग्राम (राष्ट्रीय आन्दोलन) का सक्षिप्त इतिहास
- भारतीय लोकतन्त्र (प्रारम्भिक अध्ययन)– केन्द्र तथा राज्य सरकारें, स्थानीय निकाय, पंचायती राज, नागरिक के अधिकार एवं कर्तव्य, उनमे देश भक्ति, राष्ट्रीय एकता तथा राष्ट्रीय चरित्र की भावना का विकास, सर्वधर्म समभाव, शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व तथा पंथ निरपेक्षता, राष्ट्र की भावनात्मक एकता।
- पर्यावरण एव परिस्थितिकी–वन-वृक्षों, जलाशयो, नदियों, पर्वतो, खेतिहर पशुओं तथा वन्य प्राणियों की रक्षा (भूमि, जल तथा वन संरक्षण, प्रदूषण की समस्याए)
- बढ़ती जनसंख्या तथा उससे उत्पन्न समस्याएं
- भारत का योजनाबद्ध विकास, पंचवर्षीय योजनाए

• निम्न में से एक विषय समूह (दो विषयो के समकक्ष)	15

★ विज्ञान – भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान (प्रयोगशाला कार्य सहित), कम्प्यूटर का प्रारम्भिक ज्ञान

★ प्रावैधिक कला तथा कोई हस्तकला (कार्यशाला प्रशिक्षण सहित) मानसिक विकास को हाथ की उपलब्धि से जोड़ा जाए, व्यावसायिक शिक्षा के लिए आधार निर्मित किया जाए।

• शारीरिक एवं नैतिक शिक्षा (अतिरिक्त अनिवार्य विषय)	3

शरीर विज्ञान एव स्वास्थ्य रक्षा, दैनिक जीवनचर्या, स्वच्छता तथा शरीर के अंगो की रक्षा, संतुलित आहार, पेयजल, सामूहिक व्यायाम, खेलकूद,

स्काउट/गाईड शिक्षा, सामूहिक गीत, सदाचार, नैतिकता तथा चरित्र निर्माण, सर्वधर्म समभाव, राष्ट्र की भावनात्मक एकता, प्राणियों के प्रति दया इत्यादि विषयो की रोचक, सरल एव उपयोगी शिक्षा दी जा सकती है।

इस विषय के लिए राष्ट्रीय पाठ्यक्रम तथा राष्ट्रीय पाठ्यपुस्तकों की व्यवस्था की जानी चाहिए। विषय अध्यापक शारीरिक शिक्षा में प्रशिक्षित स्नातक होने चाहिए। विषय में केवल प्रयोगात्मक तथा मौखिक परीक्षा ली जाए तो विषय को सुग्राही, उपयोगी तथा रोचक बनाया जा सकता है। लिखित परीक्षा का भार बढ़ाने से विषय का उद्देश्य धूमिल हो सकता है। इस प्रयोगात्मक परीक्षा में छात्रों को अंको के स्थान पर ग्रेड दिया जाए तो उन्हें नवीन प्रेरणा मिलेगी। इस ग्रेड को छात्र के अक-पत्र तथा प्रमाण-पत्र पर अकित किया जाए तो विषय को राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता मिल सकेगी।

छात्रों को प्रतिदिन प्रार्थना स्थल पर दिया गया प्रशिक्षण इस विषय के पाठ्यक्रम का आवश्यक अंग होना चाहिए। शून्य पीरियड के रूप मे लगभग 40 मिनट का समय सामूहिक ड्रिल (पी टी.), प्रार्थना, सामूहिक प्रतिज्ञा, राष्ट्रगान, राष्ट्रीय गीत, मार्चिग गीत, सामूहिक नारे, योग शिक्षा इत्यादि के लिए दिया जा सकता है। सामूहिक गीत के अन्तर्गत 'सारे जहा से अच्छा' गीत भी सम्मिलित किया जा सकता है। यदा कदा किसी विशेषज्ञ, विद्वान, चिकित्सक, विशिष्ट अतिथि, योग प्रशिक्षक, शिक्षक छात्र स्काउट के द्वारा भाषण, प्रवचन, प्रदर्शन तथा प्रशिक्षण दिया जा सकता है। सभी सामूहिक दैनिक कार्यक्रम हारमोनियम, बैन्ड, ड्रम की आवाज के साथ समायोजित किए जाएं तो छात्रो के संतुलित विकास मे सहायता मिलेगी। उनमें एकता, अनुशासन, समय की पाबन्दी, पारस्परिक सहयोग और सामूहिक विकास की भावना का प्रसार किया जा सकेगा। राष्ट्रगान, राष्ट्रीय गीत, मार्चिंग गीत का अभ्यास राष्ट्रीय कैसेट के साथ स्वर मिलाकर किया जाए तो एकरूपता आएगी। प्रत्येक विद्यालय में छात्रों का एक बैण्ड होना चाहिए।

इस विषय मे वार्षिक प्रयोगात्मक परीक्षा से पूर्व छात्र तथा छात्राओ को एक सप्ताह तक सघन प्रशिक्षण तथा अभ्यास दिया जाना चाहिए। प्रत्येक मास के अन्तिम दिन शिक्षण कार्य के स्थान पर स्काउट/गाईड शिक्षा, खेलकूद, योग शिक्षा, भाषण कला का विकास जैसे कार्यक्रमो का आयोजन किया जा सके तो छात्रो के सर्वागीण विकास मे सहायता मिलेगी। हमारा लक्ष्य प्रत्येक छात्र तथा छात्रा का सर्वागीण विकास करना है। भारत के प्रत्येक युवक तथा युवती को राष्ट्र का सशक्त अनुशासित सैनिक बनाना है। केवल विषयो का ज्ञान देने से शिक्षा का लक्ष्य पूरा नहीं होता। इण्टरमीडिएट स्तर पर सभी छात्रो तथा छात्राओं के लिए एन. सी. सी. प्रशिक्षण अनिवार्य होना चाहिए। प्रार्थना स्थल पर प्रतिदिन सभी छात्र तथा छात्राएं सामूहिक प्रतिज्ञा का अभ्यास करें तो उनमे देशभक्ति, राष्ट्रीय एकता तथा राष्ट्रीय चरित्र की भावना का विकास किया जा सकेगा। सामूहिक प्रतिज्ञा का प्रारूप प्रस्तुत है—

'हम जाति, वर्ग, सम्प्रदाय तथा राजनीतिक दलबन्दी की संकीर्णताओ से ऊपर उठकर देशभक्ति, राष्ट्रीय एकता तथा राष्ट्रीय चरित्र के आदर्शो के प्रति समर्पित रहेगे। प्रत्येक परिस्थिति मे सत्य और सदाचार के ध्वज ऊचे रखेंगे। राष्ट्र के प्रति अपना कर्तव्य पूर्ण निष्ठा, ईमानदारी तथा परिश्रम से पूरा करेंगे। एक क्षण के लिए भी भारत के उज्ज्वल भविष्य में, भारत की एकता में, भारत के पवित्र सविधान मे हमारा विश्वास धूमिल न हो।

हमें गर्व है हम भारतीय है। हम एक थे, एक हैं, एक रहेंगे।

जयहिन्द। जयभारत !

विद्यालय के सभी शुल्क सत्र के आरम्भ तथा अत मे केवल दो किस्तो में विद्यालय के कार्यालय द्वारा एकत्र किए जा सके तो शिक्षको का पूरा समय शिक्षण कार्य मे, छात्रो के सर्वागीण विकास मे प्रयुक्त किया जा सकेगा। सभी आर्थिक दंड, विलम्ब दंड, अनुपस्थिति दंड समाप्त किए जा सकें तो शुल्क संग्रह का कार्य पर्याप्त सरल किया जा सकेगा। सभी माध्यमिक विद्यालयो का कार्य समय प्रातः के स्कूल मे अथवा दिन के स्कूल में 6 घण्टे 30 मिनट रखना न्यायसंगत होगा जिसमे 30 मिनट

मध्यावकाश के लिए दिए जा सकते है। आठ पीरियड का समय चक्र निर्मित किया जा सकता है। एक अतिरिक्त शून्य पीरियड प्रात' सभा मे दैनिक कार्यक्रम के लिए निर्धारित किया जा सकता है। विद्यालय मे शिक्षण कार्य के लिए पर्याप्त समय दिया जा सके तो प्राईवेट ट्यूशन की आवश्यकता नही रहेगी। राष्ट्रीय स्तर पर ट्यूशन की समस्या हल करने के लिए विद्यालयों में शैक्षिक वातावरण में सुधार करने की आवश्यकता है। प्रमाणित पाठ्यपुस्तकें, उपयोगी सहपाठ्यकर्मीय पुस्तके, उच्च स्तर के मॉडल प्रश्न-पत्र तथा शिक्षा को समर्पित शिक्षकों की आवश्यकता है। ग्रीष्म अथवा शीतकालीन अवकाश मे भी कक्षा 9 तथा 10 के लिए विशेष ट्यूटोरियल कक्षाओं का आयोजन किया जा सकता है। उसके लिए पृथक शुल्क लिया जा सकता है। सार्वजनिक अवकाशों की संख्या सीमित करने की आवश्यकता है। अर्द्धवार्षिक परीक्षा 31 दिसम्बर तक समाप्त की जा सके तो छात्रों को जनवरी मास मे एक महीने का शीतकालीन अवकाश दिया जा सकता है। शिक्षक 15 दिन का समय उत्तरपुस्तिकाओं का मूल्यांकन करने तथा परीक्षाफल तैयार करने में प्रयुक्त कर सकते हैं। शेष 15 दिन शीतकालीन अवकाश उपलब्ध कर सकते है। वार्षिक गृह परीक्षाएं 31 मई तक समाप्त की जा सकती है। छात्रो को जून मास ग्रीष्म अवकाश के लिए दिया जा सकता है। शिक्षक जून मास में 15 दिन उत्तरपुस्तिकाए जाचने तथा परीक्षाफल तैयार करने मे प्रयुक्त कर सकते है। शेष 15 दिन ग्रीष्म अवकाश उपलब्ध कर सकते हैं। शारीरिक एवं नैतिक शिक्षा विषय में प्रयोगात्मक परीक्षाए भी सुविधानुसार इन अवकाशो में ही ली जा सकती है।

कक्षा 10 तक हमें ऐसी परीक्षा तथा मूल्यांकन पद्धति का विकास करना चाहिए जिससे अधिकांश छात्रों को सफलता के पथ पर अग्रसर किया जा सके। छात्र परीक्षा में अनुचित साधनों की ओर लोभित न हो उनका सर्वागीण विकास किया जा सके तथा वर्ष भर उन्हे कुछ कर सीखने के लिए प्रेरित किया जा सके। वर्तमान परीक्षा पद्धति पर्याप्त दोषपूर्ण है। राष्ट्रीय स्तर पर कक्षा 1 मे प्रवेश लेने वाले 100 छात्रो में से लगभग 10 छात्र ही कक्षा 10 में उत्तीर्ण हो पाते हैं।

प्रत्येक विषय में न्यूनतम उत्तीर्णांक 15 प्रतिशत निर्धारित किए जा सकें तो भयमुक्त तथा ट्यूशनमुक्त शिक्षा प्रणाली का प्रसार किया जा सकेगा। 15-33-45-60-75-100 के अन्तराल से 5 ग्रेड निर्मित किए जा सकते हैं। प्रत्येक विषय मे 10 प्रतिशत अक वार्षिक लिखित कार्य उपस्थिति तथा मौखिक परीक्षा के आधार पर विषय अध्यापक द्वारा प्रदान किए जा सकें तो छात्रो को वर्ष भर नियमित रूप से काम करने की प्रेरणा मिलेगी। हाईस्कूल की बोर्ड द्वारा आयोजित परीक्षा में ये 10 प्रतिशत अक प्रधानाचार्य के संरक्षण मे विषय अध्यापकों की एक समिति द्वारा प्रदान किए जा सकते हैं। किसी विषय में 33 प्रतिशत से कम तथा 15 प्रतिशत से अधिक अक प्राप्त करने वाले छात्रों को उत्तीर्ण के स्थान पर 'प्रोन्नत' घोषित किया जाना चाहिए। इण्टरमीडिएट कक्षा में उन्ही छात्रो को प्रवेश दिया जाना चाहिए जो प्रत्येक विषय में न्यूनतम 33 प्रतिशत अक तथा योगफल मे 40 प्रतिशत अक प्राप्त करते हैं। किसी विषय में 15 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त करने वाले छात्रों को अनुत्तीर्ण घोषित किया जाना चाहिए। किसी एक विषय में 5 कृपाक देने की सुविधा तर्कसंगत होगी। हाईस्कूल शिक्षा का लक्ष्य छात्रो का शारीरिक, मानसिक तथा नैतिक विकास करना है। इसे विषयो का ज्ञान प्राप्त करने तक ही सीमित नही किया जाना चाहिए।

भारत शैक्षिक क्रान्ति के पथ पर अग्रसर है। शैक्षिक क्रान्ति के साथ भारत मे सामाजिक तथा आर्थिक क्रान्ति की आवश्यकता है। एक पंथ निरपेक्ष राष्ट्रीय कानून द्वारा भारत के प्रत्येक परिवार को दो शिक्षित बच्चों तक सीमित करने की आवश्यकता है। प्रत्येक परिवार के जीवन स्तर की श्रेणी के आधार पर वार्षिक उपभोग कर निर्धारित किया जा सके तो फिजूलखर्ची पर नियन्त्रण करने में सहायता मिलेगी। गरीब-अमीर के बीच की खाई पाटी जा सकेगी। इस धन से जन साधारण की शिक्षा तथा रोजगार की समस्याएं हल की जा सकेंगी। भविष्य में विशाल भवनों, मूल्यवान कारो, ऐश्वर्यपूर्ण कोठियों, प्रथम श्रेणी एवं वातानुकूलित रेलगाड़ियों,

दिखावटी ऐश्वर्य, अनावश्यक उपभोग, भ्रष्टाचार, अकर्मण्यता, अनुत्पादक कार्यकलाप, शराब, तम्बाकू तथा मादक द्रव्यों से राष्ट्र के धन तथा साधन बचाकर शिक्षा और रोजगार की समस्याएं हल की जानी चाहिए। देश को शान्ति, प्रगति और विकास के पथ पर तभी अग्रसर किया जा सकेगा।

आजादी के बाद इन पाच दशको में हम राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली तथा पथ निरपेक्ष राष्ट्रीय शिक्षा नीति को प्रभावशाली ढंग से लागू नहीं कर सके। सर्वांगीण प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा का प्रकाश भारत के प्रत्येक कुटीर तक नहीं पहुचा सके। शिक्षा के माध्यम से देशवासियो में देशभक्ति, राष्ट्रीय एकता तथा राष्ट्रीय चरित्र की भावना का विकास नहीं कर सके। राष्ट्रीय शिक्षा तथा राष्ट्रीय चरित्र के अभाव में आज देश मे जातिवाद, साम्प्रदायिकता, आतंकवाद, अपराध, भ्रष्टाचार, अकर्मण्यता तथा मन्दिर, मस्जिद, गिरजे, गुरुद्वारे की राजनीति का कहर बरपाया जा रहा है। राष्ट्र की भावनात्मक एकता खतरे मे है। देश अनेक जटिल समस्याओं से घिर गया है। समय की आवश्यकता है कि सभी राजनीतिक दल एकजुट होकर देश में राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली तथा पंथ निरपेक्ष राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू करने मे सहायता करे। सकल राष्ट्रीय उत्पाद का 6 प्रतिशत शिक्षा पर निवेश करने के लिए राष्ट्र को जागृत करें। शिक्षा के माध्यम से राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण किया जा सकेगा। राष्ट्र की समस्त समस्याए राष्ट्रीय शिक्षा तथा राष्ट्रीय चरित्र के द्वारा ही हल की जा सकेगी।

शिक्षा को राष्ट्रीय स्वरूप देकर ही हम लोकतन्त्र को राष्ट्र की आकांक्षाओ के अनुकूल राष्ट्रीय स्वरूप दे सकते है; जातिवाद, साम्प्रदायिकता, आतकवाद, भ्रष्टाचार तथा मन्दिर, मस्जिद, गिरजे, गुरुद्वारे की राजनीति से मुक्ति पा सकते हैं। प्रजातांत्रिक समाज तथा पथ निरपेक्ष भारत का निर्माण राष्ट्रीय शिक्षा की सुदृढ नीव पर ही किया जा सकेगा। हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, गरीब, अमीर सब बच्चो की शिक्षा एक समान होनी चाहिए। समय की आवश्यकता है कि एक राष्ट्रीय आयोग का गठन किया जाए जो प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक की शिक्षा में सुधार के लिए, उसे राष्ट्रीय स्वरूप देने के लिए एक कार्य योजना राष्ट्र के सम्मुख प्रस्तुत करे। शिक्षा सुधरेगी तो लोकतन्त्र सुधरेगा, देश सुधरेगा। □□

एच.ए.वी. इन्टर कॉलेज
सहारनपुर, उत्तर प्रदेश

उच्च शिक्षा में स्ववित्त पोषण

❑ सुशील कुमार दुबे
❑ कंचन दुबे

उच्च शिक्षा संस्थाएं समाज का ही एक लघु रूप हैं। जब समाज में अनेकों बुराइयां हैं तो शिक्षा भी अछूती नहीं रह सकती। प्रत्येक संस्थान जो कि निजी प्रबंध द्वारा संचालित है, में अपने कर्मचारियों के शोषण की भावना होती है। प्रत्येक सार्वजनिक संस्थान जिसमें कि व्यवसाय की सुरक्षा होती है, में कार्य के प्रति मनोवृत्ति का न होना शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करता है। शिक्षकों की पर्याप्त संख्या, उनका वेतन, वेतन वृद्धि, प्रोन्नति, नियुक्ति की प्रकृति आदि के बारे में मानकों आदि को अनदेखा न किया जाए। शिक्षा में गुणात्मक सुधार के लिए शिक्षक व छात्र दोनों की समस्याओं के समाधान हेतु मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण की आवश्यकता है। साथ ही स्ववित्त पोषित संस्थाओं की गोपनीय जांच के लिए प्रत्येक विश्वविद्यालय में एक नियंत्रण एवं निरीक्षण प्रकोष्ठ होना चाहिए जो कार्यक्रमों की गुणवत्ता पर पैनी नजर रखे।

उच्च शिक्षा एक महत्वपूर्ण शैक्षिक स्तर है, जहां अध्ययन, अध्यापन एवं अनुसंधान की क्रियाएं एक साथ चलती है। इन क्रियाओ के संचालन का दायित्व विश्वविद्यालयों या उच्च शिक्षा संस्थाओं पर होता है, जो उच्च शिक्षा प्रदान करने का कार्य करती हैं। इस संस्थाओं का आधारभूत ढाचा इतना व्यापक होता है कि बिना किसी संतुलित प्रबंध के सफलता प्राप्त करना कठिन होता है। शिक्षण संस्थाओ द्वारा किया जाने वाला व्यय प्राय' उनकी आय के स्रोतो से काफी अधिक होता है, परम्परागत प्रबंधन और आय के सीमित स्रोतो पर भारी पड़ते व्यय उच्च शिक्षा की चिता का मूल कारण है।

स्ववित्त पोषण की अवधारणा

स्ववित्त पोषण की अवधारणा है कि 'जो व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करे वही उसका मूल्य अदा करे।' अर्थात् अर्थशास्त्र की भाषा में जो व्यक्ति वस्तु का उपभोग करेगा वही उसका मूल्य भी चुकाएगा। पुनैया समिति ने 1992 में उच्च शिक्षा मे स्ववित्त पोषण पर अपना मत प्रकट करते हुए कहा कि "कोई भी समाज जो गरीबी और गैर-बराबरी से जूझ रहा हो, वह विश्वविद्यालयों में हो रही फिजूलखर्ची के सब्सिडीकरण का समर्थन नही कर सकता अथवा सम्पन्न तबको को उच्च शिक्षा पर हो रहे खर्च से बचे रहने की इजाजत नही दे सकता। इसलिए उच्च शिक्षा पर हो रहे वास्तविक खर्च का बड़ा हिस्सा उनसे वसूला जाना चाहिए।"

स्ववित्त पोषण का अर्थ एवं परिभाषा

स्ववित्त पोषण को आज निजीकरण, उदारीकरण, व्यावसायीकरण, कैपिटेशन शुल्क या महाविद्यालय के रूप में देखा जा रहा है। इसलिए आवश्यक है कि पहले इनका अर्थ समझ लिया जाए—

- ❑ निजीकरण से तात्पर्य राज्य से हटकर किसी उपक्रम,

योजना या नीति को नियत्रण या दायित्व प्रदान करना है।

- उदारीकरण नियम एव कानून के तहत सरकार द्वारा दी गई ढील की प्रक्रिया को कहते हैं।
- व्यावसायीकरण का आशय लाभ प्राप्ति के उद्देश्य से शोषण करने को कहते हैं।
- कैपिटेशन शुल्क महाविद्यालय से तात्पर्य ऐसे संस्थान जो राज्य द्वारा संचालित होने के साथ राज्य द्वारा प्रदत्त वित्त पर विश्वास न करके उच्च शुल्क प्राप्त करते है।

स्ववित्त पोषण का अर्थ है किसी भी सस्थान के लिए स्वय के संसाधनो द्वारा वित्तीय सहायता प्राप्त करना, किन्तु इन सब के बाद भी स्ववित्त पोषण को इस तरह परिभाषित किया जा सकता है– "स्ववित्त पोषण संस्थागत व्ययों के वित्तीय स्रोतों को बढाने एवं उन्हें मजबूत बनाने की प्रक्रिया है।" जो संस्थाएं स्वय के आर्थिक प्रयासों के परिणामस्वरूप विकसित है, स्ववित्त पोषित संस्थाएं कहलाती है। सरकारी नीतियो के परिणामस्वरूप इनका जन्म हुआ और निजी हाथों में जाने के कारण अनेक विवादो का प्रादुर्भाव हुआ।

आवश्यकता

स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात् 55 वर्षो मे उच्च शिक्षा की अपनी एक अलग छवि विकसित हो पाई है। इसके पीछे सरकार द्वारा प्रदत्त अनुदान और सब्सिडी का महत्वपूर्ण योगदान है। सरकार के इन्हीं प्रयासों के कारण उच्च शिक्षा की वर्तमान प्रगति दिखाई दे रही है। सरकार सदैव उच्च शिक्षा सस्थाओं को अनुदान देती रही है, परन्तु इनके द्वारा निरंतर इसे बढ़ाए जाने की मांग चलती रही। भारत मे 90 के दशक में उदारीकरण की प्रक्रिया के आरम्भ से सरकार ने इस क्षेत्र से अपनी भागीदारी कम करके निजी क्षेत्र की भागीदारी बढ़ाने का निर्णय लिया। सभी बालक-बालिकाओं को अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा एवं अनिवार्य नि:शुल्क शिक्षा प्रदान न कर पाने एवं सभी नागरिकों को साक्षर बनाने के संवैधानिक सकल्प को पूरा न कर पाने की स्थिति मे इस क्षेत्र में सरकार को अधिक ध्यान देने तथा उच्च शिक्षा मे हो रहे फिजूलखर्च को रोकने के लिए दी जाने वाली सहायता राशि को कम करने के लिए विवश किया है।

शिक्षा मे निरतर बढ़ता हुआ घाटा, आवश्यकता से अधिक अनुदान पर निर्भरता, भौतिक एव मानवीय संसाधनो का अनुचित प्रबंध, शिक्षा की बढ़ती हुई मांग, देश के विकास के लिए शिक्षा की आवश्यकता आदि के कारण सरकार द्वारा उच्च शिक्षा एव तकनीकी शिक्षा को निजी हाथों में देने की ओर उत्तरोत्तर कदम बढ़ाए जा रहे है। बढती भीड़ और वर्तमान मे कम पड़ते शैक्षिक संस्थानों के कारण स्ववित्तीय शिक्षण संस्थानों की आवश्यकता को निरतर महसूस किया जा रहा है। अत उच्च शिक्षा की व्यवस्था करने के लिए नए सस्थानों को स्थापित करने की आवश्यकता है।

भारत का उच्च शिक्षा तत्र विश्व का तीसरा सबसे बडा उपक्रम माना जाता है। जिसमे 238 विश्वविद्यालय एव 11089 महाविद्यालय एवं उच्च शिक्षा संस्थाए शामिल है। इतने बड़े तंत्र में प्रतिवर्ष 75 लाख के आसपास छात्र प्रवेश लेते है तथा तत्र की प्रतिवर्ष लागत 100 करोड़ से भी अधिक होती है। स्पष्ट है कि इतनी बड़ी लागत की व्यवस्था सरकार अकेले करने में असमर्थ है। परिणामस्वरूप उच्च शिक्षा आर्थिक संकट का सामना कर रही है। उच्च शिक्षा के आधारभूत ढाचे की व्यवस्था करने के लिए वित्त पोषित शिक्षा और स्ववित्त पोषित पाठ्यक्रमों की महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

स्ववित्त पोषित पाठ्यक्रम एवं शुल्क संरचना

अनेक शिक्षण संस्थाएं विभिन्न प्रकार के स्ववित्त पोषित पाठ्यक्रमो का संचालन कर रही हैं जिनसे कि पाठ्यक्रमों पर किया जाने वाला निवेश प्राप्त किया जा सके। इस तरह के पाठ्यक्रमों को उदाहरण के रूप मे देखा जा सकता है।

प्रासंगिकता

स्ववित्त पोषण की अवधारणा वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे प्रासंगिक हो सकती है, किंतु विसंगतियों से मुक्त नहीं मानी जा

स्नातक/स्नातकोत्तर डिग्री पाठ्यक्रम	*साधारण एवं सामान्य शुल्क*	*स्ववित्त भुगतान*	*अनिवासी भारतीय*
एम बीए (2 वर्ष)	रुपए 8,000/- प्रतिवर्ष	30,000/- प्रतिवर्ष	75,000/- प्रतिवर्ष
एम.साइको	" "	" "	" "
एच आर.डी एस. (2 वर्ष)	8,000/- प्र व	30,000/- प्र.व.	75,000/- प्र.व
एम.बी.ए –सांध्य (3 वर्ष) 6 सेमेस्टर	9,000/- प्र.व.	—	—
एम.एच.आर एम. (2 वर्ष)	21,550/- प्र.व		
एम.ए. (साध्य 2 वर्ष)	2,010/- प्र.व		
बी.एस.सी–कम्प्यूटर	4,000/- प्र.व.		
बी ए./बी एस.सी.–उद्योग एव मत्स्य	1,200/- प्र व		
बी.ए /बी एस.सी./बी.काम. (त्रिवर्षीय)	1,560/- प्र व.		
बी.बी.ए. (त्रिवर्षीय 6 सेमे.)	4,000/- प्र.व.	15,000 प्र सेमे.	8,000/- प्र. सेमे.
बी.सी.ए. (त्रिवर्षीय)	12,000/- प्र.व	25,000/- प्र व.	6,000/- तीन वर्ष हेतु
बी.एस.सी.–पर्यावरण विज्ञान (त्रिवर्षीय)	15,340/- प्र.व.		
बी.एस.सी.–उपकरण निर्माण (त्रिवर्षीय)	30,000/- प्र.व.		

डिप्लोमा पाठ्यक्रम	*साधारण/सामान्य शुल्क*	*भुगतान शुल्क राशि*
पी जी. डिप्लोमा–फैशन तकनीकी (2 वर्ष)	आई एफ.टी. + वि.वि. शुल्क	
एच.एस.सी.–डिप्लोमा ग्रामीण महिलाओ हेतु (1 वर्षीय)	एच.आर डी. + वि.वि. शुल्क	
पी.जी.डी सी ए. (1 वर्ष)	12,000/- प्रतिवर्ष	30,000 प्र. व
पी.जी.डी.वी.एम (1 वर्ष 2 सेमे.)	2,000/- प्रति सेमे.	
पी.जी डी.एम.इन आइ.आर पी.एम (1 वर्ष)	3,550/- प्रतिवर्ष	
पी.जी डी.एच आर.डी (1 वर्ष)	3,300/- प्रतिवर्ष	
पी.जी.डी सी सी.पी (1 वर्ष)	2,000/- प्रतिवर्ष	

प्रमाण-पत्र पाठ्यक्रम	*सामान्य/साधारण शुल्क*
कम्प्यूटर शिक्षा आधार पाठ्यक्रम (90 दिन)	850/- मात्र पूर्ण पाठ्यक्रम
कम्प्यूटर शिक्षा वेब डिजाइनिंग पाठ्यक्रम (120 दिन)	1,700/- मात्र पूर्ण पाठ्यक्रम
कम्प्यूटर शिक्षा C++ तथा ओरेटल 8 (120 दिन)	1,700/- मात्र पूर्ण पाठ्यक्रम
कम्प्यूटर शिक्षा आधार पेंटिग (180 दिन)	2,500/- मात्र पूर्ण पाठ्यक्रम

स्रोत– यूनीवर्सिटी न्यूज, वॉल्यूम 40(43), अक्तूबर 28–नवम्बर 03, 2002, पृ -6।

सकती। भारत देश मे पूंजीवादी व्यवस्था को आरभ करने के रूप में स्ववित्त पोषण को देखा जा रहा है। इससे शिक्षा इतनी महगी हो जाएगी कि आर्थिक दृष्टि से पिछड़े और प्रतिभा सम्पन्न छात्र इसमे प्रवेश प्राप्त नहीं कर सकेगे। जबकि 'पूजीवादी' शिक्षा के पोषक और शोषक होंगे। शिक्षा के इतिहास में निश्यन्दन का सिद्धात इस व्यवस्था के परिणामों से बिलकुल मेल खाता है। इस प्रक्रिया पर आधारित संस्थानो से उत्पन्न शैक्षिक अवसरों का लाभ वे छात्र ही उठा सकेंगे जो आर्थिक रूप से सम्पन्न होगे। उच्च शिक्षा का परिदृश्य पूर्णतया विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैक, अतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष जैसी संस्थाओं के उद्देश्य के प्रतिबिम्ब को रेखाकित कर रहा है। अत शिक्षा जैसे संवेदनशील क्षेत्र को स्ववित्त पोषण प्रक्रिया में लाने से पहले बहुत कुछ विकासशील देश और अविकसित नागरिको के विषय में सोचना चाहिए था।

समस्त प्रतिवेदन, ससाधनो मे वृद्धि करके उच्च शिक्षा सस्थानो के आर्थिक स्तर मे सुधार की ओर सकेत करते है इसलिए केन्द्र व राज्यों पर शिक्षा सस्थानों की निर्भरता को कम किया गया है। ऐसे उच्च शिक्षा संस्थानों का आरम्भ 1970 के दशक मे हुआ था। इस तरह के कॉलेज आध्र प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, तमिलनाडु आदि राज्यों में शीघ्रातिशीघ्र स्थापित हुए। यद्यपि इनका उद्देश्य लाभ अर्जित करने से सम्बंधित था किन्तु फिर भी कुछ पुरानी संस्थाएं गुणवत्ता की पहचान हेतु संघर्षरत रहीं जबकि अधिकाश उनमें से आलोचना की परिधि मे आई। यह दशक स्ववित्त पोषित संस्थाओं का 'उदय काल' था।

वर्ष 1993 मे जब उच्चतम न्यायालय ने प्रवेश एव शुल्क आदि के लिए नियम निर्धारित किए और प्रवेश के लिए सीटों का 50 प्रतिशत आरक्षण निःशुल्क व शेष 50 प्रतिशत सीटों के लिए भुगतान देय प्रक्रिया अपनाने हेतु सुझाव दिया। फलस्वरूप उत्तर प्रदेश, हरियाणा, मध्य प्रदेश राज्यों मे निजी, उद्योग एवं व्यापार संगठनों द्वारा स्ववित्त पोषित संस्थाओं को तीव्र गति से आरम्भ किया गया। विशेष बात यह है कि सरकार इस प्रकार की सस्थाओ का पक्ष ले रही है क्योंकि उसका अनुदान देने और अनुदान लेने की परम्परा से पीछा जो छूट रहा है।

एक बहुत बडी संख्या मे स्नातक स्तरीय स्ववित्त पोषित पाठ्यक्रमों को प्रस्तावित करने की प्रथा को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की योजनाओ द्वारा सहयोग प्राप्त व्यावसायिक एव कैरियर केन्द्रित पाठ्यक्रमों को प्रोत्साहन दिया गया। विज्ञान और तकनीकी विभाग से वित्तीय सहायता प्राप्त प्रबंधकीय विकास कार्यक्रमो ने कॉलेजो एव विश्वविद्यालयो को स्व-सहकारी पाठ्यक्रमो को चलाने के लिए मदद दी है। उच्च शिक्षा सस्थाओं के स्तर पर स्ववित्तीय पाठ्यक्रम शीघ्रता से बढ रहे हैं, इनका उद्देश्य प्रथमत नए उभरते हुए व्यवसायो मे प्रशिक्षित व्यक्तियों की बाजार मांग को पूरा करना तथा द्वितीय पारम्परिक वित्तीय साधनो की जगह अधिक आतरिक संसाधनों को उत्पन्न करना है।

स्ववित्त पोषित शिक्षा नीति

हमारे देश के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968, 1986) दो बार बनाई गई, किन्तु उसका सही ढंग से पालन फिर भी नहीं हो सका। विश्वविद्यालयो व उच्च शिक्षा संस्थाओ के अनुदान मे कटौती, उदारीकरण की प्रक्रिया, निजी क्षेत्र को महत्व, शिक्षा को 'नॉन मैरिट गुड्स' की श्रेणी में रखना तथा प्रधानमंत्री द्वारा गठित समिति (24 अप्रैल, 2000) द्वारा "ए पॉलिसी फ्रेमवर्क फॉर रिफॉर्म इन एजुकेशन" मे निजीकरण आदि पर जोर दिया गया। अम्बानी-बिडला समिति ने भी शिक्षा को बाजारोन्मुखी बनाने की नीति पर ही बल दिया। शिक्षा की नीति मे दिशाहीनता तब दिखाई पड़ने लगी जब सातवी पचवर्षीय योजना में शिक्षा के नीति निर्धारक तथ्य को ही बदल दिया गया। फलस्वरूप मानव संसाधन विकास मंत्रालय की नवनिर्मित नीति के अतर्गत निजी क्षेत्र मे विद्यालय से लेकर विश्वविद्यालयों तक को मान्यता प्रदान की गई। सरकारी नीति के क्रियान्वयन से शिक्षा जैसे संवेदनशील क्षेत्र में निजी क्षेत्र का पूजी निवेश प्रोत्साहित करने के लिए कर राहत देने का फैसला भी किया

गया किन्तु सामाजिक पहलू फिर भी उपेक्षित ही रहा। उच्च शिक्षा की दुर्गति के लिए आर्थिक उदारीकरण का क्रियान्वयन प्रमुख कारण रहा है। विश्व बैक तथा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की दृष्टि में सरकार उच्च शिक्षा को सब्सिडी देकर पैसा बेकार कर रही है। इन संस्थाओं के सुझावो को सरकार ने गम्भीरता के साथ लिया है, जिसके फलस्वरूप उच्च शिक्षा के अनुदान में कटौती व निजी स्रोतों से धन जुटाने की अवधारणा की नीति का पालन करने पर बल दिया जा रहा है। शिक्षक समुदाय द्वारा इस नीति का विरोध किया जा रहा है, परन्तु विरोध के फलस्वरूप सरकार यू.जी.सी. एक्ट में संशोधन करके विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग बनाने जा रही है जिससे सरकार अपने उद्देश्य मे सफल हो सके।

स्ववित्त पोषण का सशक्तीकरण

उच्च शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाओं का आधारभूत ढांचा व्यापक होने के कारण आय से व्यय अधिक होते है, यह एक प्रमुख समस्या है। जिन विश्वविद्यालयो एव उच्च शिक्षा संस्थाओ की आय उनके व्यय से कम है, उन्हे अपनी आय के स्रोत खोजने चाहिए। शिक्षा के विशेषीकरण की मांग से सामाजिक, वैज्ञानिक, आर्थिक, तकनीकी एवं प्रबंधन जैसे पाठ्यक्रमो की आवश्यकता महसूस की जा रही है। इसके लिए उच्च शिक्षा संस्थाओ को अपनी आय के स्रोत बढ़ाने और शिक्षा के विशेषीकरण की मांग को पूरा करने के लिए परिसरीय एवं स्ववित्त पोषित पाठ्यक्रमों का आयोजन व संचालन करना चाहिए।

इसके लिए एक संगठित रणनीति बनाने की आवश्यकता है, जिसमे शुल्क सरचना तथा शिक्षण कार्यक्रमों पर व्यय, परीक्षा एवं अन्य संस्थागत उच्च शिक्षा के व्यय शामिल किए जा सकते है। इन संस्थाओं द्वारा इस प्रकार के पाठ्यक्रमों का आयोजन किया जाए जिनमे अधिक से अधिक राजस्व या लाभ प्राप्त करने की अधिकतम संभावना हो, साथ ही छात्र भी इस तरह के पाठ्यक्रमो मे अधिक व्यय करने की इच्छा रखते है। पाठ्यक्रमों की अवधि के आधार पर अल्पकालिक एवं दीर्घकालिक पाठ्यक्रमों का आयोजन, अनिवासी भारतीयों तथा विदेशी छात्रो को इस ओर आकर्षित करने की रूपरेखा तैयार की जानी चाहिए। उच्च शिक्षा में व्यावसायिक, तकनीकी, कम्प्यूटर शिक्षा, प्रबधन, कानून, अध्यापक शिक्षा, पर्यावरण शिक्षा आदि की सरचना हेतु नियमित एव दूरवर्ती शिक्षा पद्धति के पाठ्यक्रमों का संचालन और आयोजन किया जा सकता है। यह सब करने के लिए उच्च प्रशासनिक क्षमता वाले प्रशासक की भूमिका महत्वपूर्ण होगी। जिससे उच्च शिक्षा को स्ववित्त पोषण के द्वारा आर्थिक निर्भरता प्राप्त हो सके।

स्ववित्त पोषित शिक्षा प्रणाली में गुणवत्ता

अध्यापक शिक्षा के अतर्गत मुख्य रूप से बी.टी.सी., बी. एड , एम.एड. तथा समकक्ष पाठ्यक्रम संचालित किए जाते हैं। इन कार्यक्रमों की बढ़ती माग तथा विश्वविद्यालयों को दी जाने वाली अनुदान राशि में विश्वविद्यालय आयोग द्वारा कटौती के कारण स्ववित्त पोषित संस्थाओ की संख्या में वृद्धि हुई है। इन सस्थाओ को मिली स्वायत्तता के कारण शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों की गुणवत्ता पर प्रश्न उठना स्वाभाविक हो गया है। प्रवेश के नियम, आधार, कक्षा-शिक्षण, परीक्षएं एव साज-सज्जा आदि को निर्धारित करने एव समय-समय पर निरीक्षण करने के लिए एन.सी. टी.ई., यू.जी.सी., एन.ए.ए.सी., एन.सी.ई.आर.टी द्वारा क्रमश: हस्तक्षेप करना होगा तभी इन कार्यक्रमो में गुणवत्ता आ सकेगी।

उच्च शिक्षा सस्थाएं समाज का ही एक लघु रूप हैं। जब समाज में अनेको बुराइयां हैं तो शिक्षा भी अछूती नही रह सकती। प्रत्येक संस्थान जो कि निजी प्रबंध द्वारा संचालित है, में अपने कर्मचारियों के शोषण की भावना होती है। प्रत्येक सार्वजनिक संस्थान जिसमें कि व्यवसाय की सुरक्षा होती है, मे कार्य के प्रति मनोवृत्ति का न होना शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करता है। शिक्षको की पर्याप्त सख्या, उनका वेतन, वेतन वृद्धि, प्रोन्नति, नियुक्ति की प्रकृति आदि के बारे में मानकों आदि को अनदेखा न किया जाए। शिक्षा मे गुणात्मक सुधार के लिए शिक्षक व छात्र दोनो की समस्याओ के समाधान हेतु मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण की आवश्यकता है। साथ ही स्ववित्त पोषित

संस्थाओ की गोपनीय जाच के लिए प्रत्येक विश्वविद्यालय में एक नियत्रण और निरीक्षण प्रकोष्ठ होना चाहिए जो कार्यक्रमों की गुणवत्ता पर पैनी नजर रखे।

सरकार भी शिक्षा की गुणवत्ता पर नियत्रण रख सकती है। दोषारोपण की बजाए नियमित निरीक्षण पर्यवेक्षण तथा नियत्रण आदि के द्वारा गुणवत्ता मे वृद्धि की जा सकती है। स्ववित्त पोषित सस्थाओं द्वारा यदि अच्छी शिक्षा प्रदान की जाती है तो अनुदान प्राप्त संस्थाओ के लिए स्वस्थ प्रतियोगिता का उदाहरण बन सकती है। उच्च शिक्षा के उद्देश्य ज्ञान की सर्वोत्कृष्टता एवं सत्यान्वेषण है। इसमे गुणात्मक परिवर्तन के लिए मुदलियर आयोग (1953), शिक्षा आयोग (1964), नई शिक्षा नीति (1986) तथा मेहरोत्रा समिति की अनुसशाओ पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

यह सत्य है कि सामान्य एव वैयक्तिक तौर पर उच्च शिक्षा संस्थानो की गुणवत्ता मानको में कमी आ रही है। कष्टदायक तथ्य यह है कि इन सस्थाओ मे कार्यरत शिक्षक न तो अपने कार्य से संतुष्ट है और न ही वहां के उत्पादन से। ऐसा नहीं है कि केवल स्ववित्त पोषित संस्थान ही इस आलोचना के केंद्र हैं बल्कि सरकारी अनुदान प्राप्त एवं स्वायत्तशासी संस्थाए सभी एक ही नाव पर सवार हैं। तब केवल स्ववित्त पोषित सस्थानो पर शिक्षा मे गुणवत्ता ह्रास हेतु दोषारोपण कैसे किया जा सकता है। हम केवल आशा कर सकते हैं कि इन स्ववित्त पोषित सस्थानो को व्यक्ति व समाज की आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिए। साथ ही कुछ निश्चित मानको को स्वीकार कर दोनों प्रकार के संस्थानों के बीच के अतर को समाप्त किया जा सकता है। सामान्य तौर पर यह भी माना जाता है कि जब तक कोई शिक्षण सस्था या विश्वविद्यालय छोटा रहता है तभी तक गुणवत्ता का उचित प्रबंधन किया जा सकता है किन्तु जैसे-जैसे संस्था का विस्तार होता है गुणवत्ता का ह्रास भी स्वाभाविक रूप से होता जाता है।

स्ववित्त पोषित संस्थाओं के मॉडल

उच्च शिक्षा के विकास व स्ववित्त पोषित पाठ्यक्रमों के संचालन के लिए भारत मे अनेक प्रकार के नमूनो पर आधारित स्ववित्त सस्थाएं है जैसे-जैसे इनका विकास होता गया इनके विकास का मॉडल बन गया। इसके उदाहरण इस प्रकार देखे जा सकते है।

- **स्पान्सरिंग मॉडल**— यह मॉडल सहकारिता के सिद्धांत पर आधारित है। जिनको आवश्यकता है कि उनके प्रबधकीय और अधिकारी वर्ग को ज्ञान व गुणो मे निपुण होना चाहिए, इसके लिए उनको देश की प्रतिष्ठित एव उत्तम नेतृत्वशाली संस्थाओं से कुछ समय के लिए प्रशिक्षण हेतु सबंधित कर दिया जाता है। भारत मे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान द्वारा इस प्रकार के कुछ कार्यक्रमो का आयोजन किया जाता है। यह कार्यक्रम प्रायोजक संस्था द्वारा तय किया जाता है। जिसमे सहकारिता वर्ग की कई कम्पनिया सलग्न होती है। निर्माण तकनीकी, शक्ति निर्माण तकनीकी, दूरसंचार तकनीकी आदि इसके कुछ उदाहरण महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

इस तरह की प्रायोजक सस्थाओ के अन्तर्गत निर्धारित नियमो, दशाओं के कारण प्रत्येक पाठ्यक्रम के लिए शुल्क सरचना मे रु. 1.35 लाख प्रति छात्र लेकर भारती इण्टरप्राइज, दूरसचार तकनीकी मे एम टेक. पाठ्यक्रम संचालित करती है और प्रारम्भिक तौर पर 10 छात्रों को प्रवेश देती है। इन सभी पाठ्यक्रमों के सचालन का मुख्य बिन्दु गुणवत्ता एव देश के लिए अच्छे मानवीय ससाधनों को विकसित करना है। इन संस्थाओं पर इस बात के लिए दबाव डाला गया है कि शिक्षा को लाभांश कमाने वाले व्यवसाय के रूप मे नही समझा जाना चाहिए और स्ववित्त पोषित शिक्षा का यह उद्देश्य भी नही है।

- **मार्केटिंग मॉडल**— ऐसे संस्थान जो पहले से ही केन्द्र या राज्य से विभिन्न पाठ्यक्रमो को संचालित करने के लिए वित्तीय सहायता प्राप्त कर रहे हैं, उनको भी स्नातक स्तर पर अनेक प्रकार के पाठ्यक्रमो को स्ववित्त पोषित शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत व्यवस्थानुसार की अनुमति है। इस प्रणाली से केन्द्र व राज्य पर जहा वित्तीय भार कम होता है वही ऐसे छात्रों को अवसर प्रदान करता है जो अधिक शुल्क देकर व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की ओर प्रेरित होते

है क्योंकि इस प्रकार के पाठ्यक्रम बाजार माग पर आधारित होते है। इस तरह के पाठ्यक्रमों का शिक्षण शुल्क विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा निर्धारित होता है और प्रवेश परीक्षा संबधित विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित की जाती है।

भारत में दिल्ली विश्वविद्यालय के विभिन्न महाविद्यालयो द्वारा ऐसे पाठ्यक्रमो का सचालन किया जाता है जिनमे कम्प्यूटर अनुप्रयोग में स्नातक, डिप्लोमा इन ग्लोबल बिजनेस तथा मास कम्युनिकेशन आदि कार्यक्रम सम्मिलित हैं। जबकि इन पाठ्यक्रमों को सचालित करने के लिए विश्वविद्यालयो और महाविद्यालयो के पास कोई स्थाई सकाय नही है। विशिष्ट तौर पर केवल अशकालिक या अतिथि सकाय ही हैं। इस कारण इन्हे एस.एफ.सी.एस. की गुणवत्ता हेतु विभिन्न कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। इनमें सबसे मजे की बात यह है कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और दिल्ली विश्वविद्यालय के उचित मार्गदर्शन के अभाव मे रूपरेखा तैयार करना तथा बाजार माग के अनुसार इन पाठ्यक्रमों को सचालित करना, सम्बद्ध महाविद्यालयों के लिए कठिन हो रहा है।

● **मणिपाल मॉडल**– इस प्रकार के मॉडल का उपागम है कि ऐसे छात्र जो शिक्षा शुल्क देने के इच्छुक है, उन्हे उनकी इच्छानुसार शिक्षा प्राप्त करने की सुविधा प्रदान की जानी चाहिए। भारत मे निजी उपक्रमों को देश के विकास से सम्बंधित व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा देने हेतु स्थाई और अस्थाई प्रबध व प्रयास करने चाहिए। उच्च शिक्षा में मणिपाल अकादमी इस तरह का एक उदाहरण है जो कि स्वय मे प्रबधित तथा वित्तीय सहायता प्राप्त सबसे पहला सस्थान है। इस मॉडल की कल्पना के पीछे डा. टी. एम.ए.पाई का उल्लेखनीय योगदान है।

● **फ्रेंचाइजिंग मॉडल**– इस अवधारणा पर आधारित संस्थाओ को विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रमों का चयन करना होता है और सबधित विश्वविद्यालय के मानको का अनुपालन करना होता है; जबकि इस प्रकार के सस्थानो को सम्मानित विश्वविद्यालय से कोई अनुदान नहीं मिलता है। इस तरह के संस्थानों को संस्था तैयार होने व शुरू होने से पहले ही भुगतान की दशाओ व सीटों की स्थिति के लिए आज के विषय में सहमत होना होता है। गुरु गोविन्द सिह विश्वविद्यालय एव इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय, दिल्ली मे इस प्रकार के 47 सस्थान हैं, जो स्ववित्त पोषित पाठ्यक्रमो को संबधित संस्थाओं मे विभिन्न व्यावसायिक क्षेत्रों– चिकित्सा, अभियांत्रिकी, प्रबंधन आदि में संचालित कर रहे है। इन पाठ्यक्रमों के लिए राष्ट्रीय स्तर पर प्रवेश परीक्षा आयोजित की जाती है जिसमे प्रवेश के लिए कुल सीटो की 85 प्रतिशत दिल्ली के छात्रों और शेष 15 प्रतिशत सीटे बाहर के अन्य विश्वविद्यालयो के छात्रो के लिए आरक्षित रहती है। पाठ्यक्रमो की अवधि व शुल्क अलग-अलग निर्धारित हैं। सम्बधित सस्थाओ में संचालित पाठ्यक्रमों के प्रबधन हेतु पंजीकरण सस्था का गठन किया है, जो आंतरिक सुविधाओं के साथ-साथ भवन तथा विभिन्न पाठ्यक्रमों के सकाय के विषय में अपनी राय देता है।

सुझाव

हमारी शिक्षा व्यवस्था भी अमेरिका, स्वीडन, फ्रास, कनाडा, चीन, उत्तरी कोरिया के समान होनी चाहिए। आधुनिक युग में उच्च शिक्षा के निजीकरण एवं व्यावसायीकरण की प्रक्रिया अपने चरमोत्कर्ष पर है। इसमे मुख्यतया चिकित्सा, प्रबंधन, अभियात्रिकी, सूचना एवं संचार, कम्प्यूटर एव प्रौद्योगिकी, बाजार इत्यादि जैसे शिक्षा के क्षेत्र में बड़ी तीव्र गति से निजीकरण हो रहा है। उदारात्मक दृष्टिकोण एवं वैश्वीकरण के प्रचार एव प्रसार को ध्यान में रखते हुए कोई भी सरकार न तो स्ववित्त पोषण की नीति मे बदलाव कर सकती है और न ही उच्च शिक्षा संस्थाओ को बंद कर सकती है। शिक्षा में निजीकरण राष्ट्र के विकास के लिए एक घातक कदम है। संयुक्त राज्य अमेरिका शिक्षा पर अपने वजट का 19 प्रतिशत खर्च करता है जब कि भारत जैसे विकास शील देश का यह व्यय मात्र 6 प्रतिशत है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने नौवीं पंचवर्षीय योजना में उच्च शिक्षा के लिए 829 करोड़ रुपए की मांग की थी किन्तु इसे मात्र 351 करोड़ रुपए ही आबंटित किए गए। इन परिस्थितियों में उच्च शिक्षा अनुदान आयोग सभी संस्थाओं को अनुदान उपलब्ध नहीं करा सकता। फलस्वरूप स्ववित्त

पोषित नए व पुराने सस्थानों को स्ववित्त प्रक्रिया में लाने की आवश्यकता है। इसके लिए निम्न तथ्यों पर ध्यान दिया जा सकता है—

एकीकृत पाठ्यक्रम— सभी स्ववित्त पोषित सस्थाओ के पाठ्यक्रमो मे एकरूपता बनी रहे इसके लिए सचालक संस्थानो को समय-समय पर पाठ्यक्रमो का मूल्याकन करते रहना होगा।

आवश्यकता की जांच— इसके लिए सर्वप्रथम सर्वेक्षण द्वारा यह जाच कर लेनी चाहिए कि राज्य के स्थान विशेष पर विभिन्न व्यवसायो हेतु प्रशिक्षित मानव शक्ति की आवश्यकता है या नही। तत्पश्चात् ही पाठ्यक्रम विशेष को स्थान विशेष पर प्रारम्भ किया जाना चाहिए। इससे प्रशिक्षित लोगो की माग और आपूर्ति मे निरतर सतुलन बना रहेगा।

शुल्क सरचना— शिक्षा सचालक सस्थान जैसे— ए.आई.सी.टी.ई., एम.सी.आई., एन.सी.टी.ई., एन.ए.ए.सी. आदि ने विभिन्न स्ववित्त पाठ्यक्रमो को संचालित करने के लिए शुल्क ढाचे की निश्चित रूपरेखा प्रस्तुत नही की है। मेरा दृष्टिकोण यह है कि उपरोक्त वर्णित सभी संस्थानों को विभिन्न राज्यो व उनके अनुकूलन के आधार पर एक आदर्श ढाचा तैयार करने की सलाह देनी चाहिए। यह प्रवेश पाने वालो के शोषण एव स्ववित्त पोषित संस्थाओं के अधिकतम लाभाश पर रोक लगाएगा।

शिक्षण सकाय— विभिन्न राज्यों मे स्ववित्तीय सस्थाओ में वृद्धि एक सटीक समस्या को प्रस्तुत कर रही है। इस ओर सचालक संस्थानो व स्ववित्त पोषित सस्थाओ के मालिको को ध्यान देने की आवश्यकता है। इस प्रकार के सस्थानो की आवश्यकता मे कमी सम्बंधित छात्र और अभिभावकों के लिए महत्व का विषय है।

मानक स्तर— इस वात की सबसे अधिक आवश्यकता है कि केन्द्रीय सचालक संस्थान स्ववित्त पोषित सस्थाओ को मान्यता देने से पूर्व विधिवत जाच कर ले कि नवीन संस्थानो में नवीन पाठ्यक्रमो में गुणवत्ता मानको का स्तर क्या होना चाहिए। इसके लिए आन्तरिक एव बाह्य मूल्याकन का सहारा भी लिया जा सकता है।

गुणवत्ता की जांच— सचालक सस्थान द्वारा निर्धारित नियमो एवं मानकों के बावजूद भी गुणवत्ता अंतर स्ववित्त पोषित सस्थाओ में विद्यमान है। इसलिए बाहरी संस्था एन.ए.ए.सी. द्वारा गुणवत्ता जाच एवं गुणवत्ता आश्वस्ति आवश्यक है। साथ ही विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को भी इन संस्थानो की आतरिक एव बाह्य गुणवत्ता की जाच करनी होगी।

निवेश की प्राप्ति— इन स्ववित्त पोषित सस्थाओ के संचालको मे निश्चित साधनो से आंतरिक व्ययो को प्राप्त करने तथा अन्य ढाचागत सुविधाओं को प्राप्त करने के लिए पहले दो या तीन वर्षो में प्राप्त करने की प्रवृत्ति होती है। परिणामस्वरूप मानकों मे गिरावट एवं प्रशिक्षण की गुणवत्ता में कमी आती है। इसके लिए यह सलाह दी गई है कि इस प्रकार के सस्थानो को तब तक आतरिक व्ययों की प्राप्ति करने हेतु शीघ्रता नही करनी चाहिए, जब तक वे अपने राज्य में अच्छे व्यावसायिक सस्थान के रूप मे पूर्णत' स्थापित नहीं हो जाते। अत निश्चित रूप से व्यावसायिक संस्थानो मे श्रेष्ठता आवश्यक है।

छात्र अनुशासन— अभिभावको और शैक्षिक प्रशासन के मध्य छात्रों मे विभिन्न तरह से व्यावसायिक महाविद्यालयो मे होने वाली रैगिंग के परिणामस्वरूप बढ़ती हुई अनुशासनहीनता की समस्या एक प्रमुख विषय है। अपहरण, हत्या आत्महत्या आदि के प्रति हमें अपनी आंखे बन्द नही करनी चाहिए। इन संस्थाओ मे भयमुक्त वातावरण प्रदान करने हेतु गंभीर कदम उठाने की आवश्यकता है।

प्रतिबंधित शोषण— कुछ स्ववित्त पोषित सस्थानों द्वारा शोषण व व्यावसायीकरण की शिकायते मिली हैं। इन तथ्यो पर निश्चित ही रोक लगाई जानी चाहिए।

जवाबदेही— सभी स्ववित्त पोषित संस्थाओ की केन्द्र संचालक संस्थानो यू.जी.सी., एन.सी.टी.ई., एन.सी.ई.आर.टी., एन.ए.ए.सी., ए.आई.सी.टी.ई., एम.आई.सी. के प्रति गुणवत्ता, सुविधाओं, पाठ्यक्रम, शिक्षक संख्या, योग्यता, शुल्क निर्धारण, प्रवेश परीक्षाएं एवं परीक्षाफल के प्रति जवाबदेही को सुनिश्चित बनाना होगा ताकि इन सस्थाओ की कार्य प्रणाली की जानकारी एव गुणवत्ता हेतु उन पर नियत्रण बना रहे। □□

डा. बी. डी. जत्ती कॉलेज ऑफ एजुकेशन
बेलगाम, कर्नाटक

विद्यालय स्तर पर मानव अधिकार शिक्षण

❏ बी. आर. परमार

वर्तमान बुराइयां जो कल्याणकारी राज्य की स्थापना में बाधक बनी हुई हैं, उन्हें हटाने की दिशा में मानव अधिकार संकल्पना एक आशा की किरण है। अतः विद्यालयों में मानव अधिकार शिक्षण की व्यवस्था एक प्रकार से पंथ निरपेक्ष, समाजवादी, कल्याणकारी राज्य की कल्पना को मूर्तरूप देने की ईमानदारीपूर्वक की गई चेष्टा हो सकती है। क्योंकि मानव अधिकार शिक्षण के अंतर्गत व्यक्ति की बुनियादी एवं मौलिक स्वतंत्रताओं, अधिकारों का अध्ययन कराया जाता है, बालकों को उनके मौलिक कर्तव्य का बोध कराया जाता है। इस प्रकार के संदेश सम्प्रेषण के माध्यम से कल्पनाशील नागरिक का निर्माण होता है, जिसकी जीवनशैली मानव अधिकारी की रक्षा एवं अनुपालन, मानव की गरिमा के लिए सम्मान की भावना, त्याग व शांति के आधार पर स्वतंत्रता एवं विकास आधारित होगी। फलतः स्वतः शनैः शनैः किन्तु अविरल कल्याणकारी राज्य की संकल्पना साकार होती चली जाएगी।

प्रस्तावना

कक्षा शिक्षण वह ज्ञानार्जन प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक पाठ्यपुस्तकीय गूढ ज्ञान को अध्यापक की शिक्षण कला के माध्यम से अपने इर्द-गिर्द के सामाजिक व भौतिक पर्यावरण को सहज, सरल तरीके से सीखता है, समझता है तथा स्मरण रखता है। सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, धार्मिक तथा वैज्ञानिक संसार से परिचित कराने मे अध्यापक वह धुरी है जिसके आसपास शिक्षा शिक्षण के उद्देश्य घूमते हैं। अध्यापक एक ऐसा कारीगर है जो अपनी शिक्षण कला के माध्यम से बालक में वे सभी गुण विकसित करने की चेष्टा करता है, जो एक आदर्श मानव के लिए आवश्यक है।

वर्तमान विद्यालयी शिक्षा व्यवस्था में विद्यार्थी को अनेकानेक विषय पढ़ने पढ़ते हैं जैसे भाषा, विज्ञान, गणित, सामाजिक विज्ञान, कला, सगीत आदि। प्रत्येक विषय की अपनी पाठ्य-सामग्री होती है। उद्देश्यानुसार अध्यापक कक्षा में शिक्षण कार्य करता है। दशको से ज्ञान स्थापना के क्षेत्र में यही परम्परा चली आ रही है। गणित का शिक्षक गणित तथा विज्ञान का शिक्षक विज्ञान पढ़ाता है। इसी प्रकार सभी शिक्षक अपने-अपने विषय पढ़ाते हैं। ज्ञानार्जन होता है, अच्छा परिणाम निकलता है तथा बालक, पालक, शिक्षक तथा समाज, सरकार सभी शिक्षण प्रक्रिया से खुश रहते है।

लेकिन इस पूरी ज्ञानार्जन प्रक्रिया मे कुछ ऐसे ज्ञान तत्व की कमी रह जाती है जिसका सीधा सबंध व्यक्तित्व विकास के साथ-साथ सम्पूर्ण मानव समाज से जुड़ा होता है। उपलब्ध साक्ष्य दर्शाते है कि अधिकाश व्यक्ति शिक्षित होने के बावजूद भी अज्ञानी-सा व्यवहार करते है और दूसरों के अधिकारो का हनन करते हैं। इस प्रकार जाने-अनजाने में एक-दूसरे के अधिकारो का अतिक्रमण होता है। फलत व्यक्ति के व्यक्तित्व को चोट पहुचती है। व्यक्ति की गरिमा धूमिल होती है। इस कृत्य से सम्मान

देने व लेने वाले दोनों पक्ष कलुषित हो जाते है। सूक्ष्म व सामान्य दिखाई देने वाला यह कृत्य एक-दूसरे के मन में असुरक्षा, असमानता तथा अनिश्चितता की भावना को जन्म देता है। यही असुरक्षा एव राग-द्वेष की भावना धीरे-धीरे विकराल रूप धारण कर, मानव को मानव मे भेदभाव करने को प्रेरित करती है। भाषा, लिग, प्रात, जाति, धर्म आदि के आधार पर भेदभाव होता है, झगडे होते हैं, रक्तपात होता है और अन्ततः विनाश की विभीषिका देखने को मिलती है। केवल मानव अधिकारो का कर्तव्य बोध न होने से इतना अनर्थ हो जाता है।

वर्तमान पाठ्यक्रम तथा ज्ञानार्जन दोनो ही स्तर पर प्रत्यक्ष रूप में मानव अधिकारो के शिक्षण की व्यवस्था नहीं है। फलत· विद्यार्थी अधिकार व कर्तव्य के ज्ञान बोध से वचित रहते है। अतः मेरी ऐसी मान्यता है कि प्रत्येक स्तर पर तथा प्रत्येक संकाय में मानव अधिकार शिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए। अधिकारों व कर्तव्य की शिक्षा देना सभी अध्यापको के लिए अनिवार्य होना चाहिए। चाहे वह गणित अथवा चिकित्साशास्त्र का अध्यापक हो या फिर किसी और अन्य विषय का।

मानव अधिकार शिक्षण के आधार

ज्ञातव्य है कि मनुष्य एक स्वार्थी सामाजिक प्राणी है। व्यक्तित्व विकास मे सहायक सभी सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकता की समाज प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष रूप से निरतर पूर्ति करता है। बदले मे व्यक्ति समाज को प्रतिष्ठा प्रदान करता है और समाज व्यक्ति को देश-काल में प्रतिष्ठित करता है। यह क्रम समाज और व्यक्ति का शाश्वत है। अत· मानव अधिकार का शिक्षण आधार भी मानवीय आवश्यकता ही है।

शारीरिक आवश्यकता

वर्तमान मे औद्योगिक क्रांति, शहरीकरण तथा बढ़ते प्रदूषण के परिणामस्वरूप रोटी, पानी, कपड़ा और मकान जैसी बुनियादी सुविधाओ एवं आवश्यकताओं के साथ प्रदूषण मुक्त वातावरण भी एक अनिवार्य शारीरिक आवश्यकता बन गई है।

मनोवैज्ञानिक आवश्यकता

प्रत्येक मानव की सबसे अहम् मनोवैज्ञानिक आवश्यकता है– आत्मसम्मान, अस्मिता की सुरक्षा, उसके सृजन पर ध्यानाकर्षण, उसकी अभिव्यक्ति का सम्मानजनक प्रति उत्तर। ये मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएं मनुष्य को मानसिक संतुष्टि प्रदान करती हैं और उसमे गरीमामय जीवन जीने की लालसा जगाती है।

सामाजिक आवश्यकता

इसका सबंध पूर्णत· अन्तःक्रिया तथा सुरक्षा से जुडा है। प्यार, ममता, स्नेह, दुलार, त्याग, अपनापन, रीति-रिवाज एवं मान्यताओं के अनुसार सस्कार एवं अनुष्ठान सामाजिक अन्त·क्रियाओं का संचालन करती है। सामाजिक रिश्तो का बनाती हैं तथा उन्हे प्रगाढ करती है।

आर्थिक आवश्यकता

जीविकोपार्जन, परिवार कल्याण, उद्यम, शिक्षा, चिकित्सा, मनोरंजन तथा सामाजिक, धार्मिक अनुष्ठान आदि के लिए प्रत्येक मानव को धन की आवश्यकता पड़ती है।

मानव अधिकार अवधारणा का अवतार

इतिहास साक्षी है कि प्रत्येक सार्वभौम विचार अवतार के पीछे किसी दिल दहला देने वाली त्रासदी का हाथ होता है। मानव अधिकार अवधारणा के पीछे भी ऐसी ही कुछ महान त्रासदियां है जिन्होने मानव की सुरक्षा सबधी आस्था को हिला दिया। मानव ने अपने ही बीच स्त्री-पुरुष का भेद किया तथा स्त्रियों को अनेक अधिकारों से वचित रखा। मानव ने अपने ही बीच जाति, धर्म, वश, रग के आधार पर भेदभाव किया तथा कुछ लोगो ने अपने को श्रेष्ठ समझा और दूसरों के साथ अमानवीय व्यवहार किया। उन्हे अपने अधिकारों से वचित रखा। अधिकार हरण तथा अमानवीय व्यवहार की सीमा लांघते-लांघते मानव इस हद तक पहुंचा कि उसे मानवता का स्मरण ही नहीं रहा।

फलत· अफ्रीका महाद्वीप काले-गोरे की भेदभाव रूपी ज्वाला में सदियो जलता रहा। भारतवर्ष मे वर्ण व्यवस्था की ओट में शूद्र वर्ण का दलन युगो-युगों से होता रहा। समूचा यूरोप श्रेष्ठता का दंभ भरता रहा और गुलाम व दास बनाने की प्रवृति का आदी हो गया। प्रत्येक

धर्म की फांके होने लगीं। हर फाक के अपने पंथ व मत चलने लगे। आपस मे श्रेष्ठता का भद्दा प्रदर्शन होने लगा। हर मानव ने स्वार्थ से वशीभूत हो कर दो विश्व युद्ध लड़ डाले और समूचे विश्व को शोक मे डुबो दिया।

मानव ने औद्योगिक क्राति को जन्म दिया और श्रमिकों का इस हद तक शोषण किया कि उनकी हालत बद से बदतर हो गई। दशकों बाल श्रमिकों पर विचार करते रहे, लेकिन उनकी मुक्ति की ईमानदारी से पहल नहीं की। लालची व लोभी मानव ने विद्या मन्दिर मे गरीब बच्चों को शिक्षा पाने लायक नही समझा।

राजनैतिक अतिवाद के चलते विदेशी सीमाओं का हरण किया जाने लगा। अकारण युद्ध के बादल मडराने लगे। मानव ने राष्ट्र रूपी इमारते तो खड़ी की, परंतु रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि को पूर्णतः अनदेखा किया। फलत मानव की मानव के प्रति घृणा उपजने लगी। मानव को मानव से ही सबसे बड़ी असुरक्षा महसूस होने लगी। लोगो की अपने ही देश की सरकार व कानून के प्रति आस्था समाप्त होने लगी।

वर्षो से घटित होती आ रही त्रासदियों के शिकार मानव ने जब सिंहावलोकन किया, तब पाया कि संसार का प्रत्येक मानव आपस मे बराबर है। मानव को मानव बना रहना है तो प्रत्येक मानव को मानवीय अधिकार देने होगे। प्रत्येक स्त्री-पुरुष, बालक-बूढे की हर कीमत पर रक्षा करनी होगी। उन्हे सम्मानजनक जीवन जीने का अवसर देना होगा। जबकि लिंग, जाति, धर्म, वश, रंग आदि का प्रकृति की दृष्टि में कोई स्थान नही है। उसके लिए सब बराबर है। तब फिर मानव को लिंग, जाति, धर्म, रंग, वश के आधार पर भेदभाव करने का अधिकार नहीं है।

इस प्रकार सार्वभौम चिंतन की परिणति है— मानव अधिकार की अवधारणा।

मानव अधिकार शिक्षण की आवश्यकता

मानवता की सेवा है— अनेक अर्थ मे, निःसदेह मानव अधिकार का शिक्षण वर्तमान समाज मे व्याप्त समस्याओ के समाधान की ओर बढ़ने का महत्वपूर्ण कदम सिद्ध हो सकता है और एक सत्यम् शिवम् सुन्दरम् समाज की आधारशिला बन सकता है। कहा भी गया है (Whereas recognition of the inherent dignity and of the equal and inalienable rights of all members of the human family is the foundation of freedom, justice and peace in the world) इस तथ्य को आध्यात्मिक सदर्भ मे इस प्रकार समझा जा सकता है कि इस ससार मे व्यक्ति आता है और चला जाता है, लेकिन उसका जीवनपर्यन्त दूसरों के साथ किया गया व्यवहार मानव पर अमिट छाप छोड जाता है। यदि इस संसार मे कोई हिटलर एवं बिन लादेन की तरह कार्य करेगा तो वह कुछ ही समय तक याद किया जाता रहेगा तथा जब तक भी याद किया जाता रहेगा तब तक एक ऐसी घृणाभाव भरी संज्ञा से पुकारा जाएगा जिसका समाज में कोई स्थान नहीं है। यदि कोई जिमी कार्टर अथवा नेल्सन मण्डेला अथवा मोहनदास गांधी अथवा अब्दुल कलाम की तरह व्यवहार करेगा तो वह युगो-युगों तक शांतिदूत एवं मानव अधिकार का प्रणेता जैसी संज्ञाओ से आदर व श्रद्धा के साथ पुकारा जाएगा। अतः यह विचारणीय हो जाता है कि धरा पर जन्म लेने वाले प्रत्येक मानव को यत्नपूर्वक यह सिखाने का उपक्रम किया जाए कि संसार के समस्त प्राणियों के अपने नैसर्गिक अधिकार है। जिनकी मानव को यथाशक्ति, यथासंभव, यथावत रक्षा करने की चेष्टा की जानी चाहिए। नैसर्गिक अधिकारो की रक्षा और अनुपालन ही सही मायने मे मानवता की सेवा है।

कल्याणकारी राज्य स्थापना है— विदित है कि ससार के साथ-साथ भारत मे भी प्रचलित प्रथाओं, मान्यताओ तथा अंधविश्वासों के चलते महिलाओं के साथ शारीरिक संरचना के आधार पर भेदभाव किया जाता है। जाति-धर्म के आधार पर ऊंच-नीच की भावना व्याप्त है। भारत मे छुआछूत जैसी अमानवीय सोच को सदियो से सामाजिक मान्यता मिली हुई है। वर्ण-वर्ग की श्रेष्ठता को लेकर हर कही सघर्ष हो रहे है। धार्मिक उन्माद अपनी चरम सीमा पर है। आर्थिक असमानता बढती जा रही है। शोषण की मानसिकता प्रगाढ़ होती जा रही है। अधिकारों

का हनन आम बात होती जा रही है। फलत. प्रजातंत्र की स्थापना के बाद भी कल्याणकारी राज्य को मूर्तरूप नही मिल सका है।

वर्तमान बुराइयां जो कल्याणकारी राज्य स्थापना मे बाधक बनी हुई हैं, उन्हें हटाने की दिशा में मानव अधिकार संकल्पना एक आशा की किरण है। अतः विद्यालयो में मानव अधिकार शिक्षण की व्यवस्था एक प्रकार से पंथ निरपेक्ष, समाजवादी, कल्याणकारी राज्य की कल्पना को मूर्तरूप देने की इमानदारीपूर्वक की कई चेष्टा हो सकती है क्योंकि मानव अधिकार शिक्षण के अंतर्गत व्यक्ति के बुनियादी एव मौलिक स्वतंत्रताओ/अधिकारों का अध्ययन कराया जाता है। बालको को उनके मौलिक कर्तव्य को बोध कराया जाता है। इस प्रकार के सदेश सम्प्रेषण के माध्यम से कल्पनाशील नागरिक का निर्माण होता है, जिसकी जीवनशैली मानव अधिकारी की रक्षा एवं अनुपालन, मानव की गरिमा के लिए सम्मान की भावना, त्याग व शांति के आधार पर स्वतंत्रता एव विकास आधारित होगी। फलत. स्वत. शनै. शनै. किन्तु अविरल कल्याणकारी राज्य की सकल्पना साकार होती चली जाएगी।

यहां यह स्पष्टीकरण प्रासगिक है कि मानव अधिकार शिक्षण की आवश्यकता किसी एक देश अथवा आयु विशेष अथवा वर्ग विशेष अथवा लिग विशेष तक ही सीमित नही है अपितु संसार के हर घर-आंगन मे, हर स्तर पर इस शिक्षा शिक्षण की समान रूप से आवश्यकता है। लेकिन यदि शुरुआत बाल्यावस्था मे ही कर दी जाए तो “उपदेश से उदाहरण अच्छा है” कहावत चरितार्थ होने की सम्भावना सर्वाधिक होती है। यह सत्य भी है कि जहा कच्ची मिट्टी को एक डाक्टर, इजीनियर, अधिकारी अथवा नेता, अभिनेता का स्वरूप प्रदान किया जाता हो, वहा मानवता, कल्याण, परोपकार जैसे मानवीय गुणों के विकास का शिक्षण सर्वाधिक आवश्यक एव उपयुक्त है।

उद्देश्य

वैसे तो मानव अधिकार शिक्षण सौद्देश्य है एवं उद्देश्य सुस्पष्ट हैं, लेकिन फिर भी यदि इसके उद्देश्य को प्रमुख चार स्तरो मे विभाजित किया जा सकता है।

व्यक्तिगत— वे अधिकार जो व्यक्तिगत उन्नति और विकास के लिए मानव को व्यक्तिगत रूप से आवश्यक हैं मानव अधिकार शिक्षण में निहित हैं।

सामाजिक— वे अधिकार जो एक स्वस्थ समाज के निर्माण के लिए सामाजिक प्राणी को मिलने आवश्यक है। मानव अधिकार शिक्षण मे निहित है।

धार्मिक— वे अधिकार जो लोक व्यवस्था, नैतिकता और स्वास्थ्य के अधीन व्यक्ति अन्त करण की स्वतत्रता के अंतर्गत किसी भी धर्म को माननें, आचरण करने और प्रचार करने का अधिकार रखते है। एक आदर्श धर्म की नीव को उत्तरोत्तर प्रगाढ़ करने तथा धर्म की ओट में सार्वभौम मूल्यो की स्थापना व प्रतिपालन के सरल, सामान्य नियम का प्रचार, सर्वधर्म समभाव, धर्म मात्र के प्रति सम्मान की भावना का सहृदय प्रस्फुटन तथा और अन्य धार्मिक दृष्टि से उपयुक्त गुण एक सच्चे धार्मिक व्यक्ति मे होने चाहिए मानव अधिकार शिक्षण में निहित है।

राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय— राष्ट्रीय अधिकार जो सवैधानिक उपबंध द्वारा प्रदत्त नागरिक रूप मे मौलिक अधिकारो का उपभाग अंत करण से निभाने वाले मौलिक कर्तव्यों का संचालन तथा कल्याणकारी राज्य स्थापना के लिए वर्णित नीति निर्देशक सिद्धान्तो को आदर्श मानना तथा विधायिकाओं व कार्यपालिकाओ द्वारा आदर्श मानने का दबाव बनाना तथा एक प्रजातात्रिक देश के लिए आवश्यक है मानव अधिकार शिक्षण में निहित है।

अन्तर्राष्ट्रीय अधिकार जो शांति एव समृद्धि, सहअस्तित्व, मानव स्वतंत्रता और प्रगति के लिए सयुंक्त राष्ट्र संघ द्वारा 1948 में मानव अधिकारो की सार्वभौम घोषणा जिसे 1966 में अंगीकृत किया गया तथा 1976 में लागू किया गया जो विश्व अस्मिता एवं निर्माण के लिए आदर्श माने जाते हैं, मानव अधिकार शिक्षण में निहित हैं।

यहा यह बात स्पष्ट कर देना अर्थपूर्ण होगा कि प्रायः राष्ट्रीयता की भावना से ओत-प्रोत होकर यह आम

धारणा बना लेते है कि राष्ट्रीय जीवन का अतर्राष्ट्रीय जीवन व समाज से कोई सबंध नहीं है, यह आम धारणा पूर्णत. गलत एव मिथ्या है। वर्तमान मे प्रत्येक राष्ट्र का प्रत्येक नागरिक किसी न किसी रूप से अंतर्राष्ट्रीय समुदाय पर अनिवार्य रूप से निर्भर है। कोई नहीं जानता कि वह जो दवा खा रहा है अथवा भौतिक सुविधाओ को भोग रहा है, वह उस देश में भी बनी हो सकती है, जिसे हम दुश्मन मानने की चेष्टा करते हैं।

मानव अधिकार शिक्षण के लिए विद्यालय स्तर पर प्रस्तावित क्रियाशीलता

विद्यालयी शिक्षा व्यवस्था मे अध्यापक सर्वोत्तम सदेश वाहक तथा विद्यार्थी सर्वोतम सदेश ग्राह्य होता है। मानव अधिकारो की सामान्य जानकारी, उनके प्रति सम्मान तथा उनका हनन होता देख मन मे पीड़ा महसूस करने की भावना जगाना, मानव अधिकार शिक्षण की सर्वोत्तम उद्देश्य प्राप्ति है। विद्यालय के अन्दर तथा विद्यालय के बाहर प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष रूप मे संचालित गतिविधिया ही वे सबसे अच्छे साध्य हैं, जहा भावी भविष्यो के मस्तिष्को मे मानव अधिकार का ज्ञान, उनका संरक्षण तथा सवर्धन सचारित किया जा सकता है। समग्र शिक्षा के साथ मानव अधिकार शिक्षा को आत्मसात् करने तथा बालको को मानव अधिकार का धारक, वाहक, संचालक तथा सरक्षक बनाने के उद्देश्य से विद्यालय में निम्न शिक्षण सहायक विधि प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष रूप मे अपनाई जा सकती है–

बालक-बालिका के अधिकारों का किसी भी स्तर पर हनन न होने देकर–यह आश्चर्य किन्तु कटु सत्य है कि विद्यालय, समुदाय, यहां तक कि घर-परिवार मे भी बालक-बालिका के अधिकारो का हनन होता है। यह बालकों की विडम्बना ही कही जाएगी कि विद्यालय मे तमाम नियमो की पट्टिकाए टंगी दिखाई देती है, लेकिन कही भी "बालक-बालिका के अधिकार" की पट्टिका टंगना तो दूर, उन्हे विद्यालयी शिक्षा समाप्त होने तक उनके अधिकारों को नहीं बताया जाता है।

विद्यालय में अनुशासन के नाम पर कठोर नियमावली, उत्कृष्ट परिणाम के नाम पर कठोर दैनिक अनुसूची, भौतिक चकाचौध के उजियारे से चौधियाए अध्यापको द्वारा साधन सम्पन्न विद्यार्थियो का पक्ष तथा गरीब-निर्धन छात्रो के प्रति अव्यावहारिक दृष्टिकोण तथा कम छात्र-शिक्षक अनुपात के कारण न तो प्रतिभाशाली छात्र, न ही मदबुद्धि छात्र पाठ्येतर एव सहपाठ्येतर क्रियाकलापों मे अध्यापक का अपेक्षित ध्यान प्राप्त कर पाते है। कमोबेश यही स्थिति बालक की घर-परिवार तथा समाज मे होती है।

अत' प्रत्येक विद्यालय मे बाल अधिकार पट्टिका को पुस्तकालय, प्रार्थना सभा तथा मुख्य द्वार पर लगाने की व्यवस्था की जानी चाहिए। विद्यालय स्तर पर शिक्षकों, छात्रो तथा अभिभावको की बालक-बालिका अधिकार संरक्षक समिति गठित की जा सकती है। प्रत्येक कक्षा में बालक-बालिका अधिकार वाहिनी का गठन किया जा सकता है। वरिष्ठ कक्षाओ में मानव अधिकार वाहक, प्रचारक एवं सवर्धक जत्था का गठन किया जा सकता है। अध्यापको को यथाशक्ति व यथासभव किसी भी प्रकार का छात्रो के साथ भेदभाव नही करना चाहिए।

इस प्रकार का पाठ्येतर मानवोपयोगी तत्र जहा एक ओर विद्यालयो में मानव अधिकारों की प्रशासनिक गारटी प्रदान करेगा वही दूसरी ओर बालकों के मन मे मानव अधिकारो के प्रति सार्वभौम जागरुकता, चिंताशीलता तथा सवेदनशीलता के विकास का सिलसिला शुरू होगा, जो धीरे-धीरे घर-परिवार, समाज, राष्ट्र तथा विश्व मे फैलेगा।

मानवाधिकारों के प्रति स्वप्रेरणा जागृत करने के लिए अनुकूल पढ़ने-पढ़ाने का वातावरण तैयार करके– प्राय' देखा गया है कि मानव अधिकार शिक्षण की जिम्मेदारी सामाजिक विषय शिक्षण पर छोड़ दी जाती है। यह सोच मानव अधिकार प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में प्रायः निष्प्राण सिद्ध हो रही है। अत. 21वीं सदी की यह मांग है कि शिक्षकों को न केवल मानवाधिकारो की सामान्य जानकारी होनी चाहिए अपितु उन्हें स्वाध्यायी रूप से मानव अधिकारो की शिक्षा भी लेनी चाहिए ताकि वे यथोचित पाठ्य-सामग्री के अध्यापन के दौरान कक्षा में मानव अधिकारों के प्रति सम्मान व्यक्त कर

सके। इसी तरह विद्यार्थियो से भी अपेक्षा की जाती है कि वे भी न केवल मानव अधिकार की शिक्षा ले, बल्कि उनके प्रति सम्मान की भावना भी जागृत करें।

स्वप्रेरणा जागृति का वातावरण परस्पर तभी तैयार किया जा सकता है जब विद्यालय मे प्राचार्य, शिक्षक के व्यवहार तथा विद्यार्थियो को सिखाए जाने वाले मानव अधिकार में कोई विसगति न हो। इस मानवीय पक्ष के प्रस्फुटन के लिए यह आवश्यक है कि प्राचार्य, अध्यापक एव छात्रो का व्यवहार मधुर, सौहार्द्रपूर्ण व आदर्श हो। विद्यालय के वरिष्ठ से कनिष्ठ तक सभी शिक्षक एव कार्यकर्ता जाति, धर्म व पद का भेदभाव किए बिना परस्पर स्नेह, सम्मान एवं सौजन्यपूर्ण व्यवहार करे। अनुशासन के नाम पर बरती जाने वाली कठोरता के स्थान पर सम्मान, निजी अभिमान, आत्मानुशासन जैसे गुणों के विकास पर बल दिया जाना चाहिए।

यदि कक्षा, विद्यालय और समाज में शिक्षक व विद्यार्थी दोनों की गरिमा को बचाया जाए और उसे प्राचार्य एव अभिभावको द्वारा प्रोत्साहित किया जाए तो रास्ता आसान हो जाएगा और मानव अधिकारों की शिक्षा को विद्यालय के माध्यम से समुदाय से ससार तक पहुचाया जा सकता है और कानूनी पेचीदियो से बचा जा सकता है।

शिक्षा के सभी स्तरों पर सभी विषयों के माध्यम से मानव अधिकारों की शिक्षा देकर— शिक्षक को अपने पारम्परिक ज्ञान वितरण व्यवहार मे परिवर्तन कर मानव अधिकारों से जुडे सभी पहलुओं को जब जहां जैसा मौका मिले विशिष्ट तौर पर बालकों को अधिकारों और कर्तव्यों का सैद्धातिक एवं व्यावहारिक ज्ञान देने की चेष्टा करनी चाहिए। प्रत्येक कक्षा की हिन्दी व अंग्रेजी की पाठ्यपुस्तक काव्य, नाटक, संस्मरण, रिपोर्ताज तथा दार्शनिक चिन्तनों से भरी पडी है। जिनमे लेखक एवं कवि अधिकारो, स्वतत्रताओ तथा उन्हे प्राप्त करने के सघर्ष के बारे मे लिखता है। उन्हे मौलिक और मानव अधिकार से जोड कर पढ़ाया जाना चाहिए।

सामाजिक विज्ञान जिसे "मानव अधिकार विज्ञान" की सज्ञा भी दी जा सकती है, मानव अधिकार शिक्षा से समृद्ध है। इतिहास से मानव अधिकारो के अध्ययन के लिए उत्कृष्ट सामग्री प्राप्त होती है। भूगोल सांस्कृतिक तथा आर्थिक सबधों की जानकारी कराता है। पर्वत, पहाड़, मैदान, नदिया केवल मानचित्र में दर्शाने की वस्तु नही है अपितु इनके माध्यम से भ्रातृत्वभाव विकसित होता है।

विज्ञान और गणित समूची मानवता को समान प्राकृतिक नियम का पाठ पढ़ाकर "भेदभाव क्यो" पर प्रश्न चिन्ह लगाते हैं। विज्ञान और गणित वे विषय है जो आधुनिक वैज्ञानिक एव प्रौद्योगिकी कार्य की शिक्षा देकर, जिनके प्रयोग से मानवता को किस प्रकार लाभ या हानि पहुचाई जा सकती है, का ज्ञान कराते हैं।

अत· अब अध्यापको का काम है कि वे किस प्रकार मानव अधिकार ज्ञान के इन खजानो से अपने शिष्यो को मालामाल करते है। अलग-अलग भौतिक एवं सास्कृतिक वातावरण के हिसाब से विषयों की पाठ्य-सामग्री का चयन का सभी स्तरो पर तथा सभी विषयों के माध्यम से मानव अधिकार शिक्षण का बीड़ा उठाया जाना चाहिए ताकि सामुहिक प्रयास से उद्देश्य प्राप्ति मे आसानी हो सके।

मूल्यांकन

मानव अधिकार शिक्षण का मूल्याकन पक्ष जटिल है। क्योंकि –

- ☐ इस शिक्षण का प्रत्यक्ष सबंध विद्यार्थियों की भावना, कर्तव्यबोध तथा व्यवहार से है।
- ☐ भावना, कर्तव्यबोध तथा व्यवहार जैसे अदृश्य मानवीय पक्ष को नापने की कोई सर्वमान्य मूल्यांकन विधि विकसित नही है।
- ☐ विद्यार्थियों का व्यवहारात्मक पक्ष जब वह विद्यालयी शिक्षा पूरी कर नागरिक जीवन जीने लगेगा तब समाज के सामने आएगा।

फिर भी शिक्षण की उपादेयता जानने के लिए यह स्वाभाविक एव जरूरी है कि विद्यालय मे इस शिक्षण का सचालन करने वाले शिक्षक इसका मूल्याकन करना चाहेगे। जिससे वे निर्धारित उद्देश्यो के संदर्भ मे अपनी

शिक्षण युक्ति और व्यूह रचना की सार्थकता परख सकें और अपनी इस शिक्षण योजना के उन्नयन के लिए आवश्यक परिष्कार कर सके।

उपरोक्त तीनो जटिलताओ को ध्यान मे रखते हुए मानव अधिकार शिक्षण के मूल्यांकन हेतु निम्न पद्धति का सहारा लिया जा सकता है—

- आत्मचिन्तन पद्धति
- आत्मविश्लेषण पद्धति
- दायित्व परायण पद्धति
- कर्तव्य परायण पद्धति
- स्वाधिकार स्मरण पद्धति
- अधिकार प्राप्ति की लालसा पद्धति

चूकि मानव अधिकार शिक्षण का संबध विद्यार्थियो के भावनात्मक एवं व्यवहारात्मक पक्ष से जुडा है तथा इस शिक्षण की उत्तरोत्तर प्रगाढता व सुदृढ़ता पूर्णतः स्वप्रेरणा से सबधित है। अत. स्वमूल्याकन पद्धति— आत्मचिन्तन, आत्मविश्लेषण, दायित्व निर्वहन एव कर्तव्य परायण, अधिक सार्थक व उपादेय सिद्ध हो सकती है।

अधिकार स्मरण तथा अधिकार प्राप्ति की लालसा पद्धतियो के मूल्याकन हेतु मौखिक परीक्षा प्रणाली अपनाई जा सकती है। जैसे— छात्रो से बातचीत, सामुहिक परिचर्चा, दोस्तो के बीच वार्तालाप की समीक्षा एवं साक्षात्कार।

विद्यार्थियों के व्यवहार का परीक्षण विद्यालयों में आयोजित समारोह के समय छात्रों को कुछ जिम्मेदारिया सौप कर किया जा सकता है।

पाठ्येतर अनुक्रियाए जैसे कब-बुलबुल, स्काउट-गाइड, एन सी सी , विद्यालय क्लब अथवा कोई और प्रवीणता दक्ष गतिविधियो के समय कृतिम मानव अधिकार हनन स्थितिया पैदा कर छात्रो के मानव अधिकार के प्रति रुझान को परखा जा सकता है। विशेष रूप से लिखित परीक्षा भी आयोजित की जा सकती है।

यदि कोई शैक्षणिक सस्थान अथवा सरकार या मानव अधिकार से जुड़ी राष्ट्रीय/अन्तर्राष्ट्रीय ऐजेंसी इस शिक्षण की महत्ता व उपादेयता को जन आन्दोलन का रूप प्रदान करने की इच्छा रखती है, तो मानव अधिकार शिक्षण विशेष विद्यालय भी सचालित किए जा सकते है।

अंत मे महत्वपूर्ण विचारणीय बिंदु यह है कि आजकल दुनिया जाने-अनजाने में मानव अधिकार का उल्लघन कर बारूद के ढेर पर बैठ गई है। हर कही रासायनिक और जैविक हथियारों का खतरा मण्डरा रहा है। इस ऊहापोह के चलते विश्व के अधिकाश देशों मे मानव अधिकार की रक्षा की भावना को विकसित करने पर बल दिया जाने लगा है। विश्व मंचो पर मानव मूल्य विकास की बात जोरदार ढग से की जाने लगी है। सयुक्त राष्ट्र के अभिकरणों ने मानव अधिकार की बहाली का बीडा उठाया है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानव अधिकारों की निगरानी कई गैर-सरकारी संगठन भी कर रहे हैं। इनमें प्रमुख रूप से एमनेस्टी इंटरनेश्नल मानव अधिकार के उल्लंघन का जोरदार तरीके से प्रचार करने में लगी है, जिससे विश्व समुदाय और विशेष कर देशो की सरकारे सचेत होकर नागरिको के अधिकारो को सुनिश्चित कर रही है।

हमारे देश भारत मे राष्ट्रीय स्तर पर मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 तथा सविधान की धारा 51(ग) के अतर्गत मानव अधिकार की बहाली, संरक्षण व सवर्धन सुनिश्चित किया जा रहा है। राज्यों में मानव अधिकार आयोग सुचारू रूप से कार्यरत है। कई गैर-सरकारी सगठन इस क्षेत्र मे महत्वपूर्ण योगदान दे रहे है। "सुलभ आदोलन" द्वारा दलित-शोषित समाज के लिए भलाई व कल्याण के कार्यक्रम सचालित हैं। "बाल सहायता" और "आपका सगठन" द्वारा बालको के उत्थान व कल्याण के कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। "सहेली और चेतना" जैसी सस्थाए महिलाओ के अधिकारों के संरक्षण मे सक्रिय है। तब विद्यालय स्तर पर मानव अधिकार शिक्षण तथा उनका मूल्याकन करने के लिए विद्यार्थी, शिक्षक, प्राचार्य, संचालक, सरकार तथा अभिभावको को परस्पर सहयोग देना चाहिए तथा विद्यालय स्तर पर मानव अधिकार शिक्षण की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए। ☐☐

केन्द्रीय विद्यालय
बैरागढ़, भोपाल
मध्य प्रदेश

भाषा शिक्षण में अभिनव प्रयोग

❑ संतोष मित्तल

संस्कृत भाषा के व्याकरण के अध्ययन-अध्यापन की परम्परा बहुत प्राचीन है। उपलब्ध वैदिक पद पाठों की 3200 वि.पू. की समीक्षा से ज्ञात होता है कि उनकी रचना के पूर्व प्रकृति, प्रत्यय, धातु, उपसर्ग और समास घटित पूर्वोत्तर पदों का विभाग पूर्णतया निर्धारित हो चुका है। ऋग्वेद पद पाठ में इनका स्वरूप स्पष्ट परिलक्षित होता है। व्याकरण शास्त्र का प्रथम प्रवक्ता 'ब्रह्मा' को कहा गया है। ब्रह्मा जी ने आचार्य वृहस्पति को व्याकरण का ज्ञान दिया तथा वृहस्पति ने अपने शिष्य इन्द्र को, इन्द्र ने ऋषि भारद्वाज को, भारद्वाज ने ऋषियों और ऋषियों ने ब्राह्मणों को इसका ज्ञान प्रदान किया।

इक्कीसवी सदी चुनौतियों की सदी है। इन चुनौतियों का प्रभाव शिक्षा जगत पर भी स्पष्टत· दृष्टिगोचर होने लगा है। आज कक्षा-कक्ष की संकल्पना मात्र श्यामपट्ट तथा कतिपय फर्नीचर के रूप मे नहीं होती, अपितु 'हाईटेक कक्षा-कक्ष' के रूप में की जाती है। जिसमे संगणक (कम्प्यूटर), सी.डी रोम, इन्टरनेट, फोटो हैड प्रोजेक्टर, श्वेतपट्ट, दूरदर्शन, कैसेट्स आदि की व्यवस्था हो। जिनके द्वारा कक्षा-कक्ष में तो शिक्षण प्रभावी ढंग से हो सके, साथ ही दूर शिक्षण (टेली टीचिग), दूर सम्मेलन (टेली कॉन्फ्रेसिंग) आदि की सुविधा भी उपलब्ध रहे। आज सी.डी., फ्लॉपी, कैसेट्स आदि का प्रभाव इतना अधिक है कि हम 'पेपरलैस सोसायटी' की संकल्पना करने लगे है। इन परिवर्तित परिस्थितियो मे 'भाषा-शिक्षण' पर पुनर्विचार की आवश्यकता है।

लगभग दस वर्ष तक हिन्दी या अन्य मातृभाषा, छः अथवा सात वर्ष तक अग्रेजी अथवा हिन्दी तथा इतने ही वर्ष तक संस्कृत या अन्य भारतीय भाषा का अध्ययन करने के उपरान्त भी विद्यार्थी कितना भाषा अधिगम कर पाता है, यह किसी से छिपा नहीं है। तीन भाषाओं मे से किसी एक में भी भाषा-शिक्षण के उद्देश्य की पूर्ति दिखाई नहीं देती। यहा तक देखा गया है कि अंग्रेजी, हिन्दी, सस्कृत जैसी भाषाओ मे स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त छात्र उपयुक्त एवं स्तरानुकूल विचाराभिव्यक्ति, (मौखिक तथा लिखित दोनो रूपो मे) करने में स्वयं को असक्षम पाते हैं। जबकि भाषा केवल एक विषय ही नहीं है, अपितु अन्य विषयो को पढ़ने का माध्यम भी है। तब इतने वर्षो तक भाषा अध्ययन के उपरान्त यह स्थिति क्यों? कही न कहीं तो भाषा-शिक्षण में कमी है, इस कारण ही 'भाषा अधिगम' उपयुक्त स्तर तक नहीं पहुंच पाता।

कई वर्षो से शिक्षण अभ्यास हेतु विभिन्न विद्यालयों में पर्यवेक्षण कार्य पर जाते हुए मैने अनुभव किया कि प्राय सभी भाषाओं के शिक्षक भाषा विशेष के व्याकरण पक्ष की उपेक्षा करते है तथा छात्रों को अर्थ बताकर अनुवाद पद्धति का सहारा लेते हुए कतिपय नियम रटवाकर अच्छे अंक प्राप्त करने के लिए प्रेरित करते हैं। नि·सन्देह वे अक तो प्रथम श्रेणी के प्राप्त कर लेते हैं किन्तु उनका ज्ञान अधूरा ही रहता है। यही कारण है कि हमारे पास आने वाले प्रशिक्षणार्थी (भावी अध्यापक) भी प्रायः यही कहते हुए पाए जाते हैं कि

आज तक हमारी इस वर्तनी सम्बन्धी त्रुटि के प्रति किसी ने संकेत ही नही किया। इसी प्रकार यह वर्ण विशेष हमारे द्वारा अशुद्धोच्चारित किया जाता है, इसके विषय में भी हमे कोई जानकारी नही है। अन्ततः ऐसे ही दिग्भ्रमित भावी अध्यापक अध्यापन व्यवसाय में प्रविष्ट होते हैं तथा अशुद्धियो का क्रम भावी पीढ़ी मे हस्तान्तरित हो जाता है और यह चक्र निरन्तर चलता रहता है जो कि आज हमारे सामने एक विकट समस्या बनता जा रहा है।

प्रस्तुत आलेख मे विशेषतः संस्कृत व्याकरण शिक्षण में किए गए अभिनव प्रयोग का वर्णन किया जा रहा है। यह प्रयोग हिन्दी तथा अग्रेजी भाषा शिक्षण मे भी अवश्य सहायक सिद्ध होगा, क्योंकि मानव विचारो की अभिव्यक्ति को शुद्ध परिष्कृत, परिमार्जित व नियमानुसार स्वरूप देने का कार्य भाषा विशेष का व्याकरण ही करता है। महाभाष्य में कहा गया है, 'लक्ष्य लक्षणे व्याकरणम्' अर्थात् व्याकरण केवल नियमों का संग्रह मात्र ही नही अपितु लक्ष्य और लक्षण दोनों का ही संग्रह है। वेदांगो मे व्याकरण को प्रमुख स्थान दिया गया है। जिस प्रकार शरीर मे मुख का महत्व है उसी प्रकार वेदागों मे व्याकरण को मुख का स्थान दिया गया है, 'मुख व्याकरण स्मृतम्'।

सस्कृत भाषा के व्याकरण के अध्ययन-अध्यापन की परम्परा बहुत प्राचीन है। उपलब्ध वैदिक पद पाठों की 3200 वि.पू. की समीक्षा से ज्ञात होता है कि उनकी रचना के पूर्व प्रकृति, प्रत्यय, धातु, उपसर्ग और समास घटित पूर्वोत्तर पदो का विभाग पूर्णतया निर्धारित हो चुका है। ऋग्वेद पद पाठ मे इनका स्वरूप स्पष्ट परिलक्षित होता है। व्याकरण शास्त्र का प्रथम प्रवक्ता 'ब्रह्मा' को कहा गया है। ब्रह्मा जी ने आचार्य वृहस्पति को व्याकरण का ज्ञान दिया तथा वृहस्पति ने अपने शिष्य इन्द्र को, इन्द्र ने ऋषि भारद्वाज को, भारद्वाज ने ऋषियो और ऋषियों ने ब्राह्मणों को इसका ज्ञान प्रदान किया। प्राचीन काल में व्याकरण शिक्षण पद्धति में कंठस्थीकरण पर बल था तथा सूत्र प्रणाली को प्रयोग में लाया जाता था। तत्कालीन सस्कृत भाषा अव्याकृत थी अर्थात् प्रकृति-प्रत्यय आदि के विभाग से रहित होने के कारण उसका उपदेश 'प्रतिपदपाठविधि' से किया जाता था। इसमे एक-एक करके शब्द पढे जाते थे– गौः, अश्व, पुरुष, हस्ती आदि। इस काठिन्य के निवारणार्थ उसके प्रत्येक शब्द को विभक्त कर अध्ययन की सुगमता के लिए वैज्ञानिक विधि का निर्माण किया गया और उसमे प्रकृति-प्रत्यय आदि की कल्पना की गई। उस समय सस्कृत शिक्षण हेतु शास्त्रार्थ, तर्क-वितर्क, प्रश्नोत्तर तथा पारायण विधि से भी व्याकरण शिक्षण को रोचक बनाया जाता था।

शनै-शनै शिक्षा पद्धति मे परिवर्तन आया। ब्रिटिश काल से अब तक सस्कृत शिक्षण के क्षेत्र मे पाठ्य-पुस्तक विधि, प्रत्यक्ष विधि, विश्लेषणात्मक विधि, व्याकरण विधि, व्याख्या विधि का बोलबाला रहा। पिछले कई दशको तक हम पाठ-योजना निर्माण हेतु हरबार्ट की पञ्चपदी का प्रयोग करते रहे। हमारा कुछ ध्यान मूल्यांकन विधि की ओर भी उन्मुख हुआ। सस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधियो के आधार पर 'सयुक्त विधि' का प्रयोग करने का भी हमारा प्रयास रहा है, तथापि आज के इस 'हाईटेक युग' में विभिन्न संचार साधनो एवं दृश्य-श्रव्य उपकरणो का समुचित प्रयोग करते हुए संस्कृत व्याकरण शिक्षण कैसे करे? अभिभावको तथा छात्रों मे प्रचलित यह धारणा, कि सस्कृत भाषा रटने से आती है एवं भावी अध्यापको की यह समस्या, कि छात्र सस्कृत समझते ही नहीं। वे सस्कृत पढ़ना ही नही चाहते। इन भ्रान्तियो के निवारणार्थ सस्कृत व्याकरण शिक्षण हेतु अभिनव प्रयोग की आवश्यकता अनुभूत की गई।

डा. सम्पूर्णानन्द ('आज' 9 जून, 1963) ने भी कहा था– "व्यक्तिगत रूप से मेरा यह मत है कि संस्कृत इस देश की राष्ट्रभाषा होनी चाहिए। यदि लोग अग्रेजी जैसी विदेशी भाषा को सीख सकते है तो वे संस्कृत क्यों नही सीख सकते, जो हमारी प्राचीन भाषा है।"

संस्कृत एक वैज्ञानिक भाषा है। वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि विश्व की विभिन्न भाषाओ मे से संस्कृत भाषा कम्प्यूटर के लिए सर्वाधिक उपयुक्त भाषा है। अतः स्पष्ट है कि संस्कृत व्याकरण क्रमबद्ध तथा

नियमबद्ध है। संस्कृत व्याकरण शिक्षण हेतु सूक्ष्म-शिक्षण उपागम, सरचनात्मक उपागम, अभिक्रमित अनुदेशन का प्रयोग वर्तमान मे सामान्यत. किया जाने लगा है, किन्तु शिक्षण प्रतिमानो का प्रयोग भाषा-शिक्षण में विशेषत. संस्कृत व्याकरण शिक्षण में आज भी व्यावहारिक रूप से नहीं किया जा रहा है, जबकि शिक्षण प्रतिमानो पर आधारित शिक्षण से संस्कृत व्याकरण शिक्षण रुचिकर तो होगा ही साथ ही छात्रों की भावाभिव्यक्ति भी सशक्त होगी, क्योकि शिक्षण प्रतिमान अधिगम के लिए दिशा निर्देश करते है तथा शिक्षण किस प्रकार किया जाना चाहिए? इस प्रश्न का उत्तर खोजने मे सहायक होते है।

जोयस ने शिक्षण प्रतिमान की परिभाषा देते हुए कहा है– "शिक्षण प्रतिमान अनुदेशन की रूपरेखा माने जाते है। इसके अन्तर्गत विशेष उद्देश्य प्राप्ति के लिए विशिष्ट परिस्थिति का उल्लेख किया जाता है। जिसमें छात्र एवं शिक्षक की अन्त.प्रक्रिया इस प्रकार की हो कि उनके व्यवहार मे अपेक्षित परिवर्तन लाया जा सके।

किसी भी शिक्षण प्रतिमान को चुनते अथवा विकसित करते समय अध्यापक के लिए शिक्षण विधियो, उपायो एवं मूल्यांकन के आधारो तथा शिक्षण लक्ष्यों का ज्ञान होना आवश्यक है। विभिन्न मनोवैज्ञानिकों तथा शिक्षाशास्त्रियों ने शिक्षण प्रतिमानों का अलग-अलग ढग से वर्गीकरण व उल्लेख किया है। कपितय उन महत्वपूर्ण प्रतिमानों को इस प्रयोग मे लिया गया है जिनके माध्यम से 'भाषा शिक्षण' में व्याकरण शिक्षण को प्रभावी बनाया जा सकता है। एतदर्थ सस्कृत शिक्षण के प्रशिक्षणार्थियों को शिक्षण प्रतिमानों पर आधारित पाठ योजनाएं बनवाई गई तथा तदनुसार ही शिक्षण करवाया गया।

समस्या कथन

सस्कृत शिक्षण (विशेषतः व्याकरण शिक्षण) में शिक्षण प्रतिमानो की प्रभावशीलता का अध्ययन।

प्रयोग के उद्देश्य

- अध्यापको एवं छात्राध्यापको द्वारा किए जा रहे सस्कृत शिक्षण के स्तर को उन्नत करना।
- विभिन्न प्रचलित विधियो के आधार पर किए गए शिक्षण तथा शिक्षण प्रतिमानो के आधार पर किए गए शिक्षण की प्रभावशीलता का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- शिक्षण प्रतिमानों के साथ नवीनतम दृश्य-श्रव्य उपकरणों के प्रयोग के प्रभाव का अध्ययन करना।

प्राक्कल्पना

प्रयोग हेतु निम्नलिखित प्राक्कल्पनाए बनाई गई–

- विभिन्न प्रचलित विधियो के आधार पर किए गए सस्कृत शिक्षण तथा शिक्षण प्रतिमानों के आधार पर किए गए सस्कृत शिक्षण मे गुणात्मक दृष्टि से कोई सार्थक अन्तर नही है।
- शिक्षण प्रतिमानों के साथ नवीनतम दृश्य-श्रव्य उपकरणो के प्रयोग से छात्रों की संस्कृत विषय की उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता।

चर

प्रस्तुत प्रयोग में निम्नलिखित चर लिए गए–

- स्वतन्त्र चर– नवीनतम विधि से शिक्षण।
- परतन्त्र चर– सामान्यतः प्रचलित विधि से शिक्षण।

प्रस्तुत प्रयोग मे शिक्षण प्रतिमानों तथा दृश्य-श्रव्य उपकरणों के साथ किए गए शिक्षण को नवीनतम विधि से शिक्षण के रूप मे लिया गया है तथा हरबार्ट की पञ्चपदी, सरचनात्मक उपागम आदि को सामान्यत प्रचलित विधि से शिक्षण के रूप में लिया गया है।

न्यादर्श

- 15 छात्राध्यापक– केन्द्रीय सस्कृत विद्यापीठ, जयपुर, जिन्होंने शिक्षण प्रतिमानो पर आधारित पाठ योजना से शिक्षण किया।
- 15 छात्राध्यापक– केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, जयपुर, जिन्होंने प्रचलित विधि पर आधारित पाठ योजना से शिक्षण किया।
- 150 छात्र कक्षा सातवीं, आठवी, नवी – दि मॉडर्न हैप्पी स्कूल, मालवीय नगर, जयपुर।

उपकरण

- कतिपय शिक्षण प्रतिमानों पर आधारित पाठ योजना निर्माण
- शिक्षण के मध्य नवीनतम दृश्य-श्रव्य उपकरणो का प्रयोग
- अभिवृत्ति मापनी— ★ छात्राध्यापको की दृष्टि से ★ छात्रो की दृष्टि से
- उपलब्धि परीक्षण ★ विशिष्ट शिक्षण से पूर्व ★ विशिष्ट शिक्षणोपरान्त

प्रयोग की प्रक्रिया

प्रस्तुत प्रयोग मे छात्राध्यापको के दो समूह बनाए गए। एक समूह के छात्राध्यापकों ने शिक्षण अभ्यास के दौरान शिक्षण प्रतिमानों पर आधारित पाठ योजनाओ के आधार पर शिक्षण कार्य किया जबकि दूसरे समूह के छात्राध्यापकों ने सामान्यतः प्रचलित विधियों पर आधारित पाठ योजनाओ के आधार पर शिक्षण किया।

सर्वप्रथम निर्मित कतिपय शिक्षण प्रतिमानों पर आधारित पाठ योजनाएं यहां प्रस्तुत की जा रही हैं—

हिल्दा तबा के शिक्षण प्रतिमान पर आधारित शिक्षण

हिल्दा तबा के प्रतिमान को 'आगमन प्रतिमान' भी कहा जाता है। हिल्दा तबा ने सेन्ट्रल कोस्टा विद्यालय में किए गए प्रयोगो के आधार पर इसका विकास किया। विशेषत. यह अध्यापक शिक्षा के लिए बनाया गया है। जिससे छात्राध्यापक अधिगम की समस्या का विश्लेषण कर उसका निदान तथा उपचार कर सकें। इस प्रतिमान मे प्रमुखत, तथ्यों एवं सूचनाओं का संग्रह किया जाता है। इस प्रतिमान का प्रयोग संस्कृत शिक्षण करते समय व्याकरण विधा हेतु बखूबी किया जा सकता है। इस प्रतिमान में हिल्दा तबा ने तीन शिक्षण व्यूह बताए हैं—

- सम्प्रत्यय का निर्माण करना।
- आंकड़ो की व्याख्या करना।
- सिद्धान्तों का प्रयोग करना।

व्याकरण शिक्षण को सरस बनाने के लिए उपर्युक्त शिक्षण व्यूह सर्वाधिक उपयुक्त है। किसी भी नियम को सीधे न बताकर उदाहरणो को प्रस्तुत करके छात्रों मे सम्प्रत्यय का निर्माण किया जाए तत्पश्चात् समान उदाहरणो को पहचान कर छात्र उनमे विभेदीकरण करते हुए प्राप्त आकड़ों/सूचनाओ की व्याख्या करें तत्पश्चात् शिक्षक की सहायता से सिद्धान्त/नियम तक पहुंचें और फिर उसका प्रयोग करें। इस प्रतिमान पर आधारित एक पाठ योजना यहां प्रस्तुत है—

पाठ योजना

विषयः : सस्कृतम् (व्याकरणम्)

प्रकरणम् · अपादान कारकम् **कक्षा**—नवम्

उद्देश्य अथवा केन्द्र बिन्दु— मानसिक क्रियाओं का विकास करना तथा सिद्धान्तो का बोध करने की क्षमता का विकास करना। छात्राध्यापक छात्रो के पूर्व चिन्तन के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कक्षा से प्रश्न करेगा—

छात्राध्यापक— कक्षाया श्यामपट्टे एक वाक्य लिखति—

वृक्षात् पत्रं पततिं।

प्र वृक्षात् किम् पतति?

उ वृक्षात् पत्र पतति।

प्र. पत्रं कस्मात् पतति?

उ. पत्र वृक्षात् पतति।

प्र 'वृक्षात्' इत्यस्मिन् शब्दे विभक्ति· का?

संरचना (प्रस्तुतिकरणम्)— सम्प्रत्यय के निर्माण, व्याख्या, उपकल्पना निर्माण, उसकी व्याख्या तथा जाच हेतु अन्य उदाहरणों के माध्यम से ज्ञान को परिपुष्ट किया जाएगा—

- ☐ राम· ग्रामात् गच्छति।
- ☐ जल मेघात् वर्षति।
- ☐ बालकः धावतोऽश्वात्पतति हस्ताभ्या पतति।
- ☐ पुस्तक हस्तभ्यां पतति।
- ☐ पत्राणि वृक्षाभ्यां पतन्ति।
- ☐ छात्रा विद्यालयाभ्यां गृहं गच्छन्ति।
- ☐ मानवाः नगरेभ्यः आगच्छन्ति।
- ☐ पत्राणि वृक्षेभ्यः पतन्ति।

उपर्युक्त वाक्यो पर क्रमशः प्रश्न पूछे जाएंगे। एक वाक्य को उदाहरणार्थ यहा प्रस्तुत किया जा रहा है—

- ☐ वाक्येऽस्मिन् कर्ता क·?
- ☐ क्रिया का?
- ☐ 'ग्रामात्' शब्दे विभक्तिः का?

□ पच्चमी विभक्ते. कदा भवति?

□ कर्ता कस्मिन् वचने अस्ति?

सामाजिक प्रणाली— छात्राध्यापक क्रमशः उपर्युक्त वाक्यो को प्रस्तुत करके छात्रों से प्रश्न पूछता है। छात्र उत्तर देते हैं। छात्राध्यापक छात्रो की प्रतिक्रियाओ के साथ श्यामपट्ट सार का विकास करता है। इस तरह अध्यापक तथा छात्र दोनों सक्रिय रहते हैं।

सभरण व्यवस्था— छात्राध्यापक सामान्य कक्षोपकरण यथा— श्यामपट्ट सुधा खण्ड (चाक), मार्जनी (डस्टर), सकेतक आदि के प्रयोग के साथ उदाहरणों हेतु फोटो हैड प्रोजेक्टर तथा ध्वनि मुद्रिका (कैसेट्स) का प्रयोग भी करेगा जिनसे विभिन्न उदाहरण अभ्यासार्थ कक्षा मे प्रस्तुत किए जाएगे।

मूल्याकनम् — शिक्षक.— श्यामपट्ट सार दृष्ट्वा वदतु — पंचमी विभक्त्या. प्रयोग. कस्मिन्ऽर्थे भवति?

नियमीकरणम्— 'ध्रुवमपायेऽपादानम्' —
अपायोविश्लेषस्तस्मिन् साध्ये ध्रुवमवधिभूत
कारकमपादान सज्ञंस्यात्।

'अपाय' का अर्थ है— विश्लेष (अलग होना) किसी पदार्थ (वस्तु या व्यक्ति) के अलग होने मे जो कारक ध्रुव अर्थात् सीमा रूप है उसकी उपादान सज्ञा होती है।

अपादाने पंचमी — अपादान कारक मे पचमी विभक्ति होती है।

उपयोग— छात्राध्यापक अभ्यासस्य कृते छात्रान् प्रश्नान् पृच्छति—

श्यामपट्ट कार्यम्

कर्ता	अपादान शब्दा.	वचनम्	क्रिया	विभक्तिः	कारकम्
राम	ग्रामात्	एक	गच्छति	पंचमी	अपादानम्
जल	मेघात्	एक	वर्षति	पंचमी	अपादानम्
बालक'	अश्वात्	एक	पतति	पचमी	अपादानम्
पुस्तक	हस्ताभ्या	द्वि	पतति	पंचमी	अपादानम्
पत्राणि	वृक्षाभ्यां	द्वि	पतति	पंचमी	अपादानम्
छात्रा	विद्यालयाभ्मां	द्वि	गच्छति	पचमी	अपादानम्
मानवाः	नगरेभ्यः	बहु	आगच्छति	पंचमी	अपादानम्
पत्राणि	वृक्षेभ्य	बहु	पतन्ति	पंचमी	अपादानम्

प्रश्न — 1

क्र. सं	*वक्यानि*	*कारकम्*	*स्पष्टीकरणम्*
□	वृक्षात् पुष्पं पतति।	.. . .	... .
□	मेघात् जलं वर्षति।	....	....
□	पर्वताभ्यां नदी उद्भवति।	... .	....
□	बाणाभ्या अग्नि. निर्गच्छति।	....	. . ..
□	विद्यालयेभ्यः अध्यापकाः आगच्छन्ति।	... ...	....
□	मस्तकेभ्य. केशा' पतन्ति।	. . ..	.. ..

प्रश्न 2 ☐ 'नरात' इत्यस्मिन् शब्दे विभक्तिः का?
☐ ग्रामाभ्याम् इत्यस्मिन् शब्दे वचन किम्?
☐ पचमीविभक्तिः कस्मिनऽर्थे प्रयुक्ता भवति?

गृहकार्यम्

☐ सप्तवाक्येषु अपादान कारकस्य प्रयोग कुर्वन्तु।

☐ स्वापाठ्य पुस्तकात् अपादानकारकस्य कतिपयानि वाक्यानि चित्वा लिखन्तु।

इस प्रकार यह प्रतिमान दूरदर्शन, अनुदेशन, प्रत्यय निर्माण तथा शिक्षण की भूमिका के निर्वाह मे महत्वपूर्ण योगदान देता है। इसमें शिक्षण कौशल, प्रश्नोत्तर तथा चिन्तन कार्य द्वारा शिक्षण को प्रभावशाली बनाया जाता है।

बुनियादी शिक्षण प्रतिमान पर आधारित शिक्षण

इस प्रतिमान का प्रतिपादन विलियम ग्लेसर ने किया। इसे प्राथमिक शिक्षण प्रतिमान, मनोवैज्ञानिक प्रतिमान, कक्षा सभा शिक्षण प्रतिमान, मौलिक शिक्षण प्रतिमान आदि नामो से पुकारा जाता है। विलियम ग्लेसर ने इसे मुख्य रूप से वास्तविक चिकित्सा के आधार पर वर्णित किया। ग्लेसर ने कहा कि 'शिक्षण के साथ-साथ सप्ताह मे कम से कम एक बार एक कक्षा सभा का आयोजन 30 से 45 मिनट की अवधि तक किया जाना चाहिए। उसमे छात्र एवं शिक्षक स्वतन्त्र रूप से अपने विचारों की अभिव्यक्ति कर ऐसे प्रयास करें जिनसे सामुहिक निष्कर्ष पर पहुचा जा सके। यह प्रक्रिया भाषा शिक्षण हेतु अत्यन्त उपयोगी है। व्याकरण के किसी एक विषय को पढ़ाने के बाद विविध उदाहरणो द्वारा नियम की पुष्टि करते हुए छात्र यदि निष्कर्ष पर स्वय पहुचता है तो उसका अधिगम अधिक स्थाई होगा।'

बुनियादी शिक्षण प्रतिमान मे मुख्य रूप से चार तत्व सम्मिलित होते हैं उनके आधार पर ही पाठ योजना का निर्माण निम्नवत् किया गया—

पाठ योजना

विषय— संस्कृतम् (व्याकरणम्) **कक्षा—**अष्टम्

प्रकरणम् — द्विगु समास·

अनुदेशनात्मक उद्देश्य— अनुदेशनात्मक उद्देश्य को व्यावहारिक कथनों मे बदलकर लिखवाया गया।

पूर्व व्यवहार— यह वह व्यवहार है जो विद्यार्थियों की उन योग्यताओ अथवा व्यवहारो से सम्बन्धित है जिसकी आवश्यकता पाठ्य-वस्तु को समझने के लिए होती है।

इस सोपान की पूर्ति हेतु समास की परिभाषा व भेद आदि छात्रों से पूछे गए—

☐ 'समास' इत्यस्य तात्पर्य किम्?

☐ समासस्य कति भेदा. भवन्ति?

स्पष्टीकरण्— समास. पंचधा। तत्र समसनं समास । स च विशेष सज्ञाविनिर्मुक्त केवल समास· प्रथमः। प्रायेण पूर्व पदार्थ प्रधानोऽवययी भावो द्वितीय·। प्रायेणोत्तर पदार्थ प्रधान· तत्पुरुषः तृतीयः। तत्पुरुष भेदः कर्मधारय.। कर्मधारये भेदो द्विगु। प्रायेणान्यप्रधानो बहुव्रीहिश्चतुर्थ.। प्रायेणोभयः पदार्थप्रधानो. द्वन्द्वः पंचम·। इत्थ प्रस्तुत्य कक्षायाः स्तरानुसारं शिक्षकः समासानां भेदान् वदति छात्रान् अपि पृच्छति।

- केवल समास
- अव्ययी भाव समास.
- तत्पुरुष समास·
  - ↓ द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी पंचमी, षष्ठी, सप्तमी
  - ↓ कर्मधारय समास.
  - ↓ द्विगु समासः
- बहुव्रीहि समासः
- द्वन्द्व समास

अनुदेशनात्मक प्रक्रिया— इस सोपान मे शिक्षण की वे क्रियाए आती है, जो पाठ्य-वस्तु के प्रस्तुतीकरण के लिए प्रयुक्त की जाती है।

विविधानि उदाहरणानि प्रस्तुत्य समास विग्रहं कारयति छात्राध्यापकः —

पंचगवम्	:	पंचानां गवानां समाहारः
नवरत्नम्	:	नवानां रत्नानां समाहारः
त्रिभुवनम्		त्रयाणा भुवनाना समाहार·
चतुर्युगम्	:	चतुर्णा युगानां समाहारः
पचपात्रम्		पचाना पात्राणां समाहारः

छात्राध्यापकः प्रच्छति— श्यामपट्टसारं दृष्ट्वा वदतु द्विगु समासः कस्मिन् रूपे भवति?

स्पष्टीकरणम् — 'सख्या पूर्वो द्विगु:' यह कर्मधारय समास का एक भेद है। यदि कर्मधारय समास में प्रथम शब्द सख्यावाची हो और दूसरा शब्द संज्ञा हो तो उसे द्विगु समास कहते हैं।

पुनः कतिपयानि उदाहरणानि प्रस्तुत्यसमास विग्रह कारयति छात्राध्यापकः —

त्रिलोकी	:	त्रयाणां लोकाना समाहार·।
पंचमूली	:	पचानां मूलाना समाहार·।
पचवटी	:	पंचानां वटाना समाहारः।

छात्राध्यापकः पृच्छति— श्यामपट्टसार दृष्टवा वदतु— एतेष्वुदाहरणेषु वैशिष्ट्य किम्?

नियमीकरणम्— 'अकारान्तोत्तरपदो द्विगु स्त्रियामिष्ट'। पात्राद्यन्तस्य न।' वट, लोक, भूत आदि अकारान्त शब्दों के साथ समाहार द्विगु मे समस्त पद ईकारान्त स्त्रीलिग होता है, किन्तु पात्र, भुवन, युग इन पदों मे स्त्रीलिंग नहीं होता।

निष्पत्ति अथवा निष्पादन मूल्यांकन

प्रश्न 1. निम्नलिखिताना समस्त पदाना समास विग्रह कुर्वन्तु —

(अ) सप्तखट्वम्

(ब) पचकुमारि

प्रश्न 2 निम्नलिखितानां पदाना समासं कुर्वन्तु—

(अ) अष्टानां तक्ष्णा समाहार·

(ब) दशानां पूलानां समाहारः

(स) अष्टाना अध्यायानां समाहार

प्रश्न 3. द्विगुसमास· कदा भवति?

प्रश्न 4 द्विगु समासस्य दश उदाहरणानि स्व पुस्तकात् चिन्वन्तु।

उक्त प्रतिमान छात्रो को अपने तथा अन्य छात्रो के परस्पर व्यवहारो को समझने में सहायता देता है तथा छात्रों मे स्वय विषय समझने की योग्यता का विकास करता है।

प्रगत संगठनात्मक प्रतिमान पर आधारित शिक्षण

इस प्रतिमान का प्रतिपादन प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक डेविड आसुबेल द्वारा सार्थक मौखिक अधिगम सिद्धान्त के आधार पर किया गया। यह प्रतिमान दो मुख्य अवधारणाओ पर आधारित है—

- ☐ विषय का 'सामान्य से विशिष्ट' शिक्षण सूत्र का अनुसरण करते हुए प्रस्तुतिकरण करना जिसमे विषय की विस्तृत व्याख्या भी सम्मिलित होती है।
- ☐ इस प्रतिमान में पूर्व मे सीखी गई विषय-वस्तु या विद्यमान ज्ञान में नवीन ज्ञान को कैसे सम्मिलित किया जाए इस बात पर भी विचार किया जाता है। इस प्रतिमान पर आधारित पाठ योजना यहां प्रस्तुत है—

पाठ योजना

विषय— संस्कृतम् (व्याकरणम्) **कक्षा**— नवम्

प्रकरणम्—वर्तमानकालिक कृदन्तम्-शतृप्रत्ययः

उद्देश्य— इस प्रतिमान का मुख्य उद्देश्य छात्रों के ज्ञानात्मक पक्ष को विकसित कर सम्प्रत्ययों एवं तथ्यों का बोध कराना है।

प्रथम सोपानम् (प्रस्तावना)— ज्ञातात् अज्ञातं प्रति इति शिक्षण सूत्रमनुसृत्य वर्तमानकालं स्मारयन् अज्ञात शतृ प्रत्ययस्य प्रयोगम् अवबोधयति-

- ☐ त्व कि जिघ्रसि?
- ☐ गोपालः क्रीडति।
- ☐ रमेशः उमेश च हसत·।

प्र. एतेषां वाक्यानां हिन्दी भाषायामनुवादं कुर्वन्तु।

प्र. एतेषु वाक्येषु कस्य कालस्य प्रयोगः अभवत्?

प्र. संस्कृतभाषाया वर्तमानकाले कस्य लकारस्य प्रयोग' भवति?

प्र लट्लकाराय कयो' प्रत्यययो. प्रयोग भवति?

द्वितीय सोपानम् (प्रस्तुतीकरणम्)— छात्राध्यापक कक्षा मे कतिपय वाक्य क्रमशः प्रस्तुत करेगा तथा प्रत्येक वाक्य पर प्रश्न करते हुए श्यामपट्ट सार का विकास करेगा।

- ☐ छात्र. पाठं पठन निद्रा करोति।
- ☐ कदापि नर. खदन् न पठेत्।
- ☐ राम' हसन् अवदत्।
- ☐ त्व जल पिबन् न हसे'
- ☐ श्याम. गृहं गच्छन् अस्ति।

यहा उदाहरणार्थ एक वाक्य से सम्बन्धित प्रक्रिया प्रस्तुत है—

☐ छात्रः पाठं पठनं निद्रा करोति।

प्र क पाठ पठन् निद्रा करोति?

प्र छात्रः कि कुर्वन् निद्रा करोति?

प्र 'पठन्' इत्यस्मिन् शब्दे क धातु.?

प्र. अत्र क' प्रत्यय?

प्र अत्र 'पठन', इति क्रियायां कस्य कालस्य प्रयोगोऽस्ति?

प्र 'करोति' इत्यत्र धातुः आत्मनेपदे परस्मैपदे वा?

प्र 'शतृ' प्रत्ययस्य प्रयोगः कस्मिन् पदे भवति?

प्र. पठन् अस्य शब्दस्य प्रकृति प्रत्ययं विश्लेषयन्तु?

ध्यातव्यं — इत्थं शिक्षक. प्रश्नान् पृच्छन् श्यामपट्टसारं विकासयति—

सामाजिक व्यवस्था— उक्त प्रक्रिया से स्पष्ट होता है कि छात्रो द्वारा जिस पाठ्य-वस्तु का विश्लेषण पूर्व मे किया जा चुका होता है उससे सम्बन्ध स्थापित कर नवीन ज्ञान प्रदान किया जाता है।

संभरण व्यवस्था — शिक्षक व छात्र आमने-सामने रहकर शिक्षण कार्य करते है तथा निष्कर्ष पर पहुंचते है।

सामान्यीकरणम्— श्यामपट्ट सार दृष्ट्वा शतृप्रत्ययस्य नियमनिर्धारण कुरू।

नियमनिर्धारणम्—शतृ प्रत्यय वर्तमानकालिक कृदन्तमस्ति। अस्य कृदन्त प्रतययस्य 'अत्' शेष. भवति, लट्लकारे परस्मैपदे च प्रयोग. भवति।

मूल्यांकनम्

☐ कोष्ठके निर्दिष्टस्य धातो शत्रन्तरूपेण रिक्तस्थलानि नूरयन्तु —

- सेवकः पुष्पम् (आ + नी [नय्])........ .. नमस्करोति।
- नलिकात जलं (निर + गम्) .... अस्ति।

☐ शतृ प्रत्ययस्य प्रयोगः कस्मिन् काले भवति?

☐ शतृ प्रत्यय युक्तान् पंचशब्दान् वदतु तथा च स्व पुस्तकात् शतृ प्रत्यय युक्त शब्दान् अन्विष्य एकां सारणी निर्मातु।

उक्त प्रतिमान अधिगम अन्तरण मे सहायक होता है, इसलिए एक प्रकार के नियम का उदाहरणों सहित ज्ञान होने के पश्चात् छात्र मे उसी तरह के नियम आने पर उनका प्रयोग कुशलता से करने की योग्यता उत्पन्न

श्यामपट्ट सारः

कर्ता	*प्रत्यययुक्त शब्द·*	*धातुः*	*प्रत्ययः*	*लकार·*	*प्रकृति प्रत्यय विश्लेषणम्*
छात्रः	पठन्	पठ्	शतृ	लट्	पठ् + अन् (अत्)
नरः	खादन्	खाद्	शतृ	लट्	खाद् + अन् (अत्)
राम	हसन्	हस्	शतृ	लट्	हस् + अन् (अत्)
त्वं	पिबन्	पिब्	शतृ	लट्	पिब् + अन् (अत्)
श्याम'	गच्छन्	गम्(गच्छ्)	शतृ	लट्	गच्छ् + अन् (अत्)

हो जाती है। साथ ही समस्या समाधान की योग्यता भी उत्पन्न करने मे यह प्रतिमान उपयोगी है।

संगणक (कम्प्यूटर) पर आधारित शिक्षण

भाषा प्रयोगशाला में संगणक एक नई उपलब्धि है। इसका प्रयोग अनेक क्षेत्रों मे हो रहा है। यह हमारे जीवन का अभिन्न अंग बनता जा रहा है। यह तन्त्र मशीनी अनुवाद, कृत्रिम वाक् सश्लेषण, पाठ विश्लेषण, कोश निर्माण आदि कई क्षेत्रो मे सार्थक रूप से उपयोग मे आ रहा है। अत- भाषा शिक्षण मे इसकी विशिष्ट भूमिका है। नई भाषा सीखने के उत्सुक छात्र इसकी सहायता से प्रभावी रूप में और कम समय मे इसके माध्यम से भाषा सीख सकते है, क्योंकि इसके द्वारा उन्हे सूचनाओं की प्रतिपुष्टि तत्काल प्राप्त हो जाती है। त्रुटियों की विस्तृत जानकारी सम्भव है एवं छात्रो को भाषा दक्षता सम्बन्धी सूचना उपलब्ध हो सकती है और इन सब सूचनाओं के आधार पर छात्र विशेष को आवश्यकतानुसार पाठ निर्देश और पाठ अभ्यास मिल सकते हैं। भाषा शिक्षण हेतु प्रयुक्त कम्प्यूटर सेट मे निम्नलिखित विशेषताएं होनी आवश्यक हैं।

- ☐ **सगणक समृद्ध स्मृति कोश**— भाषा शिक्षण हेतु कम्प्यूटर की तकनीकी शब्दावली में 375 किलोबाईट की अपेक्षा रहती है।
- ☐ **गति की तीव्रता**— कम्प्यूटर साधित भाषा पाठ के लिए आवश्यक है कि छात्रों के प्रत्युत्तर की स्वीकृति, उचित प्रतिप्राप्ति, नए प्रश्नों के चुनाव आदि के लिए कम्प्यूटर कई क्षण न लगाए।
- ☐ **संगणक भाषा की सक्षमता**— कम्प्यूटर की भाषा वह होती है जिसके सहारे प्रोग्रामर मशीन से बात करता है। इस भाषा को इतना सक्षम होना चाहिए कि वह छात्रो के प्रत्युत्तर का भाषिक विश्लेषण कर सके यथा वह शब्द से उसके उपसर्ग और प्रत्यय निकाल सके, सही शब्द क्रम की पहचान कर सके। कोशीय त्रुटियो को वर्तनी की अशुद्धियों से अलग कर सके। ये सब गुण संस्कृत भाषा में विद्यमान हैं।
- ☐ **सहज कुंजीपटल**— टंकण यन्त्र की भांति इसके कुंजीपटल मे अक्षरो और मात्राओ की एक सही वैज्ञानिक और प्रभावी व्यवस्था होनी चाहिए और अको मे 0 से 9 तक की सुविधा।
- ☐ **दिग्दर्शन फलक की सुविधा**— बाह्य उपकरणो को सक्रिय करने की कम्प्यूटर में ऐसी क्षमता होनी चाहिए जिससे स्लाइड का चुनाव हो सके। टेपरिकॉर्डर और वीडियो टेप का सचालन सम्भव हो सके।

प्रस्तुत प्रयोग हेतु उक्त सुविधाओं से युक्त संगणक सेट ही लिए गए। कम्प्यूटर पर आधारित शिक्षा प्रतिमान का प्रतिपादन लॉरेन्स स्टालरो तथा डेनियल डेविस ने किया। इस प्रतिमान मे कम्प्यूटर शिक्षक का स्थान ग्रहण कर लेता है और फिर वही निर्णय निश्चित करता है तथा शिक्षण प्रदान करता है। इसमे सम्पूर्ण शिक्षण प्रक्रिया को दो स्तरो मे विभाजित किया जाता है—

- ☐ पूर्व शिक्षण काल
- ☐ शिक्षण काल

इस प्रतिमान में मुख्यतः तीन तत्व निहित होते है—

- ☐ विद्यार्थी का पूर्व व्यवहार
- ☐ अनुदेशन के उद्देश्य का निर्धारण
- ☐ शिक्षण पक्ष

संगणक आधारित अभिक्रम में ध्वनि अभिलेख (रिकॉर्ड) कर लिया जाता है। यह अध्ययनकर्ता द्वारा दिए गए उत्तर सकेतो के आधार पर उत्पन्न होती है। पहले अध्ययनकर्ता पर्दे पर देखता है जो एक प्रोजेक्टर से सम्बद्ध होता है। वह उस पर्दे पर जो बात लिखी या दर्शाई गई है उसे सीखने का प्रयास करता है। जब वह उसे सीख लेता है तब यह ज्ञात करने के लिए कि वह उसे सीख पाया है या नही, कई मिलते-जुलते शब्द या बिन्दु पर्दे पर दर्शाए जाते हैं। अध्ययनकर्ता सही शब्द या विन्दु को पहचानने के पश्चात् उसे सकेतक से छूता है। छूने के पश्चात् वह उत्तर 'सही' अथवा 'गलत' जैसा भी होता है, वैसी ही ध्वनि जो पहले से रिकार्ड की हुई होती है निसृत होती है, यदि उत्तर गलत है तब इसका कारण भी ध्वनि रूप में अध्ययनकर्ता को ज्ञात हो जाता है, जैसे—

प्रथम स्थिति—

प्रक्षेपण यन्त्र	पर्दा
'बालक', इत्यस्य शब्दस्य षष्ठी विभक्ति एकवचने रूप भवति।	बालके बालकस्य
बालकस्य	बालकयो·

इस प्रकार अध्ययनकर्त्ता आगे बढ़ता जाता है और उसे उत्तर मिलते चले जाते हैं। यदि कोई छात्र पाठ्य-सामग्री को जल्दी समझ लेता है तब वह ' + ' का बटन दबाकर अपने सीखने की गति में वृद्धि कर सकता है। इसके विपरीत यदि वह किसी तथ्य अथवा पाठ्य-सामग्री को समझने के लिए अतिरिक्त समय चाहता है तब वह '–' का बटन दबाकर अपनी सीखने की गति को कम कर सकता है।

उक्त तत्वों का ध्यान रखते हुए पाठ योजना का निर्माण करवाया गया—

विषय— संस्कृतम् (व्याकरणम्) **कक्षा**— सप्तम्

प्रकरणम्— स्वर सन्धि, (दीर्घ सन्धि·)

पूर्व शिक्षण काल

निर्देश

- ☐ प्रकरणेन सम्बद्धां सूचनां सम्यक् पठित्वा उत्तराणि ददतु।
- ☐ पदानि ध्यानपूर्वकं पठन्तु।
- ☐ प्रश्नस्योपक्रमे दत्तान् निर्देशान् ध्यानेन पठन्तु।
- ☐ स्वोत्तराणां मूल्यांकन प्रदत्तेनोतरेण स्वतः कुर्वन्तु।
- ☐ त्रुटिनिवारणाय पदानि पुनः ध्यानेन पठन्तु।
- ☐ सम्यक् विचिन्त्य उत्तराणि ददतु।
- ☐ सर्वेषां पदानामुत्तरं ददतु।

प्र. 1 भाषाया· लघुतमः एकक· कोऽस्ति?

(अ) वर्ण.

(ब) स्वर·

(स) व्यञ्जनम्

(द) भाषा उत्तरम् (वर्ण)

प्र. 2 वर्णस्य स्वरूप कीदृशम्?

(अ) अनित्य·

(ब) नित्यानित्य

(स) नित्यः

(द) अन्यथा उत्तरम् (नित्यः)

प्र. 3 वर्णस्य भेदा· भवन्ति।

(अ) षड्

(ब) त्रीणि

(स) चत्वारि

(द) द्वौ उत्तरम् (द्वौ)

प्र.4 एतेषु स्वरौ स्तः।

(अ) ग, घ

(ब) अ, आ

(स) य, र

(द) प, फ उत्तरम् (अ, आ)

प्र 5 क, ख, ग एते वर्णा सन्ति।

(अ) स्वरा·

(ब) सन्धि युक्त पदानि

(स) व्यञ्जनानि

(द) विसर्गाः उत्तरम् (व्यञ्जनानि)

प्र.6 द्वयो· वर्णयो· मेलनेन भवति।

(अ) सन्धि·

(ब) विसर्ग·

(स) समासः

(द) स्वर· उत्तरम् (सन्धि)

प्र.7 स्वर-सन्धि भवति।

(अ) स्वर व्यञ्जनयो·

(ब) स्वरयोः मेलनेन

(स) व्यञ्जनयो· मेलनेन

(द) व्यञ्जन-स्वरयो· मेलनेन

उत्तरम् (स्वरयोः मेलनेन)

प्र.8 स्वर-सन्धि· अस्ति।

(अ) कृष् + न

(ब) परम + आनन्द

(स) नि + सारः

(द) सत् + जन· उत्तरम् (परम + आनन्दः)

शिक्षण काल

अध्यापक कथन– दो वर्णो के मेल से जो विकार होता है उसे सन्धि कहते हैं। जब यह विकार दो स्वर वर्णो के परस्पर मिलने पर उत्पन्न होता है तब उसे स्वर सन्धि कहते हैं।

प्रथम सोपानम् – स्वर सन्धे · अष्टौ भेदा : सन्ति – दीर्घ – गुण – यण् – वृद्धि– आदि– पूर्वरूप–पररूप प्रकृतिभावादयश्च।

प्र स्वर सन्धे· भेदा सन्ति।

चत्वार·	अष्टौ	द्वौ	षट्	उत्तरम् अष्टौ

प्र स्वरसन्धेः भेदाः सन्ति।

दीर्घ सन्धिः	गुण सन्धि	यण् सन्धि·	व्यञ्जन सन्धिः	उत्तरम् व्यञ्जन सन्धिः

प्र. स्वर सन्धि नास्ति।

रामस् + शेते	देव + आलय	प्रति + एकः	महा + उत्सव·	उत्तरम् रामस् + शेते

द्वितीय सोपानम्

दीर्घ सन्धिः (अकः सवर्णे दीर्घ.) अ, इ, उ, ऋ इत्येतैः हस्वदीर्घवणे सह सवर्ण स्वरमेलनेन दीर्घ सन्धि भवति।

यथा– (अ)अ + अ = आ (ब) इ + इ = ई

आ + आ = आ ई + ई = ई

अ + आ = आ इ + ई = ई

आ + अ = आ ई + इ = ई

(अ) उ + उ = ऊ (ब) ऋ+ऋ = ॠ

ऊ + ऊ = ऊ ऋ+ऋ = ॠ

उ + ऊ = ऊ ऋ+ऋ = ॠ

ऊ + उ = ऊ ऋ+ऋ = ॠ

इस प्रकार विद्यार्थी के पूर्व व्यवहारो तथा अनुदेशन के उद्देश्यानुसार कम्प्यूटर शिक्षण योजना का चयन किया जाता है। छात्रो की निष्पत्तियों का निरीक्षण किया जाता है। यदि परिणाम सन्तोषजनक होते है तो दूसरी शिक्षण योजना प्रस्तुत की जाती है। इस प्रतिमान मे व्यक्तिगत विभिन्नताओ का विशेष रूप से ध्यान रखा जाता है। इसमे शिक्षण और निदान की क्रियाएं एक साथ ही होती है। निदान के आधार पर ही उपचारात्मक अनुदेशन प्रदान किया जाता है। एतदर्थ प्रस्तुत पाठ मे अभ्यास कार्य करवाया गया।

प्र. 'हिमालयः' इत्यस्य शब्दस्य सन्धिविच्छेदोऽस्ति।

हिम + आलय·	हिमा + आलयः	हिम + लयः	हिमा + अलयः	उत्तरम् हिम + आलय·

प्र. अनयोः द्वयोः स्वरयो मेलनेन दीर्घ सन्धि. न भवति।

आ + अ	उ + उ	ए + ए	अ + इ	उत्तरम् अ + इ

प्र अनयो. पदयो. मेलनेन दीर्घ सन्धिः न भवति।

श्री + ईश.	विद्या + आलय.	रमा + ईशः	वधू + उत्सवः	उत्तरम् रमा + ईश.

अभ्यासकार्यम्

प्र.1 निम्नलिखितेषु पदेषु स्वर सन्धि युक्तानि पदानि कानि सन्ति?

नदी + ईश, कवि + इन्द्र', सत् + चरित्रः,
दिक् + गज', सदा + एव,
पर + उपकार., वन + औषधिः, क + चित्।

उ ....
. . . .
.. ..

प्र 2 सन्धि विच्छेदं कुर्वन्तु—

सुधीन्द्रः पितृणम् गिरीन्द्रः लघूर्मि'

उ. . ...

सम्पूर्ण पाठ के बाद पुनरावलोकन सामग्री के प्रदर्शन द्वारा छात्रो के निष्पत्ति स्तर में वृद्धि करने का प्रयास करने का प्रयास किया गया ताकि सीखी हुई विषय-वस्तु के ज्ञान में परिपुष्टता आ सके। संस्कृत भाषा शिक्षको के लिए यह गौरव की बात है कि कानपुर तथा हैदराबाद नगर में कम्प्यूटर द्वारा संस्कृत व्याकरण में शोध कार्य तीव्र गति से चल रहा है। इसी प्रकार बैंग्लोर और मेलकोट नगर के विद्वान भी इस क्षेत्र में अति सक्रिय है।

प्रस्तुत प्रयोग में उपर्युक्त पाठ योजनाओ के आधार पर 15 छात्राध्यापकों द्वारा सातवीं, आठवीं एवं नवीं कक्षाओ में अध्यापन कार्य किया गया। जिसमें प्रतिमानो के साथ दृश्य-श्रव्य उपकरणों का प्रयोग सफलतापूर्वक किया गया। न्यादर्श में 15 छात्राध्यापकों का एक ऐसा समूह लिया गया जिसने वर्तमान काल में सामान्य रूप से शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयो मे प्रचलित शिक्षण विधियो के आधार पर शिक्षण कार्य किया।

विशिष्ट शिक्षण करने वाले छात्राध्यापकों को सामान्य विधियों से परिचित करवाने के बाद शिक्षण प्रतिमानों की विस्तृत जानकारी दी गई तथा अलग से पाठ योजनाएं बनवाने का अभ्यास करवाया गया। इनके लिए अलग से प्रदर्शन पाठ भी दिया गया। शिक्षण अभ्यास के दौरान प्रचलित विधियों से कक्षा सातवीं, आठवी तथा नवीं के सभी छात्रों को संस्कृत पढवाई गई, किन्तु शिक्षण प्रतिमानों पर आधारित शिक्षण विधि हेतु छात्रो का एक समूह बनाया गया जिसके लिए छात्रों का चयन उनके गत वर्ष मे सस्कृत विषय मे उपलब्ध अको के आधार पर तथा सामान्य मानसिक योग्यता परीक्षण डा एस. एस. जलोटा के आधार पर किया गया।

उपर्युक्त दोनो समूह में से एक समूह वह था जो सामान्यत' प्रचलित विधियो से संस्कृत पढ़ रहा था। जिसे नियन्त्रित समूह के रूप मे लिया गया। दूसरा वह समूह था जिसे शिक्षण प्रतिमानों के आधार पर पढ़ाया गया। इस समूह को प्रयोगात्मक समूह के रूप में लिया गया। दोनो ही समूहों मे मानसिक योग्यता परीक्षण तथा विद्यालयी उपलब्धि के आधार पर उच्च, सामान्य तथा निम्न तीनों तरह के छात्रो को समान सख्या में रखा गया ताकि परिणाम में इसका विपरीत प्रभाव न पड़े।

उपलब्धि तथा मानसिक योग्यता के आधार पर छात्रो के अलग-अलग समूह बनाए गए। उक्त प्रक्रिया द्वारा छात्राध्यापको से शिक्षण करवाया गया।

प्रयोग की प्रभावशीलता

प्रयोग हेतु बनाई गई प्राक्कल्पनाओं के परीक्षणार्थ निम्नलिखित परीक्षण छात्रों पर डाले गए।

अभिवृत्ति मापनी

★ **छात्राध्यापकों की दृष्टि से—** शिक्षण कौशलों में दक्षता सम्बन्धी तथा संस्कृत शिक्षण मे सुधार तथा उसमें रुचि सम्बंधी लगभग 50 प्रश्न बनाए गए तथा यह अभिवृत्ति मापनी छात्राध्यापको के दोनों समूहो पर प्रशासित की गई।

★ **छात्रों की दृष्टि से—** नवीन शिक्षण विधि तथा दृश्य-श्रव्य उपकरणों का संस्कृत शिक्षण की गुणात्मकता पर क्या प्रभाव पड़ता है? यह ज्ञात करने हेतु संस्कृत विषय मे रुचि, उसकी बोधगम्यता से सम्बन्धित लगभग 50 प्रश्न बनाए गए तथा यह अभिवृत्ति मापनी छात्रो के दोनों समूहो (नियन्त्रित एवं प्रायोगिक) पर प्रशासित की गई।

दोनों ही प्रकार की अभिवृत्ति मापनी से प्राप्त अंको के आधार पर ये निष्कर्ष प्राप्त हुए कि छात्राध्यापको की संस्कृत शिक्षण में रुचि में वृद्धि हुई तथा छात्रो ने भी संस्कृत विषय मे अधिक रुचि अभिव्यक्त की।

उपलब्धि परीक्षण

- **विशिष्ट शिक्षण से पूर्व**– विशिष्ट विधियों से शिक्षण करने से पूर्व कक्षा सातवीं, आठवी तथा नवीं के छात्रो पर उनके पाठ्यक्रमानुसार उपलब्धि परीक्षण प्रशासित किया गया तथा छात्रों की उपलब्धियों को जांचकर अक प्राप्त किए गए।
- **विशिष्ट शिक्षाणोपरान्त**– विशिष्ट विधियो से शिक्षण करने के उपरान्त प्रायोगिक समूह के कक्षा सातवी आठवी तथा नवी छात्रों पर पूर्व में डाला गया उपलब्धि परीक्षण पुन. प्रशासित किया गया।

इस प्रकार नियन्त्रित समूह तथा प्रायोगिक समूह के छात्रों के उपलब्धि परीक्षण पर अक प्राप्त हो गए। इन अंको की व्याख्या करने हेतु निम्नलिखित सांख्यिकीय प्राविधिया प्रयुक्त की गई–

- मध्यमान
- प्रामाणिक विचलन
- द्विमार्गी प्रसरण विश्लेषण

विशिष्ट शिक्षण से पूर्व तथा विशिष्ट शिक्षणोपरान्त उपलब्धि परीक्षणो के प्रशासन के बाद 'F' का मान अपेक्षित मान से अधिक प्राप्त हुआ। अतः शून्य प्राक्कल्पना अस्वीकृत हुई। इससे स्पष्ट होता है कि विभिन्न प्रचलित विधियो के आधार पर किए गए शिक्षण की तुलना में नवीनतम विधियो द्वारा शिक्षण प्रतिमानों के आधार पर किया गया सस्कृत शिक्षण अधिक प्रभावी होता है।

आज के प्रतिस्पर्धात्मक युग मे भाषा शिक्षण में सम्प्रेषणाधारित शिक्षण ही महत्वपूर्ण है। जिसमें छात्र तथा शिक्षक के मध्य अन्त क्रिया हो सके और भाषाई ज्ञान परिपुष्ट हो सके। इन्ही विचारों को ध्यान में रखते हुए प्रयोगकत्री ने यह लघु प्रयास किया है। महान शिक्षाशास्त्रियो, भाषाविदों तथा अध्यापन व्यवसाय में रत विद्वान् अध्यापकों से मेरी अपेक्षा है कि वे इस प्रयास पर अपनी प्रतिक्रिया अभिव्यक्त कर मेरा उत्साहवर्धन करने का कष्ट करे ताकि इसे सफलतापूर्वक क्रियान्वित किया जा सके।

राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान (मानित विद्यालय)
परिसर, B-89 गणेश मार्ग
बापू नगर, जयपुर, राजस्थान

एकीकृत शिक्षा में चुनौतीपूर्ण बच्चों की पहचान, कक्षीय प्रबंधन एवं शिक्षण

❑ मामराज शर्मा

यह बात ध्यान देने योग्य है कि गंभीर दोषों से ग्रस्त बच्चों के लिए विशेष स्कूलों की आवश्यकता होती है, और ऐसे विशेष विद्यालयों की संख्या हमारे देश में कम ही है। परन्तु एकीकृत शिक्षा में हम उन्हीं बच्चों को शिक्षा प्रदान करते हैं जिनमें 'अक्षमता' अल्प या अत्यल्प हो क्योंकि ऐसे बच्चों का समावेशन सामान्य स्कूलों में किया जा सकता है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद 'सबके लिए शिक्षा' और शत्-प्रतिशत् नामांकन का लक्ष्य निर्धारित किया गया परन्तु कतिपय कारणो से हम आज तक सबके लिए शिक्षा और शत्-प्रतिशत् नामांकन के लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सके।

एकीकृत शिक्षा

कक्षा मे सीखने-सिखाने का कार्य करते समय भिन्न-भिन्न प्रकार के बच्चों से हमारा सामना अक्सर होता रहता है। कुछ बच्चे ऐसे होते हैं जो अवधारणाओं को शीघ्र ग्रहण कर लेते हैं। इस प्रकार के बच्चों को हम 'कुशाग्र-बुद्धि' वाले बच्चे भी कह सकते है। वहीं कुछ बच्चे ऐसे भी होते है जिन्हें एक ही अवधारणा को ग्रहण करने के लिए बार-बार प्रयास करना पडता है और इसके बाद भी ये बच्चे आशानुरूप सीख नही पाते हैं। इससे जाहिर है कि इन बच्चो को सीखने में कुछ समस्याओं का सामना करना पड़ता है अथवा इनकी अपनी कुछ समस्याएं होती हैं जिनके कारण ये जल्दी सीख नहीं पाते। हो सकता है यह समस्या इनके शरीर के किसी अग या ज्ञानेन्द्रिय विकास की अपूर्णता अथवा उसकी कार्यप्रणाली के दोष के रूप में हो। इस दोष अथवा अक्षमता के कारण उन्हें पढ़ने-लिखने में कठिनाई का अनुभव होता है और उनकी शैक्षिक प्रगति सन्तोषजनक ढंग से नहीं हो पाती। इन बच्चों को सामान्य बच्चो की तुलना मे अधिक सहायता की आवश्यकता होती है। इसलिए हम इन्हें 'विशेष आवश्यकता वाले-बच्चे' 'अधिगम अक्षम बच्चे' या 'चुनौती पूर्ण बच्चे' भी कहते हैं। इन्हे विकलांग बच्चे अथवा अक्षम कहना भी उपयुक्त प्रतीत नहीं होता क्योकि ये हमारी तरह ही है, फर्क इतना है कि इनकी कुछ व्यक्तिगत और शैक्षिक समस्याए होती हैं।

ऐसे बच्चों को जब हम सामान्य बच्चों के साथ सामान्य स्कूलों मे, सामान्य वातावरण और परिस्थितियो में सामान्य ढंग से एक साथ शिक्षा प्रदान करते हैं तो ऐसे शैक्षिक-ढाचे को 'एकीकृत शिक्षा' कहते हैं।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि गंभीर दोषो से ग्रस्त बच्चों के लिए विशेष स्कूलों की आवश्यकता होती है और ऐसे विशेष विद्यालयों की संख्या हमारे देश में कम ही है। परन्तु एकीकृत शिक्षा मे हम उन्हीं बच्चों को शिक्षा प्रदान करते हैं जिनमें 'अक्षमता' अल्प या अत्यल्प हो क्योकि ऐसे बच्चों का समावेशन सामान्य स्कूलों में किया जा सकता है।

इन बच्चों को चुनौतीपूर्ण बच्चे क्यों कहना चाहिए?

आमतौर पर हमारे समाज मे विकलागताओ से ग्रस्त

बच्चो को उनकी अक्षमताओ के नाम से पुकारा जाता हे जो न तो मानवीय दृष्टिकोण से, न ही व्यक्तिवादी अथवा प्राकृतिक अधिकारो की दृष्टि से उचित है। जब हम किसी के बारे में यह कहते है कि वह अक्षम है तो हमे यह कभी नही भूलना चाहिए कि वह बहुत से क्षेत्रो मे हमारी ही तरह सक्षम भी है अर्थात् वह पूर्णतया अक्षम नही है। अस्तु, व्यापक परिप्रेक्ष्य मे अगर देखा जाए तो ये वच्चे विकलांग या अक्षम न होकर चुनौतीपूर्ण बच्चे हैं और इनके अन्दर निहित चुनौती इनके लिए है, माता-पिता के लिए है, शिक्षक के लिए है, समाज और राष्ट्र के लिए है। अत. इनकी चुनौतियो को कम करने अथवा इनके निराकरण के लिए पूर्वोक्त मानवीय ससाधनों का सहयोग और जीवट प्रयास आवश्यक है। इन बच्चों को पढाना शिक्षक के लिए एक चुनौती के समान है। इसलिए इन बच्चो को चुनौतीपूर्ण बच्चे कहा जाता है।

अक्षमताओं अथवा चुनौतियों के प्रकार

अक्षमताओ और चुनौतियों से युक्त बच्चो को निम्न प्रकारों में बाटा जा सकता है–

- ☐ पठन-वैकल्प या अधिगम अक्षम
- ☐ दृष्टिदोष अक्षमता
- ☐ श्रवण एवं वाणी दोष
- ☐ मानसिक मन्दता
- ☐ शारीरिक विकलागता

कक्षा में अक्षमताओं की पहचान कैसे करें

पठन-वैकल्प या अधिगम अक्षम बच्चों की पहचान अथवा उनकी समस्याएं

बच्चे द्वारा–

उल्टा पढ़ना– जैसे 17 को 71 या b को d बच्चो की इस समस्या को Dyslexia कहते हैं। पढ़ते समय लाइन को छोड़ कर पढ़ना।

पुस्तक या श्यामपट्ट से सही न उतारना। लिखते समय तिरछा लिखना। शब्दों को बहुत पास-पास या बहुत दूर-दूर लिखना। स्पैलिग या कारक चिन्हो का ध्यान न रखना। बच्चो की इस समस्या को डिस्ग्राफिया (Dysgraphia) कहते हैं।

गणित की समस्याए हल करते समय हासिल न जोड़ना अथवा दहाई की तरफ से जोड करना। इस समस्या को Dyscalculia कहते है।

विशेष– यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि अधिगम अक्षम बच्चा किसी विषय विशेष मे ही पीछे रहता है बाकी विषयों मे वह और बच्चों से अच्छा भी हो सकता है। इस प्रकार के बच्चे कुशाग्र बुद्धि भी हो सकते है वरन् वे किसी एक कौशल मे पीछे रह सकते है। उनकी इस कमी को विशेष प्रयासों से दूर किया जा सकता है।

दृष्टिदोष अक्षमता से युक्त बच्चों की पहचान एवं शैक्षिक समस्याएं– दृष्टिदोष अक्षमता को हम दो भागो मे बाट सकते हैं–

- पूर्ण अन्धत्व।
- आशिक अन्धत्व।

हम पहले ही बता चुके हैं कि एकीकृत शिक्षा मे हम आंशिक अक्षमताओं से युक्त बच्चो को ही लेते हैं। गम्भीर दोषों से ग्रस्त बच्चो को तो विशेष विद्यालयों मे ही पढाया जा सकता है।

आंशिक अन्धत्व से युक्त बच्चो की पहचान एवं शैक्षिक समस्याएं निम्न प्रकार हैं–

- आखो में बार-बार पानी आना।
- आंखों का बार-बार लाल होना।
- अक्सर आखो को खुजलाना
- चलते समय लोगों से टकरा जाना
- आखो का भैगापन।
- एक आख को ढक कर और सिर को झुका कर देखने का प्रयास करना।
- आंख का बारीक काम करने पर सिर दर्द की शिकायत करना।
- श्यामपट्ट से नोट उतारते समय बार-बार साथी से पूछना।

श्रवण एवं वाणी दोष संबंधी अक्षमता की पहचान एवं शैक्षिक समस्याएं— बच्चे मे बधिरता की पहचान निम्न प्रकार से की जा सकती है।

- बच्चे की कान की बनावट में विशेष त्रुटि।
- प्रायः कान का बहना।
- कान मे दर्द की शिकायत करना।
- बार-बार निर्देशो को दोहराने के लिए कहना।
- कान को बार-बार खुजलाना।
- सुनने की कोशिश मे बोलने वाले की तरफ सिर ले जाना।
- श्रुतलेख ठीक से न लिख पाना।
- सुनते समय अध्यापक के चेहरे को निहारना।
- साथी को बार-बार कापी दिखाने के लिए कहना।

वाणी सम्बन्धी अक्षमताओ की जांच

- दिखाई देने वाली वाक् संबधी अक्षमताए।
- शब्द या वाक्य बोलते समय अक्सर बीच में अटकना या विशेष ध्वनि को छोड़ना।
- प्राय- तुतलाना/हकलाना।
- अध्यापक के सुधारने पर भी अक्सर गलत उच्चारण करना।
- अस्पष्ट वाणी का प्रयोग।
- अग संचालन सबंधी अक्षमताए।

मानसिक मन्दता से ग्रस्त बच्चों की पहचान एवं शैक्षिक समस्याएं

- अध्यापक द्वारा दिए गए काम को समझने में कठिनाई अनुभव करना।
- खाने-पीने, कपड़े पहनने, नहाने तथा दैनिक क्रियाकलापो में कठिनाई अनुभव करना।
- अपनी आयु के बच्चों की तुलना में विकास की मंदगति होना।
- अपनी आयु के बच्चों की तुलना में किसी काम को सीखने मे कठिनाई होना।
- अमूर्त कार्यो को करने में कठिनाई होना।
- अपनी उम्र के बच्चों के साथ मेल-जोल रखने मे असमर्थ होना।
- अधिक अभ्यास तथा बार-बार दोहराने के लिए जोर देना।
- किसी कौशल को ग्रहण करने में अपनी आयु के बच्चो की तुलना मे अधिक समय लेना।
- अन्य बच्चो की तुलना में लगातार शैक्षिक उपलब्धियो मे पिछड़ापन।
- ठोस वस्तुओ द्वारा शिक्षण कार्य पर अत्यधिक निर्भरता।

विशेष — मानसिक विमदन को हम चार भागो में बांटते है।

- अत्यल्प बुद्धिलब्धि 50—70 तक
- अल्प बुद्धिलब्धि 25—50 तक
- गभीर बुद्धिलब्धि 20—35 तक
- अति गभीर बुद्धिलब्धि 20 से नीचे

एकीकृत शिक्षा में हम केवल अत्यल्प और अल्प मानसिक विमंदन से ग्रस्त बच्चो को ही लेते है। इनसे यह आशा नही की जा सकती कि ये ऊची शिक्षा भी प्राप्त कर पाएगे। ऐसे बच्चे पांचवी, आठवी कक्षा तक ही शिक्षा प्राप्त कर ले तब भी इनकी उपलब्धि बहुत मानी जाएगी।

शारीरिक विकलांगता से ग्रस्त बच्चों की पहचान एवं शैक्षिक समस्याएं

- दिखाई पडने वाली शारीरिक अपंगताएं
  - ★ गर्दन मे
  - ★ हाथ मे
  - ★ उंगलियों में
  - ★ कमर मे
  - ★ पाव में
- बैठने, खडे होने तथा चलने मे कठिनाई होना।
- वस्तुओ को उठाने, पकड़ने और जमीन पर रखने में कठिनाई होना।
- लिखने के लिए कलम पकड़ने मे कठिनाई होना।
- जोड़ों में बार-बार दर्द की शिकायत करना।
- झटके खाकर चलना।
- अंगहीनता/अपंगता

● अंगो का अनैच्छिक रूप से हिलना।

विशेष– शारीरिक अक्षमता से युक्त बच्चे को गामक उपकरण उपलब्ध करवा कर उनकी अक्षमता को थोड़ा कम किया जा सकता है। वातावरणीय अवरोधों को कम करके वे सीखने की प्रक्रिया मे आसानी से अग्रसर हो सकते है।

अब तक हमने चुनौतीपूर्ण बच्चों की पहचान एवं उनकी शैक्षिक समस्याओं के बारे मे चर्चा की। अब प्रश्न उठता है कि अध्यापक ऐसा क्या करे कि उसके लिए चुनौती के रूप में प्रस्तुत बच्चा, सामान्य बच्चो के साथ-साथ शिक्षा ग्रहण कर ले।

इसके लिए परमावश्यक है कि अध्यापक बच्चे की अक्षमता को जानकर तथा उसकी शैक्षिक समस्याओं को ध्यान में रखकर उचित कक्षीय प्रबंधन स्थापित करे। कक्षीय प्रबधन की व्यवस्था बच्चे की अक्षमता के अनुसार ही की जाती है। उचित कक्षीय प्रबधन के अभाव मे हम यह आशा नहीं कर सकते कि चुनौतीपूर्ण बच्चा अन्य बच्चो के समान ही सीख पाएगा।

महत्वपूर्ण बात यह है कि ससाधन अध्यापक और सामान्य अध्यापक दोनों मिलकर उचित कक्षीय प्रबंधन पर विचार करें और एक-दूसरे के साथ जानकारी का आदान-प्रदान करें और बच्चे की मदद के लिए मिलजुल कर काम करें।

अधिगम अक्षम या पठन वैकल्य बच्चों के लिए कक्षीय प्रबंधन एवं शिक्षण

- ☐ निर्देशों एव सूचनाओं को छोटे-छोटे एवं रोचक ढंग से प्रस्तुत करें।
- ☐ निर्देशों अथवा सोपानों को चाक बोर्ड या पोस्टर पर लिख दे।
- ☐ ऐसे बच्चों के सामने ध्यान केन्द्रण की समस्याएं होती हैं इसलिए ऐसी अधिगम सामग्री का प्रयोग किया जाए जिससे बच्चे का ध्यान कक्षा में लगा रहे।
- ☐ यह भी हो सकता है कि किसी काम को पूरा करने मे ऐसे बच्चे को अन्य बच्चों की तुलना मे अधिक समय लगे, उन्हे अतिरिक्त समय दिया जा सकता है।
- ☐ अवधारणाओं को मूर्त रूप मे प्रस्तुत करे, मात्र बोलकर न बताए बल्कि उन्हे दिखलाए भी।
- ☐ अपनी कक्षा में सामुहिक क्रियाकलापों का आयोजन करें।
- ☐ ऐसे बच्चों को पढाते समय बातचीत करें। ऐसा करने से उन्हे भाषा सीखने में मदद में मिलेगी।
- ☐ ऐसे बच्चों की छोटी-छोटी उपलब्धियों पर उन्हें शाबाशी दें। यह उनके लिए 'इन्सेटिव' का काम करेगा और बच्चा पढाई मे अधिक रुचि लेगा।
- ☐ जानकारी को सरल और छोटे-छोटे हिस्सों मे बाट दे।
- ☐ नए कौशलो को पढ़ाते समय सगत शब्दों का प्रयोग करें।
- ☐ बच्चे को अध्यापक कक्षा मे आगे और सामने बैठाए ताकि उसे शरारतों का मौका न मिले अन्यथा उसके ध्यान भंग की संभावना बनी रहेगी।

दृष्टि दोष से युक्त बच्चों के लिए कक्षीय प्रबंधन एवं शिक्षण

- ☐ यदि बच्चे की दृष्टि कमजोर है तो उसे ब्लैकबोर्ड के समीप आगे की पंक्ति में और अगर सभव हो तो खिड़की के पास बैठाएं ताकि उसे दिखने मे सुविधा रहे।
- ☐ बच्चे को कक्षा में इर्द-गिर्द ले जाए और उसे वस्तुओ को स्पर्श करने का मौका देकर आसपास की सामग्री से परिचित कराएं।
- ☐ कमजोर दृष्टि वाले कुछ बच्चे प्रकाश के प्रति अति संवेदी होते है इसलिए उन्हे सीधे प्रकाश से बचाया जाना चाहिए।
- ☐ अन्य स्रोतो से आने वाले प्रकाश को छितरा देना चाहिए। चौंध और अधेरे से बचा जाना चाहिए।
- ☐ जो ब्लैकबोर्ड पर लिखे बोल कर लिखे, बड़े-बडे अक्षरों में लिखें।
- ☐ जब पाठ्यपुस्तक मे से पढ़ें तो या तो अध्यापक स्वयं बोल-बोल कर पढ़ें या किसी अन्य दक्ष छात्र से पढ़वाएं।
- ☐ स्पष्ट दिखाई देने के लिए बच्चे को आवर्धक लैंस उपलब्ध करवाए।

- जब कुछ बच्चे से कहना हो उसका नाम पुकार कर कहें हो सकता है बच्चे को पता ही न चले कि आप उसकी तरफ देख रहे है।
- अन्य बच्चो को ऐसे बच्चे के साथ सामाजिक मेलजोल के लिए प्रेरित करें।
- दृष्टि दोष युक्त बच्चे को जहां तक हो सके शारीरिक क्रियाकलापों में भाग लेने के लिए प्रेरित करे। इससे बच्चे में हीन भावना नही पनपेगी और वह अन्य बच्चों के समान ही अपने आप को पाएगा।

श्रवण दोष से युक्त बच्चों के लिए कक्षीय प्रबंधन एवं शिक्षण

- श्रवण विकार युक्त बच्चे को कक्षा मे आगे ब्लैकबोर्ड के सामने बैठाए।
- जहां तक हो सके बच्चे को अपने नजदीक बैठाएं लेकिन खेल के मैदान या पखे से दूर बैठाएं।
- जब आप बोल रहे हो तो बच्चा आपके चेहरे को आराम से देख सके, बच्चे द्वारा ओष्ठ पठन के लिए यह जरूरी है कि आपके चेहरे पर समुचित प्रकाश भी होना चाहिए।
- यदि आपका मुंह बच्चे के विपरीत हो तो बात न करे क्योकि वह आपका मुंह नहीं देख पाएगा।
- ऐसे बच्चे को पढ़ाते समय सम्पूर्ण सम्प्रेषण विधि का प्रयोग करें अर्थात् बच्चे को मूर्तरूप से दिखाएं भी, बोलें भी और श्यामपट्ट पर भी लिखे।
- बच्चे को श्रवण सहायक यंत्र का प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहित करें।
- अन्य बच्चो को ऐसे बच्चो के साथ मैत्रीपूर्ण सबध स्थापित करने के लिए प्रेरित करे।
- मौखिक सामग्री को दोहराएं, साधारण शब्दों और वाक्यों का प्रयोग करें।
- नए शब्दो का उच्चारण करने से पहले उन्हें ब्लैकबोर्ड पर लिख ले। जब मुह ब्लैकबोर्ड की ओर हो उस समय बात न करे।
- गणित की धारणाओ को मूर्तरूप देने का प्रयास करे।
- समकक्ष बच्चो को इस बात के लिए तैयार करें कि वे ऐसे बच्चे की पीठ के पीछे बात न करें।
- ऐसे बच्चो को खेलों, प्रार्थना, नाटक और संगीत में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

मानसिक मन्दता से युक्त बच्चों के लिए कक्षीय प्रबंधन एवं शिक्षण

- मानसिक रूप से मन्द बच्चों को शिक्षणीय, प्रशिक्षणीय एव 'अत्यधिक मन्द' वर्गो मे भी बांटा जा सकता है। वैसे तो एकीकृत शिक्षा मे शिक्षणीय बच्चो को ही लिया जा सकता है परन्तु अगर अध्यापक चाहे तो प्रशिक्षणीय वर्ग के बच्चों को भी लिया जा सकता है।
- ऐसे बच्चो को नियमित कक्षा कक्षो में पढ़ाने हेतु पाठ्यचर्यात्मक एव कक्षीय प्रबंधन में सशोधनो की आवश्यकता पडती है।
- ऐसे शब्दों का प्रयोग किया जाना चाहिए जो बच्चे के शब्द सग्रह मे हो।
- इनके सामने प्रत्येक विषय मूर्तरूप मे जैसे कि मॉडल, तस्वीरो, चित्रो के रूप में प्रस्तुत करे। उदाहरणार्थ जब आप बच्चों को 4+4 सिखा रहे हो तो अच्छा रहेगा यदि अध्यापक सिखाते समय कहे कि एक बैग में 3 सेब हैं दूसरे बैग मे भी तीन, तो कुल मिलाकर कितने सेब हुए। इस उदाहरण को कक्षा में व्यावहारिक रूप में देखकर बच्चा और आसानी से ग्रहण कर सकता है।
- पढाने के लिए ऐसी गतिविधियो का प्रयोग करें जिसमें बच्चे की ज्ञानेन्द्रियों की सहभागिता सुनिश्चित हो सके।
- बच्चे को समझाते समय शिक्षण सामग्री को छोटे-छोटे क्रमबद्ध टुकडो मे बाटकर प्रस्तुत करे।
- 'कार्य विश्लेषण विधि' के द्वारा इन बच्चों को सबसे प्रभावी ढंग से पढ़ाया जा सकता है।
- बार-बार दोहराएं।
- खेल-खेल मे सीखने जैसे मनोरंजक सिद्धान्तो को अपनाएं।
- बच्चे को ऐसा कार्य दिया जाए जिसमें आंख और हाथ का तालमेल हो (जैसे कि कैची से काटना)।
- बच्चे को सही क्रम से कार्य करने की शिक्षा दे।

ऐसा करने से अवधारणात्मक चिन्तन और समस्या समाधान के कौशलो मे वृद्धि होती है। जैसे कि एक सार्थक वाक्य बनाने के लिए आप बच्चे को फ्लैश कार्ड गलत क्रम मे दे सकते है। बच्चा फ्लैश कार्डो को सही क्रम में लगाकर सार्थक वाक्य बनाएगा।

- समकक्ष छात्रों को ऐसे बच्चे को पढ़ाने के लिए लगाएं एव उन्हे प्रेरित करें कि वे बच्चे के साथ खेले भी।
- ऐसे बच्चे को कक्षा मे आगे, श्यामपट्ट के सामने बैठाएं।
- समकक्ष छात्रों को इस बात के लिए प्रेरित करे कि वे ऐसे बच्चे के विरुद्ध अपमानजनक टिप्पणिया न करे।

विशेष— मानसिक विमंदन युक्त बच्चो के लिए "वैयक्तिक शैक्षिक कार्यक्रम" (आइ.ई.पी.) तैयार करना आवश्यक हो जाता है। एक प्रपत्र तैयार किया जाता है। ऐसे बच्चों की प्रोफाइल तैयार करना भी आवश्यक होता है जिसमे बच्चे के स्कूल पूर्व विकास चरणों की जानकारी माता-पिता से ली जाती है। इसे पेरेन्ट्स कांऊसलिंग भी कहा जाता है। आई ई. पी. एक प्रकार का शैक्षिक कार्यक्रम होता है। अमुक विषय में सिखाने के लिए पहले वार्षिक लक्ष्य तय किया जाता है। उस वार्षिक लक्ष्य को अल्पकालिक लक्ष्यों मे बांटा जाता है अर्थात् एक महीने मे बच्चे को कहां तक सिखाया जाएगा, अगले मास में कितना? इस प्रकार बच्चे के लिए तैयार किया गया पाठ्यक्रम पूरे वर्ष मे बांटा जाता है। अल्पकालिक कार्यावधि का मूल्यांकन भी किया जाता है। पहली आई.ई.पी. की जांच पर बच्चे का जो शैक्षिक स्तर उभर कर आता है उसके आधार पर अगले मास के लिए अल्पकालिक लक्ष्य तय किया जाता है। इस प्रकार छोटे-छोटे हिस्सों में पाठ्यक्रम या विषय-वस्तु को समझाया जाता है। ऐसे बच्चों के लिए Critaria के आधार विषय-वस्तु निर्धारित की जाती है। मूल्याकन के रूप में भी Critarian Test लिए जाते है।

चलन (गामक) संबंधी अक्षमता से युक्त बच्चों के लिए कक्षीय प्रबधन

- वास्तुशिल्प सबधी अवरोधों को हटा दिया जाए और यह सुनिश्चित किया जाए कि उसे एक आराम देह स्थान सुलभ हो सके।
- यदि बच्चा व्हील चेयर का प्रयोग कर रहा है तो उसके लिए आने-जाने के लिए सुविधा हो। कक्षा के अन्दर ब्लैकबोर्ड उसके लिए ज्यादा दूर न हो अन्य सामग्री भी बच्चे के लिए सहज सुलभ हों।
- यदि किसी बच्चे का हाथ प्रभावित हो तो परीक्षा के समय उसे एक लेखक बच्चा उपलब्ध करवाया जाए।
- ऐसे छात्र को अपना काम पूरा करने के लिए अधिक समय दें।
- बच्चों को समझाएं कि ऐसे बच्चे को उसकी अपगता के नाम से न बुलाए इससे बच्चे के अन्दर हीन भावना पैदा हो सकती है; न ही ऐसे बच्चे को धक्का इत्यादि दे।

विशेष— ऐसे बच्चे आमतौर पर मानसिक रूप से सामान्य बच्चों की तरह ही होते है। अतः इनका शैक्षिक स्तर भी सामान्य बच्चो की तरह ही होता है। कई बच्चे इनमें कुशाग्र बुद्धि भी हो सकते है।

इनके लिए प्रमुख समस्या वातावरणीय अवरोधों की होती है। इन्हें कृत्रिम अग अथवा उपकरण उपलब्ध करवाकर इनकी विकलागता को कुछ हद तक कम किया जा सकता है।

सारांश रूप में हम कह सकते है कि चुनौतीपूर्ण बच्चों की पहचान करके उन्हें उचित शिक्षा प्रदान करना समय की पुकार है। इसके अभाव मे हम एक शिक्षित समाज अथवा शिक्षित राष्ट्र का सपना साकार नही कर सकते।

आई. ई. डी. संसाधन केन्द्र
जिला सिरमौर, हिमाचल प्रदेश

अध्यापक शिक्षा की उपादेयता

❑ हरेन्द्र सिंह

भारतीय संस्कृति तथा गुरुकुल प्रणाली से अवगत विचारकों के लिए शिक्षक प्रशिक्षण की अवधारणा कोई नई बात नहीं है। हम सभी जानते हैं कि अनौपचारिक रूप से शिक्षक की व्यावसायिक शिक्षा का जन्म "श्रेष्ठ व ज्येष्ठ विद्यार्थियों द्वारा कनिष्ठ विद्यार्थियों के अध्यापन" के रूप में प्राचीन काल में भारत के गुरुकुलों में हुआ था। इस प्रणाली को देखकर चेन्नई के प्रेसीडेंसी चैपलिन डा. बेल ने इसे "मोनीटोरियल सिस्टम" की संज्ञा दी जो बाद में इंग्लैंड व अन्य देशों में भी काफी लोकप्रिय हुई।

किसी भी देश का भविष्य उसकी आने वाली पीढी पर निर्भर करता है तथा उसका स्वरूप कैसा हो इसकी जिम्मेदारी शिक्षकों पर होती है। कोठारी आयोग ने अपनी रिपोर्ट मे कहा था कि "भारत के भविष्य का निर्माण उसकी कक्षाओं मे हो रहा है।" यह सत्य है कि इन कक्षाओ का निर्देशन शिक्षक के हाथ मे होता है। शिक्षक अपने ज्ञान, व्यवहार, चरित्र एवं आदर्शो से एक ऐसे बालक का निर्माण कर सकता है जिसमें स्वतंत्र चिन्तन, तर्क व निर्णय की क्षमता हो, जो नैतिक व चारित्रिक दृष्टि से उच्च हो और जो देश की सस्कृति की रक्षा कर सके। इसीलिए शिक्षक को राष्ट्र का निर्माता कहा गया है। किसी राष्ट्र की प्रगति व उन्नति उसके अध्यापको की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। यही कारण है कि प्राचीन काल मे अध्यापन को सर्वोत्तम व्यवसाय की संज्ञा दी गई है।

प्रश्न यह उठता है कि क्या अध्यापक बनने की लिए विशेष शिक्षा प्राप्त करना या प्रशिक्षण लेना आवश्यक है? यदि गहराई से देखा जाए तो उत्तर मिलेगा "हां"। जिस प्रकार किसी भी अन्य व्यवसाय जैसे अभियान्त्रिकी, चिकित्सा, प्रशासन, प्रबन्धन आदि के लिए विशिष्ट शिक्षा या प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, उसी भाति शिक्षको को भी प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, इस शिक्षक प्रशिक्षण को ही आज अध्यापक शिक्षा की सज्ञा दी जाती है। अध्यापक शिक्षा व्यक्ति में अध्यापन के विभिन्न पक्षो से सम्बन्धित आवश्यक ज्ञान, बोध, मूल्य, व्यवहार आदि को विकसित करती है। यह व्यवहार मे परिवर्तन व परिमार्जन कर व्यक्तित्व के विकास पर बल देती है।

एक समय था जब यह धारणा थी कि शिक्षक बनने के गुण व्यक्ति मे जन्मजात होते है। अतः इसके लिए किसी विशेष शिक्षा अथवा प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती अर्थात् शिक्षक पैदा होते हैं बनाए नहीं जाते। यद्यपि इस विचार को आज कोई स्वीकार नहीं करता, परन्तु यदि हम इस बात को मान भी लें तो भी इससे इन्कार नहीं कर सकते कि जन्मजात शिक्षको की सख्या अंगुलियो पर गिनी जा सकती है। प्राचीन काल मे जब शिक्षा एक विशेष वर्ग तक सीमित थी और छात्रो की संख्या भी कम थी, जन्मजात शिक्षकों की अवधारणा कारगर थी। परन्तु शिक्षा प्रसार के साथ शिक्षको के लिए बढ़ती मांग को जन्मजात शिक्षकों द्वारा पूरा करना सम्भव नहीं रहा और प्रशिक्षण द्वारा शिक्षको को तैयार

करने व मांग को पूरा करने की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी।

प्रशिक्षण द्वारा व्यक्ति के उपयुक्त अभिवृत्ति, ज्ञान, कोशल व व्यवहार में क्रमबद्ध विकास एवं परिमार्जन कर शिक्षणोपयोगी गुणों को विकसित किया जाता है। इससे व्यक्ति की कार्यक्षमता व कुशलता मे वृद्धि हो जाती है और कार्य मे असफलता की सम्भावना कम हो जाती है जिससे कार्य सन्तुष्टि की मात्रा भी बढ जाती है।

भारतीय सस्कृति तथा गुरुकुल प्रणाली से अवगत विचारको के लिए शिक्षक प्रशिक्षण की अवधारणा कोई नई बात नही है। हम सभी जानते है कि अनौपचारिक रूप से शिक्षक की व्यावसायिक शिक्षा का जन्म "श्रेष्ठ व ज्येष्ठ विद्यार्थियो द्वारा कनिष्ठ विद्यार्थियो के अध्यापन" के रूप मे प्राचीन काल मे भारत के गुरुकुलो में हुआ था। इस प्रणाली को देखकर मद्रास के प्रेसीडेंसी चैपलिन डा. बेल ने इसे "मोनीटोरियल सिस्टम" की संज्ञा दी जो बाद मे इंग्लैंड व अन्य देशो मे भी काफी लोकप्रिय हुई।

अध्यापक शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति मे अध्यापन व्यवसाय एव बालको के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति विकसित करना एवं शिक्षा व अध्यापन सम्बन्धी नियमो, सिद्धान्तो, तथ्यो, विधियो व प्रविधियो का ज्ञान कराकर उन्हे प्रयोग मे लाने की क्षमता विकसित करना है। शिक्षा का क्षेत्र पूर्व-प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च शिक्षा तक तथा सामान्य से लेकर विशिष्ट व व्यावसायिक शिक्षा तक है। यो तो हर प्रकार की शिक्षा के लिए शिक्षकों को प्रशिक्षित करने के कुछ प्रमुख विशिष्ट उद्देश्य होते हैं परन्तु उनमें अन्तर होते हुए भी आधारभूत रूप में काफी समानता देखी जा सकती है। निम्नलिखित कुछ बिन्दु ऐसे है जो हर स्तर पर हर क्षेत्र की अध्यापक शिक्षा के लिए आवश्यक हैं—

- ☐ बालक के विकास सम्वन्धी मनोवैज्ञानिक आधारभूत सिद्धान्तों, व्यक्तिगत भिन्नता एवं समानता को समझना।
- ☐ बालक के प्रति रुचि व सकारात्मक अभिवृत्ति को विकसित करना।
- ☐ बालक के शारीरिक, मानसिक, भावात्मक, सामाजिक, नैतिक आदि विकास के लिए उचित वातावरण प्रदान करने की क्षमता विकसित करना।
- ☐ दृश्य-श्रव्य सामग्री के निर्माण व उचित ढंग से प्रयोग करने का कौशल विकसित करना।
- ☐ विषय सम्बन्धी नवीन ज्ञान, खोज प्रवृत्तियों आदि से परिचित कराना व उचित विधियों द्वारा शिक्षण की क्षमता पैदा करना।
- ☐ तकनीकी शिक्षा का ज्ञान देना व प्रयोग की क्षमता व दक्षता विकसित करना।
- ☐ आवश्यकतानुसार वैयक्तिक, शैक्षिक व व्यावसायिक समस्याओ सम्बन्धी परामर्श व निर्देशन देने की क्षमता व कौशल विकसित करना।

कुछ लोगों की यह धारणा है कि अध्यापन के लिए प्रशिक्षण की अपेक्षा अपने विषय में निपुणता प्राप्त करना अति आवश्यक है। नि:सन्देह शिक्षक को अपने विषय का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए, परन्तु विषय में प्रवीणता एव उस विषय को छात्रो तक प्रेषित करना दो अलग-अलग बाते हैं। आधुनिक युग में शिक्षण विशेषज्ञता का क्षेत्र बन गया है। यह एक विशिष्ट व जटिल प्रक्रिया है। अध्यापक बनने के लिए मात्र विषय का विशेषज्ञ होना ही प्रर्याप्त नहीं है बल्कि व्यावसायिक क्षमता के अनेक ऐसे पक्ष है जिनमे भावी शिक्षकों को विशिष्ट शिक्षा व प्रशिक्षण की आवश्यकता है। विषय-वस्तु को छात्रो तक पहुंचाने मे अनेक कौशल जैसे विषय-वस्तु का व्यवस्थापन, प्रस्तुतिकरण, स्पष्टीकरण, व्याख्या, प्रदर्शन आदि सन्निहित हैं। अध्यापन की विधियों, प्रविधियों, सिद्धान्तो, नियमो आदि के ज्ञान के साथ ही साथ उन्हे यथा समय, यथा स्थान सुनियोजित व प्रभावी ढंग से प्रयोग करने का कौशल भी आना चाहिए और यही क्षमता व कौशल, शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम अपने विद्यार्थियो मे विकसित करता है।

प्रशिक्षण के अभाव में कोई व्यक्ति यदि शिक्षक बनता भी है तो सामान्यतया वह उसी परम्परागत ढग से शिक्षण करना चाहता है और करता भी है, जिस ढंग से उसके शिक्षको ने उसे पढ़ाया है। आज के युग में विज्ञान व तकनीकी प्रकाश की गति से भी तीव्र

गति से विकसित हो रही है और जीवन के हर पक्ष को प्रभावित कर रही है। नवचिन्तन, नवीन प्रणालियों एवं द्रुतगति से परिवर्तित होती वैज्ञानिक एव तकनीकी सभ्यता के परिप्रेक्ष्य में पुरानी व परम्परागत कक्षा अध्यापन विधियां निरर्थक हो रही है। भौतिक व आर्थिक विकास के फलस्वरूप शिक्षा के उद्देश्यो व शिक्षण विधियो मे क्रान्तिकारी परिवर्तन आया है और आ रहा है। उद्योगो में प्रयुक्त होने वाले निकाय उपागम, सतात्रिकी, अनुरूपीकरण आदि यांत्रिक प्रक्रियाएं `शिक्षण विधि से प्रयोग की जाने लगी हैं। जिन शिक्षण विधियों का प्रयोग शिक्षक करते हैं उन्हें शिक्षक प्रशिक्षण सस्थाओं में तैयार किया जाता है और उनका प्रशिक्षण भी इन्ही संस्थाओ द्वारा दिया जाता है।

यद्यपि शिक्षण आज एक व्यवसाय बन चुका है परन्तु विद्यालय न तो कोई दुकान है और न ही कोई मिल या फैक्ट्री जहां निर्जीव वस्तुओ का उत्पादन व लेन-देन होता हो। शिक्षा संस्थाओं में शिक्षक को अति संवेदनशील, भावुक व प्रति क्षण परिवर्तनशील बालकों के साथ व्यवहार व अन्त:क्रिया करनी होती है। शिक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें अधिक परिपक्व व्यक्ति (शिक्षक) बहुत से कम परिपक्व व्यक्तियों (छात्रों) के सम्पर्क मे आता है तथा उनके व्यवहार, परिमार्जन व व्यक्तित्व निर्माण का उत्तरदायित्व लेता है। अपने इस उत्तरदायित्व को कुशलतापूर्वक निभाने के लिए शिक्षक को बालकों के स्वभाव, रुचि, आदत व प्रकृति को समझना अति आवश्यक होता है, तभी उनमे अपेक्षित गुणो का विकास कर उन्हें आदर्श नागरिक बनाया जा सकता है। अध्यापक शिक्षा इसी उद्देश्य की पूर्ति करती है।

अमेरिकन शिक्षक शिक्षा आयोग 1944 का मत था कि प्रत्येक पीढ़ी की उंचाई, उन्नति तथा प्रगति एव राष्ट्र की गुणात्मकता शिक्षको की व्यावसायिक शिक्षा पर निर्भर करती है। कोठारी आयोग ने इस पक्ष की संस्तुति यह कहकर की है कि "अध्यापक शिक्षा मे विनियोग की गई पूजी अच्छा लाभांश देती है क्योकि इसके परिणामस्वरूप लाखो-करोडो छात्रों की शिक्षा मे जितना सुधार होगा उसकी तुलना में आर्थिक व्यय की मात्रा बहुत कम होगी।" अत. स्पष्ट है कि उत्कृष्ट कोटि की अध्यापक शिक्षा राष्ट्र की प्रगति में अहम् भूमिका निभाती है।

वर्तमान काल मे ज्ञान के विस्फोट, विशेषीकरण तथा जटिलता ने शिक्षकों की व्यावसायिक शिक्षा को और अधिक अनिवार्य एवं महत्वपूर्ण बना दिया है अध्यापक शिक्षा की इसी निर्विवाद व निरापद उपादेयता के कारण इसका दिन-प्रतिदिन विस्तार हो रहा है। एक ओर जहां इसके पाठ्यक्रम मे विभिन्न पक्षो का समावेश हुआ है वहीं इसका क्षेत्र विस्तार भी हुआ है। अपने प्रारम्भिक काल में प्रशिक्षण केवल प्राथमिक कक्षाओं को पढ़ाने के लिए ही आवश्यक माना जाता था। कालान्तर में इसकी अनिवार्यता व महत्व माध्यमिक स्तर तक बढ़ गया है। आज भारत में लगभग 1200 से अधिक सस्थाएं प्राथमिक स्तर पर तथा 360 सस्थाओं से अधिक सस्थाएं माध्यमिक स्तर के लिए शिक्षकों को तैयार कर रही हैं। इसके अतिरिक्त अनेक सस्थाए/विभाग परास्नातक (एम.एड/ एम फिल) स्तर पर व शोध कार्य के क्षेत्र मे कार्य कर रही हैं।

1986 की नई शिक्षा नीति आने के पश्चात् इस दिशा में अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाए गए है। जिला शिक्षा प्रशिक्षण संस्यानो (DIET) की स्थापना की गई जिन्हें नवीनतम सुविधाए उपलब्ध कराकर प्राथमिक शिक्षा के लिए भावी शिक्षकों को प्रशिक्षण का उत्तरदायित्व भी सौंपा गया है ताकि ये शिक्षक नवीन विधियो, प्रविधियो व नए सिद्धान्तों व विचारो से परिचित हो सके और अपनी शिक्षण प्रक्रिया मे सुधार कर सकें।

इसी प्रकार राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) तथा राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (SCERT), माध्यमिक एव प्राथमिक दोनो स्तर के शिक्षकों के प्रशिक्षण एवं सेवारत शिक्षको के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का निरीक्षण व आंकलन करती है। 1973 से कार्यरत राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (NCTE) को 1993 में एक्ट पास करके स्वायत्त एवं सांविधिक स्तर प्रदान किया गया। इसका प्रमुख कार्य अध्यापक शिक्षा सस्थाओं को मान्यता प्रदान करना, उनके लिए मानक व मानदंड तैयार करना, पाठ्यक्रम

व विधियो के लिए मार्गदर्शी सिद्धान्तो का विकास करना एवं शिक्षको के लिए सेवाकालीन शिक्षा की व्यवस्था करना है।

अध्यापक शिक्षा/प्रशिक्षण की सीमाएं अब उच्च शिक्षा एवं व्यावसायिक शिक्षा के शिक्षको तक भी बढ़ रही हैं। 1992 मे केन्द्रीय शिक्षा परामर्श समिति की रिपोर्ट में महाविद्यालयो एव विश्वविद्यालयो के शिक्षको के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि एम.फिल. या पी.एचडी. की डिग्री, यहां तक कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा आयोजित नैट परीक्षा भी इस बात का ठोस प्रमाण प्रस्तुत नहीं करती कि व्यक्ति में शिक्षण कौशल भी विद्यमान है। इसी प्रकार मात्र थोड़े से समय में लिया गया साक्षात्कार भी शिक्षण योग्यता की परख नही कर सकता। अत. प्राथमिक व माध्यमिक स्तर के शिक्षको की भांति उच्च शिक्षा के शिक्षको के लिए भी प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा स्थापित किए गए Academic Staff College इस दिशा मे एक कदम है जिनके द्वारा सेवारत व नवनियुक्त शिक्षको को Refresher Course तथा Orientation Course करने की सुविधा दी जाती है। इतना ही नहीं अन्य व्यावसायिक शिक्षा संस्थाए जैसे All India Council of Technical Education, Medical Council of India आदि भी अपने शिक्षको के लिए शिक्षण प्रशिक्षण के लिए विचार कर रही है।

इस प्रकार हम कह सकते है कि शिक्षा की बढती मांग को देखते हुए तथा उसमे गुणात्मक सुधार के लिए अध्यापक शिक्षा एक अनिवार्यता है। अत: एक सुव्यवस्थित, सुनियोजित एव प्रणालीबद्ध अध्यापक शिक्षा व्यवस्था विकसित की जाए जिसमें विभिन्न शिक्षा स्तरो के विभिन्न प्रकारों के शिक्षको के अध्यापक शिक्षा कार्यक्रमो में पारस्परिक समन्वय हो। ❑❑

1, रामबाग कालोनी
सेक्टर 4, शास्त्री नगर, मेरठ, उत्तर प्रदेश

माता-पिता द्वारा प्रदत्त प्रोत्साहन एवं पाल्यों की शैक्षिक उपलब्धि

❐ टी. सी. ज्ञानानी
❐ प्रवीन देवगन

यह एक सार्वभौमिक सत्य है कि व्यक्तियों की कार्य करने की शक्ति, उनको सम्बन्धित व्यक्तियों अथवा समाज से मिलने वाले प्रोत्साहन पर निर्भर करती है। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए प्रस्तुत शोध में यह अध्ययन करने का प्रयास किया गया है कि भारतीय समाज में माता-पिता अपने बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि के सन्दर्भ में कितना तथा किस स्तर का प्रोत्साहन प्रदान करते हैं? तथा माता-पिता द्वारा दिए जाने वाले प्रोत्साहन, उनके बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि को किस सीमा तक प्रभावित करते हैं?

भूमण्डलीकरण, उदारीकरण एवं सार्वजनीकरण के फलस्वरूप भारतीय समाज मे अनेक सामाजिक, सांस्कृतिक व पारिवारिक सम्बन्धों में परिवर्तन परिलक्षित हो रहे है। परिवर्तन की इस बहती धारा मे माता-पिता अपने बच्चो को समझने एवं उनकी क्षमताओं के अनुकूल आकांक्षा करने मे वडी भारी भूल कर रहे है। ऐसा विशेष रूप से उन परिवारों में अधिक हो रहा है जो पाश्चात्य संस्कृति के प्रशंसक तथा पोषक है।

"तीव्रगति से बदलती हुई सामाजिक व्यवस्था मे भारत जैसे परम्परागत देश के भारतीय परिवारों के माता-पिता तथा उनके पाल्यों में एक तनाव तथा खीझ भरी अनुभूति विकसित हो रही है।" जिसका सीधा प्रभाव बालक के मानसिक एव भावात्मक व्यवहार पर अधिक परिलक्षित हो रहा है। माता-पिता अपने पाल्यो के सन्दर्भ मे अनेक भ्रम पाले हुए हैं। वे अपने पाल्यो को योग्यतानुरूप अपनी धारणाओ में परिवर्तन करने में असमर्थ है। फलस्वरूप वे अपने पाल्यो के सन्दर्भ में उच्च आकाक्षाओं से युक्त हो रहे है।

यह भी शाश्वत सत्य है कि प्रत्येक व्यक्ति यही चाहता है कि उसकी सन्तान प्रतिभा सम्पन्न हो। उसका बौद्धिक एव शारीरिक स्वास्थ्य का विकास श्रेष्ठ हो, जिससे परिवार के मान-सम्मान मे वृद्धि हो। किन्तु जब यह भावना अभिभावकों मे अतिरजना लिए हुए होती है तो जाने-अनजाने मे अभिभावकगण अपनी सन्तान से प्रतिस्पर्धात्मक व्यवहार करने लगते है। वे अपनी सन्तान की सफलता एवं असफलता स्तर का स्वपनिल मूल्यांकन करते है। वे यह भूल जाते हैं कि वास्तविक यथार्थ क्या है? वे जाने-अनजाने मे अपनी सन्तान को अग्रगामी बनाने हेतु भ्रष्ट तरीकों एवं उचित-अनुचित प्रोत्साहनों का सहारा लेने लगते है। जिसका परिणाम होता है, बालक के विखंडित व्यक्तित्व का विकास।

इसके विपरीत कुछ परिवार ऐसे भी हैं जिनकी मान्यता है कि बालक का विकास मनोवैज्ञानिक सम्मत होना चाहिए। उनके अनुसार बालक के व्यक्तित्व का विकास स्वतत्र रूप से होना चाहिए। उसकी प्रत्येक निजी आवश्यकता की पूर्ति होनी चाहिए तथा स्वयं के व्यक्तित्व को बालको पर थोपना नहीं चाहिए न ही बालको को अनेक बन्धनो मे जकड़ना चाहिए। अत्यधिक प्रेम एव उन्मुक्त स्वतन्त्रता प्रदान करके ही बालकों के व्यक्तित्व का स्वतत्र

विकास किया जा सकता है। किन्तु यह वर्ग भी इस तथ्य को भुला देता है कि अत्यधिक स्वतन्त्रता, लाड-प्यार, अनुचित प्रोत्साहन, बालक को प्रतिभा सम्पन्न एव योग्य बनाने की अपेक्षा उच्छृखल एव उद्दण्ड बना देता है। पारिवारिक विश्लेषकों एवं समाजशास्त्रियो का भी यह मानना है कि ऐसे परिवार जहा बालको को आवश्यकता से अधिक स्वतंत्रता अथवा उपेक्षा प्राप्त होती है, वहा बालक के स्वतत्र एवं स्वाभाविक व्यक्तित्व का विकास नही हो पाता है।

वस्तुत' बालक के व्यक्तित्व के विकास में उसकी विभिन्न क्षेत्रो मे उपलब्धिया तथा महत्वाकाक्षाए निर्भर करती हैं– बालक का गृह-वातावरण, माता-पिता का शैक्षिक स्तर तथा उन्हे (बच्चों को) माता-पिता व समाज से मिलने वाला प्रोत्साहन। यहा पर माता-पिता द्वारा दिए जाने वाले प्रोत्साहन का अभिप्राय यह नहीं है कि माता-पिता बालक को पढाई की चक्की में पीसते रहे। विद्यालय मे पढ़ाई, घर मे पढाई, गृहकार्य, प्रोजेक्ट कार्य, ट्यूशन कार्य, अभ्यास कार्य, परीक्षा आदि मनोविज्ञान की दृष्टि से उचित नहीं है। ये सभी बालक मे अनावश्यक तनाव, भय, कुण्ठाओं आदि को जन्म देते हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से प्रोत्साहन का तात्पर्य है, माता-पिता द्वारा बच्चे को उचित निर्देशन देना, उसकी सहायता करना तथा अध्ययन में आने वाली परेशानियो, बाधाओ को प्यार से समझाते हुए दूर करना। रोसी (1965) के अनुसार "माता-पिता द्वारा शिक्षा से सम्बन्धित किसी भी गतिविधि को स्वीकृति प्रदान करना या प्रशसा करना अथवा शिक्षा प्रक्रिया मे विद्यार्थियों द्वारा अनुभव की जाने वाली परेशानियो, बाधाओं को दूर करना अथवा उसे विद्यार्थी को सही गलत का निर्देशन देना, ये समस्त क्रियाएं माता-पिता द्वारा प्रोत्साहन देने में सन्निहित हैं।

पिल्लई (1970) ने अपने शोध अध्ययन में पाया कि विद्यार्थियों के शैक्षिक परिणामो पर शिक्षकों की योग्यता, गृह-स्थिति, परिवार की आय, माता-पिता के शैक्षिक स्तर का सकारात्मक प्रभाव पडता है। अरोरा (1990) ने अपने शोध अध्ययन में पाया कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर गृह-वातावरण से सम्बन्धित विभिन्न आयाम तथा निश्चयात्मकता, पुरस्कार, पोषण, अनुमति का सकारात्मक प्रभाव पडता है। चेन एव स्टीविन्सन (1995) ने शोध अध्ययन मे पाया कि विद्यार्थियों की गणित विषय मे उच्च उपलब्धि माता-पिता द्वारा दिए गए प्रोत्साहन तथा प्रशसा पर निर्भर करती है। श्रीवास्तव (1982) के अनुसार बहुत से योग्य बच्चों की निम्न शैक्षिक उपलब्धि के लिए माता-पिता द्वारा दिए जाने वाले प्रोत्साहन की कमी मुख्य रूप से उत्तरदायी होती है। माता-पिता एवं बच्चो का सम्बन्ध एक प्रेरणादायक तथ्य है, जो बच्चे की शैक्षिक उपलब्धि मे महत्वपूर्ण योगदान देता है। अग्रवाल (1986) के शोध परिणाम स्पष्ट करते है कि माता-पिता द्वारा दिए जाने वाले प्रोत्साहन एवं विद्यार्थियो की शैक्षिक उपलब्धि मे धनात्मक सह-सम्बन्ध होता है। कुमारी (1986) ने अपने शोध अध्ययन में पाया कि छात्रों की तुलना मे छात्राओ को अध्ययन हेतु अपने माता-पिता से अधिक प्रोत्साहन प्राप्त होता है। इसके साथ ही इनके शोध परिणाम स्पष्ट करते हैं कि छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि पर माता-पिता के प्रोत्साहन का प्रभाव नही पड़ता है। परन्तु छात्राओ की शैक्षिक उपलब्धि पर माता-पिता द्वारा दिए जाने वाले प्रोत्साहन का सार्थक प्रभाव पड़ता है। स्पष्ट है कि मानव जीवन में प्रोत्साहन का महत्वपूर्ण योगदान होता है। प्रत्येक जीव जो भी क्रियाए करता है उसके सन्दर्भ में वह कुछ न कुछ प्रतिफल की आकांक्षा करता है। वस्तुत' व्यक्ति के कार्य करने की शक्ति उसके मिलने वाले प्रोत्साहन पर निर्भर करती है। जैसा कि रोसी (1965) ने स्पष्ट किया है कि माता-पिता अपने बच्चों की शिक्षा के सम्बन्ध में किसी क्रिया की सहमति देते हैं अथवा उस क्रिया में आने वाली समस्या का निराकरण करते है अथवा सही, गलत के सम्बन्ध में दिशा-निर्देश देते है, तो यह सब माता-पिता द्वारा प्रदत्त प्रोत्साहन ही है। वर्तमान मे सामाजिक परिवर्तनों के फलस्वरूप माता-पिता तथा उनकी सन्तानो के सम्बन्धों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ रहा है। आधुनिक युग में जब माता-पिता दोनों ही व्यस्त हो, तब वे अपनी सन्तान पर कितना ध्यान दे पाते हैं? तथा उनको कितना शैक्षिक

प्रोत्साहन प्रदान कर पाते है? यह शोध का प्रमुख विषय बन जाता है। अत. प्रस्तुत शोध मे यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है कि किशोर विद्यार्थियो की शैक्षिक उपलब्धि पर माता-पिता द्वारा दिए गए प्रोत्साहन का प्रभाव किस सीमा तक पड रहा है? इस सन्दर्भ मे प्रस्तुत शोध के निमित्त निम्न उद्देश्यो को निर्धारित किया गया।

उद्देश्य

- माता-पिता द्वारा दिए गए प्रोत्साहन स्तर के परिप्रेक्ष्य मे विद्यार्थियो की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।
- माता-पिता द्वारा दिए गए प्रोत्साहन स्तर एव विद्यार्थियो के यौन-भेद के परिप्रेक्ष्य मे शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।
- विद्यार्थियो को माता-पिता द्वारा मिलने वाले प्रोत्साहन तथा उनकी शैक्षिक उपलब्धि के मध्य निहित सह-सम्बन्ध सीमा को ज्ञात करना।

अध्ययन विधि

शोध के उक्त उद्देश्यो के सन्दर्भ मे वर्णनात्मक सर्वेक्षण शोध विधि के अन्तर्गत तुलनात्मक व सह-सम्बन्धात्मक शोध विधियों को अपनाया गया।

शोध उपकरण

माता-पिता द्वारा दिए गए प्रोत्सहान का अध्ययन करने के लिए शर्मा (1987) द्वारा निर्मित "पेरेन्टल एंकरेजमेन्ट स्केल" का प्रयोग किया गया। विद्यार्थियो की शैक्षिक उपलब्धि के निमित्त, उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद् द्वारा संचालित कक्षा दस की सार्वजनिक परीक्षा मे प्राप्त कुल प्राप्तांक प्रतिशत को विद्यालय के अभिलेखों से संकलित किया गया।

प्रतिदर्श

अध्ययन के निमित्त कुल 400 विद्यार्थियो (200 छात्र तथा 200 छात्राएं) का चयन, प्रतिदर्श इकाइयो के रूप मे, आकस्मिक प्रतिदर्श चयन विधि द्वारा किया गया। उक्त विद्यार्थी जिनकी आयु 14-18 वर्ष के मध्य थी, आगरा नगर के उन उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत थे जो कि उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद् से मान्यता प्राप्त थे।

परिणाम

माता पिता द्वारा प्रदत्त प्रोत्साहन का स्तर

सर्वप्रथम यह अध्ययन किया गया कि भारतीय माता-पिता द्वारा अपने किशोर पाल्यो को किस स्तर का प्रोत्साहन दिया जाता है? इस सन्दर्भ में जो परिणाम प्राप्त हुए, वे निम्नानुसार हैं–

आगे तालिका 1 से स्पष्ट है कि भारतीय माता-पिता द्वारा अपनी सन्तानो को दिए गए प्रोत्साहन सम्बन्धी प्राप्तांको का वितरण समिष्टि में सामान्य रूप से वितरित है। क्योंकि अधिकाश माता-पिता, लगभग 69 प्रतिशत, अपने पाल्यो को औसत रूप से प्रोत्साहन प्रदत्त कर रहे हैं। जबकि 13 प्रतिशत माता-पिता द्वारा निम्न तथा 18 प्रतिशत माता-पिता द्वारा उच्च प्रोत्साहन अपनी सन्तानों को दिया जा रहा है। स्पष्ट है कि भारतीय माता-पिता अपनी सन्तानों को न तो अत्यधिक उच्च और न ही अत्यधिक निम्न प्रोत्साहन दे रहे हैं बल्कि वे अपने पाल्यो को औसत स्तर का ही प्रोत्साहन दे रहे है।

माता-पिता द्वारा दिए गए प्रोत्साहन स्तर के सन्दर्भ में विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि

माता पिता द्वारा दिए गए प्रोत्साहन के सन्दर्भ मे विद्यार्थियो की शैक्षिक उपलब्धि का विवरण तालिका 2 मे प्रस्तुत किया गया है–

तालिका 2 के गहन निरीक्षण से विदित हो रहा है कि वर्तमान में भारतीय माता-पिता द्वारा अपने पुत्र-पुत्रियो को अत्यधिक प्रोत्साहन बिल्कुल भी नही दिया जा रहा है। तालिका से यह भी स्पष्ट है कि माता-पिता द्वारा पुत्र तथा पुत्रियों को लगभग समान रूप से प्रोत्साहन दिया जा रहा है। क्योंकि समिष्टि के कुल 8%-11% पुत्र-पुत्रियों को अधिक प्रोत्साहन प्राप्त है।

तालिका 1
माता-पिता द्वारा दिए गए प्रोत्साहन स्तर के संदर्भ में प्रतिदर्श इकाइयो का वितरण

माता-पिता द्वारा प्रदत्त प्रोत्साहन स्तर	प्राप्तांक सीमा	विद्यार्थियों की संख्या	कुल प्रतिशत
अत्यधिक	93 19 - 114.49	0	0
अधिक	71 89 - 93.19	72	18
सामान्य	50 79 - 17.89	276	69
निम्न	29 49 - 50 79	20	7
अति निम्न	8.19 - 29.49	32	8
योग		400	100

तालिका 2
विद्यार्थियों को माता-पिता द्वारा मिलने वाले प्रोत्साहन स्तर के परिप्रेक्ष्य मे छात्रो की शैक्षिक उपलब्धि

वार्षिक परीक्षा परिणाम/ माता-पिता द्वारा प्रदत्त प्रोत्साहन स्तर	प्रथम श्रेणी		द्वितीय श्रेणी		तृतीय श्रेणी		अनुत्तीर्ण श्रेणी		योग
	छात्र	छात्राए	छात्र	छात्राए	छात्र	छात्राए	छात्र	छात्राएं	
अत्यधिक	–	–	–	–	–	–	–	–	0
अधिक	4(1%)	32(8%)	28(7%)	12(3%)	–	–	–	–	76
सामान्य	32(8%)	84(21%)	100(25%)	36(9%)	16(4%)	4(1%)	–	–	272
निम्न	–	–	–	16(4%)	4(1%)	–	–	–	20
अति निम्न	–	–	–	–	4(1%)	–	12(3%)	16(4%)	32
योग	36(9%)	116(29%)	128(32%)	64(16%)	24(6%)	4(1%)	12(3%)	16(4%)	400

किन्तु माता-पिता द्वारा दिए जाने वाले इस प्रोत्साहन का प्रभाव छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि पर अधिक पड़ रहा है, जबकि छात्रों की उपलब्धि पर कम प्रभाव पड रहा है। कारण—समान रूप से अधिक प्रोत्साहन मिलने पर 8% छात्राएं प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण हो रही है। जबकि मात्र 1% छात्र प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण हो रहे हैं। इसी प्रकार माता-पिता से अधिक प्रोत्साहन पाने वाली 3% छात्राएं द्वितीय श्रेणी प्राप्त कर रही हैं, जबकि अधिक प्रोत्साहन पाने वाले द्वितीय श्रेणी मे उत्तीर्ण छात्रों का प्रतिशत 7% है। इसी प्रकार माता-पिता द्वारा सामान्य स्तर का प्रोत्साहन समान संख्या में पाए जाने पर भी छात्राओ की शैक्षिक उपलब्धि छात्रों की तुलना में अधिक प्रभावित हो रही है। तालिका से स्पष्ट है कि 21% छात्राएं जिन्हें अपने माता-पिता से सामान्य स्तर का प्रोत्साहन प्राप्त है, प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण है। जबकि इस वर्ग के 8% छात्र प्रथम श्रेणी प्राप्त कर रहे है। सामान्य स्तर का प्रोत्साहन पाने वाले 25% छात्र तथा 9% छात्राएं द्वितीय श्रेणी प्राप्त कर रहे हैं। जबकि तृतीय श्रेणी प्राप्त छात्र-छात्राओं का प्रतिशत क्रमश' 4 एव 1 है।

माता-पिता द्वारा अत्यधिक निम्न प्रोत्साहन पाने वाले छात्र-छात्राओं में कोई भी परीक्षा मे उच्च श्रेणी प्राप्त नहीं कर सका है। केवल 1 प्रतिशत छात्र तृतीय श्रेणी में तथा 3% छात्र अनुत्तीर्ण हुए है, जबकि इस वर्ग की 4% छात्राएं अनुत्तीर्ण हुई है। तालिका से पुन' यह भी स्पष्ट है कि प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण 9% छात्रों में से 1% छात्रो के अपने माता-पिता से उच्च तथा शेष 8% छात्रों को अपने माता-पिता से सामान्य स्तर का प्रोत्साहन प्राप्त हो रहा है। जबकि 29% प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण छात्राओ के समूह मे क्रमश 8% छात्राओं को उच्च प्रोत्साहन तथा 21% छात्राओ को सामान्य स्तर का प्रोत्साहन अपने माता-पिता से उपलब्ध हो रहा है। इसी प्रकार 32% द्वितीय श्रेणी के 9% अपने माता-पिता से उच्च प्रोत्साहन प्राप्त कर रहे हैं तथा 25% छात्र ऐसे हैं जिनको अपने माता-पिता से औसत स्तर का प्रोत्साहन प्राप्त हो रहा है। 16% छात्राओं के वर्ग मे उच्च प्रोत्साहन प्राप्त करने वाली 3% छात्राओं ने द्वितीय श्रेणी प्राप्त की है, केवल 9% द्वितीय श्रेणी प्राप्त छात्राए औसत स्तर का प्रोत्साहन अपने माता-पिता से प्राप्त कर रही है। स्पष्ट है कि वर्तमान में माता-पिता अपने पाल्यो को चाहे, वे पुत्र हो अथवा पुत्री, समान रूप से प्रोत्साहन नहीं दे रहे है बल्कि वे पुत्रो की अपेक्षा अपनी पुत्रियो को अधिक प्रोत्साहन दे रहे हैं। साथ ही माता-पिता द्वारा दिए जाने वाले प्रोत्साहन के फलस्वरूप उनके पाल्यों की शैक्षिक उपलब्धि, छात्रों की तुलना में छात्राओं की अधिक प्रभावित हो रही है।

माता-पिता द्वारा सन्तानों को दिए जाने वाले प्रोत्साहन तथा उनकी शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सह-सम्बन्ध

माता-पिता द्वारा दिया जाने वाला प्रोत्साहन उनके पाल्यो की शैक्षिक उपलब्धि के साथ किस सीमा तक सह-सम्बन्धित है? इस सम्बन्ध में विद्यार्थियों द्वारा प्रत्यक्षीकृत माता-पिता के प्रोत्साहन प्राप्ताको तथा उनकी शैक्षिक उपलब्धि के प्राप्तांको के मध्य सह-सम्बन्ध ज्ञात किया गया। प्राप्त परिणामो को तालिका 3 मे दर्शाया गया है।

तालिका 3 से स्पष्ट है कि विद्यार्थियो की शैक्षिक उपलब्धि पर माता-पिता द्वारा दिए जाने वाले प्रोत्साहन का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ रहा है तथा विद्यार्थियो की शैक्षिक उपलब्धि तथा उन्हे मिलने वाले प्रोत्साहन मे सकारात्मक एवं सांख्यिकी रूप से सार्थक सह-सम्बन्ध है। स्पष्ट है कि विद्यार्थियों को अपने माता-पिता से जितना अधिक प्रोत्साहन प्राप्त होगा, उनकी शैक्षिक उपलब्धि मे भी अवश्य ही वृद्धि होगी। इसके अतिरिक्त तालिका से यह भी स्पष्ट हो रहा है कि छात्राओ की शैक्षिक उपलब्धि, माता-पिता से मिलने वाले प्रोत्साहनो से सर्वाधिक प्रभावित हो रही है, जबकि छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि औसत रूप में अथवा औसत से कम प्रभावित हो रही है।

उपलब्धियां एवं निष्कर्ष

उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के माता-पिता अपने

तालिका 3

छात्र-छात्राओं को माता-पिता द्वारा मिलने वाले प्रोत्साहन प्राप्तांकों तथा सार्वजनिक परीक्षा में प्राप्त प्राप्तांकों के मध्य सह-सम्बन्ध गुणांक का मान

सांख्यकी मान	*छात्र (N = 200)*	*छात्राएं (N = 200)*	*कुल विद्यार्थी (N = 200)*
सह सम्बन्ध गुणाक (r)	+.44	+.84	+.63
सार्थकता स्तर (p)	<.05	<.01	<.01

पाल्यो को शैक्षिक उपलब्धि के सन्दर्भ में सामान्य स्तर का ही प्रोत्साहन प्रदान करते है अर्थात् अधिकांश छात्र अपने माता-पिता से सामान्य स्तर का ही प्रोत्साहन प्राप्त करते हैं। परन्तु छात्र एवं छात्राओ दोनो को अपने माता-पिता से अत्यधिक उच्च स्तर का प्रोत्साहन प्राप्त नही होता है।

विद्यार्थियो के माता-पिता द्वारा अपने पाल्यो को दिए जाने वाले प्रोत्साहन प्राप्ताको एव शैक्षिक उपलब्धि प्राप्ताकों के मध्य प्राप्त सह-सम्बन्ध गुणाक (r = 63) का z मान 2.3 प्राप्त हुआ, जो 2 58 से कम है। अत· 99% विश्वास स्तर पर कहा जा सकता है कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर माता-पिता के प्रोत्साहन का सार्थक पभाव पड़ता है। छात्रों के सम्बन्ध मे 95% विश्वास स्तर पर कहा जा सकता है कि छात्रो की शैक्षिक उपलब्धि पर माता-पिता के प्रोत्साहन का प्रभाव कम पड़ता है, लेकिन छात्राओं के सम्बन्ध मे अध्ययन के अनुसार 99% विश्वास स्तर के साथ कहा जा सकता है कि छात्राओ की शैक्षिक उपलब्धि पर माता-पिता के प्रोत्साहन का अत्यधिक प्रभाव पडता है।

विद्यार्थियो की शैक्षिक उपलब्धि एवं माता-पिता द्वारा प्रदान किए गए प्रोत्साहन में सामान्य से अधिक किन्तु धनात्मक सह-सम्बन्ध प्राप्त हुआ है अर्थात् प्रोत्साहन के स्तर के बढ़ने से विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि भी सामान्य रूप से बढ़ती है। छात्रो पर माता-पिता के प्रोत्साहन बढ़ने से उनकी शैक्षिक उपलब्धि कम प्रभावित हो रही है, जबकि छात्राओ की शैक्षिक-उपलब्धि माता-पिता द्वारा दिए गए प्रोत्साहनों से उच्च रूप मे प्रभावित होती है। जिसके फलस्वरूप माध्यमिक स्तर पर छात्राएं, छात्रों की तुलना मे श्रेष्ठ शैक्षिक उपलब्धि प्राप्त करने में सफल हो रही है। प्राप्त परिणामों की पुष्टि अग्रवाल (1986) एवं कुमारी (1996) के शोध अध्ययनों से भी हो रही है। ☐☐

शिक्षा संकाय
दयालबाग एजुकेशनल इन्स्टीट्यूट
दयालबाग, आगरा, उत्तर प्रदेश

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय अधिगमकों की उपलब्धि पर अध्ययन सम्बन्धी आदतों का प्रभाव

❒ महेश कुमार मुछाल
❒ पी. के. साहू

प्रत्येक समाज एवं राष्ट्र के सम्पूर्ण विकास में शिक्षा का विशेष महत्व होता है इसलिए प्रत्येक देश मानवीय संसाधन को श्रेष्ठ, योग्य एवं प्रशिक्षित करने के लिए शिक्षा पर आश्रित होता है। शिक्षा के बिना राष्ट्र व समाज का विकास नहीं हो सकता क्योंकि राष्ट्र व समाज की समृद्धि एवं विकास शिक्षा से जुड़ा होता है। शिक्षा के महत्व को स्वीकारते हुए महादेवी वर्मा ने अपने एक लेख "राष्ट्र की मेरूदण्ड" में लिखा कि "शिक्षा संस्थानों में राष्ट्र बनता है" इसलिए समाज के सुव्यवस्थित और सुसंस्कृत सम्पूर्ण विकास के लिए अच्छी शिक्षा की आवश्यकता है।

शिक्षा के महत्व तथा अनिवार्यता को स्वीकारते हुए भारत सरकार के मानव ससाधन विकास मंत्रालय ने सार्वभौमिक शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सन् 1989 में राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय की स्थापना की। इस विद्यालय का मिशन शिक्षा का सार्वभौमीकरण, सभी वर्ग के बालक-बालिकाओ, महिलाओ, ग्रामीण युवाओ, कार्यरत पुरुषों एवं महिलाओ, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, विकलांग एवं अन्य प्रकार के सुविधाहीन वर्गो को शिक्षित करना राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय का ध्येय है।

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय द्वारा अधिगमकों (विद्यार्थियों) को कई लचीली सुविधाए प्रदान की जाती हैं जैसे उच्चतर माध्यमिक स्तर कक्षा 12 में विज्ञान विषय के साथ विद्यार्थी कला एव वाणिज्य विषयों का चयन कर परीक्षा उत्तीर्ण कर सकता है जबकि औपचारिक शिक्षा प्रणाली मे यह सम्भव नही है। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय की शिक्षा प्रणाली में औपचारिक विद्यालयों की तरह नियमित कक्षाओं का आयोजन नहीं होता। लेकिन सम्बन्धित अध्ययन केन्द्र पर पूरे वर्ष में प्रत्येक रविवार एवं अवकाश के दिन 30 सम्पर्क कक्षाओं का आयोजन किया जाता है। इन सम्पर्क कक्षाओ का उद्देश्य पाठ्यक्रम को पूरा न करते हुए उन विद्यार्थियो की समस्याओ, शंकाओं का समाधान करना है जो समस्याएं उन्हें स्व-अध्ययन मुद्रित सामग्री को पढ़ने के दौरान उत्पन्न होती हैं। इन कक्षाओ में विद्यार्थियों की कठिनाइयों को जानकर विषय विशेषज्ञों से चर्चा, विद्यार्थियो के मध्य अंतःक्रिया (चर्चा) तथा ऑडियो पाठ एवं वीडियो पाठ द्वारा अध्ययन कराया जाता है।

संदर्भ साहित्य की समीक्षा

अध्ययन सम्बन्धी आदतो की उपलब्धि पर प्रभाव, इस संदर्भ मे कई शोध कार्य हुए हैं उनमें प्रमुख है—अब्राहम एम. (1974), ललिथामा (1975), छाबड़ा (1975), भादुड़ी (1971) एवं प्रकाश चन्द्र (1975) ने माध्यमिक एव उच्चतर माध्यमिक स्तर पर शोध कार्य किया। जैन (1967), डेब मधु एव ग्रेवाल हृदयी पाल (1990), राठौड, सेनापति एवं वर्मा ने महाविद्यालय स्तर के अपने अध्ययन

मे पाया कि अध्ययन सम्बन्धी आदत उपलब्धि को सार्थक रूप से प्रभावित करती है। जैन एव मुछाल (1998) ने बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों पर अध्ययन मे पाया कि अध्ययन सम्बन्धी आदत उपलब्धि को सार्थक रूप से प्रभावित करती है। उपरोक्त सभी अध्ययन औपचारिक विद्यालय एवं महाविद्यालय स्तर पर किए गए जबकि दूरस्थ विद्यार्थियो पर सिह (1995) द्वारा अध्ययन किया गया। अध्ययन में पाया कि अध्ययन सम्बन्धी आदतो का शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पडता है। डार्टर (1990), पैन (1991) ने अपने अध्ययन में पाया कि सीखने की शैली और आदतों का शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है। इस आधार पर कह सकते है कि औपचारिक विद्यालय तथा महाविद्यालय स्तर पर तथा दूरस्थ शिक्षण प्रणाली में अभी तक दूरस्थ विद्यार्थियों की उपलब्धि पर उपचार, अध्ययन सम्बन्धी आदतो का अंत:क्रिया प्रभाव पर अध्ययन नही हुआ है इसलिए प्रस्तुत अध्ययन की आवश्यकता प्रतिपादित होती है।

उद्देश्य

अध्ययन के निम्न उद्देश्य थे

- ☐ सामाजिक विज्ञान विषय अधिगमकों की उपलब्धि पर उपचार के प्रभाव का अध्ययन करना।
- ☐ सामाजिक विज्ञान विषय अधिगमको की उपलब्धि पर अध्ययन सम्बन्धी आदत के प्रभाव का अध्ययन करना।
- ☐ सामाजिक विज्ञान विषय अधिगमकों की उपलब्धि पर अध्ययन सम्बन्धी आदत के मध्य अंत.क्रिया प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएं

- ☐ अधिगमको की उपलब्धि पर उपचार का सार्थक प्रभाव नही होगा।
- ☐ अधिगमकों की उपलब्धि पर अध्ययन सम्बन्धी आदत का सार्थक प्रभाव नहीं होगा।
- ☐ अधिगमको की उपलब्धि पर उपचार एवं अध्ययन सम्बन्धी आदत के मध्य अतःक्रिया का सार्थक प्रभाव नही होगा।

न्यादर्श

प्रस्तुत अध्ययन मे राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय के प्रत्यापित केन्द्र परमाणु ऊर्जा केन्द्रीय विद्यालय, भाभा नगर अध्ययन केन्द्र मे पंजीकृत कक्षा 10 के 60 अधिगमको को न्यादर्श रूप मे लिया गया। प्रस्तुत अध्ययन मे सम्पूर्ण विद्यार्थियो को अध्ययन हेतु तीन समूहो मे विभाजित करने के लिए यादृच्छिक न्यादर्श का प्रयोग किया गया। समूह 1 में केवल मुद्रित पाठ अध्ययन हेतु, समूह 2 मे मुद्रित पाठ + वीडियो पाठ अध्ययन हेतु, समूह 3 मे मुद्रित पाठ + वीडियो पाठ + चर्चा हेतु विद्यार्थियों को लिया गया।

उपकरण

अध्ययन सम्बन्धी आदतो के मापन हेतु एम मुखोपाध्याय एव डी. एन. सनसनवाल द्वारा निर्मित अध्ययन सम्बन्धी आदत अनुसूची का उपयोग किया गया। इस अनुसूची में 9 क्षेत्रों से सम्बन्धित 52 कथन है। यह अनुसूची मानकीकृत है।

उपलब्धि परीक्षण हेतु निर्मित मानदंड परीक्षण (CRT) का प्रयोग किया गया। प्रस्तुत उपलब्धि परीक्षण पर विशेषज्ञो के सुझाव प्राप्त करने के पश्चात् मानदंड परीक्षण को अतिम रूप दिया गया।

प्रदत्त संकलन एवं विश्लेषण

प्रदत्त संकलन हेतु परमाणु ऊर्जा केन्द्रीय विद्यालय, भाभानगर के समन्वयक (प्राचार्य) से अनुमति प्राप्त कर प्रदत्त संकलन सम्पर्क कक्षाओं के दौरान किया गया। विद्यार्थियो को तीन समूहो में विभाजित कर प्रथम समूह को केवल मुद्रित पाठ अध्ययन, द्वितीय समूह को मुद्रित पाठ + वीडियो पाठ अध्ययन एवं तृतीय समूह को मुद्रित पाठ + वीडियो पाठ + चर्चा अध्ययन उपचार दिया गया। उपचार के पश्चात् मानदंड परीक्षण (CRT) एव

अध्ययन सम्बन्धी आदत अनुसूची को प्रशासित किया गया। प्रशासित उपकरण से सम्बन्धित शंकाओं का समाधान शोधकर्ता द्वारा किया गया। संकलित प्रदत्तों का विश्लेषण प्रसरण विश्लेषण द्वारा किया गया।

परिणाम एवं विवेचना

प्रस्तुत अध्ययन का प्रथम उद्देश्य था कि सामाजिक विज्ञान विषय अधिगमको की उपलब्धि पर उपचार के प्रभाव का अध्ययन करना। इस उद्देश्य हेतु अग्रलिखित परिकल्पना निर्मित की गई। "सामाजिक विज्ञान विषय अधिगमको की उपलब्धि पर उपचार का सार्थक प्रभाव नहीं होता है", इसका परीक्षण किया गया। इस अध्ययन में विभिन्न शिक्षण आव्यूहों जैसे मुद्रित पाठ समूह, मुद्रित पाठ + वीडियो पाठ समूह एव मुद्रित पाठ + वीडियो पाठ + चर्चा समूह अनुदेशन व्यूह रचनाओं के प्रभाव का अधिगमकों की उपलब्धि पर अध्ययन सम्बन्धी आदत के मध्य अंत क्रिया प्रभाव देखने हेतु प्रदत्तो का विश्लेषण, प्रसरण विश्लेषण (Analysis of Variance) ANOVA द्वारा किया गया।

नीचे तालिका मे प्रसरण विश्लेषण (ANOVA) का सार (उपचार का उपलब्धि पर प्रभाव अधिगमकों की अध्ययन सम्बन्धी आदत के संदर्भ मे)

सामाजिक विज्ञान अधिगमकों की उपलब्धि पर उपचार का प्रभाव

तालिका दर्शाती है कि मूल्य 90 37 सामाजिक विज्ञान की उपलब्धि के संदर्भ मे उपचार का प्रभाव 0 01 स्तर एवं 2/55 स्वतत्रता के अंश पर सार्थक पाया गया जो यह दर्शाता है कि जिन विद्यार्थियों को त्रिस्तरीय उपचार दिया गया था उनका सामाजिक विज्ञान विषय अधिगमकों पर उपचार का प्रभाव अलग-अलग घटित होता है। जिन्हे प्रथम समूह मे मुद्रित पाठ, द्वितीय समूह में मुद्रित पाठ+ वीडियो पाठ तथा तृतीय समूह को मुद्रित पाठ + वीडियो पाठ के पश्चात् चर्चा द्वारा अध्ययन कराया था। इसलिए विकसित परिकल्पना यह कि "उपचार का अधिगमको की उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव नहीं होता है" को अस्वीकार किया जाता है।

सामाजिक विज्ञान अधिगमकों की उपलब्धि पर अध्ययन सम्बन्धी आदतों का प्रभाव

तालिका के अनुसार सामाजिक विज्ञान अधिगमको की उपलब्धि पर उपचार और अध्ययन सम्बन्धी आदत के मध्य अंतःक्रिया में F मूल्य 6.51 है जो कि 0.01 पर 2/55 स्वतंत्रता के अश पर सार्थक है। इससे यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक विज्ञान अधिगमकों की उपलब्धि

तालिका

Source of Variance	*Df*	*SS*	*MSS*	*F Value*	*Level of Sig*
Treatment	2	8427.21	4213.60	90.37	★
Study Habit	1	480 82	480.82	10.31	★
Treatment X Study Habit	2	607 87	303.93	6 51	★
Error	55	2517.61	46 62		
Total	60				

★ 0.01 स्तर पर सार्थक

पर उपचार एव अध्ययन सम्बन्धी आदत के मध्य अंत.क्रिया का सार्थक प्रभाव पड़ता है। इस सदर्भ मे शून्य परिकल्पना "सामाजिक विज्ञान विषय अधिगमको की उपलब्धि पर उपचार और अध्ययन सम्बन्धी आदत के मध्य अंत क्रिया का सार्थक प्रभाव नही होता है" को अस्वीकृत किया जाता है।

सामाजिक विज्ञान अधिगमको की उपलब्धि पर उपचार के प्रभाव अध्ययन में पाया कि अधिगमकों को तीन समूहो मे उपचार दिया गया। प्रथम समूह को मुद्रित पाठ अध्ययन, द्वितीय समूह को मुद्रित पाठ + वीडियो पाठ अध्ययन, तृतीय समूह को मुद्रित पाठ + वीडियो पाठ + चर्चा समूह अध्ययन में पाया गया कि उपचार का प्रभाव तीनों समूहों पर अलग-अलग घटित होता है। प्रथम समूह केवल मुद्रित पाठ समूह की अपेक्षा द्वितीय समूह अधिक प्रभावी है। क्योंकि मुद्रित पाठ अध्ययन मे विषय-वस्तु को अलग-अलग उदाहरण देकर प्रस्तुत नहीं कर सकते जबकि वीडियो पाठ मे विषय-वस्तु को अधिक उदाहरण देकर समझाया जा सकता है। इसलिए मुद्रित पाठ की अपेक्षा वीडियो पाठ समूह में उपलब्धि फलांक बढे हुए प्राप्त होते है। मुद्रित पाठ + वीडियो पाठ की अपेक्षा मुद्रित पाठ + वीडियो पाठ + चर्चा अधिक प्रभावी है क्योंकि मुद्रित पाठ + वीडियो पाठ के पश्चात् चर्चा होने से वीडियो पाठ मे कुछ विषय-वस्तु अस्पष्ट या समझ मे नहीं आती है तो वह भी चर्चा के द्वारा स्पष्ट हो जाती है। इसलिए द्वितीय समूह की अपेक्षा तृतीय समूह मे उपलब्धि फलाक सार्थक रूप से बढे हुए प्राप्त होते हैं।

अधिगमको की उपलब्धि पर अध्ययन सम्बन्धी आदतों का सार्थक प्रभाव पड़ता है क्योंकि उच्च अध्ययन सम्बन्धी आदत वाले अधिगमक निम्न अध्ययन सम्बन्धी आदत वाले अधिगमको की अपेक्षा अधिक अंक प्राप्त करते है। इस प्रकार कह सकते है कि जो विद्यार्थी अध्ययन हेतु अधिक तत्पर है वे अध्ययन सम्बन्धी आदतों के कारण अपनी उपलब्धि को बढा लेते है। इससे निष्कर्ष निकलता है कि उच्च अध्ययन सम्बन्धी आदत व निम्न अध्ययन सम्बन्धी आदत का उपलब्धि पर सार्थक रूप से प्रभाव पड़ता है।

अधिगमको की उपलब्धि पर उपचार और अध्ययन सम्बन्धी आदतो के मध्य अत'क्रिया का सार्थक प्रभाव पड़ता है। इस आधार पर यह कह सकते है कि उच्च अध्ययन सम्बन्धी आदत वाले अधिगमक अल्प अध्ययन सम्बन्धी वाले अधिगमको से अधिक अंक प्राप्त करते हैं। इससे निष्कर्ष प्राप्त होता है कि अध्ययन सम्बन्धी आदत उपलब्धि को सार्थक रूप से प्रभावित करती है।

❑❑

(1) प्रशिक्षण विभाग
दिगम्बर जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय
बड़ौत, बागपत, उत्तर प्रदेश
(2) शिक्षा विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश

मांग पर परीक्षा : आज की आवश्यकता

□ सुभाष चंद्र अग्रवाल

किसी भी देश, समाज में शिक्षा व्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग उसकी परीक्षा व्यवस्था होती है। मांग पर परीक्षा का अर्थ है कि छात्र जब परीक्षा देना चाहे तब उसकी परीक्षा सम्पन्न करा दी जाए। राष्ट्रीय खुला विद्यालय इस दिशा में प्रारम्भिक कार्य कर रहा है। इसके सफल संचालन के लिए कई बातों का होना आवश्यक है जिनमें कम्प्यूटर, प्रश्न बैंक, हमारी इच्छा शक्ति इत्यादि प्रमुख हैं। प्रारम्भ में यह व्यवस्था विश्वविद्यालयों के परिसर में स्थित विभागों पर लागू की जानी चाहिए और उससे प्राप्त परिणामों का विश्लेषण करके फिर इस व्यवस्था को शिक्षा के अन्य स्तरों पर भी लागू किया जा सकता है।

किसी भी समाज, देश में वहां की शिक्षा व्यवस्था का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग उसकी परीक्षा व्यवस्था होती है। शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति, पाठ्यक्रम की उपयुक्तता, शिक्षण अनुभवों की सार्थकता इत्यादि अनेक बातें परीक्षा व्यवस्था पर निर्भर करती है। इसीलिए परीक्षा को आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

माग पर परीक्षा के बारे मे कुछ जानने से पूर्व यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि परीक्षा वास्तव में क्या है? इस सम्बन्ध में पुस्तकीय एवं औपचारिक अर्थ तथा परिभाषा पर विचार किए बिना यह जानना हमारे लिए आवश्यक है कि परीक्षा उपाधि या प्रमाण-पत्र प्राप्त करने का साधन या माध्यम मात्र ही नही है अपितु यह छात्र/छात्रा द्वारा एक निश्चित अवधि मे सीखे गए ज्ञान, कौशल, अनुभव इत्यादि का जीवन की वास्तविक परिस्थितियों में किए गए प्रयोग का सूचक है। साथ ही यह शिक्षा की गुणवत्ता का भी सूचक है। परीक्षा व्यवस्था के भी विभिन्न पक्ष होते है। मांग पर परीक्षा का मुख्य रूप से सम्बन्ध परीक्षा के संचालन से है।

माग पर परीक्षा का अर्थ है कि छात्र जब भी परीक्षा देना चाहे, उसकी परीक्षा सम्पन्न करा दी जाए। इस प्रत्यय को हमारे सम्मुख रखने का मुख्य रूप से श्रेय राष्ट्रीय खुला विद्यालय के चेयरमैन को है जिन्होंने विगत कुछ वर्षो से विभिन्न सार्वजनिक वार्ताओं में इसकी आवश्यकता एव महत्व को समझाया है और वे स्वयं अपने छात्रों को प्रयोगात्मक रूप से यह सुविधा प्रदान कर रहे हैं। मांग पर परीक्षा निम्न रूप से कार्य करती है।

कोई भी छात्र किसी भी उपाधि/प्रमाण-पत्र के अध्ययन के दौरान जब यह महसूस करने लगता है कि उसने उस पाठ्यक्रम को सम्पूर्ण रूप से तैयार कर लिया है तो वह अपने प्रधानाचार्य या विभागाध्यक्ष के पास जाकर उन्हें उक्त जानकारी से अवगत कराता है और उनसे अपनी परीक्षा को सम्पन्न कराने का अनुरोध करता है। प्रधानाचार्य या विभागाध्यक्ष उस छात्र के अनुरोध को जानकर उसके विद्यालय/महाविद्यालय/ विश्वविद्यालय में स्थित मास्टर कम्प्यूटर के टर्मिनल को आदेश देकर वाछित पूर्णाक का एक प्रश्न-पत्र तैयार करता है और छात्र को उस प्रश्न-पत्र को निर्धारित अवधि

में हल करने को दे देता है। छात्र वहां स्थित कक्ष मे बैठकर उक्त प्रश्न-पत्र को निर्धारित अवधि मे हल करता है और अपनी उत्तर-पुस्तिका कक्ष निरीक्षक या केन्द्राध्यक्ष को देकर अपने घर चला जाता है।

व्यवहार रूप मे इस प्रक्रिया के सफल सचालन के लिए निम्न बातो का होना अत्यन्त आवश्यक है—

- एक व्यापक और विस्तृत प्रश्न बैक।
- ये प्रश्न बैंक प्रत्येक विषय एव प्रश्न-पत्र में उपलब्ध हों।
- इन प्रश्न बैकों मे प्रत्येक वर्ष संशोधन एव संवर्धन होता रहे।
- परीक्षा लेकर उपाधि या प्रमाण-पत्र देने वाली सस्था मे एक मास्टर कम्प्यूटर हो।
- प्रत्येक विभाग/विद्यालय/महाविद्यालय में इस कम्प्यूटर का एक टर्मिनल हो।
- इन कम्प्यूटरों को चलाने के लिए प्रशिक्षित कम्प्यूटर आपरेटर्स हों।
- पूरी प्रक्रिया में पूर्ण पारदर्शिता हो।
- इस प्रक्रिया से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति में दृढ़ इच्छा शक्ति हो।

सभी शिक्षाशास्त्री, मनोवैज्ञानिक एव समाजशास्त्री इस बात से सहमत है कि किसी भी व्यवस्था मे नवीन परिवर्तनों को दो प्रकार से लागू किया जा सकता है। पहला, पुरानी व्यवस्था के स्थान पर समग्र रूप में नई व्यवस्था को अपना लिया जाना और दूसरा, पूरानी व्यवस्था के किसी एक अंग या क्षेत्र मे नए परिवर्तन को प्रयोगात्मक रूप से लागू करना और प्राप्त परिणाम के आधार पर उसे अन्य अंगो/क्षेत्रो पर लागू करने के बारे मे निर्णय लेना। परीक्षा व्यवस्था शिक्षा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अग होती है और इसका आयोजन प्रत्येक कक्षा के लिए प्रत्येक वर्ष किया जाता है। अत माग पर परीक्षा को शिक्षा के प्रत्येक स्तर (प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च) पर सम्पूर्ण देश मे एक साथ लागू करना सम्भव नही है। स्वतत्रता के उपरान्त परीक्षा सुधार के क्षेत्र में विभिन्न आयोगो एव समितियो ने बहुमूल्य सुझाव हमें दिए हैं, लेकिन हम उन सुझावों को व्यवहार मे लागू कर पाने मे असफल रहे हैं। अत प्रयोग के तौर पर माग पर परीक्षा को स्नातकोत्तर स्तर पर लागू किया जा सकता है। इस स्तर पर भी चूकि महाविद्यालयो मे छात्रो की सख्या ज्यादा होती है अत. प्रारम्भ मे इस व्यवस्था को विश्वविद्यालयो के विभागो मे प्रभावी रूप से लागू कर 2-3 वर्षों तक इसके आयोजन में होने वाली त्रुटियो का पता लगाने और तद्नुरूप इसमे परिवर्तन कर प्राप्त परिणामो का गहन विश्लेषण किया जाना चाहिए, जिससे इस व्यवस्था को अन्य शिक्षा स्तरों एवं अन्य कक्षाओ मे भी लागू किया जा सके।

स्नातकोत्तर स्तर पर माग पर परीक्षा के आयोजन का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि लगभग सभी विषयो में यू. जी. सी./सी. एस. आई. आर. द्वारा प्रत्येक वर्ष मे दो बार नेट परीक्षा का आयोजन किया जाता है, और कुछ राज्य सरकारे भी इन विषयो में राज्य स्तर की परीक्षा का आयोजन करती है। इन सभी विषयो में अखिल भारतीय स्तर पर प्रश्न बैक उपलब्ध है। इन प्रश्न बैको मे केवल संशोधन एवं संवर्धन की आवश्यकता है जिससे प्रत्येक विश्वविद्यालय के विभिन्न विषयो एव प्रश्न-पत्रों के उन हिस्सों पर भी प्रश्न बैक का निर्माण किया जा सके जो नेट या समकक्ष परीक्षा के वर्तमान पाठ्यक्रम मे शामिल नहीं हैं। यह कार्य आसानी से किया जा सकता है।

आज का युग प्रौद्योगिकी का युग है। विज्ञान, तकनीकी एवं सूचना साधन के क्षेत्र मे नित्य हो रहे आविष्कारों ने ज्ञान के भंडार में अभूतपूर्व वृद्धि की है। इस भंडार को नई पीढ़ी तक कम से कम समय एवं खर्च में प्रभावी ढग से पहुचाना आज तभी सम्भव है जब हम ज्ञान प्राप्त करने वालों अर्थात् सीखने वालो की आवश्यकता के अनुरूप भी कुछ परिवर्तन कर सके। मनोवैज्ञानिकों का यह कहना है कि किन्ही भी दो व्यक्तियों मे भिन्नता होती है अर्थात् सीखने वालों की न केवल रुचि, अभिरुचि, पसन्द, आवश्यकता इत्यादि मे अन्तर है अपितु उनके सीखने की गति में भी अन्तर है। वर्तमान व्यवस्था में कक्षा के प्रत्येक छात्र को एक ही पाठ्यक्रम को एक पूर्व निश्चित समय मे तैयार करना होता है और

उनकी परीक्षा भी एक साथ ली जाती है। जब जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में दो व्यक्तियो मे अन्तर की वजह से वे अलग-अलग प्रकार के व्यवहार करते हैं तो उनकी परीक्षा एक ही समय लेना कहा तक न्याय सगत है? क्या यह सम्भव नहीं कि कक्षा का एक छात्र जिस पाठ्यक्रम को एक वर्ष में पूरा करता हो, दूसरा छात्र उसी पाठ्यक्रम को छ. माह में ही पूरा कर लेता हो और तीसरा दो वर्ष मे? ऐसी स्थिति मे इन तीनो छात्रो की परीक्षा एक ही समय में लेना क्या उचित है? कम अवधि मे उस पाठ्यक्रम को तैयार कर लेने वाले छात्र का समय बेकार करने का हमे क्या हक है? अधिक समय में पूरा करने वाले छात्र की परीक्षा जल्द ही सम्पन्न कराना क्या उसके साथ अन्याय नही है? क्या प्राय- ऐसा देखने मे नहीं आता कि अगले पाठ्यक्रम मे प्रवेश का इच्छुक छात्र केवल इस कारण एक वर्ष बेकार करता है क्योकि उसका परीक्षा परिणाम विभिन्न कारणों से विश्वविद्यालय द्वारा समय से घोषित नहीं हो सका? ऐसे अनेक प्रश्न है जिनके उत्तर या तो हमारे पास है नहीं या हम उत्तर देना नहीं चाहते, किन्तु उनका दुष्परिणाम छात्रों को भुगतना पड़ता है। अतः आवश्यकता इस बात ही है कि हम ऐसा कुछ करें कि हमारी गलतियो/कमियो की सजा छात्रो को न मिले। योग्य एवं मेधावी छात्रों (साथ ही कमजोर एव धीमी गति से सीखने वाले छात्रो) की परीक्षाएं उनकी माग पर कराकर हम उन्हें उनके विकास में सहयोग दे सकते हैं तथा वर्तमान में प्रचलित परीक्षा प्रणाली से उत्पन्न कमियो को कुछ सीमा तक दूर कर सकते हैं।

मानव स्वभाव से ही सृजनशील प्राणी रहा है। प्राचीनकाल से लेकर आज तक जो भी नई खोजें हुई है, वे उसी सृजनशीलता का ही परिणाम है। शिक्षा का लाभ जन-जन तक पहुचाने के लिए सूचना एव तकनीकी के इस युग में अनेक उपायों एवं साधनो का प्रयोग भी मानव की इसी सृजनशीलता के कारण सम्भव हुआ है। (यह अलग बात है कि इससे प्राप्त परिणाम हमारी अपेक्षाओं से कोसों दूर हैं।) परीक्षा के क्षेत्र मे भी सुधार के लिए अनेकों वर्षो से चर्चा होती आई हैं लेकिन कुप्रशासन, अव्यवस्था, इच्छाशक्ति का अभाव और शिक्षा के प्रति नेताओ एवं अधिकारियों के सवेदनहीन व्यवहार ने परीक्षा सहित शिक्षा को गिरावट की पराकाष्ठा तक पहुंचा दिया है। ऐसी परिस्थितियो मे परीक्षा सहित शिक्षा मे सुधार की दिशा मे काम करने वाले व्यक्तियों की सख्या कम ही दिखाई पड़ती है। इस अंधकार की स्थिति मे कभी-कभी दूर कहीं टिमटिमाती रोशनी के बिन्दु अभी भी दिखाई दे जाते हैं। मांग पर परीक्षा ऐसा ही एक बिन्दु है और इसी दिशा मे एक अन्य प्रयास ऑनलाइन परीक्षा भी है जिसे गुजरात स्थित सौराष्ट्र विश्वविद्यालय अपने स्नातकोत्तर छात्रो के लिए अगले सत्र से लागू करने जा रहा है। अत· आवश्यकता इस बात ही है कि विश्वविद्यालय अपने नियमो एवं कानूनो में प्रदेश सरकारो की सहायता से आवश्यक संशोधन कर परीक्षा सुधार की दिशा में हो रहे इन प्रयासो को पारदर्शिता, ईमानदारी एवं दृढ़ इच्छाशक्ति के साथ लागू करें जिससे परीक्षा के गिरते हुए स्तर को रोककर परीक्षा की गरिमा एवं सुचिता को पुन· जीवित किया जा सके। ❑❑

शिक्षाशास्त्र विभाग
छत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय
कानपुर, उत्तर प्रदेश

भारतीय आधुनिक शिक्षा

वर्ष . 22 | अक : 2 | अक्तूबर 2003

इस अंक में

विद्यालय आधारित मूल्यांकन में ग्रेड प्रणाली

❒ सरला राजपूत
❒ अम्बादत्त तिवारी
❒ संतोष कुमार

विद्यार्थी की उपलब्धियों के आकलन में गुणात्मक सुधार लाने हेतु वर्तमान में प्रचलित अंक प्रणाली से ग्रेड प्रणाली की ओर जाना आवश्यक है, क्योंकि ग्रेड प्रणाली से अंक प्रणाली में विद्यमान कई त्रुटियों में सुधार हो सकता है। इसके साथ ही जहां पर योग्यता का आकलन अंक के आधार पर विश्वसनीयतापूर्वक करना संभव नहीं है वहां ग्रेड प्रदान किया जा सकता है।

शिक्षा व्यवस्था मे परीक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। परीक्षा ही वह माध्यम है जिससे विद्यार्थियो का सत्र पर्यन्त शिक्षण-अधिगम की क्रियाविधि का परिणाम उनकी उपलब्धियो के रूप मे दर्शाया जाता है। वर्तमान मे शैक्षिक उपलब्धियो का मापन अंको के माध्यम से किया जाता है। यह अक प्रणाली कितनी विश्वसनीय है इस पर अनेक अध्ययन हुए है तथा शोधो के आधार पर तय पाया गया कि अक प्रणाली मे कई विसंगतिया है। एक अक की कमी-वेशी से विद्यार्थियो की योग्यता का स्तर कम और अधिक हो जाता है जो कि तर्कसगत नहीं है। इसके अतिरिक्त पास-फेल की व्यवस्था और अधिक भयावह स्थिति उपस्थित करती है। जो विद्यार्थी एक विषय मे भी निर्धारित न्यूनतम अक, जो कि किसी बोर्ड या स्कूल ने पास होने के लिए बिना किसी वैज्ञानिक आधार के निश्चित किए है, से कम अंक प्राप्त करता है उसे फेल माना जाता है। इतना ही नही यह फेल होना जीवन भर के लिए उसके प्रमाण-पत्र मे अंकित हो जाता है तथा वह विद्यार्थी हमेशा के लिए नाकारा घोषित हो जाता है। यह स्थिति सामाजिक दृष्टि से विद्यार्थियों के लिए कठिन एव दु:सह हो जाती है। फलत वे आत्महत्या जैसे अपराध करने के लिए तत्पर हो जाते है। आत्महत्या की घटनाएं केवल बोर्ड परीक्षा के परिणामो तक ही सीमित नही रह गई है ये तो विद्यालय द्वारा आयोजित आन्तरिक परीक्षा मे फेल होने पर भी घट जाती है। शिक्षाविदो ने अंको की निरकुशता जनित स्थिति से बचने के लिए यह तय किया कि अक प्रणाली के स्थान पर ग्रेड प्रणाली लागू की जाए ताकि अक प्रणाली से होने वाली हानि को कम किया जा सके। राष्ट्रीय शिक्षा नीति– 1986 में भी परीक्षा सुधार के अनेक प्रयासो मे से अको के स्थान पर ग्रेड दिए जोने के प्रयास पर विशेष रूप से बल दिया गया है। परन्तु आज 2003 तक भी इस दिशा मे कोई विशेष परिवर्तन नही हो पाया है। मानो परीक्षा मे पास होना ही मात्र जीवन का उद्देश्य है जबकि बेचारे विद्यार्थी यह तक नही जानते कि ये अंक उनकी योग्यता के सही एव विश्वसनीय मापक नहीं हैं। वे एक प्रकार से एक छलावे मे फंसे हुए है। फिर भी समाज में इन अको का उपयोग एक प्रतिष्ठा प्रतीक के रूप मे स्थापित कर दिया गया है। जिस प्रकार यदि आज कोई व्यक्ति जो किसी बड़े पद पर कार्यरत है और कार, बगला, आधुनिकतग सुविधाओं से सम्पन्न है तो वह प्रतिष्टित

व्यक्ति की श्रेणी में माना जाता है। यदि उसके बच्चे बोर्ड परीक्षा में कम अंक प्राप्त करते हैं तो वह कुछ प्रतिशत तक अपनी प्रतिष्ठा निश्चित खो बैठता है। परिणामत' अभिभावकों की ओर से बच्चों पर लगातार एक बोझ-सा बना रहता है कि उन्हे परीक्षा मे अधिक से अधिक अंक प्राप्त करने है। यदि कही कोई कमी रह गई तो उन्हे अपने अभिभावको की प्रताडना सहनी पडती है। दुर्भाग्यवश वे इस प्रताड़ना से बचने के लिए ही घर से भागने, आत्महत्या करने जैसे कदम उठाने को मजबूर हो जाते है। इस प्रकार विद्यार्थी अपनी योग्यता अर्जित करने के लिए न पढ़ कर अपने अभिभावको की प्रतिष्ठा को ठेस लगाने से बचने के लिए पढ़ते है। यह एक अदभुत सामाजिक विडम्बना है।

ग्रेड प्रणाली क्या है?

शैक्षिक सन्दर्भ में ग्रेड प्रणाली, वह विधि है जिसे विद्यार्थियों की उपलब्धि को दर्शाने के लिए उपयोग में लाया जाता है। इसके अतर्गत विद्यार्थियों को उनकी दक्षता के अनुरूप विभिन्न योग्यता स्तरों मे वर्गित करके सकेतो के माध्यम से प्रदर्शित किया जाता है।

अक प्रणाली एव ग्रेड प्रणाली मे अनेक अंतर हैं तथा ग्रेड प्रणाली निश्चय ही अक प्रणाली से एक बेहतर प्रणाली है। निम्न तथ्य इन दोनो के अतर को स्पष्ट करते है।

- अक प्रणाली विद्यार्थियो की उपलब्धि में एक अक के अंतर को भी महत्व देती है जबकि विद्यार्थियो की क्षमता में एक अंक के अतर से विभेद कर पाना संभव नहीं है। विद्यार्थियों की उपलब्धि की गुणवत्ता को नापना अपने आप में ही एक जटिल कार्य है और एक अंक के अंतर से दो विद्यार्थियो के बीच तुलना करके एक को अच्छा और दूसरे को उससे ज्यादा या कम बताना और भी कठिन है। फिर भी व्यवहार में यही हो रहा है। उदाहरण के लिए, किसी विषय मे दो विद्यार्थियों की विषय-गत उपलब्धि 59 तथा 60 अंक के रूप मे है जिनमे भेद कर पाना कठिन है। ग्रेड प्रणाली में इस कमी को दूर करने के लिए समान योग्यता वाले विद्यार्थियो को एक ही योग्यता स्तर मे रखा जाता है। यह योग्यता स्तर अंको के निश्चित विस्तार को प्रदर्शित करता है। उदाहरण के लिए 50-60 अकों का विस्तार।
- अक प्रणाली में एक विषय के अंको की तुलना दूसरे विषय के अंकों से तकनीकी रूप से नही हो सकती। उदाहरण के लिए हिन्दी विषय के 60 अक अंकगणित के 60 अंक के बराबर नहीं होते। फिर भी सपूर्ण योग निकालने के लिए सभी विषयो के अंकों को समान मापक पर मान कर जोड़ दिया जाता है। यह अक प्रणाली की बहुत बड़ी कमी है। जबकि ग्रेड प्रणाली में दोनो विषयों मे 'ए' ग्रेड का अर्थ विषय मे उच्च स्तर की स्थिति को दर्शाता है।
- प्रचलित अक प्रणाली का एक दोष पास एव फेल के रूप मे भी हमारे सामने आता है। एक विद्यार्थी एक विषय मे फेल होने पर सभी विषयो में फेल मान लिया जाता है। यही नहीं, वह जीवन के हर क्षेत्र मे असफल घोषित हो जाता है। अधिकतर लोगों की धारणा बन जाती है कि ये परीक्षा पास नही कर सका इसलिए यह जीवन मे कुछ नहीं कर सकता। दूसरी तरफ ग्रेड प्रणाली में पास/फेल की धारणा की अनुपस्थिति से विद्यार्थियो को पास-फेल की त्रासदी से मुक्ति मिलती है।
- वर्तमान अंक प्रणाली विभिन्न विषयो मे उपलब्धि को अंक प्रदान करने तक ही सीमित है जबकि ग्रेड प्रणाली का क्षेत्र विस्तृत है। इसके अतर्गत शैक्षिक क्षेत्र के अतिरिक्त सह-शैक्षिक क्षेत्र मे विद्यार्थियो के व्यक्तिगत एव सामाजिक गुणो, रुचियों, दृष्टिकोणो व मूल्यो का मूल्यांकन भी संभव होता है। इस प्रकार ग्रेड प्रणाली का परिप्रेक्ष्य अक प्रणाली के परिप्रेक्ष्य से व्यापक है।

ग्रेड प्रणाली अंक प्रणाली से बेहतर होने के बावजूद आज तक व्यवहार मे प्रयुक्त नही हो सकी है क्योंकि इसको लागू करने में अनेक रुकावटें है।

ग्रेड प्रणाली को परिचालित करने में आने वाली रुकावटें

ग्रेड प्रणाली न केवल बोर्ड परीक्षाओ बल्कि विद्यालय स्तर की परीक्षाओ मे भी परिचालित नही की जा सकी है क्योकि ग्रेड प्रणाली लागू करने में विभिन्न स्तरों पर अनेको व्यावहारिक रुकावटे हैं। इनमें से कुछ प्रमुख इस प्रकार से है।

- सामान्य जन, विशेष रूप से अभिभावक जो अपने बच्चों के वर्तमान एवं भविष्य के प्रति जागरूक प्रहरी हैं ग्रेड प्रणाली के विभिन्न आयामों एवं विषमताओं से पूर्णतः अपरिचित है जिसके कारण उसे स्वीकार करने के प्रति सशंकित हैं। उनकी यही शका इस प्रणाली के लागू होने की बहुत बड़ी रुकावट है।
- राजनैतिक इच्छा शक्ति का अभाव एक दूसरी बड़ी बाधा है। नीतियों के कार्यान्वियन मे प्रशासकीय निर्णय की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है। प्रशासनिक निर्णय के अभाव में विभिन्न शिक्षा बोर्डो द्वारा इसे अपनाए जाने मे कोई रुचि नही है। बल्कि वे अन्यमनस्क तथा उदासीन है जबकि सैद्धांतिक दृष्टि से वे पूर्णत. सहमत हैं कि ग्रेड प्रणाली अक प्रणाली से निश्चित ही एक बेहतर प्रणाली है।
- पब्लिक स्कूल तथा अन्य संभ्रांत विद्यालय भी इस ग्रेड प्रणाली को लागू करने मे अपना विरोध मुखर करते हुए बाधा उत्पन्न कर रहे है। उनके अनुसार, ग्रेड प्रणाली उनके सर्वोत्कृष्ट बच्चों को साधारण बच्चों के साथ एक ही योग्यता स्तर मे रख देगी जिससे उनकी अध्ययनरत होने की प्रेरणा कुंठित हो जाएगी। इस प्रकार ये बच्चे ग्रेड प्रणाली में नकारात्मक रूप से प्रभावित होगे। उदाहरण के लिए, 99 अक पाने वाले बच्चे को 90 अक पाने वाले बच्चे के समान ही 'ए' ग्रेड मे रखा जाएगा। अंकों की यह निरकुशता हमारी मानसिकता में इतना घर कर गई है कि चाहे अभिभावक हो अथवा विद्यालय प्राचार्य और विद्यालय प्रबधन सभी अविश्वसनीय अको पर ही विश्वास करते है। परिणामस्वरूप किसी भी दशा या दिशा में परिवर्तन लाना सुगम नहीं होता।
- ग्रेड प्रणाली में पास/ फेल की व्यवस्था के अभाव मे सभी बच्चे उत्तीर्ण होकर आगे की कक्षा मे जाएगे। इस प्रकार बच्चो की संख्या प्रत्येक कक्षा में वर्तमान की अपेक्षा बढ जाएगी। राज्य सरकारे एवं विद्यालय इस चुनौती का सामना करने की स्थिति मे नही हैं। अत यह भी ग्रेड प्रणाली लागू करने की राह मे एक गभीर रुकावट बना हुआ है।
- ग्रेड प्रणाली को लागू न हो पाने के पीछे एक महत्वपूर्ण कारण है– अध्यापको का ग्रेड प्रणाली मे प्रशिक्षण का अभाव। अध्यापक नहीं जानते कि ग्रेड प्रणाली क्या है? तथा इसे किस प्रकार विद्यालयी परीक्षा मे लागू किया जाए। इसके लिए आवश्यक है कि ग्रेड प्रणाली लागू करने से पूर्व अध्यापको के लिए सघन प्रशिक्षण की व्यवस्था हो तभी यह प्रणाली सफलतापूर्वक लागू की जा सकती है।

उपरोक्त रुकावटो को दूर करने के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा कई प्रयास किए गए। ये प्रयास जनमानस मे जागरूकता उत्पन्न करने के उद्देश्य से किए गए। परिषद् द्वारा किए गए कुछ उल्लेखनीय प्रयास इस प्रकार हैं–

- परिषद् द्वारा ग्रेड प्रणाली पर दो पुस्तकें प्रकाशित की गई। ये है– विद्यालयो मे ग्रेड प्रणाली-2000 (हिन्दी एव अग्रेजी सस्करण) तथा Use of Grades in Admission-2001। ये दोनो पुस्तकें समुचित मात्रा में शिक्षा सस्थाओ तथा लोगों को उपलब्ध करा कर ग्रेडिंग को प्रचारित करने का प्रयास किया गया।
- परिषद् द्वारा चारो क्षेत्रीय सस्थानो मे सेमिनार आयोजित करके ग्रेडिग की धारणा एवं तरीके, इसके लाभ व सीमाए आदि से अध्यापकों, शिक्षक प्रशिक्षको तथा शैक्षिक प्रशासकों को अवगत कराने का प्रयास किया गया ताकि इनके मन में ग्रेडिंग के प्रति सकारात्मक सोच विकसित हो सके।

- ☐ एक अन्य प्रयास के अन्तर्गत, राज्य शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद्, विद्यालय शिक्षा बोर्ड तथा जिला शिक्षा प्रशिक्षण सस्थानो के संकाय सदस्यो की दक्षता संवर्धन हेतु दो कार्यक्रम आयोजित किए गए।
- ☐ परिषद् का शैक्षिक मापन एवं मूल्यांकन विभाग प्रति वर्ष शिक्षा बोर्ड के अध्यक्षों एवं सचिवो का सम्मेलन आयोजित करता है। विगत कई वर्षो से विशेष रूप से 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा के बाद से आयोजित सभी सम्मेलनों मे ग्रेडिंग विचार-विमर्श का एक मुख्य मुद्दा रहा है। कई बोर्ड प्रतिनिधि ग्रेडिंग सम्बन्धी अपने सकारात्मक विचार भी समय-समय पर प्रस्तुत करते रहे हैं परन्तु अभी तक ग्रेड प्रणाली लागू करने मे पहल नहीं कर पा रहे है।
- ☐ इनके अतिरिक्त सत्तर एव अस्सी के दशक मे भी कई कार्यक्रम ग्रेडिंग के ऊपर किए गए तथा ग्रेड प्रणाली की धारणा को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया। ये सभी प्रयास तमाम भ्रमों को दूर करने एव ग्रेडिंग की उपयोगिता को समझाने के लिए किए गए।
- ☐ परिषद् के दस्तावेज– विद्यालय शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा 2000 में भी ग्रेडिंग का प्रयोग करने की अनुशसा की गई है।
- ☐ ग्रेडिंग को विस्तृत परिदृश्य में प्रचारित करने के लिए केन्द्रीय शिक्षा तकनीकी सस्थान द्वारा लगभग 10-10 मिनट के दो दृश्य-श्रव्य कैसेट ग्रेडिंग पर तैयार किए गए।

इन सभी प्रयासो को अधिक सकारात्मक तथा क्रियात्मक बनाने के लिए राष्ट्रीय पाठ्यक्रम मे विद्यालय स्तर पर दो प्रकार की ग्रेडिग प्रणाली प्रस्तावित है, जो प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष ग्रेड प्रणाली के रूप मे बताई गई है। विद्यालय आधारित परीक्षाओ मे निरपेक्ष प्रणाली के प्रयोग हेतु कहा गया है। विद्यालय के विभिन्न स्तरों पर इसे विभिन्न प्रकार से उपयोग में लाए जाने का प्रावधान है। उदाहरण के लिए प्राथमिक स्तर पर तीन बिन्दु के मापक पर, उच्च प्राथमिक स्तर पर पाच बिन्दु के मापक पर तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर पर नौ बिन्दु के मापक पर मूल्यांकन करने की अनुशंसा है। इसके विपरीत बोर्ड परीक्षाओं में सापेक्ष ग्रेड प्रणाली प्रस्तावित है। इसमें ग्रेड देने की प्रक्रिया को नौ बिन्दुओ के मापक पर सामान्य संभाव्यता वक्र का प्रयोग करते हुए ग्रेड दिए जाते है। यहीं पर एक बात और ध्यान देने योग्य है कि सह शैक्षिक क्षेत्रों में बालको की उपलब्धि के मूल्याकन के लिए प्रत्यक्ष ग्रेड प्रणाली को बेहतर एवं प्रभावी माना गया है जिसे सक्षेप में नीचे तालिका में दिया गया है।

स्तर	*शैक्षिक*	*सह-शैक्षिक*
पूर्व-प्राथमिक	शिक्षण एव मूल्याकन दोनो ही अनौपचारिक	
प्राथमिक	3-बिन्दु निरपेक्ष ग्रेड प्रणाली(अप्रत्यक्ष ग्रेड)	3-बिन्दु प्रत्यक्ष ग्रेड प्रणाली
उच्च प्राथमिक	5-बिन्दु निरपेक्ष ग्रेड प्रणाली(अप्रत्यक्ष ग्रेड)	3-बिन्दु प्रत्यक्ष ग्रेड प्रणाली
माध्यमिक	9-बिन्दु निरपेक्ष ग्रेड प्रणाली(अप्रत्यक्ष ग्रेड)	5-बिन्दु प्रत्यक्ष ग्रेड प्रणाली
उच्च माध्यमिक	9-बिन्दु निरपेक्ष ग्रेड प्रणाली *प्रथम तीन सेमिस्टरो में* 9-बिन्दु सापेक्ष ग्रेड प्रणाली अतिम चौथे सेमिस्टर मे जो कि बोर्ड के द्वारा की जानी है।	5-बिन्दु प्रत्यक्ष ग्रेड प्रणाली

यहा पर यह उल्लेख करना आवश्यक है कि जिस समय विद्यालय आधारित योजना का विकास किया गया उस समय तक राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा (2000) जारी नही हुई थी। अतः उक्त दस्तावेज मे सुझाई गई ग्रेड प्रणाली को अपनाया नही जा सका।

विद्यालय आधारित मूल्यांकन योजना में ग्रेडिंग

इस योजना में ग्रेडिग को दोनो क्षेत्रो में प्रयुक्त करके इसकी व्यावहारिकता को देखा गया। विद्यालय आधारित मूल्याकन योजना के अतर्गत शैक्षिक तथा सह-शैक्षिक क्षेत्रो मे प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनो ग्रेड प्रणालियो का प्रयोग किया गया जो निम्नवत हैं–

शैक्षिक क्षेत्र

मापन एवं मूल्याकन विभाग, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली ने सतत् एव मूल्यांकन योजना के आधार पर एक विद्यालय आधारित मूल्याकन योजना वर्ष 2000 मे विकसित की जो कि प्राथमिक कक्षाओं के लिए बनाई गई। योजना को चार डी. एम. स्कूल जो कि क्षेत्रीय शिक्षा सस्थानो में संलग्न थे, मे वर्ष 2001-02 के सम्पूर्ण सत्र में क्रियान्वित किया गया। क्रियान्वयन के दौरान इन सभी स्कूलो में योजना को मॉनीटर किया गया तथा समय-समय पर आवश्यक सुझाव प्रदान कर शिक्षिकाओं की कठिनाईयो को दूर करने का प्रयास किया गया। अतत· योजना इन सभी स्कूलो मे सफलतापूर्वक क्रियान्वित हुई। परिणाम बताते है कि इस विद्यालय आधारित योजना से शिक्षिकाए, विद्यार्थी एव अभिभावक काफी प्रभावित हुए क्योंकि इससे शिक्षा मे गुणात्मक सुधार का प्रयास किया गया था। ये सभी विद्यालय क्रियान्वयन वर्ष 2001-02 के उपरान्त से वर्तमान सत्र तक इस योजना को विद्यालयो मे लागू किए हुए है।

विद्यालय आधारित मूल्याकन योजना में इस क्षेत्र में 5 बिन्दु निरपेक्ष ग्रेड प्रणाली को अपनाया गया। इसके लिए शिक्षकों को सुझाया गया कि वे छात्रो/छात्राओ की उत्तर पुस्तिकाओ का मूल्याकन अंकों में करे जैसा कि वे करते आ रहे हैं, और अत मे अंकों को निम्नवत् तालिका के अनुसार ग्रेड में परिवर्तित करें।

अक विस्तार	*ग्रेड*	*व्याख्या*
80% और उससे अधिक	A	श्रेष्ठ
65% से 79% तक	B	बहुत अच्छा
50% से 64% तक	C	अच्छा
35% से 49% तक	D	औसत
35% से कम	E	औसत से कम

यहा पर यह जिक्र करना आवश्यक है कि एक टर्म में प्राप्त ग्रेडो को दूसरे टर्म मे प्राप्त ग्रेडो के साथ जोड़कर अतिम ग्रेड ज्ञात करने को नही कहा गया क्योकि इस मूल्यांकन का उद्देश्य छात्रो की उपलब्धि को उनकी पूर्व उपलब्धि के सापेक्ष देखना है न कि अतिम उपलब्धि का आकलन।

सह-शैक्षिक क्षेत्र

विद्यालय आधारित मूल्याकन योजना मे इस क्षेत्र को दो भागों में निम्नवत् विभाजित किया है।

- ☐ सह-पाठ्यगामी क्रियाए तथा
- ☐ सामाजिक एव व्यक्तिगत गुण

सह - पाठ्यगामी क्रियाओ के अतर्गत निम्न क्रियाओ को रखा गया–

(अ) शारीरिक शिक्षा
(ब) कला शिक्षा
(स) कार्यानुभव

विद्यालयी शिक्षा के राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा (2000) मे, इन तीनों विषयो को समेकित कर स्वस्थ एव उपयोगी जीवन जीने की कला, नाम दिया गया है।

सह-पाठ्यगामी क्रियाओं के मूल्याकन को करने हेतु प्रत्यक्ष ग्रेड प्रणाली को प्रयोग किया गया। इसके लिए शिक्षको को सलाह दी गई है कि वे प्रत्येक क्रिया के लिए क्रियाविधि तथा अतिम उत्पाद के सन्दर्भ में कुछ वाछित बिन्दुओं/मानकों की पहचान करें तथा इन्हीं मानको को ध्यान मे रखते हुए प्रत्येक छात्र/छात्रा द्वारा किए

गए कार्यो को अवलोकन विधि को प्रयोग करते हुए निश्चित करें कि विद्यार्थी ने कितने मानको को प्राप्त किया। तदुपरान्त बालक की उपलब्धि का मानक निर्धारित करें। इस क्षेत्र की उपलब्धि मूल्याकन के लिए निम्न विधि का प्रयोग किया गया है।

विधि **अवलोकन**

टूल/उपकरण— मानक के आधार पर तैयार चेक लिस्ट।

रिकॉर्डिग— मानको के आधार पर प्रत्यक्ष। ग्रेडिग कर प्रत्येक क्रिया मे प्राप्त ग्रेड को नोट करना।

ग्रेडिग— मानको की उपस्थिति के आधार पर तीन बिन्दुओ पर ग्रेड प्रदान करना।
ग्रेड का निर्धारण निम्नवत करना।

प्रतिशत विस्तार	*ग्रेड*	*व्याख्या*
70% से अधिक	A	श्रेष्ठ
30% से 70% तक	B	अच्छा
30% से कम	C	औसत (सुधार की आवश्यकता)

रेटिंग— एक टर्म मे कराई गई सभी क्रियाओ में प्राप्त ग्रेड के आधार पर प्रत्येक सह-पाठ्यगामी क्रिया में अतिम ग्रेड निर्धारण करना।

रिपोर्टिंग— प्रत्येक सह-पाठ्यगामी क्रिया मे प्राप्त अतिम ग्रेड को रिपोर्ट-कार्ड में अकित कर अभिभावक को उसके वार्ड की उपलब्धि स्तर से अवगत कराना।

इस क्षेत्र में शिक्षिकाओ द्वारा किस प्रकार उपरोक्त पदो को व्यावहारिक रूप में सम्पन्न किया जा सकता है इसको उदाहरण द्वारा स्पष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है।

मानक— कला की एक क्रिया विद्यार्थी को करने हेतु दी गई। उसमें छात्रो की दक्षता का मापन करने के लिए आठ मानकों को निर्धारित किया गया। ये आठ मानक है–

- क्रिया के संबध मे जागरूकता
- सकल्पनात्मक बोध
- समयबद्धता
- सक्रिय भागीदारी
- स्वच्छता
- सूक्ष्म मापन
- सही अनुपात
- सकल्पनात्मक सत्यता

टूल/उपकरण— एक चेक लिस्ट तैयार की गई जिसमे एक तरफ क्रम सख्या 1 से 8 तक मानको को लिखा गया तथा प्रत्येक मानक के सामने के कॉलम मे मानक की उपलब्धता के आधार पर A, B तथा C ग्रेड प्रदान किया। प्रत्येक दिन अधिकतम चार मानको पर ग्रेड प्रदान करने को कहा गया।

रिकॉर्डिग— शिक्षिका ने प्रत्येक विद्यार्थी द्वारा किए गए कार्य को अवलोकन विधि द्वारा क्रिया के सम्पूर्ण हो जाने तक निर्धारित मानको मे से केवल चार सर्वोपयुक्त A, B तथा C ग्रेड प्रदान किया। यह ग्रेड केवल उन मानको के आगे प्रदान किया गया जिनका उस दिन अवलोकन किया गया।

ग्रेडिग— टर्म के अत में शिक्षिका ने प्रत्येक विद्यार्थी को सभी कला के क्षेत्र में करवाई गई क्रियाओं पर प्राप्त कुल A, B तथा C ग्रेडों की संख्या को गिना तथा निम्नवत कला मे 'अंतिम ग्रेड प्रदान किए।

- 70% या उससे अधिक A ग्रेड प्राप्त करने पर कोई भी C ग्रेड न होने पर, A ग्रेड
- 70% से कम A तथा C ग्रेड प्राप्त होने पर, B ग्रेड अथवा वे सभी छात्र

जिनको ग्रेड A अथवा B ग्रेड मे नही रखा गया।

- 70% या उससे अधिक C ग्रेड प्राप्त होने पर C ग्रेड

इस प्रक्रिया को निम्नवत् उदाहरण से समझाया जा रहा है।

8 मानकों के आधार पर ग्रेड निर्धारण की प्रयुक्त विधि

प्रत्येक छात्र को एक टर्म मे माना 5 क्रियाए कराई गई तथा प्रत्येक क्रिया मे पूर्व निर्धारित मानको पर प्रदान किए गए ग्रेडों की गणना कर निम्न पर अतिम ग्रेड प्रदान किया जा सकता है।

माना पूरे टर्म के दौरान कुल पांच क्रियाओ मे ग्रेड प्रदान किए गए। प्रत्येक क्रिया मे 8 मानको पर अवलोकन कर ग्रेड प्रदान किए गए। यदि कोई छात्र

- ☐ 28 बार या इससे अधिक बार A ग्रेड और एक बार भी C ग्रेड प्राप्त नही करता है तो उसे A ग्रेड
- ☐ 28 बार से कम ग्रेड तथा 28 बार से ही कम ग्रेड प्राप्त करे अथवा वे सभी छात्र जिनको A ग्रेड अथवा C ग्रेड मे नहीं दिया गया B ग्रेड
- ☐ 28 बार या उससे अधिक बार ग्रेड प्राप्त करता है तो उसे C ग्रेड

रिपोर्टिंग– इस आधार पर प्राप्त अतिम ग्रेड को छात्र/छात्रा के रिपोर्ट-कार्ड पर अकित कर अभिभावको को सूचित किया जाता है।

सामाजिक एवं व्यक्तिगत गुण

विद्यालय आधारित मूल्यांकन योजना मे इन गुणो का छात्रो मे विकास तथा उनका मूल्याकन करने हेतु कुल 9 गुणो को चयनित किया गया। ये सामाजिक एव व्यक्तिगत गुण निम्नवत् हैं।

- स्वच्छता
- आज्ञाकारी/अनुशासित
- सहयोग
- समय पाबद/समयबद्धता
- वातावरण सुरक्षा
- बड़ों के प्रति आदर
- सत्यता
- देशभक्ति
- जिम्मेदारी

उदाहरण हेतु स्वच्छता से सबधित तीनो स्तरो हेतु चार-चार सूचकाक निम्नवत् थे।

गुण	*स्तर- I*	*स्तर - II*	*स्तर - III*
स्वच्छता	– वस्त्रों को स्वच्छ रखता है। – जूतो को स्वच्छ रखता है। – रुमाल का प्रयोग करता है। – हाथों को गंदा होने पर धोता है।	–स्वय एवं वस्त्रों को स्वच्छ रखता है। – स्वयं से संबंधित वस्तुओं को स्वच्छ रखता है। (किताबें, बस्ता, कापियां, वस्त्र आदि) – कक्षा तथा आसपास को स्वच्छ रखता है। – स्वय की पुस्तके तथा कापियों को सजिल्द रखता है।	– कक्षा, स्वयं एव वस्त्रो को स्वच्छ रखता है। – स्वयं से संबंधित वस्तुओ तथा फर्नीचर को स्वच्छ रखता है। – विद्यालय परिसर को स्वच्छ रखता है। – अनावश्यक वस्तुओं तथा कचरे को कचरा डिब्बे मे डालता है।

प्रत्येक गुण के मापन हेतु 4 सूचकांकों को आधार माना गया। मूल्यांकन के कार्य को निम्नवत् किया गया—

टूल— प्रत्येक गुण हेतु सूचकाको के आधार पर एक चेक लिस्ट तैयार की गई।

विधि— अवलोकन विधि को प्रयोग मे लाया गया।

रिकॉर्डिंग— शिक्षिकाओ ने विभिन्न सामाजिक एव व्यक्तिगत गुणो का विभिन्न अन्तराल पर अवलोकन किया तथा उस अवलोकन के समय उस गुण पर पूर्व-निर्धारित सूचकांको में से जो भी सूचकांक जिस विद्यार्थी मे अनुपस्थित पाया गया उसके आगे रजिस्टर में क्रास (×) लगा कर अकित कर लिया।

रेटिंग— टर्म के अत मे शिक्षिका ने प्रत्येक सामाजिक एव व्यक्तिगत गुण के लिए किए गए कुल अवलोकनो की सख्या की गणना की। इस सख्या मे से प्रत्येक छात्र हेतु उसकी अवलोकन के दिनों पर अनुपस्थिति की सख्या को घटा कर उसके लिए अवलोकनो की संख्या को निश्चित कर लिया तथा निम्न सूत्र द्वारा प्रत्येक सामाजिक एवं व्यक्तिगत गुण के लिए प्रतिशत ज्ञात किया।

सूत्र ● एक विद्यार्थी हेतु अवलोकनो की सख्या की गणना

(कुल अवलोकनों की संख्या)—

(अ)

(अवलोकनो के समय छात्र की अनुपस्थिति की संख्या) (ब)

= माना यह संख्या 'क' है

● विद्यार्थी विशिष्ट में सामाजिक और व्यक्तिगत गुण की उपस्थिति की संख्या

(विद्यार्थी विशिष्ट हेतु अवलोकनों की संख्या)— (सूचकाको की अनुपस्थिति की सख्या) (स)

= (ख)

या

ख = (क) — (स) सूचकांको की अनुपस्थिति की सख्या को क्रास (×) संख्या

● प्रतिशत = $\frac{\text{ख}}{\text{अ}} \times 100$

= विद्यार्थी विशिष्ट मे सामाजिक और व्यक्तिगत गुण की उपस्थिति की संख्या विद्यार्थी विशिष्ट हेतु अवलोकनो की कुल सख्या।

ग्रेडिंग— उपरोक्त सूत्र के प्रयोग से प्राप्त प्रतिशत को निम्न आधार पर ग्रेड प्रदान किए गए—

प्रतिशत विस्तार	*ग्रेड*	*व्याख्या*
70% से अधिक	A	सदैव
30% से 70%	B	कभी-कभी
30% से कम	C	बहुत कम

रिपोर्टिंग— प्रत्येक सामाजिक एवं व्यक्तिगत गुण पर प्राप्त ग्रेड को रिपोर्ट-कार्ड पर अकित कर टर्म के अंत मे अभिभावक को सूचित किया जाता है।

सामाजिक एव व्यक्तिगत गुणो पर उपरोक्त अपनाए गए पदों को स्पष्ट करने हेतु एक उदाहरण नीचे दिया जा रहा है—

उदाहरण

माना

- ☐ कक्षा मे किसी सामाजिक एवं व्यक्तिगत गुण पर किए गए कुल अवलोकनों की संख्या (अ) = 140
- ☐ विद्यार्थी की अवलोकन दिवसों पर कुल अनुपस्थिति की संख्या (ब) = 16
- ☐ अतः विद्यार्थी हेतु अवलोकनो की सख्या (क) = 140 − 16 = 124
- ☐ विद्यार्थी मे अवलोकन के समय सूचकाकों की अनुपस्थिति अथवा क्रास की सख्या (स) = 18
- ☐ विद्यार्थी में सामाजिक एवं व्यक्तिगत गुण की उपस्थिति की संख्या (ख) = 124−18 = 106
- ☐ प्रतिशत $\frac{\text{ख}}{\text{अ}} \times 100 = \frac{106}{140} \times 100 = 85\%$

अत: ग्रेड 'A' तालिका के अनुसार

निष्कर्ष

विद्यार्थी की उपलब्धियों के आकलन में गुणात्मक सुधार लाने हेतु वर्तमान मे प्रचलित अक प्रणाली से ग्रेड प्रणाली की ओर जाना आवश्यक है क्योकि ग्रेड प्रणाली से अंक प्रणाली में विद्यमान कई त्रुटियों में सुधार हो सकता है इसके साथ ही जहां पर योग्यता का आंकलन अंक के आधार पर विश्वसनीयतापूर्वक करना संभव नही है वहा ग्रेड प्रदान किया जा सकता है।

ग्रेड प्रणाली अपनाए जाने से फेल/पास के मानसिक दबाव से विद्यार्थियों को राहत मिलेगी। उन्हे संतुष्टि हो जाएगी कि शिक्षा के अमुक क्षेत्र मे उनकी योग्यता का स्तर इतना ही है तथा उसमे सुधार हेतु वे सतत् प्रयास कर अपने उपलब्धि स्तर को बेहतर बना सकेंगे।

ग्रेड प्रणाली में सुलझाई गई विभिन्न विधियां तथा मापकों को विभिन्न शैक्षिक विषयों तथा सह-शैक्षिक क्रियाओं मे आवश्यकतानुसार विद्यालय शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर प्रयोग मे लाया जा सकता है। इसका आधार मूल्याकन करने के उद्देश्यों से सुनिश्चित किया जा सकता है।

अत मे, यह कहना होगा कि अब वह समय आ गया है जब हम सभी को अपनी अक पर आधारित सोच को बदलना होगा तथा ग्रेड प्रणाली का व्यापक प्रचार एव प्रसार करना होगा। इसे सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया का एक अविभाज्य अंग बनाने का बीडा उठाना होगा तभी जाकर मूल्याकन द्वारा शिक्षा स्तर में गुणात्मक सुधार की सकल्पना को साकार किया जा सकता है। ❑❑

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली

श्री सत्य साई बाबा के शैक्षिक विचारों का सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक विवेचन

❒ देवेन्द्र सिंह
❒ सीमा सिंह

शिक्षण और सीखने की पद्धतियों के लिए बाबा के दो उद्धरण प्रासंगिक हैं– अध्यापक और छात्रों का एकीभाव होना तथा पढ़ना सीखने की पद्धति का लक्ष्य बिन्दु है। दूसरा शिक्षा में अन्तर्विषय समन्वय की आवश्यकता है जिससे एक विषय से दूसरे विषय को समझा जा सके तथा दोनों विषयों के सम्बन्ध को भी ठीक प्रकार समझा जा सके। दोनों उद्धरण वास्तव में ऐसे सूत्र हैं जिनमें उत्तम शिक्षण पद्धति का रहस्य छिपा हुआ है। ये बल देते हैं कि एक उपयुक्त, सामंजस्यपूर्ण तथा सहयोगात्मक वातावरण बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। अन्तर्विषय सम्बन्ध का उपागम केवल शिक्षण में ही नहीं अपितु अनुसंधान कार्य में भी होना चाहिए।

भारतीय समाज आज एक सक्रमण के दौर से गुजर रहा है जिससे परिवर्तन के परिणामस्वरूप मानवीय जीवन के मूल्य, आस्था एव प्रतीक प्रभावित हो रहे है एव उनका मखौल उड़ाया जा रहा है। वही एक पूरी पीढ़ी को परम्परा व आधुनिकता, भौतिकता व आधुनिकता, जड़ता एवं गतिमयता के द्वन्द्व मे भटकने को छोड़ दिया है, जिससे पुरानी मान्यताएं समाप्त हो रही है या हो चुकी है और नयी मान्यताए प्रकाश में आ रही है। इन नई मान्यताओ मे भौतिक मूल्यो व अर्थ की प्रधानता है। मानवीय मूल्यो से लोगों का विश्वास उठ-सा गया है जिससे मूल्यो का अवमूल्यन हो रहा है एव सम्पूर्ण विश्व मूल्य सकट से गुजर रहा है। परन्तु किसी भी राष्ट्र के बहुमुखी विकास के लिए चरित्रवान व नैतिक गुण सम्पन्न नागरिक सबसे अधिक महत्वपूर्ण होते हैं। सभ्य एवं सुसस्कृत नागरिको के निर्माण का दायित्व शिक्षा पर है क्योकि मानव के सतुलित एव सर्वागीण विकास मे शिक्षा की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। शिक्षा द्वारा ही आदतो, प्रवृत्तियो, अभिवृत्तियो तथा कार्यकारी दक्षताओ का विकास होता है। बच्चो मे नैतिकता के विकास पर अनेक कारकों का प्रभाव पड़ता है। सबसे अधिक प्रभाव उनके वातावरण का पड़ता है। बालक अपने वातावरण से नैतिक, मानवीय, सामाजिक, आध्यात्मिक मूल्यो को सहज एव स्वाभाविक ढंग से ग्रहण करता है। बाल्यावस्था में जिन संस्कारों को अर्जित करता है वे जीवनपर्यन्त बने रहते हैं और उनका दूरगामी प्रभाव पड़ता है।

दूसरी तरफ मनुष्य को विशिष्ट दिशा मे अग्रसर करने में सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली अप्रासंगिक, दिशाहीन एवं निरर्थक सिद्ध हो रही है। ज्ञान का स्थान सूचना व शिक्षा का स्थान परीक्षा ने ले लिया है। परिणामस्वरूप आज **विश्व अत्यधिक ज्ञान विस्तार से पीड़ित है। ज्ञान के विस्तार के अनुपात में जीवन मूल्य विकसित नहीं हो पाए हैं। मानव समाज में यही दुःख का कारण है।**

(श्री सत्य साई बाबा)

शिक्षा संस्थाओं में अशान्ति का वातावरण है। शिक्षा व्यवस्था आज भी औपनिवेशिक परम्परा को ढो रही है।

शिक्षण का स्तर गिर गया है। शिक्षको एव छात्रो मे अध्ययन की प्रवृत्ति समाप्त हो रही है। शिक्षा व मानवीय मूल्यो मे सम्बन्ध-विच्छेद-सा हो गया है।

उपरोक्त परिस्थितियों मे श्री सत्य साई बाबा के शिक्षा दर्शन का अध्ययन करना समीचीन प्रतीत होता है। लेकिन विचारो की प्रासगिकता तभी समझी जा सकती है जब मूल प्रसग और सदर्भ ज्ञात हो, तभी उनकी समालोचना हो सकती है। श्री सत्य साई बाबा की शिक्षा सम्बन्धी विचारधारा उस सामाजिक स्थिति के सदर्भ मे सामने आई है जिसे प्रसिद्ध समाजशास्त्री दुर्खीम ने एनोमी (प्रतिमानहीनता) का नाम दिया है। अमेरिकन समाजशास्त्री आगबर्न ने इसे "कल्चरल लैग" कहा है। साई शिक्षा प्रणाली मे शिक्षा जगत की एनोमी (प्रतिमानहीनता) को आलोच्य दृष्टि से दर्शाया है। अगर वर्तमान शैक्षिक सदर्भो में सत्य साई के विचारो तथा मूल्यो को आत्मसात् करे, उन्हे शिक्षा के क्षेत्र मे प्रतिस्थापित करें तो मानव को किसी विशिष्ट दिशा मे ले जा सकते है एवं शैक्षिक प्रणाली के अवमूल्यन को रोक सकते हैं।

सैद्धान्तिक संदर्भ

श्री सत्य साई बाबा के जीवन की अत्यन्त प्रेरक कहानी है। प्रो एन. कस्तूरी द्वारा लिखित पुस्तक "सत्यम् शिवम् सुन्दरम्" के चार भागों में और "लविंग गॉड", "चूजेन" मदर ईश्वरम्मा तथा "प्रशान्ति–पाथ वे दू पीस" मे बाबा के दिव्य जीवन का विस्तृत वर्णन किया गया है। कलियुग के महान अवतार शिरडी साई बाबा (1838-1918) की महासमाधि के ठीक आठ वर्ष वाद बाबा की पूर्व घोषणा के अनुसार उन्होने दूसरा अवतार लिया। वे दूसरे साई बाबा 23 नवम्बर, 1926 को पुट्टापर्ती ग्राम मे सत्य नारायण राजू के रूप मे प्रकट हुए। आज सारा संसार उन्हे श्री सत्य साई के नाम से जानता है। शिरडी बाबा भगवान शंकर के अवतार थे। श्री सत्य साई बावा शिव और शक्ति के समन्वित अवतार (शिव-शक्तिश्वर) है। उनके पिता का नाम पेडडा वैकप्पा राजू एवं माता का नाम ईश्वरम्मा था। श्री सत्य साई बाबा प्राचीन ऋषि भारद्वाज के गोत्र में उत्पन्न हुए। श्री सत्य साई बाबा का बचपन का नाम सत्य नारायण राजू था जो आगे चलकर श्री सत्य साई अवतार के नाम से प्रसिद्ध हुए। वे सर्वशक्तिमान व सर्व विराजमान है। वे अपने को भगवान का अवतार (इनकारनेशन) मानते है। पहली बार सन् 1968 मे साई बाबा ने रहस्योद्घाटन किया कि भगवान के अवतार तीन रूपो मे हुए। पहले रूप में शिरडी साई बाबा जो 1918 मे महासमाधि मे विलीन हो गए। दूसरे रूप मे शिवशक्ति के सयुक्त अवतार के रूप मे सत्य साई बावा ने अवतार लिया। इन्हें अर्द्धनारीश्वर भी कहा जाता है। तीसरे रूप मे शक्ति के अवतार के रूप मे जिन्हे प्रेम साई बाबा कहा जाएगा जो कर्नाटक के मांडया जनपद मे जन्म लेंगे। यह जन्म श्री सत्य साई बावा के 95 वर्ष की उम्र मे महासमाधि के पश्चात् होगा। (रुहेला 1996, श्री सत्य साई बाबा : ए ब्रीफ प्रोफाइल)।

सन् 1949 मे साई बाबा के मन में विचार आया कि एक आश्रम की स्थापना की जाए। अथक प्रयास से 23 नवम्बर, 1950 को पुट्टापर्ती नामक स्थान पर आश्रम बनकर तैयार हो गया। जिसे नाम दिया गया "प्रशान्ति निलयम" (अबोड ऑफ पीस) प्रशान्ति निलयम ही साई बाबा के मिशन का मुख्य बिन्दु है। इसी मिशन द्वारा ही सत्य साई उच्च शिक्षा सस्थान, प्रशान्ति निलयम, पुट्टापर्ती (डीम्ड विश्वविद्यालय) की स्थापना की गई है। मानव ससाधन विकास मत्रालय द्वारा 21 जुलाई, 1998 को पूर्व मुख्य न्यायाधीश जे.एस. वर्मा की अध्यक्षता मे एक समिति का गठन किया गया, जो भारत सरकार को सुझाव देगी कि प्रचलित पाठ्यक्रम मे कौन-कौन-सी कमियां हैं व प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च शिक्षा की पाठ्यचर्या मे मूलभूत उत्तरदायित्व (फंडामेंटल ड्यूटी) की शिक्षा के लिए कैसे क्रियात्मक रूप दिया जाए। समिति ने पाठ्यचर्या के पुनरावलोकन के लिए आदर्श मानक रूप में श्री सत्य साई इन्स्टीट्यूट ऑफ हायर लर्निंग, पुट्टापर्ती, आन्ध्र प्रदेश का चयन किया है। (आउट लुक 31 अगस्त, 1998)।

साई शिक्षा दर्शन का सैद्धान्तिक विवेचन

श्री सत्य साई बाबा के शैक्षिक सिद्धान्त को समझने

के लिए उनकी दार्शनिक पृष्ठभूमि का अवलोकन आवश्यक है जिसका मूल तत्व भगवान का अवतार है। भगवान बाबा के दर्शन को निम्नलिखित बिन्दुओं के अन्तर्गत विभाजित किया जा सकता है।

- परमात्मा के अस्तित्व मे विश्वास करना जो सर्वशक्तिमान तथा सर्वत्र विराजमान है।
- आत्मा की एकता के सिद्धान्त के आधार पर विश्व के सभी लोगो में समानता एवं एकता।
- सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों—सत्य, धर्म, शान्ति, प्रेम और अहिसा के पोषक एवं प्रतिपादक।
- विज्ञान और प्रौद्योगिकी के ऊपर आध्यात्मिक ज्ञान की श्रेष्ठता।
- भारत की आध्यात्मिक ज्ञान गगा मे तथा नैतिक एव सास्कृतिक परम्पराओ मे आज की वैज्ञानिक तथा तकनीकी आधुनिकतम ज्ञान राशि को मिलाना।
- धर्म निरपेक्षीकरण, उदारीकरण तथा मानवीयता के विचार को बढावा देना तथा मानवीयता में ढालना।
- ईश्वर के पितृत्व और मनुष्य मात्र के भ्रातृत्व का सिद्धान्त।
- मनुष्य मात्र की आत्मा और मस्तिष्क को रूढ़ियो, घिसे-पिटे अप्रयुक्त रीति-रिवाजों तथा जीवन से चिपके हुए क्रियाशून्य रिवाजो, तौर-तरीकों और बन्धनों से मुक्त करना।
- सभी धर्मो व मतों की एकता—केवल एक ही धर्म है प्रेम धर्म।
- मनुष्य को मूलत. आत्मधर्म का पालन करना चाहिए, मात्र स्वधर्म और परधर्म का ही नहीं। विश्व के मानवत्व तथा स्वार्थ रहित सेवा धर्म की भावना से प्रेरित होकर उसे नैतिकता पूर्ण, प्रेम और आत्मा की पुकार के अनुसार व्यवहार करना चाहिए।
- भूत, भविष्य और वर्तमान काल में आधुनिक समय सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।

साई बावा की शैक्षिक विचारधारा उनके दार्शनिक विचारो से मिलकर बनी है। बाबा का जीवन दर्शन आदर्शवाद का है लेकिन यह आदर्शवाद के साथ ही सम्बद्ध नही है। वस्तुत यह एक सुमिश्रित शिक्षा दर्शन है जो आदर्शवाद, व्यावहारिकतावाद, पुनर्निर्माणवाद तथा भविष्यवाद अथवा अप्रत्याशित समाजीकरण का सम्मिश्रण है।

साई शिक्षा एवं आदर्शवाद

आदर्शवाद की जड़े बहुत गहरी और दूर तक फैली हुई हैं। हमारे देश मे साढ़े पाच हजार वर्ष पहले वैदिक ऋषियो द्वारा, मध्य काल के सन्त कबीर, नानक, आधुनिक काल के अनेक विचारको तथा शिक्षाविदो जैसे टैगोर, विवेकानन्द, गाधी, महर्षि अरविन्द, राधाकृष्णन एवं जाकिर हुसैन द्वारा आदर्शवाद पर बहुत जोर दिया गया है। पाश्चात्य विचारक सुकरात, प्लेटो, कान्ट, हीगल वर्कले, कारलायल आदि ने भी आदर्शवाद की विचारधारा को बढ़ने और पनपने मे योगदान दिया। किन्तु सभी ने केवल एक या दो बिन्दुओ पर ही बल दिया। साई बाबा ने पहली बार आदर्शवादी दर्शन के तत्वों को वास्तविक विचारों से संयुक्त किया है। बाबा का विशेष बल आत्मा और मन (चित्तवृत्ति) के विकास पर रहा है जो सांसारिक उपलब्धियों और चिन्तनो को पार कर जाता है। इसलिए प्रो. गौकाक का प्रयुक्त सम्प्रत्यय ''ट्रांसीडेन्टल आइडियलिज्म'' जो आदर्शवाद का सर्वोच्च सत्ताधारी रूप है, साई बाबा की विचारधारा के लिए सर्वथा उचित और युक्तिसगत है।

साई शिक्षा एवं यथार्थवाद

आज का युग प्रतियोगिता का युग है। प्रत्येक व्यक्ति को आजीविका के लिए अगणित समस्याओ का सामना करना पड़ता है। वनवासी मुनियो के समान रहने मात्र से जीवन की आवश्यकताएं पूरी नहीं होगी। आज प्रत्येक मनुष्य को जीवन-निर्वाह के लिए रोजी-रोटी कमानी पडती है। साई बाबा ने जीवन की सभी कठोर यथार्थताओं को न्यायपूर्ण ढग से समझा है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी में उन्नति और विस्तार, ज्ञान भण्डार में अति वृद्धि, आधुनिकीकरण के लिए माग, आधुनिक जीवन, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक क्षेत्र मे विश्व स्तर पर प्रचलित तौर-तरीके। अतः साई बाबा ने विज्ञान, गणित, कॉमर्स, चिकित्साशास्त्र, कम्प्यूटर विज्ञान तथा

व्यावसायिक पाठ्यक्रमो को भी स्वीकार किया है। श्री सत्य साई शिक्षा संस्थान के प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालय कक्षाओ तक के पाठ्यक्रम से स्पष्ट होता है कि इन पाठ्यक्रमो मे व्यावहारिकता का बडा स्थान है जो वर्तमान युग की एक बडी माग है।

साई शिक्षा एवं पुनर्रचनावाद

यद्यपि साई बाबा ने वर्तमान शिक्षा प्रणाली की बहुत आलोचना की है किन्तु उन्होने अति कठोर स्थिति नही अपनाई जिस प्रकार रेमर ने "स्कूल इज डेड" एव इवान डी इलिच ने "दि स्कूलिग सोसाइटी" जैसी स्थिति के बारे में। बाबा यह नहीं चाहते कि भारतीय शिक्षा प्रणाली के वर्तमान ढांचे को बिल्कुल तोड़ डाला जाए, जड से उखाड़ फेका जाए और पुन· प्रारम्भ से बनाया जाए, क्योकि यह न तो सम्भव है और न ही बुद्धिसगत। वे चाहते है कि शिक्षा प्रक्रिया में रचनात्मकता, नवीनीकरण, मेल-मिलाप और आध्यात्मिकता का प्रवेश कराया जाए जिससे जीवन-मूल्यो और गुणवत्ता का शिक्षा प्रणाली मे पदार्पण हो सके। क्योकि आध्यात्मिकता के बिना भौतिकतावादी जगत कागज के फूल सदृश है जिसमे सहज सुगन्ध नहीं होती और अपने संदेश के प्रसारण की आन्तरिक शक्ति नहीं होती।

साई शिक्षा एवं भविष्यवाद

साई बाबा का विशेष बल वर्तमान काल पर ही है किन्तु वे भविष्य के महत्व को पूर्णतया नकारते नहीं है। पिछले पचास वर्षो में टाफलर ने "फ्यूचर शाक" और कई अन्य भविष्यवादियो ने भविष्यवाद को शिक्षा मे काफी उभारा है। बाबा की विचारधारा मे भी इसका पर्याप्त स्थान है। शिक्षा जगत में आधुनिक पाठ्यक्रम के विज्ञान, गणित, कम्प्यूटर एवं प्रबन्धन विषय हमारे भविष्य मे परिवर्तन लाने वाले अभिकर्ता व्यक्ति तैयार करेंगे। ये लोग भविष्य का धक्का सहन किए बिना सुगमता से कार्य कर सकेंगे क्योकि समाज बहुत तेजी से बदलता जा रहा है। श्री सत्य साई संस्थान में आध्यात्मिक, नैतिक, समाज सेवा सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त किए युवक सम्पूर्ण विश्व मे मार्गदर्शन और परिवर्तन लाने वाले मेधावी युवक होगे, ऐसी अपेक्षा है।

साई दर्शन का शिक्षा में स्थान

शिक्षा के उद्देश्य

शिक्षा के उद्देश्य शैक्षिक मूल्य से सम्बन्धित होते है। ब्रूबेकर के अनुसार शैक्षिक मूल्य के निर्धारण मात्र से ही शिक्षा के उद्देश्य निश्चित कर सकते है। साई शिक्षा बालक के समस्त स्वरूप को सामने रखकर चलती है और उसके व्यक्तित्व के सभी अगों पर कार्य करती है— शारीरिक, बौद्धिक, भावात्मक, आध्यात्मिक और मनोस्थिति सम्बन्धी। शिक्षा का परिणाम यह होना चाहिए जो व्यक्तिमात्र को दृष्टिदोष से मुक्त करे अथवा दृष्टि को पवित्र बनाए। इसको नैतिक और आध्यात्मिक प्रवल आकाक्षाओं को संयोजित करना है और सुचरित्र सुनिश्चित करना है। बाबा के अनुसार शिक्षा का अर्थ है वह प्रकाश जो चारो ओर छाए हुए अन्धकार को दूर कर सके। वह शक्ति जो मनुष्य मात्र को ईश्वरीय रूप मे सुविकसित, सुपरिवर्तित करे, शिक्षा के रूप में वह प्रकट और अभिव्यक्त होनी चाहिए। इस प्रकार साई बाबा के शिक्षा के उद्देश्य बड़े सहज, संग्रहणीय और प्रबोधनीय हैं।

शिक्षा का स्वरूप

बाबा शिक्षा के उस वर्तमान स्वरूप का विरोध करते हैं जो नारे लगाओ, रटो, पुनरावृत्ति करो और दूसरे की कही बात कहो, जिसमे विद्यार्थी क्रियाशीलता, सक्रियता, रचनात्मकता, नवीनीकरण, आत्मप्रेरणा से कही दूर पड़ जाता है, पर बल देते है। पावलो फ्रेरे (पेडागॉजी ऑफ अप्रेस्ड) सुधार के पक्षधर हैं। वे चाहते है कि शिक्षा बालको मे इस प्रकार की चेतना जगा दे कि वे समाज की वास्तविक स्थिति को पहचान सके एवं समाज मे फैली विषमताओ को उखाड फेकने के लिए कटिबद्ध हो जाएं। साई बाबा लोगों की भावनाओ को ध्यान, आत्मनिरीक्षण, जीवन मूल्यो के सचयन, पोषण, उदाहरणों और ऐसे ही दूसरे माध्यमों से जागृत करना चाहते हैं जिससे वे स्वत· ही प्रेरित होकर समाज सेवार्थ कार्य कर

सके। यह कार्य सत्य, औचित्य, शान्ति, प्रेम तथा अहिंसा के आदर्शों के द्वारा होना चाहिए। अत. साई दर्शन पर आधारित ''आत्म परिष्कार की शिक्षा'' सर्वथा एक पूर्ण शिक्षा है।

शिक्षण एवं सीखने की पद्धति

शिक्षण और सीखने की पद्धतियों के लिए बाबा के दो उद्धरण प्रासगिक है– अध्यापक और छात्रो का एकीभाव होकर पढ़ना, सीखने की पद्धति का लक्ष्य बिन्दु है। दूसरा शिक्षा में अन्तर्विषय समन्वय की आवश्यकता है जिससे एक विषय से दूसरे विषय को समझा जा सके तथा दोनो विषयो मे सम्वन्ध भी ठीक प्रकार समझा जा सके। दोनो उद्धरण वास्तव मे ऐसे सूत्र हैं जिनमें उत्तम शिक्षण पद्धति का रहस्य छिपा हुआ है। ये बल देते है कि एक उपयुक्त, सामंजस्यपूर्ण तथा सहयोगात्मक वातावरण वनाने का प्रयत्न करना चाहिए। अन्तर्विषय सम्बन्ध का उपागम केवल शिक्षण मे ही नही अपितु अनुसधान कार्य मे भी होना चाहिए।

पाठ्यक्रम

साई बाबा के अनुसार– ''सारा संसार एक विश्वविद्यालय है''। सांसारिक जीवन के सभी उपयोगी अनुभव और क्रियाएं, आदर्श, नैतिकता, आध्यात्मिकता सभी कुछ पाठ्यक्रम मे सम्मिलित होने चाहिए। मानव मूल्यो का विकास शिक्षा प्रक्रिया का अनिवार्य अंग होना चाहिए। इस प्रकार पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जिसमें भौतिकता एव आध्यात्मिकता का उत्कृष्ट समन्वय हो।

शिक्षार्थी

साई बाबा की शैक्षिक विचारधारा इस दृढ विश्वास के साथ चलती है कि प्रत्येक बालक एक अमृत पात्र है, दिव्य आत्मा स्वरूप है, वह निश्छल, निष्कपट, अत्यन्त सरल, पवित्र व दिव्य व्यक्तित्व है। बाबा शिक्षार्थियो से अपेक्षा रखते है कि वे विनम्र भाव से सेवा के लिए तत्पर हों, दूसरे के कष्ट या संकट में सहानुभूति रखते हुए सेवा में जुट जाएं। इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षार्थी मात्र कोरी स्लेट नहीं है अपितु उसमे जन्मजात शक्तिया होती है जिन्हे केवल पोषित करने की आवश्यकता है।

शिक्षक

साई शिक्षा दर्शन अध्यापक से बड़ी अपेक्षाए रखता है। इस दर्शन के अनुसार अध्यापक मात्र शिक्षा के विषयो को ही नही पढाएगे अपितु छात्रो को उनके नैतिक, सामाजिक व आध्यात्मिक विकास में भी प्रशिक्षित करेगे। बाबा चाहते हैं कि अध्यापक परमात्मा के प्रति समर्पित, श्रद्धालु, परिश्रमी, निर्दोष, निष्कलक चरित्र का हो, शालीन और नैतिक व्यवहार का हो, आध्यात्मिक साधन युक्त हो, बालक से प्रेम करता हो। वह राजनीति व दलबन्दी से दूर हो तथा भय दिखाने और दमन की नीतियों से मुक्त हो। छात्रो की जिज्ञासा को न कुचलता हो। प्रबन्धको एवं व्यवस्थापकों का कर्तव्य है कि अध्यापको के लिए ऐसी परिस्थितिया प्रदान करे।

व्यावहारिक विवेचन

किसी प्रकार का शैक्षिक अनुसधान केवल सैद्धान्तिक अभ्यास नहीं होता वरन् उसके आधार पर कुछ न कुछ शैक्षिक नव प्रयोग किए जा सकते है। कोई भी शैक्षिक नव प्रयोग कई प्रकार का हो सकता है। आज वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप समाज विषम जटिलताओं में उलझता जा रहा है। शिक्षा प्रणाली से सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों का विच्छेद-सा हो गया है, जिससे शिक्षा अप्रासंगिक, दिशाहीन एव निरर्थक सिद्ध हो रही है। सम्पूर्ण राजनैतिक वातावरण अवमूल्यित हो रहा है। साई बाबा ने 1972 मे एक विचारगोष्ठी में भारतीय शिक्षा की कमियों पर प्रकाश डाला था जो निम्नलिखित हैं–

- ☐ शिक्षा सस्थाओं मे विप्लव एवं उपद्रव।
- ☐ सृजनात्मकता की कमी।
- ☐ जीवन मूल्यो के साथ खिलवाड़।
- ☐ धन शक्ति की सर्वोच्चता।
- ☐ छात्रो मे सामूहिक शक्ति की अयोग्यता।
- ☐ छात्रो का राजनीतिक शक्ति द्वारा प्रेरित, प्रदर्शनवादी, विलासी और मनमौजी होना।

- पाठ्यक्रम का सदेहपूर्ण एवं मानव जीवन से असम्बद्ध होना।
- अवाछनीय मागे लेकर होने वाले आन्दोलन।
- भ्रम, अविश्वास और असन्तोष।
- शिक्षा प्रणाली में आध्यात्मिकता के विकास के लिए कोई प्रावधान न होना।

उपरोक्त पृष्ठभूमि मे श्री सत्य साई बाबा के विचारो का व्यावहारिक मूल्य है जिससे भारत की शिक्षा में फैली सकटपूर्ण स्थिति को सुधारा व सुलझाया जा सकता है तथा साथ ही साथ अन्य विकासशील एवं विकसित देशों का मार्गदर्शन किया जा सकता है।

कोई भी दर्शन तथा उसका प्रणेता इसलिए महान होते है क्योकि समाज या राष्ट्र के सामने जब कोई संकट उपस्थित होता है तब उस दर्शन के आलोक मे संकट से उबरने का मार्ग स्वत. ही प्रशस्त हो जाता है। श्री सत्य साई बाबा का शिक्षा दर्शन भारत देश के लिए ही नही बल्कि समूचे विश्व के लिए कल्याणकारी है। आज जो हमारी समस्याएं हैं, वे चाहे शैक्षिक, आर्थिक या राजनैतिक हो इन सभी में हमारी स्वयं की कमजोरी उजागर होती है। सच तो यह है कि मात्र हम कानूनी सरक्षण पर ही निर्भर रहे है। साई बाबा ने शिक्षा और व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता को एक-दूसरे का पर्याय माना है। इन्होंने व्यक्ति की सर्वोच्च नैतिकता के विकास के उपकरण के रूप में शिक्षा को स्वीकार किया है। निष्कर्षत- यह कहा जा सकता है कि स्वावलम्बी, सच्चरित्र, विनयशील, करुणायुक्त, दयावान, अहिंसक, प्रेम, शान्ति, सहअस्तित्ववादी, लोककल्याणकारी आदि गुणों से युक्त मानव का निर्माण शिक्षा ही कर सकती है। इस प्रकार हम इस परिणाम पर पहुंचते है कि साई बाबा की शिक्षा की विचारधारा एक क्रियात्मक जीवन दर्शन है जो समाजशास्त्रीय आधार पर टिकी है, जिसमे आदर्शवाद, यथार्थवाद, पुनर्निर्माणवाद एवं भविष्यवाद का सम्मिश्रण है व जिसका आधार सार्वभौमिक मानवीय मूल्य है।

शोध हेतु सुझाव

शोधकर्ता का यह नैतिक दायित्व होता है कि वह शोध के पूर्ण होने पर नवीन शोध समस्याओ को प्रस्तुत करे जिससे कि इस क्षेत्र के अन्य शोधकर्ताओ को शोधदृष्टि मिल सके। इस सदर्भ मे भावी शोधकर्ता निम्न बिन्दुओ पर अपना ध्यान केन्द्रित कर सकते है—

- श्री सत्य साई बाबा के शिक्षा दर्शन की अन्य भारतीय शिक्षा दार्शनिको के शिक्षा दर्शन की पाश्चात्य शिक्षा दर्शन से तुलना करना।
- साई शिक्षा दर्शन की पाश्चात्य शिक्षा दर्शन से तुलना करना।
- साई शिक्षा दर्शन की भविष्य मे उपादेयता का अध्ययन करना।
- साई शिक्षा प्रणाली में निहित मानवीय मूल्यो का अध्ययन करना।
- साई बाबा की शिक्षा योजना के आधार पर नए शैक्षिक नवाचारों को अभिकल्पित करने की सम्भावना का अध्ययन करना।
- विभिन्न सचार माध्यमों में अभिव्यक्त साई विचारों का आलोचनात्मक परीक्षण।
- साई शिक्षा सस्थाओं मे मूलभूत रूप से विद्यमान शिक्षा में मानवीय मूल्य से सम्बन्धित विचारों एव व्यवहारो का अन्यान्य प्राचीन एव नवीन मूल्य परक शिक्षा संस्थाओ से तुलनात्मक अध्ययन।
- साई शिक्षा मे निहित राष्ट्रीय एकीकरण सम्बन्धी विचारों की उपादेयता का अध्ययन।
- साई शिक्षा के मूल में निहित अन्तर्राष्ट्रीयता एव विश्वबन्धुत्व के भाव का सम्यक् अध्ययन व विश्व शान्ति में उनके योगदान का मूल्यांकन। ❑❑

सतीशचन्द्र स्नातकोत्तर महाविद्यालय
बलिया, उत्तर प्रदेश

पंचवर्षीय योजनाएं और माध्यमिक शिक्षा की प्रगति

❐ अभिनव सिंह

प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56) से पूर्व सम्पूर्ण भारत में माध्यमिक स्कूलों की कुल संख्या 7,288 थी जो प्रथम योजना के अन्त में 10,838 हो गई थी। इस योजना के दौरान माध्यमिक शिक्षा का पुनर्गठन किया गया। पाठ्यक्रम नवीकरण पर कुछ नए विषय सम्मलित किए गए। कुछ माध्यमिक विद्यालयों को बहुउद्देशीय माध्यमिक विद्यालयों में परिवर्तित किया गया। लगभग 3550 नए माध्यमिक विद्यालय खोले गए। इस प्रकार 14-17 आयु-वर्ग के 7.4 प्रतिशत बच्चों को माध्यमिक स्तर की शिक्षा सुलभ कराई गई। यद्यपि इस प्रगति को बहुत संतोषजनक नहीं माना जा सकता तथापि स्वतंत्र भारत में यह पहला प्रयास होने के कारण इसने मार्गदर्शन का कार्य किया। इस योजना में माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए 20 करोड़ रुपए व्यय किए गए।

भारतीय शिक्षा के विकास मे हमारी पंचवर्षीय योजनाओ मे निर्धारित लक्ष्यो की अहम् भूमिका रही है। किसी भी लक्ष्य की प्राप्ति में योजनाबद्ध तरीके से चलकर ही उस लक्ष्य तक पहुचा जा सकता है। यह आयोजन आखिर है क्या? सामान्य शब्दों मे भविष्य मे कार्य करने के लिए निर्णयो का एक समुच्चय तैयार करने तथा उनके क्रियान्वयन का ढग निर्धारित करने की प्रक्रिया को आयोजन कह सकते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि किसी देश की भविष्य की आवश्यकताओं और आकांक्षाओ का आकलन करके उनकी प्राप्ति के लिए कार्यक्रम तैयार किए जाते है। इन कार्यक्रमो को तैयार करते समय उनकी पूर्ति हेतु आवश्यक ससाधनों का प्रावधान किया जाता है। किसी योजना को पूर्ण करने मे संसाधनों को जुटाना अत्यन्त आवश्यक है। यदि ससाधन उपलब्ध नहीं कराए जाएं तो योजना केवल कागज पर अंकित आंकड़ों तक ही सीमित रह जाएगी। इन ससाधनों मे केंद्र सरकार तथा राज्य सरकार दोनों की ही भागीदारी होती है। किन्तु वस्तु स्थिति यह है कि राज्य या प्रान्तीय सरकार शिक्षा के लिए जो बजट तैयार करती है उसका 90 प्रतिशत से अधिक धन तो शिक्षा जगत से जुडे कर्मचारियो के वेतन पर ही व्यय हो जाता है। इस स्थिति मे शिक्षा के विकास की बात तो सोची ही नही जा सकती। अत हमारे देश मे स्वतंत्रता के पश्चात् शिक्षा का जो भी विकास हुआ है वह केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्यो को दी गई आर्थिक सहायता से ही संभव हो सका है। केन्द्रीय सरकार यह सहायता पंचवर्षीय योजनाओ में निश्चित करती है जो विभिन्न राज्यों में शिक्षा के प्रचार-प्रसार पर व्यय की जाती है। दूसरे शब्दों मे यह भी कह सकते हैं कि राज्यो में शिक्षा के विकास हेतु केन्द्रीय सरकार द्वारा पंचवर्षीय योजनाओ में आबंटित बजट का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। माध्यमिक शिक्षा के विकास में, जैसा कि आकड़ों से ज्ञात होता है, इन योजनाओ का योगदान सराहनीय रहा है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56) से पूर्व सम्पूर्ण भारत में माध्यमिक स्कूलो की कुल संख्या 7,288 थी जो प्रथम योजना के अन्त में 10,838 हो गई थी। इस योजना के दौरान माध्यमिक शिक्षा का पुनर्गठन किया गया।

पाठ्यक्रम नवीकरण पर कुछ नए विषय सम्मलित किए गए। कुछ माध्यमिक विद्यालयो को बहुउद्देशीय माध्यमिक विद्यालयो में परिवर्तित किया गया। लगभग 3550 नए माध्यमिक विद्यालय खोले गए। इस प्रकार 14-17 आयु-वर्ग के 7 4 प्रतिशत बच्चो को माध्यमिक स्तर की शिक्षा सुलभ कराई गई। यद्यपि इस प्रगति को बहुत संतोषजनक नही माना जा सकता तथापि स्वतत्र भारत मे यह पहला प्रयास होने के कारण इसने मार्गदर्शन का कार्य किया। इस योजना मे माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए 20 करोड़ रुपए व्यय किए गए।

द्वितीय पचवर्षीय योजना (1956-61) मे माध्यमिक स्तर की शिक्षा का लक्ष्य निर्धारित करते समय इसका पुनर्गठन, नए और विविध पाठ्यक्रमो का आरम्भ, प्रत्येक प्रान्त मे कुछ माध्यमिक विद्यालयो को बहुद्देशीय माध्यमिक विद्यालयों के रूप में विकसित करना, नए माध्यमिक विद्यालय खोलकर 14-17 आयु-वर्ग के 11 प्रतिशत बच्चो को माध्यमिक शिक्षा सुलभ कराना प्रमुख रूप से ध्यान मे रखा गया।

इन लक्ष्यो की प्राप्ति हेतु लगभग 6500 नए माध्यमिक विद्यालय खोले गए और 1900 माध्यमिक विद्यालयो को बहुद्देशीय माध्यमिक विद्यालयो के रूप मे विकसित किया गया। इस योजना के अन्त तक इन विद्यालयो मे लगभग 3,46,300 छात्रों अर्थात् 14-17 आयु-वर्ग के 11 प्रतिशत छात्रों को शिक्षा सुलभ कराई गई। यही इस योजना का लक्ष्य भी था। इस योजना में माध्यमिक शिक्षा को समुन्नत बनाने के लिए 51 करोड़ रुपए व्यय किए गए। अतः माध्यमिक स्तर की शिक्षा की प्रगति सतोषजनक रही।

तीसरी पचवर्षीय योजना (1661-66) पर यदि दृष्टिपात करे तो ज्ञात होता है कि इस योजना मे शैक्षिक योजनाओ पर 589 करोड़ रुपए व्यय किए गए जिनमें से 103 करोड़ रुपए माध्यमिक शिक्षा पर व्यय किए गए। इस योजना के लक्ष्यो में 14-17 आयु-वर्ग के 16 प्रतिशत बच्चो के लिए माध्यमिक विद्यालय खोलना तथा 450 माध्यमिक विद्यालयो को बहुद्देशीय विद्यालयों मे परिवर्तित करना था। साथ ही माध्यमिक स्तर पर दी जाने वाली विज्ञान शिक्षा को उन्नत बनाना भी इस योजना का उद्देश्य था।

इस योजना के अत तक माध्यमिक विद्यालयो की सख्या 17,257 से बढ़कर 27,477 हो गई थी। अत इस योजना के दौरान 10 हजार से अधिक नए माध्यमिक विद्यालय खोले गए। कई नए बहुद्देशीय माध्यमिक विद्यालय खोले गए और कुछ माध्यमिक विद्यालयों को उच्चतर माध्यमिक विद्यालय स्तर तक विकसित किया गया। इस योजना मे जहा एक ओर माध्यमिक स्तर की परीक्षाओ को सुधारने का प्रयास किया गया वहीं दूसरी ओर शिक्षको के प्रशिक्षण मे भी सुधार और विस्तार किया गया।

चतुर्थ पचवर्षीय योजना (1969-74) मे माध्यमिक विद्यालयो की संख्या 40,127 हो गई थी और इस योजना मे माध्यमिक शिक्षा के उन्नयन एवं विस्तार के लिए 195 करोड रुपए व्यय किए गए। इस स्तर पर विविध पाठ्यक्रम आरम्भ किए गए और विशेष रूप से बालिकाओं की शिक्षा सुविधाओं मे विस्तार किया गया। लगभग 12 हजार नए माध्यमिक विद्यालय खोले गए और बहुद्देशीय माध्यमिक विद्यालयों को उन्नत किया गया। इतना ही नही, इस योजना मे माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण करने पर अधिक बल दिया गया। किन्तु इस योजना मे जहा 14-17 आयु-वर्ग के 22 प्रतिशत बच्चो को शिक्षा सुविधाए उपलब्ध कराने का लक्ष्य निश्चित किया गया था, वह पूरा नही हो सका और यह लक्ष्य 18 प्रतिशत तक सिमट कर रह गया। किन्तु जितने अधिक माध्यमिक विद्यालय इस योजना मे खोले गए उनको देखते हुए प्रगति सतोषजनक रही।

माध्यमिक शिक्षा को एक नया रूप देने की दृष्टि से पांचवी पचवर्षीय योजना (1974-79) एक महत्वपुर्ण योजना थी। इस दृष्टि से इसके मुख्य उद्देश्य थे—

- सम्पूर्ण देश मे 10+2+3 शिक्षा सरचना लागू करना।
- माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण करना।
- माध्यमिक शिक्षा का स्तर ऊचा उठाने के लिए पाठ्यक्रम एव परीक्षा प्रणाली मे सुधार करना।
- बालिकाओ के लिए नए माध्यमिक विद्यालय खोलना।

इन उद्देश्यो को ध्यान मे रखते हुए माध्यमिक शिक्षा के उन्नयन के लिए इस योजना में 156 करोड़ रुपए व्यय किए गए। अधिकाश प्रान्तो में 10 + 2 शिक्षा

संरचना लागू की गई और अधिकतर प्रान्तों में माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण भी किया गया। कार्यानुभव को माध्यमिक शिक्षा का अनिवार्य अग बनाया गया। माध्यमिक शिक्षा का प्रसार किया गया जिसके लिए लगभग 10,000 नए विद्यालय खोले गए। जिनमे एक बडी बाधा बालिका विद्यालयों की संख्या थी। अधिकांश विद्यालयों मे विज्ञान किटें उपलब्ध कराई गई तथा अच्छे पुस्तकालयों एव आवश्यक परीक्षण सामग्री की व्यवस्था की गई। इन विद्यालयो के शिक्षक-प्रशिक्षण पर भी बल दिया गया।

छठी पंचवर्षीय योजना मे (1980-85) मे माध्यमिक शिक्षा के लिए 559 करोड़ रुपए आबटित किए गए। यह भी निश्चित किया गया कि माध्यमिक शिक्षा को रोजगारपरक बनाने के लिए व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा का अधिक से अधिक प्रसार किया जाए। इस स्तर के पाठ्यक्रम को राष्ट्रीय एकता, धर्मनिरपेक्षता, लोकतन्त्र और श्रम के प्रति निष्ठा उत्पन्न करने के योग्य बनाने का भी प्रयास किया जाए। अतः इस योजना के दौरान माध्यमिक विद्यालयों की संख्या बढकर 58,834 हो गई। व्यावसायिक पाठ्यक्रमों मे वृद्धि की गई और विज्ञान शिक्षा सुदृढ़ बनाई गई।

शिक्षा संबंधी समस्याओ पर गम्भीरता से विचार करने और उनमे आवश्यक सुधार करने की दृष्टि से 1985 में "शिक्षा की चुनौती नीति के परिप्रेक्ष्य में" (Challenge of Education : A Policy Perspective) नाम से एक दस्तावेज प्रकाशित किया गया जिसको आधार बनाकर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 तैयार की गई।

सातवीं पचवर्षीय योजना (1985-90) मे माध्यमिक शिक्षा पर 1832 करोड रुपए व्यय किए गए। इस योजना मे 5000 माध्यमिक विद्यालयो में व्यावसायिक शिक्षा की समुचित व्यवस्था करने तथा 500 नवोदय विद्यालय खोलने का लक्ष्य रखा गया। माध्यमिक विद्यालयो मे विज्ञान शिक्षा, पर्यावरण शिक्षा तथा जीवन-मूल्यों की शिक्षा की व्यवस्था करने का भी एक उद्देश्य निर्धारित किया गया। नए माध्यमिक विद्यालय खुलने के परिणामस्वरूप इस योजना के अत तक माध्यमिक विद्यालयों की संख्या बढ़कर 76,119 हो गई और इन विद्यालयों मे अध्ययनरत छात्र-छात्राओ की सख्या 1,99,70,000 हो गई। शिक्षकों के प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था की गई जिसके लिए पत्राचार पाठ्यक्रम भी चलाए गए।

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) मे माध्यमिक शिक्षा पर 3498 करोड़ रुपए व्यय किए गए और इस योजना के अंत में माध्यमिक विद्यालयो की सख्या 1,02,183 हो गई। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयो के केंद्रों की सख्या भी 670 हो गई थी। इस योजना के बीच अधिकाश माध्यमिक विद्यालय पिछड़े क्षेत्रो मे जैसे ग्रामीण क्षेत्र, अनुसूचित जनजाति क्षेत्र तथा वनाचलो मे खोले गए। बालिकाओ के लिए भी अलग माध्यमिक विद्यालयों की सख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। जहा एक ओर 1775 माध्यमिक विद्यालयो की विज्ञान प्रयोगशालाओ को उन्नत बनाने के लिए विशेष आर्थिक सहायता दी गई वही दूसरी ओर 14734 माध्यमिक विद्यालयो के पुस्तकालयों के विकास और उनमे पुस्तको की वृद्धि के लिए भी अलग से धन आबटित किया गया। माध्यमिक विद्यालयो के शिक्षको के प्रशिक्षण मे सुधार करने के लिए 'राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद्' को सवैधानिक दर्जा दिया गया। इस परिषद् ने अपने क्षेत्रीय कार्यालय खोलकर कार्यो का विस्तार किया। शिक्षक शिक्षा परिषद् ने शिक्षकों को प्रशिक्षण देने वाले बी एड कालेजो के लिए मानक तैयार कर उनकी दशा सुधारने और उन्हे मानको के अनुरूप बनाने के उत्कृष्ट कार्य को गति प्रदान की।

नवी पचवर्षीय योजना (1997-2002) मे माध्यमिक शिक्षा के लिए 2603 5 करोड रुपए का प्रावधान किया गया जो वास्तव मे आठवी पंचवर्षीय योजना से 894.5 करोड़ कम था। यद्यपि इस योजना मे शिक्षा के लिए आठवीं पचवर्षीय योजना से लगभग 780 करोड़ रुपए का अधिक प्रावधान किया गया तथापि माध्यमिक स्तर की शिक्षा का प्रावधान कम कर दिया गया। इसका मुख्य कारण यह था कि सन् 2002 तक 6-14 आयु-वर्ग के शत-प्रतिशत बच्चो को प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने पर अधिक बल दिया गया। अत प्राथमिक शिक्षा के लिए अधिक धन आबंटित किया गया।

इस योजना मे भी अनेक माध्यमिक विद्यालय खोले गए। नए विद्यालय खोलने में, आठवी योजना की भाति, ग्रामीण क्षेत्रो, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति वाले क्षेत्रों तथा बालिकाओ को प्राथमिकता दी गई। ऐसे

बच्चो के लिए छात्रावास भी खोले गए। मुक्त शिक्षा की सुविधाए बढाने के लिए राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयो के केन्द्रों का विस्तार किया गया। अब ये केन्द्र देश के सभी भागो में उपलब्ध है। जो बच्चों को दसवी तथा बारहवी की परीक्षाओ की सुविधाए उपलब्ध कराते है। सन् 2000 मे इस स्तर के पाठ्यक्रम मे सुधार किया गया जिसमे व्यावसायिक शिक्षा तथा शैक्षिक तकनीकी पर बल दिया गया है। माध्यमिक स्तर के अध्यापको के सेवा-पूर्व एव सेवारत कार्यक्रमो मे सुधार किया गया। भारत की प्राचीन संस्कृति के संरक्षण और जीवन-मूल्यो को भी नए पाठ्यक्रम मे महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

ध्यान देने की बात यह है कि अतिम अर्थात् नवी पचवर्षीय योजना को छोड़कर सभी योजनाओ मे माध्यमिक शिक्षा के लिए आबटित व्यय मे निरतर वृद्धि होती चली गई। किन्तु परिणाम उन लक्ष्यो को कभी भी पूरा नही कर पाए जो निर्धारित किए गए थे। योजना बनाने वालों के उद्देश्य सकारात्मक थे और उनकी पूर्ति हेतु ससाधन जुटाने के प्रयासो में भी कोई कमी नही रखी गई। किन्तु निर्धारित लक्ष्यो तक पहुंचने में फिर भी सफलता नहीं मिली। इस के कई कारण रहे है। पहला कारण है भारत की जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि होना। जनसंख्या की इस वृद्धि के कारण पंचवर्षीय योजना के अंत तक पहुचते-पहुचते निर्धारित लक्ष्य धराशायी होते रहे हैं। यह भारत की एक गभीर समस्या है। यदि इस समस्या का हल नही खोजा गया तो शिक्षा ही क्या किसी भी क्षेत्र मे सफलता पाना निहायत कठिन कार्य होगा।

दूसरी समस्या है राष्ट्रीय चरित्र की। अधिकाश भारतीयों में राष्ट्रीय भावनाओ का अभाव पाया जाता है। राजनेता हो या राज्य कर्मचारी, शिक्षक हो या अभिभावक, न्यायदाता हो या न्यायपाता, सभी की सीमाओ मे और मेरा परिवार तक सिमटकर रह गई है। सभी के मन मे एक ही भावना रहती है— मुझे मेरे देश से क्या मिल सकता है? मै अपने देश के लिए क्या कर सकता हू?— यह सकल्पना लुप्तप्राय हो गई है। 'पाने से अधिक आनन्द देने में है', भारतीय सस्कृति का यह मूलमत्र हम भूल गए है। यह देना व्यक्ति के लिए हो, समाज के लिए हो अथवा राष्ट्र के लिए हो, इसमे मानसिक शान्ति और सतुष्टि का जो भाव जागृत होता है, वह अतुलनीय है। यही कारण है कि शिक्षा जगत मे भी जितना व्यय शिक्षा के उन्नयन और प्रचार-प्रसार पर किया गया उसके वाछनीय परिणाम नही हुए। ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा जैसे मूल्य शायद आम आदमी के जीवन से दूर हो गए हैं। इसीलिए हम अपने दायित्वो, कर्तव्यो को भूल केवल अधिकारो की ही बात करते है। केवल धन व्यय करके ही किसी कार्य को सफल नही बनाया जा सकता अपितु ससाधनो तथा मानवशक्ति का ईमानदारी और परिश्रम से सही उपभोग ही किसी योजना को सफल बना सकता है। यही बात शिक्षा के क्षेत्र मे भी खरी उतरती है।

तीसरा कारण है योजना बनाते समय विभिन्न स्तरो के लिए धन का गलत आबटन। उदाहरण के लिए उच्च शिक्षा पर जितना धन व्यय किया गया है उसे कम करके प्राथमिक शिक्षा के प्रसार तथा माध्यमिक शिक्षा के व्यावसायीकरण पर व्यय किया जाता तो परिणाम सुखद होते। वास्तव मे उच्च शिक्षा के प्रचार-प्रसार को सीमित करके प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य एव नि:शुल्क बनाने तथा माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण करने पर अधिक बल देना चाहिए था। यदि ऐसा होता तो आज भारत के 6-14 आयु-वर्ग के सभी बच्चे शिक्षित होते और उच्चतर माध्यमिक स्तर के बाद बेरोजगारी की समस्या भी कम से कम रहती। उच्च शिक्षा केवल मेधावी और योग्य बच्चो के लिए ही सुलभ कराई जाती तो 'व्हाइट कॉलर जॉब' की कमी न होती।

इस सबके बावजूद यह मानना ही पड़ेगा कि पंचवर्षीय योजनाओ के कारण भारत मे माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र मे काफी प्रगति हुई है। यदि ससाधनो की कमी और जनसंख्या मे यह अतुलनीय वृद्धि न हुई होती तो यह प्रगति और भी संतोषजनक होती। ❑❑

अकबरपुर डिग्री कालेज
अकबरपुर, कानपुर देहात, उत्तर प्रदेश

प्रयोगशाला आधारित कार्यों में कम्प्यूटर की भूमिका

❒ नौशाद हुसैन

कम्प्यूटर के माध्यम से प्रयोगशाला आधारित कार्यो की उपरोक्त कमियों को दूर किया जा सकता है तथा इसके माध्यम से प्रायोगिक अभ्यास कार्यो को छात्रों और शैक्षिक प्रणाली के लिए सार्थक बनाया जा सकता है। यहां यह बात ध्यान रखने योग्य है कि छात्र को प्रयोगशाला में ही अपना वास्तविक प्रायोगिक कार्य करना होता है। कम्प्यूटर के माध्यम से हम छात्र को प्रयोगशाला में प्रयोग के लिए तैयार करते हैं।

प्रत्येक विषय के ज्ञान को दो भागों मे बांटा जा सकता है– सैद्धान्तिक ज्ञान तथा प्रयोगात्मक ज्ञान। किसी भी विषय की समझ के लिए जहा सैद्धान्तिक ज्ञान प्रथम शर्त है वहीं प्रयोगात्मक ज्ञान इस प्राप्त किए गए सैद्धान्तिक ज्ञान को परखने या जांचने का एक तरीका है। प्रयोगात्मक कार्यो में निपुणता की प्राप्ति ही सच्चे ज्ञान प्राप्ति की द्योतक है। प्रयोगात्मक कार्यो में सफलता प्राप्ति के पश्चात् ही बालक मे विषय के प्रति समझ, चिन्तन तथा आत्मविश्वास की वृद्धि होती है। विषय के गूढ़ तथा अनसुलझे रहस्यो को प्रयोगात्मक कार्यो के द्वारा ही सुलझाया जा सकता है। इस तथ्य से कोई भी शिक्षक, अभिभावक, शैक्षिक योजना निर्माता तथा सरकार इन्कार नही कर सकते कि बालक को भावी जीवन के अनुकूल बनाने मे व्यावहारिक ज्ञान का विशेष महत्व होता है तथा इस व्यावहारिक ज्ञान की प्राप्ति के लिए बालको को प्रयोगशाला में अधिक-से-अधिक करके सीखने के अवसर प्रदान किए जाए। परन्तु यह बड़ा ही चिन्तन का विषय है कि प्रयोगात्मक कार्यो के महत्व को समझते हुए भी आज विद्यालयो मे प्रयोगशाला संबंधी कार्यो के प्रति कितनी उदासीनता बरती जा रही है, यह तथ्य हमसे छुपा नही है। अगर प्रयोगशाला कार्यो के प्रति इस उदासीनता का कारण खोजने का प्रयास करें तो सरकार, शिक्षक, योजना निर्माता, पाठ्यक्रम निर्माता, अभिभावक एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप लगाएगे। शिक्षकों से यह प्रश्न पूछने पर एक सामान्य-सा उत्तर यह मिलता है कि छात्र प्रयोगशाला कार्यो मे रुचि नही लेते है जबकि छात्रों का तर्क यह है कि प्रयोगशाला आधारित कार्यो मे नीरसता, शिक्षकों का उपेक्षित व्यवहार तथा प्रयोगशाला कार्यो से पूर्व की तैयारी मे कमी कुछ ऐसे कारण है जिनमें अपेक्षित सुधार ही छात्रो की प्रयोगशाला कार्यो मे रुचि को बढ़ा सकता है। हममे से प्रत्येक शिक्षक का यह कर्तव्य है कि वह छात्रों को व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करने हेतु निरन्तर प्रयासरत रहे तथा छात्रो के सैद्धांतिक पक्ष को मजबूत करने के साथ-साथ उनके प्रयोगात्मक पक्ष को भी मजबूत बनाए। उपरोक्त यह स्पष्ट किया जा चुका है कि अधिकाश विद्यालयों मे प्रयोगात्मक कार्यो को ठीक ढग से संचालित नहीं किया जा रहा है।

एक सामान्य-सा प्रश्न यह उठता है कि आखिर ऐसे कौन-कौन से तत्व हैं जिनके कारण विद्यालयो मे ठीक ढंग से प्रयोगात्मक कार्य सम्पादित नही हो रहे है। आइए इस प्रश्न पर थोडा विचार करते हैं कि आखिर विद्यालयो में प्रयोगात्मक कार्यो के क्रियान्वयन मे कौन-कौन से बाधक तत्व आते हैं तथा बालको को किस प्रकार पहले से प्रयोगशाला कार्यों के लिए तैयार किया जाए।

वर्तमान प्रयोगशाला आधारित कार्यो की प्रमुख कमियां

- छात्र उस आवश्यक ज्ञान तथा कौशलों के साथ प्रयोगशाला मे नही जाते है जिसकी आवश्यकता प्रयोग करने के दौरान होती है। प्रयोग के पीछे कौन-सा सिद्धान्त काम कर रहा है? प्रयोग के दौरान कौन-कौन से उपकरण प्रयोग करने हैं? प्रयोग का अभिकल्प कैसे तैयार करना है? प्रयोग के दौरान कौन-कौन सी आवश्यक सावधानिया बरतनी चाहिए? किस प्रकार आवश्यक डाटा को एकत्र करना है? एकत्र डाटा का विश्लेषण किस प्रकार करना है? विश्लेषण के पश्चात् किस प्रकार निष्कर्षो की व्याख्या की जाए? इत्यादि कुछ महत्वपूर्ण बातों को ध्यान मे नही रखा जाता है। परिणामस्वरूप छात्र यांत्रिक तरीके से प्रयोगशाला मे कार्यो को करते है। परिणामस्वरूप प्रयोग करने के पश्चात् छात्रों को इस बात की स्पष्ट जानकारी प्राप्त नही हो पाती कि उन्होने इस प्रयोग के पश्चात् कौन से प्रयोगात्मक कौशलो मे निपुणता प्राप्त की है।
- अधिकतर छात्र प्रयोग को करने मे केवल औपचारिकता निभाते है। वे अक्सर प्रयोग किए बगैर ही प्रयोगो के परिणामो की नकल कर लेते है या फिर उनमें अपने स्तर से कुछ घटा-बढा देते है। कक्षा के प्रत्येक छात्र ने ठीक प्रकार प्रयोग को किया है अथवा नही इस बात की स्पष्ट जानकारी शिक्षक को नहीं होती है।
- कक्षा में शिक्षक-छात्र के असतुलित अनुपात के कारण शिक्षक छात्रो को प्रदर्शन विधि के माध्यम से प्रयोग करके दिखाता है। यह प्रदर्शन कुल प्रयोगात्मक कार्यो का 15% से 20% समय ले लेता है किन्तु निम्नलिखित कारणो की वजह से उसका वास्तविक लाभ छात्रों को नही मिल पाता है–

★ प्रदर्शन विधि के माध्यम से छात्रों को केवल अभिकल्प को देखने भर की जानकारी प्राप्त हो जाती है। स्वयं प्रयोग करने के दौरान आने वाली बाधाओ का निराकरण नही हो पाता है।

★ प्रदर्शन विधि के द्वारा समझाने तथा प्रयोगशाला मे प्रयोग करने के बीच का अन्तर अधिक होने के कारण छात्र प्रयोग से संबंधित समस्त जानकारियों को याद नहीं रख पाते हैं।

★ अधिकतर प्रयोगो से सबधित सैद्धान्तिक ज्ञान छात्रो को कक्षा मे प्रदान नही किया जाता, परिणामस्वरूप शिक्षक द्वारा प्रयोगो से संबधित व्याख्या निरर्थक हो जाती है।

छात्रों में प्रयोगात्मक कौशलों को विकसित करने में कम्प्यूटर की भूमिका

कम्प्यूटर के माध्यम से प्रयोगशाला आधारित कार्यो की उपरोक्त कमियों को दूर किया जा सकता है तथा इसके माध्यम से प्रायोगिक अभ्यास कार्यो को छात्रों और शैक्षिक प्रणाली के लिए सार्थक बनाया जा सकता है। यहां यह बात ध्यान रखने योग्य है कि छात्र को प्रयोगशाला में ही अपना वास्तविक प्रायोगिक कार्य करना होता है। कम्प्यूटर के माध्यम से हम छात्र को प्रयोगशाला में प्रयोग के लिए तैयार करते है। प्रयोगशाला आधारित संपूर्ण कार्यो का संगठन हम चार प्रकार से कर सकते है तथा इन चारों ही अवस्थाओ मे हम कम्प्यूटर का प्रयोग करते हैं, ये चार अवस्थाएं निम्न है–

- प्रयोगशाला कार्यो का सगठन तथा प्रशासनिक क्रियाए।
- प्रयोगशाला कार्यो से पूर्व की क्रियाए।
- प्रयोगशाला क्रियाए।
- प्रयोगशाला कार्यो के पश्चात् की क्रियाए।

आइए अब हम यह देखते है कि किस प्रकार उपरोक्त चारों अवस्थाओं में कम्प्यूटर का प्रयोग कर छात्रों के लिए प्रायोगिक अभ्यास कार्यो को सुगम, रोचक, सार्थक तथा सफल बनाया जा सकता है।

प्रयोगशाला कार्यो का सगठन तथा प्रशासनिक क्रियाएं

प्रायोगिक अभ्यास कार्य के लिए शिक्षक का सर्वप्रथम कार्य होता है प्रयोगशाला कक्ष एव प्रायोगिक क्रियाओ का संगठन तथा नियोजन करना। इस प्रथम अवस्था मे कम्प्यूटर, शिक्षक को निम्न प्रकार मदद प्रदान कर सकता है–

★ काम करने वाले तथा खराब उपकरणों की सूची बनाना।

★ प्रत्येक छात्र को प्रयोग तथा उसके उपकरण प्रदान कर सूची बनाने में मदद करना।

★ प्रत्येक छात्र का निरन्तर निरीक्षण कर उसकी प्रगति का लेखा-जोखा तैयार करना तथा इसे शिक्षक के

सम्मुख प्रस्तुत करना।

★ भविष्य के सन्दर्भ में प्रत्येक छात्र की प्रगति के लेखा-जोखा को सुरक्षित रखना तथा आवश्यकता पडने पर कुछ ही क्षणो मे इसकी प्राप्ति की सुविधा।

★ यह जानने के लिए शिक्षक को मदद प्रदान करना कि छात्र ने ठीक प्रकार स्वयं प्रयोग किया अथवा नहीं। इस कार्य के लिए कम्प्यूटर द्वारा छात्र के प्रयोग करने के पश्चात् एक अतिम परीक्षा का संचालन किया जाता है।

प्रयोगशाला कार्यो से पूर्व की क्रियाएं

प्रयोगशाला में वास्तविक प्रायोगिक कार्यों को करने से पूर्व छात्र को पूर्ण रूप से प्रारभिक तैयारी प्रदान करने के लिए कम्प्यूटर निम्न प्रकार मदद प्रदान करता है—

- ☐ छात्रो को प्रयोग से सबधित कुछ प्रारम्भिक ज्ञान प्रदान करना जैसे—
  - ★ प्रयोग करने के उद्देश्य।
  - ★ प्रयोग की पृष्ठभूमि तथा सैद्धातिक महत्व का ज्ञान।
  - ★ प्रयोग किए जाने के पश्चात् विकसित कौशलों के संदर्भ में जानकारी।
  - ★ प्रायोगिक अभिकल्प तथा प्रयोग किए जाने वाले उपकरण।
  - ★ प्रयोग से सबधित मापन में बाधक त्रुटियों से अवगत कराना तथा निवारण हेतु आवश्यक ज्ञान प्रदान करना।
  - ★ प्रयोग को करने की विधि तथा प्रयोग के प्रथम चरण से लेकर अन्तिम चरण तक के बारे मे जानकारी।
  - ★ प्रयोग करते समय आवश्यक सावधानियां।
  - ★ प्रयोग के दौरान डाटा का एकत्रीकरण तथा आवश्यक गणनाओं तथा सूत्रों की जानकारी।
- ☐ प्रयोग के अभिकल्प तथा इससे सबंधित उपकरणों के चुनाव मे छात्रो को सही मार्गदर्शन प्रदान करना।

प्रयोगशाला पुस्तक से भी कुछ आवश्यक जानकारियो को प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन छात्र को अपनी ओर आकर्षित करने तथा उसकी सोच को केन्द्रित करने के लिए कम्प्यूटर इंटरऐक्टिव ग्राफिक्स तथा ऐनीमेशन को अपनाता है। उपरोक्त सभी कार्यो के लिए कम्प्यूटर एक सजीव माध्यम बन सकता है। कम्प्यूटर द्वारा प्रयोग से संबधित किसी भी बिन्दु पर किसी समय सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त की जा सकती है। प्रयोग को कैसे करना है? इसको छात्र एनीमेशन के माध्यम से बार-बार कम्प्यूटर स्क्रीन पर होता देख सकते है। बहु-माध्यम से इनको और सशक्त तथा रुचिपूर्ण बनाया जा सकता है।

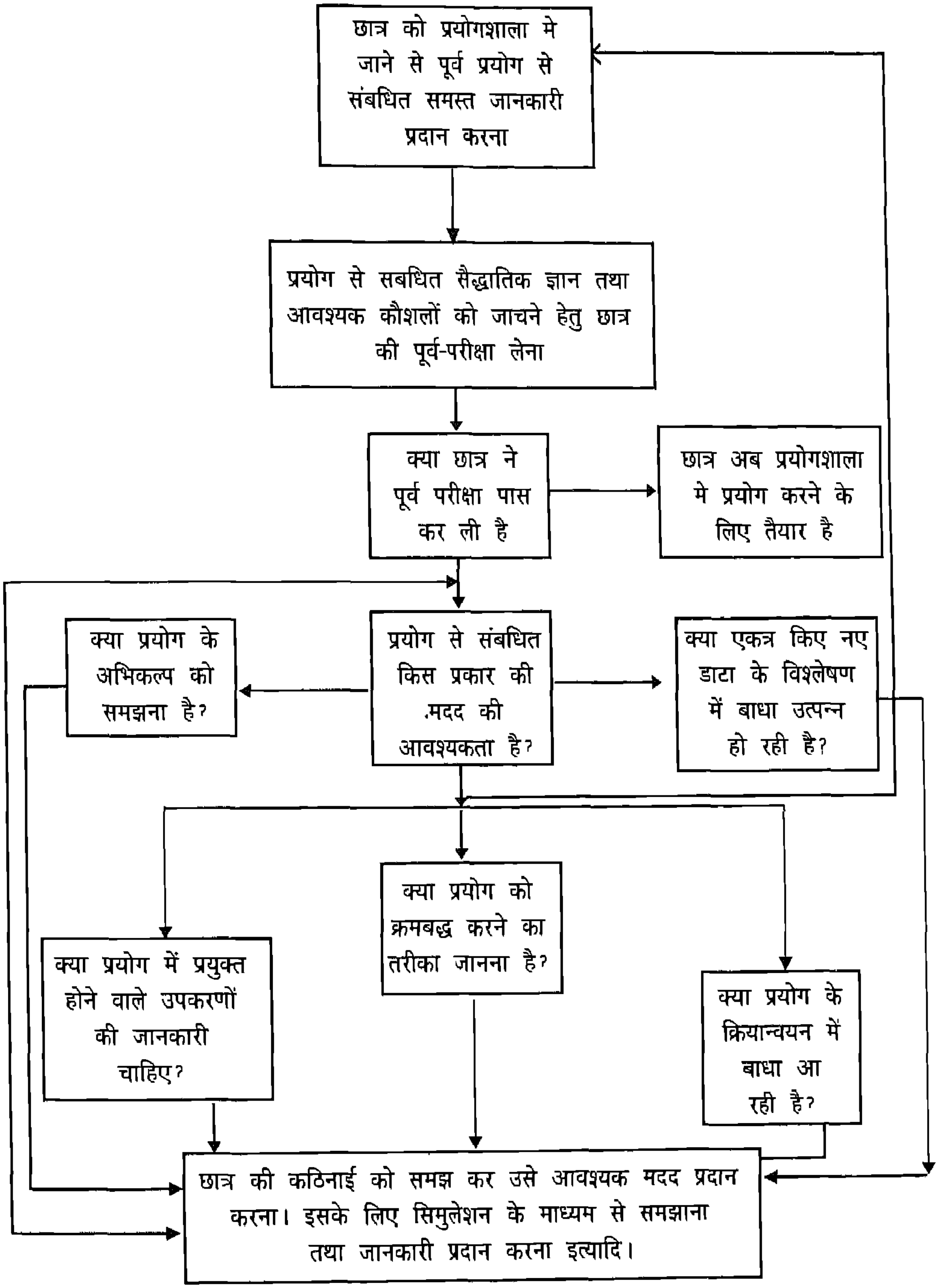
उपरोक्त कार्यो के पश्चात् कम्प्यूटर छात्रों पर एक पूर्व-परीक्षा को प्रशासित करता है। इस पूर्व-परीक्षा का उद्देश्य यह जानने का प्रयास करना है कि छात्र की वास्तविक प्रयोगशाला में प्रयोग करने की तैयारी कैसी है? अगर छात्र इस पूर्व-परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो जाता है तब कम्प्यूटर छात्र की त्रुटियों का निदान कर आवश्यक उपचार प्रदान करता है तथा यह क्रम चलता रहता है। कम्प्यूटर छात्र को प्रयोगशाला मे वास्तविक प्रायोगिक कार्य करने की अनुमति केवल तभी प्रदान करता है, जब छात्र इस पूर्व-परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाता है।

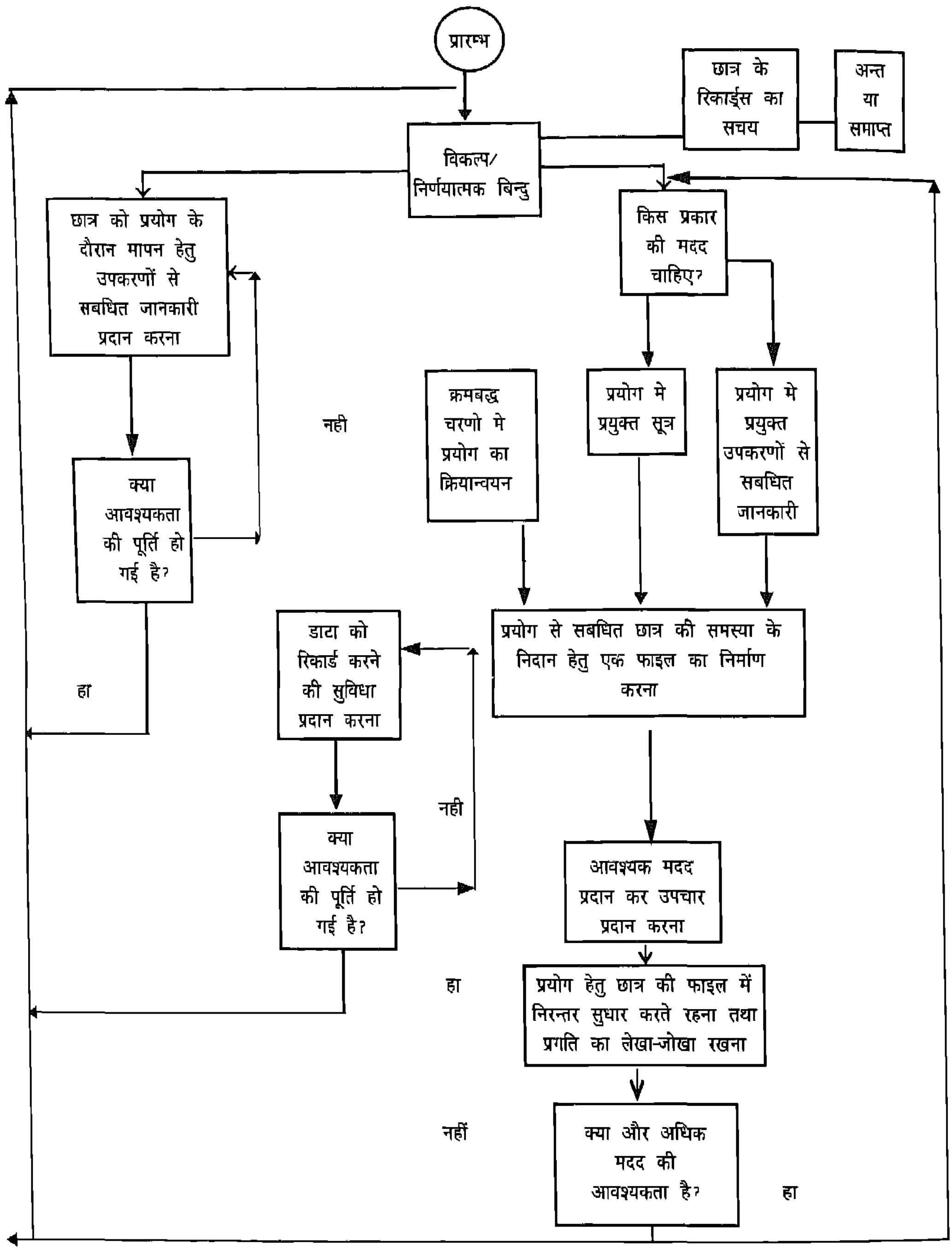
कम्प्यूटर के माध्यम से छात्र की प्रयोग से सबधित इस पूर्व तैयारी को फ्लोचार्ट के माध्यम से भली-भाति समझा जा सकता है।

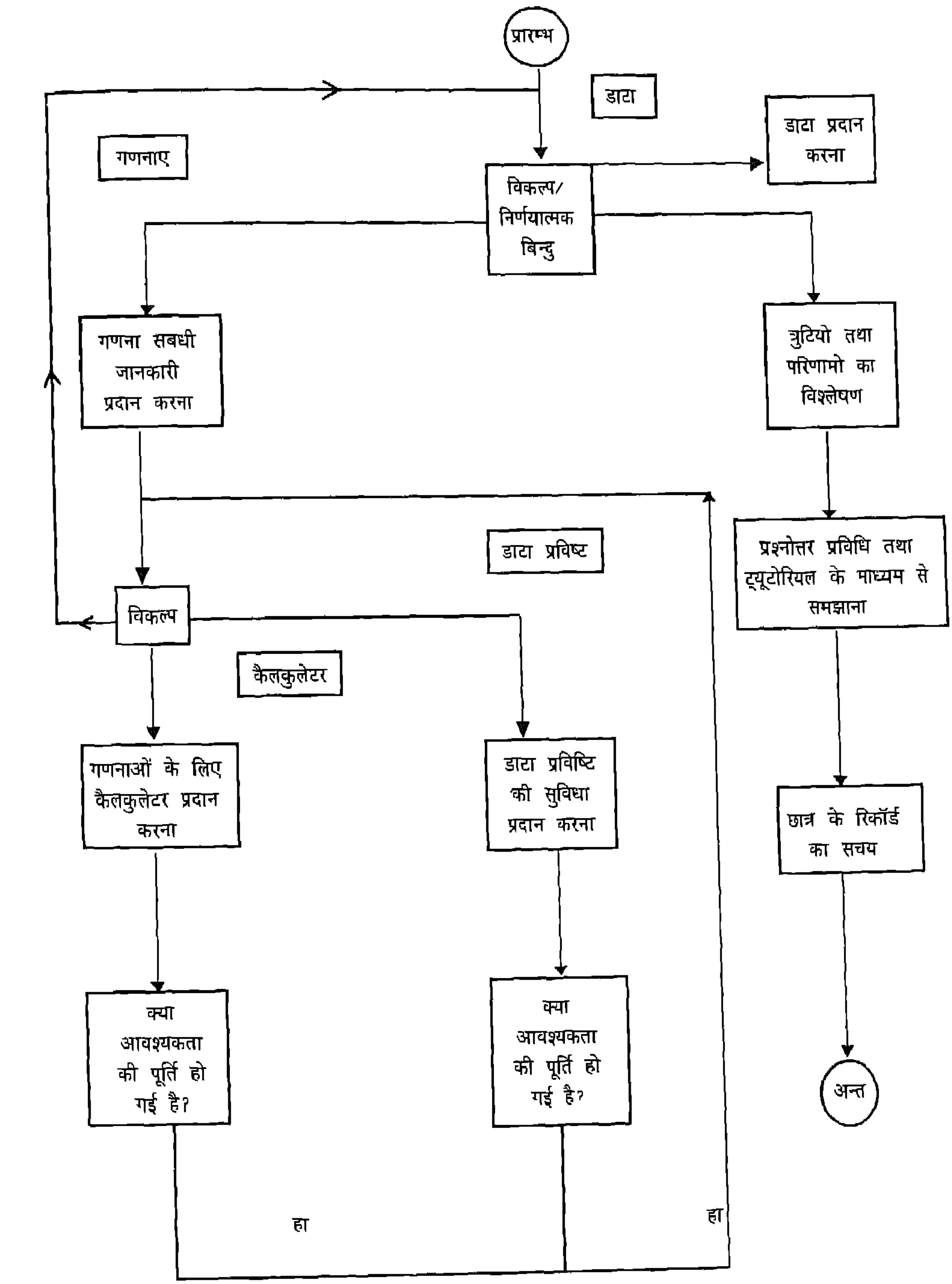
प्रयोगशाला क्रियाएं

कम्प्यूटर आधारित पूर्व-परीक्षा मे उत्तीर्ण होने का अर्थ है कि छात्र मे प्रयोग से संबधित पूर्व-ज्ञान, जानकारी तथा आवश्यक प्रायोगिक कौशलो का समावेश है। कम्प्यूटर से स्वीकृति मिलने के पश्चात् अब छात्र वास्तविक प्रयोगशाला में प्रायोगिक कार्य करता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि वास्तविक प्रायोगिक कार्य के समय छात्र के समक्ष कई प्रकार की बाधाए उत्पन्न हो जाती है। इन प्रायोगिक बाधाओ को दूर करने के लिए एक बार फिर कम्प्यूटर छात्रों की मदद के लिए तैयार रहता है। इस चरण पर कम्प्यूटर द्वारा छात्रो को मिलने वाली कुछ सुविधाए निम्न प्रकार है—

★ जब छात्र को आवश्यकता होती है तब कम्प्यूटर छात्र के प्रयोग को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए आवश्यक जानकारी, डाटा, विधि, सूत्र इत्यादि के


छात्र को प्रयोगशाला मे जाने से पूर्व प्रयोग से संबधित समस्त जानकारी प्रदान करना
प्रयोग से सबधित सैद्धातिक ज्ञान तथा आवश्यक कौशलों को जाचने हेतु छात्र की पूर्व-परीक्षा लेना
क्या छात्र ने पूर्व परीक्षा पास कर ली है
छात्र अब प्रयोगशाला मे प्रयोग करने के लिए तैयार है
क्या प्रयोग के अभिकल्प को समझना है?
प्रयोग से संबधित किस प्रकार की मदद की आवश्यकता है?
क्या एकत्र किए नए डाटा के विश्लेषण में बाधा उत्पन्न हो रही है?
क्या प्रयोग में प्रयुक्त होने वाले उपकरणों की जानकारी चाहिए?
क्या प्रयोग को क्रमबद्ध करने का तरीका जानना है?
क्या प्रयोग के क्रियान्वयन में बाधा आ रही है?
छात्र की कठिनाई को समझ कर उसे आवश्यक मदद प्रदान करना। इसके लिए सिमुलेशन के माध्यम से समझाना तथा जानकारी प्रदान करना इत्यादि।


प्रारम्भ
छात्र के रिकार्ड्स का सचय
अन्त या समाप्त
विकल्प/ निर्णयात्मक बिन्दु
छात्र को प्रयोग के दौरान मापन हेतु उपकरणों से सबधित जानकारी प्रदान करना
किस प्रकार की मदद चाहिए?
क्रमबद्ध चरणो मे प्रयोग का क्रियान्वयन
प्रयोग मे प्रयुक्त सूत्र
प्रयोग मे प्रयुक्त उपकरणों से सबधित जानकारी
नही
क्या आवश्यकता की पूर्ति हो गई है?
हा
डाटा को रिकार्ड करने की सुविधा प्रदान करना
प्रयोग से सबधित छात्र की समस्या के निदान हेतु एक फाइल का निर्माण करना
नही
क्या आवश्यकता की पूर्ति हो गई है?
आवश्यक मदद प्रदान कर उपचार प्रदान करना
हा
प्रयोग हेतु छात्र की फाइल में निरन्तर सुधार करते रहना तथा प्रगति का लेखा-जोखा रखना
नहीं
क्या और अधिक मदद की आवश्यकता है?
हा


प्रारम्भ
डाटा
डाटा प्रदान करना
गणनाए
विकल्प/ निर्णयात्मक बिन्दु
गणना सबधी जानकारी प्रदान करना
त्रुटियो तथा परिणामो का विश्लेषण
डाटा प्रविष्ट
प्रश्नोत्तर प्रविधि तथा ट्यूटोरियल के माध्यम से समझाना
विकल्प
कैलकुलेटर
गणनाओं के लिए कैलकुलेटर प्रदान करना
डाटा प्रविष्टि की सुविधा प्रदान करना
छात्र के रिकॉर्ड का सचय
क्या आवश्यकता की पूर्ति हो गई है?
क्या आवश्यकता की पूर्ति हो गई है?
अन्त
हा
हा

द्वारा मार्गदर्शन तथा मदद प्रदान करता है।

★ उपकरणो को ठीक प्रकार प्रयोग करने की जानकारी प्रदान करता है और उनकी शुद्धता बताता है जबकि वे ठीक प्रकार प्रयोग किए जाएं।

प्रयोगशाला अभ्यास कार्यो की इस वास्तविक स्थिति को चित्रीय रूप में पृष्ठ 26 के चित्र द्वारा समझ सकते है—

प्रयोगशाला कार्य के पश्चात् की क्रियाएं

ये वे आवश्यक क्रियाएं होती हैं जो छात्रों तथा शिक्षको द्वारा प्रयोगशाला अभ्यास कार्य के पश्चात् करनी होती हैं। ये बहुत महत्वपूर्ण क्रियाए होती है तथा सामान्य तौर पर छात्रो तथा शिक्षकों द्वारा नही की जाती है। कम्प्यूटर द्वारा निम्नलिखित सभी क्रियाओ को बहुत अच्छे ढग से सम्पादित किया जा सकता है—

★ गणना कार्य मे मदद प्रदान करना।

★ रेखीय चित्रण के माध्यम से प्राप्त परिणामो के विश्लेषण में मदद करना।

★ रेखाचित्रो तथा मानक परिणामों से प्राप्त परिणामों की तुलना करना।

★ त्रुटियो के विश्लेषण और उनके स्रोतों का पता लगाने तथा इन त्रुटियो के कारणों को खोजने तथा दूर करने मे मदद प्रदान करना।

★ प्रयोग की उपयोगिता तथा अनुप्रयोगो की ओर छात्रों के ध्यान को आकर्षित करना।

वास्तविक प्रयोगशाला अभ्यास कार्य के पश्चात् की क्रियाओं मे कम्प्यूटर की उपयोगिता को चित्रीय रूप मे स्पष्ट रूप में समझा जा सकता है।

निष्कर्ष

स्पष्ट है कि कम्प्यूटर उपरोक्त कार्यो को आश्चर्यचकित रूप से सम्पन्न करके छात्रो तथा शिक्षको को मदद प्रदान कर सकता है। यह एक शिक्षक को प्रयोगशाला के दिन-प्रतिदिन के कार्यो से मुक्त कर सकता है। कम्प्यूटर प्रयोगशाला अभ्यास कार्य से पूर्व तथा प्रयोगशाला अभ्यास कार्य के पश्चात् से सबधित क्रियाओं के माध्यम से छात्रो के अधिगम में वृद्धि कर सकता है। सबसे बड़ी बात यह है कि प्रयोगशाला मे कम्प्यूटर के आ जाने से छात्रो तथा शिक्षकों का दृष्टिकोण प्रयोगशाला अभ्यास कार्यो के प्रति बदलेगा तथा वे इस कार्य को शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का एक अभिन्न हिस्सा समझकर रुचिपूर्वक सम्पन्न करेंगे। आज आवश्यकता है तो केवल इस बात की कि शिक्षक तेजी से बदल रही इस दुनिया में नित्य नई जानकारी प्राप्त करे तथा अपने ज्ञान को नवीनतम तकनीक से लैस करे।

यहां यह एक बात स्पष्ट है कि शिक्षक, छात्रो, अभिभावको, शैक्षिक योजना निर्माताओं, पाठ्यक्रम निर्माताओ तथा सरकार के संयुक्त प्रयासो से ही इस समस्या का समाधान किया जा सकता है तथा विद्यालयो में प्रयोगशाला आधारित कार्यो को छात्रो के लिए सार्थक बनाया जा सकता है। आज आवश्यकता है तो केवल इस बात की कि उपरोक्त सभी अपनी-अपनी ज़िम्मेदारियों को समझे। शिक्षको को सरकार द्वारा कम्प्यूटर प्रशिक्षण प्रदान किया जाए तथा विद्यालयो मे कम्प्यूटर की सुविधाए प्रदान की जाएं। नीचे हम शिक्षको के लिए कुछ सुझाव दे रहे हैं जिससे कि शिक्षा के क्षेत्र मे कम्प्यूटर की विशेषताओ का पूर्णरूपेण लाभ लिया जा सके—

★ कम्प्यूटर तथा इससे सबधित उपकरणों के संबध मे जानकारी प्राप्त करे।

★ कम्प्यूटर चलाने में प्रशिक्षण प्राप्त करे।

★ शिक्षा के क्षेत्र में कम्प्यूटर से होने वाले लाभों से परिचित हो।

★ छात्रों में कम्प्यूटर के प्रति रुचि जाग्रत करे तथा कम्प्यूटर के प्रति उनकी उत्सुकता का लाभ उनकी अधिगम वृद्धि के रूप मे ले।

★ यह जानें कि कम्प्यूटर के द्वारा कैसे शिक्षा प्रदान की जाती है।

★ कम्प्यूटर सहायक शिक्षक के विभिन्न स्वरूपो जैसे— ट्यूटोरियल, गेमिग, सिमुलेशन इत्यादि के सबध मे ज्ञान प्राप्त करें। □□

-शोध छात्र
एम.जे.पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली
उत्तर प्रदेश

उच्च शिक्षा में निजीकरण के बढ़ते प्रयास

❐ राजीव कुमार

उच्च शिक्षा की भावी रणनीति तय करने के सम्बन्ध में अम्बानी-बिड़ला रिपोर्ट की संस्तुतियों को लागू करने या न करने पर सरकार द्वारा औपचारिक रूप से कुछ भी निर्णय लिया गया हो लेकिन व्यवहार में रिपोर्ट के सुझावों को अमल में लाने के प्रयास स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे हैं। उदाहरणार्थ, सरकार द्वारा वर्ष 2001-2002 के बजट में मेधावी छात्रों को उच्च शिक्षा के लिए बैंकों द्वारा ऋण प्रदान करने की घोषणा की गई जिसके अंतर्गत उच्च शिक्षा हेतु स्वदेश में 7.5 लाख रुपए तक तथा विदेशों में 15 लाख रुपए तक सस्ती दरों पर ऋण उपलब्ध कराने की व्यवस्था रखी गई। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा इस हेतु ऋण उपलब्ध कराना प्रारम्भ किया गया है।

उच्च शिक्षा सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन का एक सशक्त माध्यम है। मानव संसाधनों के विकास की दृष्टि से उच्च शिक्षा की भूमिका सर्वोपरि है। किन्तु यदि स्वतत्रता प्राप्ति के विगत् छप्पन वर्षो मे देश मे उच्च शिक्षा की विकास यात्रा पर दृष्टिपात किया जाए तो हम पाते है कि देश मे उच्च शिक्षा का सख्यात्मक या मात्रात्मक प्रसार तो काफी हुआ है किन्तु उच्च शिक्षा की गुणात्मकता मे निरतर कमी आई है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र मे आज देश मे 250 से अधिक विश्वविद्यालय है एव 10,000 से अधिक कालेज है जिनमे लगभग 75 लाख छात्र-छात्राएं अध्ययनरत हैं। किन्तु यदि इस भीड में अपने-अपने विषय का समुचित आधिकारिक ज्ञान रखने वाले विद्यार्थियों की पहचान की जाए तो उनकी सख्या शायद 10 प्रतिशत भी न निकले। विद्यार्थियो में पढ़ने की ललक और शिक्षको में पढ़ाने की इच्छा दिनो-दिन कम हुई है। वस्तुत· उच्च शिक्षा देश की वर्तमान एवं भावी आवश्यकताओं को पूरा करने मे असफल रही है। आज विश्वविद्यालयो मे पुराने एव अव्यावहारिक पाठ्यक्रम, विद्यार्थियों मे बढती निराशा व अनुशासहीनता, सरकार की उपेक्षापूर्ण नीति, शिक्षकों में कर्तव्य बोध का अभाव आदि उच्च शिक्षा के क्षेत्र की सामान्य समस्याए हैं जिन्होंने उच्च शिक्षा को गुणात्मक रूप से प्रभावित किया है।

बदलती प्राथमिकताएं

विगत लगभग डेढ दशक से उच्च शिक्षा गभीर वित्तीय सकट के दौर से गुजर रही है। यहा यह द्रष्टव्य है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के कुछ वर्षो तक उच्च शिक्षा सरकार की प्राथमिकताओ में रही। स्वतन्त्र भारत का प्रथम शैक्षिक आयोग भी उच्च शिक्षा के सम्बन्ध मे 1948 मे डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता मे गठित हुआ था जिसने देश में उच्च शिक्षा के समुचित विकास और उसके क्षेत्र की विभिन्न समस्याओ के समाधान हेतु उपयोगी सुझाव प्रस्तुत किए थे। आयोग की सस्तुतियों के फलस्वरूप देश के शिक्षा बजट में उच्च शिक्षा को अच्छा भाग प्राप्त होता रहा। पहली पंचवर्षीय योजना से चौथी पंचवर्षीय योजना तक उच्च शिक्षा की बजटीय हिस्सेदारी 0 71 प्रतिशत से बढ़कर 1.24 प्रतिशत तक पहुची किन्तु उसके बाद से इसमें लगातार कमी आई है। सातवी योजना

मे यह 0 53 प्रतिशत थी और आठवी योजना मे और घटकर 0.35 प्रतिशत रह गई। पिछले लगभग एक दशक से तो आबंटित बजट में भारी कटौती की गई है। विगत वर्षो मे विश्वविद्यालयो को प्रदत्त सरकारी अनुदानो की मात्रा में निरंतर कटौती ने विश्वविद्यालयों को गंभीर वित्तीय संकट की स्थिति में डाल दिया है। उच्च शिक्षा की बिगड़ती वित्तीय स्थिति के लिए जहां एक ओर बुनियादी शिक्षा का सरकार की प्राथमिकता मे आना और उस पर तुलनात्मक रूप से अधिक धन खर्च किया जाना एक प्रमुख कारण रहा है वही दूसरी ओर सरकार द्वारा उच्च शिक्षा के लिए दी जा रही सब्सिडी में कटौती कर इसके निजीकरण का प्रयास इसका मुख्य कारण रहा है।

यहा यह द्रष्टव्य है कि उच्च शिक्षा की दशा मे सुधार के उपाय सुझाते हुए कोठारी आयोग ने शिक्षा पर सकल घरेलू उत्पाद का 6 प्रतिशत व्यय करने की सस्तुति की थी। मल्होत्रा आयोग ने भी यही सिफारिश की। किन्तु अभी तक शिक्षा पर सकल घरेलू उत्पाद का अधिकतम 3 5 प्रतिशत ही व्यय हो पाया है। उच्च शिक्षा पर तो मुश्किल से सकल घरेलू उत्पाद का 0 56 प्रतिशत ही खर्च हो पा रहा है।

निजीकरण के प्रारम्भिक प्रयास

उच्च शिक्षा मे निजीकरण की प्रक्रिया तो बाद में प्रारम्भ हुई है, किन्तु इस प्रकार की सरकारी सोच के सकेत 80 के दशक से ही दिखाई देने लगे थे, जबकि तत्कालीन सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति– 1986 मे उच्च शिक्षा संस्थानो के बेहतर सचालन, भवनों के रखरखाव एव वस्तुओ की पूर्ति मे स्थानीय लोगो की सहायता प्राप्त करने और उच्च शिक्षा सस्थानों की फीस बढ़ाने जैसे कई कदम उठाने पर बल देने को कहा था। इसी समय विश्व बैंक द्वारा 'विकासशील देशो मे शिक्षा पर खर्च के पैटर्न' पर जारी अपनी रिपोर्ट में विकासशील देशों को यह सलाह दी कि वे आर्थिक ससाधनो की कमी को दृष्टिगत रखते हुए शिक्षा पर आने वाले खर्च का एक बडा भाग अभिभावको से ले। सन् 1991 मे देश मे उदारीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ होने से इसका प्रभाव उच्च शिक्षा पर भी दिखाई देने लगा। सरकार ने विश्व बैंक के सुझावों के अनुरूप उच्च शिक्षा मे वित्तीय सकट को दूर करने हेतु प्रयास करने का विचार बना लिया। सन् 1991 मे ही विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने कालेजों व विश्वविद्यालयो के अनुदानों में कटौती करने का निर्णय लिया। इससे पूर्व यू.जी सी. द्वारा फीस से हुई आय को छोड़कर शेष पूरा खर्च उठाया जा रहा था। पहली बार यू.जी सी. ने विश्वविद्यालयो और कालेजो से आतरिक संसाधनों के द्वारा अपना व्यय निकालने को कहा। केंद्र सरकार के निर्देश पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा गठित 'पुनैया समिति' ने 1993 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में उच्च शिक्षा के निजीकरण की स्पष्ट वकालत की। केन्द्रीय विश्वविद्यालयों के फीस ढाचे की समीक्षा और सुधार के लिए यू.जी.सी द्वारा गठित 'महमूदउर्रहमान समिति' और दिल्ली विश्वविद्यालय मे फीस ढांचे की समीक्षा और सुधार के लिए गठित 'आनन्द कृष्णन समिति' की संस्तुतियो मे भी उच्च शिक्षा के खर्च को अभिभावको पर डालने की मंशा व्यक्त की गई। पूर्व वित्तमत्री श्री पी. चिदंबरम के काल में वित्त मंत्रालय ने एक श्वेत पत्र जारी करके उच्च शिक्षा को 'नॉन मेरिट गुड्स' की श्रेणी में रखा। इसके पीछे सरकार का तर्क था कि उच्च शिक्षा से केवल उसी वर्ग को लाभ पहुचता है जो इसे प्राप्त करता है, देश या समाज को इससे प्रत्यक्षत कोई लाभ नही होता है। अत उच्च शिक्षा के अनुदानो मे कटौती की जानी चाहिए। इसके बाद आई लगभग सभी सरकारो द्वारा उच्च शिक्षा के अनुदानो मे कटौती ही की जाती रही है।

निजीकरण पर अम्बानी-बिड़ला रिपोर्ट

देश के दो शीर्ष उद्योगपतियों श्री मुकेश अम्बानी और श्री कुमार मंगलम बिड़ला द्वारा व्यापार और उद्योग पर गठित प्रधानमत्री की सलाहकार परिषद् को 'ए पॉलिसी फ्रेमवर्क फॉर रिफार्म्स इन एजुकेशन' नाम से 24 अप्रैल, 2000 को प्रस्तुत रिपोर्ट में उच्च शिक्षा के निजीकरण की पुरजोर वकालत करते हुए उच्च शिक्षा को दी जा रही सब्सिडी में कटौती कर इसकी भरपाई फीस बढ़ाकर

करने की सिफारिश की गई। इस विशेष अध्ययन दल के विचार मे उच्च शिक्षा से जनसामान्य को लाभ न पहुचकर कुछ विशेष लोगो को ही लाभ पहुंचता है इसलिए इस पर होने वाला व्यय छात्र द्वारा ही वहन किया जाना चाहिए। सरकार को उच्च शिक्षा के क्षेत्र मे अपनी भूमिका सीमित कर निजीकरण को बढावा देना चाहिए। उन्होंने निजी विश्वविद्यालय विधेयक लाने और विश्वविद्यालयो से बाजार की आवश्यकताओ को दृष्टिगत रखते हुए पाठ्यक्रम तैयार करने को कहा। उनके अनुसार प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा का केन्द्रीय उत्तरदायित्व सरकार का है जबकि उच्च शिक्षा को निजी क्षेत्र को सौप दिया जाना चाहिए। रिपोर्ट के अनुसार प्राथमिक शिक्षा पर होने वाले कुल व्यय का 90 प्रतिशत भाग सरकार को वहन करना होगा तथा माध्यमिक शिक्षा के खर्च का आधा सरकार और आधा निजी क्षेत्र को वहन करना होगा, जबकि उच्च शिक्षा पर होने वाले कुछ खर्च मे निजी क्षेत्र का अकेले योगदान 63 प्रतिशत होगा। इस रिपोर्ट का सार है कि शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर सरकार की भूमिका अधिकतम होनी चाहिए और उच्च शिक्षा के स्तर पर न्यूनतम। यह रिपोर्ट शिक्षा को लागत तथा लाभ के सिद्धान्त पर आधारित करती हुई बाजार आधारित शिक्षा प्रणाली की वकालत करती है। यह उच्च शिक्षा को देशी-विदेशी पूजी निवेश के लिए खोलकर बाजार बनाने पर बल देती है।

रिपोर्ट मे दिए गए आंकडो का अवलोकन करने से यह ज्ञात होता है कि यह रिपोर्ट सन् 2015 के भारत की स्थिति का आकलन कर तैयार की गई है। इसके अनुसार देश की जनसख्या सन् 2015 मे सवा अरब होगी। इसमे 5 से 24 वर्ष की आयु वालो की सख्या लगभग 45 करोड होगी जिनमें से 5 से 19 वर्ष की आयु वाले सभी लगभग 34 करोड लोगो के लिए कक्षा 1 से 12 तक की पढ़ाई अनिवार्य करनी होगी और शेष 19 से 24 वर्ष की आयु वाले 11 करोड़ लोगों में से कम से कम 2 2 करोड लोगो के लिए उच्च शिक्षा की व्यवस्था करनी होगी। उनके आंकलन के अनुसार 19 से 24 वर्ष आयु-वर्ग की 11 करोड जनसंख्या का लगभग 20 प्रतिशत हिस्सा ही उच्च शिक्षा पाने योग्य होगा। सन् 2015 तक देश को अतिरिक्त लगभग 7 लाख 32 हजार प्राथमिक स्कूल, 23,600 माध्यमिक स्कूल और उच्च शिक्षा के लिए 27,000 से अधिक कालेज-विश्वविद्यालय खोलने होंगे। अभी हमारे देश में इसके आधे या तिहाई ही स्कूल-कालेज है। कुल मिलाकर हमे दो से तीन गुना अधिक स्कूल-कालेज खोलने की आवश्यकता पड़ेगी। इनके निर्माण, अध्यापको-कर्मचारियो के वेतन आदि को अगर जोड दे तो सन् 2015 तक देश को शिक्षा पर प्रति वर्ष लगभग 1 लाख 86 हजार करोड रुपए व्यय करने पडेगे। रिपोर्ट के अनुसार, सन् 2015 तक सरकार को उच्च शिक्षा पर प्रति वर्ष 42 हजार 732 करोड़ रुपए का पूजी निवेश करनी होगी। यह पूंजी लागत ब्याज सहित 75 हजार करोड़ रुपए से भी अधिक हो जाती है जिसे उस समय उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे 2 2 करोड छात्रों से वसूलना होगा। अर्थात् इन्हे औसतन कम से कम 35 हजार रुपए प्रति वर्ष फीस के रूप में देने ही होगे। छात्रावास, खाना, कपड़ा, किताबे आदि अन्य व्यय इसमें सम्मिलित नही हैं। यदि इन खर्चो को भी जोड़ लिया जाए तो स्नातक स्तर की सामान्य डिग्री पाने के लिए एक छात्र को प्रति वर्ष कम से कम सवा-डेढ़ लाख रुपए खर्च करने होगे। मेडीकल कालेज, इंजीनियरिंग कालेज या प्रबन्ध सस्थान में शिक्षा पाने के लिए इसकी सात गुना लागत बढ़ जाएगी अर्थात् लगभग 9 लाख रुपए वार्षिक व्यय। यह आकलन 1998-99 की कीमतों पर आधारित है, जबकि आगे कीमते और बढेगी जिससे लागतो मे और वृद्धि होगी। रिपोर्ट मे विश्वविद्यालयो की महगी फीस का भुगतान करने के लिए विद्यार्थियो के लिए ऋण देने का प्रावधान और ऋण वसूलने वाली एजेसी की व्यवस्था की भी सिफारिश की गई है। किन्तु विश्वविद्यालय से पढकर निकले छात्र को रोजगार की कोई गारंटी नहीं दी गई है। अतः ऋण मे डूबा और रोजगार की तलाश में भटकता छात्र इस ऋण को चुकाने के लिए धन कहां से लाएगा? इस प्रश्न का उत्तर रिपोर्ट मे उपलब्ध नही है।

निजीकरण पर सरकार की नीति एवं नए प्रयास

उच्च शिक्षा की भावी रणनीति तय करने के सम्बन्ध में अम्बानी-बिड़ला रिपोर्ट की संस्तुतियों को लागू करने

या न करने पर सरकार द्वारा औपचारिक रूप से कुछ भी निर्णय लिया गया हो लेकिन व्यवहार मे रिपोर्ट के सुझावो को अमल मे लाने के प्रयास स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे है। उदाहरणार्थ, सरकार द्वारा वर्ष 2001-2002 के बजट मे मेधावी छात्रो को उच्च शिक्षा के लिए बैको द्वारा ऋण प्रदान करने की घोषणा की गई जिसके अंतर्गत उच्च शिक्षा हेतु स्वदेश में 7.5 लाख रुपए तक तथा विदेशो मे 15 लाख रुपए तक सस्ती दरो पर ऋण उपलब्ध कराने की व्यवस्था रखी गई। सार्वजनिक क्षेत्र के बैको द्वारा इस हेतु ऋण उपलब्ध कराना प्रारम्भ किया गया है।

विगत वर्षो से निजी मेडीकल और इजीनियरिंग कालेजो मे प्रवेश शुल्क और कैपीटेशन शुल्क की योजना तो लागू थी ही, शिक्षा के क्षेत्र मे निजीकरण के निरंतर विरोध के बाद भी अंतत दो प्रकार की प्रवेश नीति स्वीकार की गई है। इनमे एक का आधार गुणवत्ता या योग्यता और दूसरी का आधार फीस और उसकी अदायगी क्षमता रहा है। मानव ससाधन विकास मंत्रालय की नीति के अन्तर्गत निजी क्षेत्र मे विद्यालयो से लेकर विश्वविद्यालयो तक को मान्यता दिया जाना सम्मिलित है। आर्थिक उदारीकरण के दौर में सरकार ने शिक्षा के क्षेत्र मे पूजी निवेश को प्रोत्साहित करने के लिए करों में राहत देने का फैसला भी किया है। मेडीकल, तकनीकी और प्रबन्धकीय शिक्षा मे तो निजीकरण बढ़ा ही है किन्तु आज यह शिक्षक शिक्षा और सामान्य शिक्षा में भी तेजी से बढ़ रहा है। विगत तीन-चार वर्षो में शिक्षक शिक्षा मे स्ववित्त पोषित सस्थाओं की संख्या द्रुत गति से बढ़ी है। निजी क्षेत्र में विश्वविद्यालयों के खोलने की भी घोषणाए होने लगी है जिनमे उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा प्रदेश मे दो निजी विश्वविद्यालय खोलने का निर्णय सम्मिलित है।

ऊपरी तौर पर भले ही सरकार उच्च शिक्षा के निजीकरण की नीति को लागू करती न दिखाई दे रही हो, किन्तु अब यह स्पष्ट होने लगा है कि सरकार ने अपना पूरा ध्यान बुनियादी शिक्षा पर लगाने का मन बना लिया है और अब वह उच्च शिक्षा से अपने हाथ धीरे-धीरे खीच रही है। अगले दशक मे उच्च शिक्षा का पूरा स्वरूप ही बदलने जा रहा है। अब उच्च शिक्षा ऐसे बाजार के रूप मे बदलने जा रही है, जहा बाजार की शक्तियो के आधार पर ही सारे कदम तय हुआ करेंगे।

समीक्षा एवं सुझाव

उच्च शिक्षा की वित्तीय चुनौतियों को दृष्टिगत रखते हुए उच्च शिक्षा का निजीकरण किया जाना व्यावहारिक दृष्टिकोण से उचित प्रतीत होता है। किन्तु यदि निजीकरण के नाम पर शिक्षा का व्यापारीकरण होने लगे तो निजीकरण एक अभिशाप ही सिद्ध होगा। निजीकरण के विषय मे शिक्षा जगत से जुडे लोगो की सामान्य धारणा यही है कि निजीकरण पर चलने वाले शिक्षा केन्द्र मात्र अपने लाभ के लिए कार्य करेंगे और राष्ट्र हित की अनदेखी होगी। निजीकरण के चलते निजी शिक्षा सस्थानो की बाढ़ आ जाएगी किन्तु उच्च शिक्षा आम व्यक्ति की पहुंच से दूर होती चली जाएगी। उच्च शिक्षा ऊची फीस दे सकने वाले साधन सम्पन्न लोगो तक ही सीमित होकर रह जाएगी। उच्च शिक्षा के लिए अनुदानो को समाप्त करने और शिक्षा सम्बन्धी फैसलो को वाजार की शक्तियो के रहमोकरम पर छोड़ने का परिणाम यह होगा कि शैक्षिक पूंजी के वितरण और इस कारण आय के वितरण की असमानताएं बढ़ेगी। ऐसी स्थिति मे जनता के अधिक उन्नत वर्ग ही बाजारी शक्तियो से उत्पन्न शैक्षिक अवसरों का लाभ उठा सकेगे जिससे शैक्षिक विषमताएं और बढ़ेगी। यह सभी स्तरों पर सभी को शिक्षा के समान अवसर प्रदान करने के राज्य के सवैधानिक दायित्व के विपरीत होगा। नि:संदेह इससे कल्याणकारी लोकतांत्रिक समाजवादी राज्य की भूमिका प्रश्नों के घेरे में आ जाएगी।

शिक्षा के निजीकरण के दुष्प्रभाव शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में सामने आने लगे है। शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र मे स्ववित्त पोषित सस्थाओं को अनुमति देने के परिणामस्वरूप विगत् तीन-चार वर्षों मे शिक्षक शिक्षा में स्ववित्त पोषित सस्थाओ की बाढ़-सी आ गई है। इन संस्थाओ में प्रवेश

मे धाधली, शुल्क की असीमित और सौदेबाजी के आधार पर वसूली, स्टाफ की नियुक्ति में अनियमितताए आदि दिखाई देने लगी हैं। इस कारण शिक्षक शिक्षा में गुणात्मक सुधार का उद्देश्य कही पीछे छूटता प्रतीत होने लगा है।

उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम मे बढती भीड़ को नियंत्रित करने पर किसी की असहमति नहीं होनी चाहिए। देश के युवा वर्ग को उच्च शिक्षा के भवर जाल मे फसकर निरुद्देश्य भटकने और कुंठाग्रस्त होने से बचाया ही जाना चाहिए। सामान्य उच्च शिक्षा मे प्रवेश रुचि, योग्यता और क्षमता के आधार पर ही मिलना चाहिए इसके लिए माध्यमिक स्तर से ही शिक्षा को सशक्त और व्यवसायोन्मुखी बनाए जाने हेतु बड़े पैमाने पर प्रयास किए जाने की आवश्यकता है ताकि विद्यार्थी उच्चतर माध्यमिक स्तर पर वांछित व्यावसायिक और तकनीकी कौशल प्राप्त कर आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बन सके। स्नातक और परास्नातक स्तर के व्यावसायिक पाठ्यक्रमो का भी विकास किया जाना चाहिए ताकि इच्छुक विद्यार्थी उनमे प्रवेश लेकर विशेषज्ञता अर्जित कर सकें और अपनी योग्यता के अनुसार व्यवसाय प्राप्त कर सकें। इससे सामान्य उच्च शिक्षा की ओर निरुद्देश्य भागती भीड पर नियंत्रण तो लगेगा ही साथ ही सरकार के लिए अच्छे स्तर की उच्च शिक्षा की व्यवस्था करना भी सभव हो सकेगा।

उच्च शिक्षा में प्रति विद्यार्थी व्यय को कम किया जाना भी आवश्यक है। अतः कम खर्च पर उच्च शिक्षा को सुलभ कराकर उसे कॉस्ट इफैक्टिव (Cost Effective) बनाया जाना चाहिए। इसके लिए पत्राचार पाठ्यक्रम, दूरस्थ शिक्षा आदि के माध्यम से कम्प्यूटर प्रोग्रामिग, मैनेजमेट आदि तकनीकी विषयो पर पाठ्यक्रमो का आयोजन किया जा सकता है।

महाविद्यालयो और विश्वविद्यालयों की शिक्षा के शुल्क को शिक्षा के प्रकार और स्तर के अनुरूप आने वाली औसत सस्थागत लागत के एक पूर्व निश्चित अंश के बराबर निर्धारित किया जाना चाहिए। यह अंश 0.20 से 0.25 तक हो सकता है। प्रत्येक पाच वर्ष पर औसत संस्थागत लागत का आंकलन कर तदनुसार शुल्क की संरचना को सशोधित किया जा सकता है। शुल्क राशि का सूचकांक मुद्रास्फीति और प्रति व्यक्ति वास्तविक आय की वृद्धि से जुडा हो सकता है ताकि वास्तविक शुल्क राशि का औसत बोझ लगभग स्थिर रहे। इसके अतिरिक्त मेधावी एवं निर्धन छात्रों को ब्याज मुक्त एव रियायती ब्याज दर पर ऋण छात्रवृत्तिया प्रदान की जा सकती है। उन्हे शुल्क मे भी रियायतें दी जा सकती है तथा अध्ययन के लिए ब्याज मुक्त अथवा कम ब्याज पर ऋण की सुविधा प्रदान की जा सकती है।

आर्थिक सकट से उबरने के लिए विश्वविद्यालयो और महाविद्यालयों को स्ववित्त पोषित पाठ्यक्रमों के अतिरिक्त अन्य प्रयासो को भी अपनाना चाहिए। इन प्रयासों मे स्वैच्छिक अनुदान, विदेशी छात्रो से सहयोग, औद्योगिक सहयोग और विदेशो से प्रायोजित अध्ययन के रूप मे संसाधन जुटाना आदि सम्मिलित है। विश्वविद्यालयो के विभागो द्वारा कन्सल्टेन्सीज के माध्यम से भी धन जुटाया जा सकता है। एक अन्य महत्वपूर्ण उपाय के रूप में सरकार महाविद्यालयो और विश्वविद्यालयों को दिए जा रहे अनुदानो को उनके श्रेष्ठ प्रदर्शन के आधार पर प्रदान कर उन्हें परिणामोन्मुख बना सकती है। विश्वविद्यालयो को भी चाहिए कि वे अपने कार्यकलापो मे वित्तीय अनुशासन का पालन कर अपनी वित्तीय स्थिति को सुदृढ़ करें और सरकार पर अपनी निर्भरता को कम करे। सरकार को अपने कार्यकलापों द्वारा कल्याणकारी राज्य की भूमिका का निर्वाह करते हुए मानव संसाधनों का विकास कर राष्ट्र के चहुमुखी विकास मे अपना सार्थक योगदान देना चाहिए। ❑❑

13, श्री वार्ष्णेय महाविद्यालय क्वार्टर्स
बांकेलाल नगर, जी.टी. रोड, अलीगढ़
उत्तर प्रदेश

भाषा शिक्षण द्वारा मूल्यों का संप्रेषण

❒ रामनिवास

हिंदी में कबीर और तुलसी की भक्ति रचनाएं मन, वाणी और कर्म की एकता पर जोर देती हैं। सत्य जीवन का शाश्वत मूल्य है इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती। इसके आसपास संपूर्ण मनुष्य जाति का जीवन चक्र घूमता है। "सत्य" ही ईश्वर है। सत्य बोलने से बड़ी कोई तपस्या नहीं। झूठ बोलने से बढ़कर जीवन में कोई दूसरा "पाप" नहीं। जिसकी वाणी और हृदय में सत्य है वहीं पर ईश्वर का वास है।

भाषा शिक्षण द्वारा मूल्यो का सप्रेषण अन्य विषयो की तुलना मे प्रभावी ढग से करने के पर्याप्त अवसर मिलते है। मध्यकाल के प्रसिद्ध सत कवियो की समस्त रचनाएं मूल्यो का विकास करने मे सक्षम हैं। सत कबीर की रचनाए कदम-कदम पर सचेत करती है। उनका जीवन एव सदेश पुस्तको में पढने के साथ-साथ जीवन व्यवहार मे लाने के लिए है। कबीर भौतिक दृष्टि से धन वैभव प्राप्त न कर सके। अपने स्वय के परिश्रम से जो धन मिला उसी में आत्मसंतोष कर जीवन निर्वाह किया। वे सभी के अनुकरणीय बन गए। मूल्यो की स्थापना के लिए शिक्षको का विशेष दायित्व है। वे स्वयं भी मूल्यो को आत्मसात् कर छात्रों के सम्मुख आदर्श प्रस्तुत करें। मूल्य परक खेलो के आयोजन के साथ ही हमे सद्गुणो के विकास हेतु अनेक प्रयास और ज्ञान की खोज में प्रयत्नशील रहना होगा। सत्य, अहिसा, दया, प्रेम, सदाचार, भाईचारा, सर्वधर्म समभाव, देशप्रेम जैसे मानवीय गुण हमे सभ्य और सुसंस्कृत बनाते हैं। दुर्गुण पाश्विकता के सूचक हैं। अनुभव को आधार बनाकर महापुरुषो के जीवन की घटनाओ, विभिन्न प्रसगो के द्वारा सद्गुणों के प्रति प्रेम जगाना शिक्षण की सफलता है।

"बदले हुए जीवन मूल्य और वर्तमान हिंदी कहानी, बदलते समाज संबध और हिदी कविता, परिवर्तित जीवन मान और हिंदी के समस्या नाटक" शीर्षक आलेख "भाषा सेतु" त्रैमासिकी हिदी साहित्य परिषद्, अहमदाबाद के तीन अको में समय-समय पर मैने गिरते हुए मानवीय मूल्यों की चर्चा की है। भाषा शिक्षण के द्वारा सहज और प्रभावी ढग से हम विद्यार्थियो के हृदय मे सत्य, अहिसा, नैतिकता, आदर्श, भाईचारा, सर्वधर्म समभाव, देशप्रेम, छुआछूत एव जाति-पाति विरोध और विश्व बधुत्व की भावना जगा सकते है। "मूल्य" कोई नई वस्तु या विचार नही है बल्कि सुदृढ़ आत्मिक इच्छा शक्ति का लोप होने के कारण सद्गुण भुलाए जा रहे है। बच्चों के मन मे अनेक सद्गुण विद्यमान है। आवश्यकता इस बात की है कि इन्हे किस प्रकार जगाया जाए। प्राथमिक स्तर पर हिदी भाषा के पाठ्यक्रम में ही कबीर, तुलसी की रचनाओ को पढ़ाया जाना मूल्यो के विकास की दृष्टि से सर्वोत्तम है। मूल्यो के अभाव मे ही शिक्षण कार्य की रोचकता कम होती जा रही है। इसीलिए आज छात्र-छात्राए दिग्भ्रमित और शिक्षक असमंजस में दिख रहे है।

सप्रेषण का प्रमुख साधन है भाषा। प्रत्येक भाषा का अपना साहित्य है। भाषा और साहित्य शिक्षण के द्वारा कक्षा में जिन मूल्यों की चर्चा शिक्षक करते हैं वे मूल्य केवल चर्चा तक ही सीमित रहते है। शिक्षकों के

वास्तविक जीवन से उनका सबधं अधिक नहीं है। परिणाम यह होता है कि कक्षा में जिन सद्गुणों, मूल्यो का सप्रेषण किया जाता है उनका प्रभाव बालको के अंतस् पर नही पड़ता। जीवन मूल्यों को संप्रेषित करने वाले शिक्षक की "करनी और कथनी" का अतर ही गुणों के विकास में अवरोध बन जाता है। मूल्यो की स्थापना हेतु शिक्षको को निम्न बिन्दुओ पर विचार करना आवश्यक है–

- ☐ शिक्षक मूल्यों के प्रति अपने आत्मविश्वास को सुदृढ़ बनाएं।
- ☐ शिक्षक के आचरण और व्यवहार का प्रभाव उसके सपर्क मे आने वाले छात्र-छात्राओं पर निश्चित रूप से पडता है।
- ☐ शिक्षक के जीवन मूल्यों के अभिसिचन से ही उसके विद्यार्थियो में सद्गणों का पौधा हरा होगा।
- ☐ "कक्षा का वातावरण तनाव विहीन और लोकतांत्रिक हो जिसमें प्रत्येक छात्र-छात्रा अपनी जिज्ञासा शांत कर सके।"
- ☐ पाठ्य-वस्तु मे नीति कथाओ, जीवनियो और कहानियों का यथा प्रसग उल्लेख हो।
- ☐ जीवन मूल्य परक खेलों का आयोजन।
- ☐ सद्गुणो की स्थापना हेतु निरंतर अनेकविध प्रयास और ज्ञान की खोज।

हिंदी में कबीर और तुलसी की भक्ति रचनाए मन, वाणी और कर्म की एकता पर जोर देती है। सत्य जीवन का शाश्वत मूल्य है इसकी अनदेखी नही की जा सकती। इसके आसपास संपूर्ण मनुष्य जाति का जीवन चक्र घूमता है। "सत्य" ही ईश्वर है। सत्य बोलने से बड़ी कोई तपस्या नहीं। झूठ बोलने से बढ़कर जीवन मे कोई दूसरा "पाप" नही। जिसकी वाणी और हृदय में सत्य है वहीं पर ईश्वर का वास है। कबीर कहते है–

सांच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदे सांच है, ताके हिरदे आप।।

सत्य बोलने से सबंधित कोई लघुकथा, किसी महापुरुष के जीवन की घटना, प्रसग का उदाहरण देकर पुष्ट की जाए। सत्य भाषण के प्रति प्रेम जगाने हेतु उन व्यक्तियो का उदाहरण प्रस्तुत किया जाए जिन्होंने असत्य का जीवन जीकर दुख झेले हैं। कक्षा में सत्यप्रिय छात्र-छात्राओ को प्रोत्साहन दिया जाना आवश्यक है। विद्यालय प्रागण से पाई कोई भी वस्तु विद्यालय के "खोया पाया विभाग" मे जमा कराने वाले छात्र-छात्राओ का नाम विद्यालय के वार्षिक उत्सव के अवसर पर सत्य और ईमानदारी हेतु घोषित कर उन्हे पुरस्कृत करना। मन की दुर्बलता जीवन के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण दर्शाती है। यदि मन मे सद्गुणो और परिश्रम के प्रति शक्तिशाली इच्छा है तो बड़े से बड़े कठिन कार्य भी किए जा सकते है। मन की शक्ति किस ओर जा रही है यह जानना अति आवश्यक है। मन की हार और जीत ही जीवन की हार जीत निश्चित करती है–

मन के हारे हार है, मन जीते जग जीत।
कहै कबीर हरि पाइयां, ये मन ही की परतीत।

मन कल्पनाशील रहता है। एक के बाद एक इच्छा न चाहते हुए भी उत्पन्न होती रहती हैं। इच्छाएं अनन्त है, आत्मसतोष के बिना जीवन मे शाति नही मिलती। आज अधिक से अधिक धन अर्जित करने की लालसा मनुष्य पर इस कदर हावी है कि वह अच्छे बुरे की परख किए बिना रात-दिन मशीनरी के कलपुर्जे की तरह क्रियाशील है। इसी कारण नगर जीवन मे समाज संबंध टूटते जा रहे है। रिश्ते नाते भी औपचारिकता मे बदल रहे है। अधिक से अधिक प्राप्त हो, यह लालसा त्याग कर वर्तमान मे संतोष करना ही श्रेयस्कर है–

सांई इतना दीजिए जा मे कुटुव समाय।
मै भी भूखा न रहू, साधु भी भूखा न जाय।।
गोधन, गजधन, बाजधन और रतन धन खान।
जब आवै संतोष धन, सब धन धूरि समान।।

समय अमूल्य है यह किसी प्रकार से क्रय नहीं किया जा सकता। समय निरन्तर परिवर्तनशील है यह लगातार अपनी गति से आगे बढ़ता रहता है। समय किसी की प्रतीक्षा नही करता। आज का कार्य हमें आज ही पूरा कर लेना चाहिए। कल के भरोसे कार्य छोडने वाले अपने जीवन में पिछड़ जाते हैं। कार्य और समय का सम्मान कीजिए। निश्चित समय पर अपने कार्य पूरे करने वाले व्यक्ति सफलता प्राप्त करते हैं। कबीर की चेतावनी है–

काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।
पल मे परलै होयगी, बहुरि करेगो कब।।

अहकार की आग से जलती हुई वाणी किसी के भी हृदय में प्रेम, शान्ति उत्पन्न नही कर सकती। संयमित वाणी मनुष्य का आभूषण है। मधुर वाणी के हृदय स्पर्शी प्रभाव से पराए भी अपने बन जाते हैं। वही कटु वाणी से अपने निकटतम संबंधी भी गैर बन जाते हैं–

मधुर वचन है औषधि, कटुक वचन है तीर।
स्रवन द्वार ह्वै संचरे, सालै सकल सरीर।।
ऐसी बानी बोलिए, मन का आपा खोय।
औरन को सीतल करे, आपहु सीतल होय।।

कौन व्यक्ति कितने समय तक जीवित रहेगा यह निश्चयपूर्वक नही कहा जा सकता और मृत्यु के लिए कोई बंधन नही है। वह कभी भी आ सकती है। व्यावहारिक जीवन मे "घमंड" हमारा सबसे बडा दुर्गुण है। "घमड" के कारण ही हम जो हैं नही वह अपने आप को दिखाते हैं। दूसरों की उपेक्षा और तिरस्कार अहकार के चलते ही होता है। मनुष्य के अदर जो थोड़ी विद्या-बुद्धि है यह भी अहंकार के कारण छिप जाती है। निराभिमानी व्यक्ति अपने विनम्र और निष्छल व्यवहार से सभी का प्रिय बन जाता है। अहकारी व्यक्ति निश्चित ही दुर्दशा को प्राप्त होता है–

कबीर गर्व न कीजिए, काल गहे कर केस।
ना जानौ कित मारि है, क्या घर क्या परदेस।।

बुराई का जबाव बुराई से देने पर ही मनुष्यों मे घृणा और द्वेष की आग भडकती है। बुराई का त्याग करना ही होगा। बुराई के स्थान पर हमे अच्छाई से उसका जवाब देना होगा तभी हम मानवीय मूल्यो की रक्षा कर सकते हैं। बुरा व्यक्ति अपने द्वारा किए गए बुरे कार्यो के कारण पश्चाताप की अग्नि मे स्वय ही जलेगा। कबीर कहते है–

जो तोको कांटा बुवै, ताहि बोइ तू फूल।
तोहे फूल को फूल हैं, वाको है तिरसूल।।

दुख किसी भी दशा में किसी को भी नहीं देना चाहिए। अपने से कमजोर व्यक्ति को दुख देने पर दुख ही मिलेगा। जिस व्यवहार को हम अपने लिए अच्छा नही मानते वैसा व्यवहार हमें दूसरों के साथ कदापि नही करना चाहिए। अपना सुधार करने पर ही दुर्गुण समाप्त होगे। दुर्बलों को पीड़ित करने वाले का विनाश अवश्यभावी है–

दुर्बल को न सताइए, जाकी मोटी हाय।
मुई खाल की स्वांस से, सार भसम हो जाय।।

मद्यपान समस्त बुराइयो की जड है। यह मानसिक सतुलन गड़बड़ा देती है। उचित अनुचित का निर्णय लेने की शक्ति समाप्त हो जाती है। परिणामस्वरूप अमानुषिक व्यवहार सामने आता है। मद्यपान से परनारी गमन तक मनुष्य भटक जाता है। समाज व्यवस्था दूषित न हो, समाज सबध अपनी मर्यादा, सीमा के अंतर्गत अनुशासित रहे इसीलिए इन दुष्कर्मो का जड़ मूल से विनाश जरूरी है। कबीर रावण के विनाश और मद्य व्यसनी व्यक्ति के पशुवत व्यवहार की ओर से मनुष्य को सचेत करते हैं–

औगुण कहो सराब का, ज्ञानवत सुनि लेय।
मानुस से पसुआ करै, द्रव्य गाठ का देय।।
परनारी पैनी छुरी, मत कोई लाओ अग।
रावण के दस सिर गए, परनारी के संग।।

निर्दयी व्यवहार मानवीय गुण नहीं है। पेड़-पौधों मे भी जीवन सिद्ध हो चुका है। सभी प्राणियों के प्रति दया का भाव हमारे हृदय मे होना चाहिए। समस्त जड चेतन प्रकृति उस एक ईश्वर की सतान है। वेदों में कहा गया है ईश्वर सृष्टि के कण-कण मे विद्यमान है। एक भी सूक्ष्म अणु उससे खाली नही है। किसी भी जीव के साथ हम जो भी व्यवहार करते है वह ईश्वर के साथ ही हमारा व्यवहार है। प्रत्येक कर्म का साक्षी स्वय ईश्वर है। कबीर कहते है–

दया दिल मे राखिए, तू क्यो निर्दयी होय।
सांई के सब जीव है, कीडी कुंजर सोय।।

पराधीनता शारीरिक हो या मानसिक वह बधन ही है। पराधीनता के कारण मनुष्य अपना समुचित विकास नही कर पाता। विचार रूप मे सड़ी-गली मान्यताए, अंधविश्वासी की दासता, रूढि प्रथाओ का मोह त्यागने मे ही हमारा हित है। मनुष्य, जाति, समाज अथवा देश पराधीनता में अपना अस्तित्व खो देते है। अपने देश,

समाज, धर्म और सस्कृति के एक रूप जीवन और अस्तित्व की चेतना के लिए स्वतत्रता हमारी जन्मजात आवश्यकता है–

पराधीनता पाप है, जान लेहु रे मीत।
रविदास दास पराधीन से कौन करे है प्रीत।।
पराधीन का दीन क्या, पराधीन बेदीन।
रविदास दास पराधीन को सबहि समझे हीन।।

यह सपूर्ण विश्व एक परिवार के समान है। जाति, धर्म और संस्कृति की भिन्नता होते हुए भी मनुष्य की मूल सवेदनाएं एक ही हैं। आवश्यकताएं भी एक समान ही हैं। समस्त भेदभाव भुलाकर हमे सभी के साथ प्रेम का व्यवहार करना चाहिए। बैर भाव छोड़कर सभी के प्रति अपने परिवारीजनों जैसा व्यवहार ही हमे सच्चे अर्थो मे मनुष्य बनाता है–

जग मे बैरी कोई नही सब है अपने मीत।
रविदास सबन ते राखिए निज कुटुब सी प्रीत।।
ऐसा चाहो राज मैं, मिले सबन को अन्न।
छोटे बडे सब सम बसे, रविदास रहै प्रसन्न।।

लघु नाटक, क्षणिका और एकाकी का मचन भी मूल्यो के विकास में सहायक है। मच पर सद्गुणो को व्यवहार मे उतरते देखकर छात्र उनसे प्रभावित होते है। वे हृदय को अधिक गहराई से स्पर्श करते है। शिक्षा मे नवाचारी प्रयोग के अतर्गत आज देश-विदेशो मे क्रिया परक शिक्षण पर बल दिया जा रहा है। प्राथमिक और उच्च प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षक अपने स्वय के विवेक से भी कुछ मूल्य परक खेलो का निर्माण करे जिनका प्रयोग मूल्यों के विकास हेतु किया जा सकता है। कुछ खेल इस प्रकार हैं– "सद्गुण समेटो" नामक खेल में शिक्षक सद्गुण अकित कार्ड बाटकर क्रियान्वित करेगा। खेल मे सिखाए गए अभिनय गीत से विद्यार्थियों के आत्म प्रकाशन में सहायता मिलती है। आत्मविश्वास बढ़ता है। "सत्य वचन है" खेल के द्वारा "कुत्ते को मत मारो", "अपाहिज का नाम लिया करो", "नल बद करो", से क्रमश· पशुओं के प्रति दयालुता, विवेक जागृति, नागरिक दायित्व का विकास होता है। "तेरे नाम अनेक" खेल से बालकों मे सर्वधर्म समभाव की भावना विकसित होती है। वे विभिन्न महापुरुषो के चित्र संकलित करने में रुचि लेते हैं। अलग-अलग धर्मों के पर्व कैसे मनाए जाते है, की जानकारी प्राप्त करने लगते है। "बहुरंगी है धरती हमारी" शीर्षक खेल के द्वारा राष्ट्रीय चेतना जागृत होती है। छात्र राष्ट्रीय सपदा प्रतीको की जानकारी प्राप्त करते है। "हमारी संस्कृति के प्रतीक" खेल छात्रो में सौदर्य बोध का विकास करता है। इस खेल मे संस्कृति के विभिन्न चिह्नो मे रंग भरने, चित्रांकन करने पर छात्रो मे परस्पर मित्रता, विश्वास और भाईचारे की भावना का विकास होता है। "दीवारो से दिल तक पहुचे" खेल बालको को सुभाषित और सूक्तियो के सकलन हेतु प्रेरित करता है। ☐☐

क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान
अजमेर, राजस्थान

जीवन विज्ञान शिक्षा की नई शाखा

❑ शुद्धात्मप्रकाश जैन

जीवन विज्ञान किसी धर्म या सम्प्रदाय से सम्बन्धित नहीं है। यह मात्र विद्या की शाखा है। अतः इसका विकास शिक्षा शाखा के रूप में होना चाहिए। बौद्धिक विकास के साथ-साथ आध्यात्म, सहिष्णुता, उदारता, प्रेम और एकता के भावों का सन्तुलित विकास अपेक्षित है।

'शिक्षा' शब्द को अनेक अर्थो में प्रयुक्त किया जाता है यथा– विद्या, ज्ञान, बोध, सीख आदि। शिक्षा का उद्देश्य है कि बालक का शारीरिक, मानसिक, नैतिक, चारित्रिक व भावात्मक विकास करके उसे सामाजिक एव राजनैतिक कर्तव्यों के निर्वाह के योग्य बनाना, जिससे वह एक सफल नागरिक का जीवन जीने योग्य बन सके। यह तभी संभव हो सकता है जब शिक्षा मे जीवन मूल्यों, नैतिक, आध्यात्मिक शिक्षा को सम्मिलित किया जाए। पिछले कुछ दशकों में शिक्षा में जीवन मूल्यों एवं नैतिक शिक्षा की आवश्यकता महसूस की गई। आज जीवन विज्ञान शिक्षा की इसी रिक्तता की पूर्ति के रूप में अवतरित हुआ है।

आज शिक्षा का अर्थ है– अध्ययन करना, परन्तु वास्तव मे शिक्षा का अर्थ है– अभ्यास करना। मात्र अध्ययन से ही मनुष्य सही अर्थो मे मनुष्य नहीं बन सकता, इसके लिए अभ्यास भी आवश्यक है। यह अभ्यास दो प्रकार का है– ● ग्रहणात्मक अभ्यास और ● सेवनात्मक अभ्यास। शिक्षा को पहले जानो, समझो, तत्पश्चात् उसका व्यवहार में सयोजन करो। यही शिक्षा का वास्तविक क्रम है। इसी क्रम मे जीवन विज्ञान अपनी अह भूमिका रखता है। इस क्रम के भग होने के कारण ही शिक्षा में असन्तुलन उत्पन्न हो गया है।

"आज अभ्यासात्मक शिक्षा छूट गई, ज्ञानात्मक शिक्षा बच गई। शिक्षा का एक चरण टूट गया। वह लगड़ी हो गई। इसलिए शिक्षा का जो परिणाम आना चाहिए, वह नही आ रहा है।"

आज के अत्यन्त वस्तुवादी एव भौतिक जगत में मनुष्य वैज्ञानिकता के आगोश में समाता चला जा रहा है। इसी वैज्ञानिकता की काली कालिमा के तले आध्यात्मिकता की मधुर लालिमा क्षीण होती जा रही है। आध्यात्म पर वैज्ञानिकता का प्रभाव एवं प्रभुत्व बढता ही जा रहा है। आज के मनुष्य को ऐसा लगने लगा है कि आध्यात्म में कुछ नही है। अत वह उसे उपेक्षित कर आधुनिकता की अंधी दौड में दौड़ा चला जा रहा है। इसी दौड़ का परिणाम है विकृत मनोशारीरिक व्यक्तित्व। इसी व्यक्तित्व को सुसमायोजित बनाने के लिए, आचार्य महाप्रज्ञ ने जीवन विज्ञान को मुख्य आधार बताया है–

"युग की सबसे बड़ी बीमारी है– कोरा वैज्ञानिक होना, आध्यात्मिक न होना। व्यक्ति की इसी मनोवृत्ति ने बहुत सारी बीमारियों को जन्म दिया है। जीवन विज्ञान का मुख्य सूत्र है– आध्यात्मिक वैज्ञानिक व्यक्तित्व का निर्माण; न कोरा वैज्ञानिक, न कोरा आध्यात्मिक। यह वर्तमान युग की सबसे बड़ी अपेक्षा है। युगीन समस्याओं का सबसे बड़ा समाधान है, इसके लिए आवश्यक है– जीवन शैली को समझना और जीवन शैली को बदलना। इसके लिए आवश्यक है सुव्यवस्थित वैज्ञानिक उपक्रम, एक नई विद्या शाखा का विकास।"

जीवन विज्ञान को वैज्ञानिकता से जोडने की बात

जब चलती है तो लोग इसे किसी धर्म या सम्प्रदाय से सम्बन्धित समझने लगते हैं। जीवन विज्ञान किसी धर्म या सम्प्रदाय से सम्बन्धित न होकर मात्र शिक्षाशास्त्र की एक शाखा है। जिसने शिक्षा मे पूर्णता प्रदान करने एवं उसके उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जन्म लिया है। इसी विषय को स्पष्ट करते हुए आचार्य महाप्रज्ञ कहते है–

"जीवन विज्ञान किसी धर्म या सम्प्रदाय से सम्बन्धित नही है। यह मात्र विद्या की शाखा है। मै चाहता हूं [illegible] निकास शिक्षा शाखा के रूप मे होना चाहिए।

जीवन विज्ञान [illegible] सहिष्णुता, है– [illegible] विकास

□ जीवन के परिष्कार [illegible]

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

हमारा राष्ट्र भारतवर्ष 15 अगस्त, 1947 को अंग्रेजों के शासन से स्वतन्त्र हुआ, परन्तु अनैतिकता, अन्याय, अमानवीय जीवन मूल्यो की जंजीरो में अभी भी जकड़ा हुआ है। हमे सही मायने मे आजादी तब मिल सकती है जब नैतिकता एव चारित्रिकता का विकास हो। इसी पावन भावना के फलस्वरूप अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य तुलसी ने 2 मार्च, 1949 को एक आन्दोलन प्रारम्भ किया– अणुव्रत आन्दोलन। अणुव्रत का अर्थ है– छोटे-छोटे संकल्पो के द्वारा नैतिक चेतना को बलवान बनाना। शिक्षा जगत् की अपनी समस्याए है। उच्छृंखलता, अनैतिकता, व्यसन व हिसात्मक उपद्रव की प्रवृत्तियां सभी के लिए चिन्ता का विषय बनी हैं। इनके समाधान के लिए अणुव्रत आन्दोलन ने विद्यार्थी अणुव्रत एव शिक्षक अणुव्रत की बात कही। यही अणुव्रत आन्दोलन कालान्तर में चलकर 'जीवन विज्ञान' के नाम से विकसित होकर शिक्षाशास्त्र की एक शाखा बना।

जीवन विज्ञान का अर्थ एवं प्रकृति

'जीवन विज्ञान' शब्द अपने आप मे स्पष्ट एवं परिपूर्ण है। जीवन विज्ञान अर्थात् जीवन जीने की कला का विज्ञान। जीवन जीने के लिए जीवन मूल्यो की महती आवश्यकता है। नैतिक, धार्मिक चारित्रिक एवं विभिन्न मानवीय मूल्यों से समन्वित शिक्षा पद्धति का नाम जीवन विज्ञान है।

जीवन विज्ञान की परिकल्पना निम्न चार प्रकार से की गई है–

प्रथम परिकल्पना– जीवन विज्ञान की प्रथम परिकल्पना यही है कि शिक्षा प्रणाली सन्तुलित हो। जीवन विज्ञान का एक अर्थ है– सन्तुलित शिक्षा प्रणाली। संतुलित का अभिप्राय है– जिस प्रकार वर्तमान शिक्षा प्रणाली में शारीरिक विकास और बौद्धिक विकास का प्रयत्न किया जा रहा है, वैसा ही प्रयत्न आज उपेक्षित पड़े हुए मानसिक विकास एव भावात्मक विकास के लिए भी हो। ऐसा होने पर ही शिक्षा प्रणाली सन्तुलित हो सकेगी।

द्वितीय परिकल्पना– जीवन विज्ञान की द्वितीय परिकल्पना यह है कि वर्तमान मे जो जैविक असन्तुलन दिखाई दे रहा है, उसे सन्तुलित करना। आज मस्तिष्क के बाए हिस्से (तर्कात्मक योग्यता) को विकसित करने पर अधिक बल दिया जा रहा है, जबकि दांया हिस्सा (भावात्मक योग्यता) पूर्णतः उपेक्षित पड़ा है। इसका सन्तुलन स्थापित करना जीवन विज्ञान का द्वितीय कार्य है।

तृतीय परिकल्पना– जीवन विज्ञान का तीसरा अर्थ या परिकल्पना है– क्षमता की आस्था का जागरण। एक मनुष्य के अन्दर अनंत योग्यताएं / क्षमताएं विद्यमान हैं, जिनका उसे पता नहीं होता है। अत. उन क्षमताओ का उपयोग नहीं कर पाता, वे सुप्त पड़ी रहती हैं। जीवन विज्ञान इन सुप्त क्षमताओं को जाग्रत करता है।

विज्ञान भी इसी निष्कर्ष पर पहुचता है कि हमारे मस्तिष्क का 9/10 भाग अवचेतन अवस्था मे रहता है अर्थात् उसका हमें पता नहीं होता। हमारे मस्तिष्क में अनेक क्षमताएं है, परन्तु आदमी उन क्षमताओं का पाच-सात प्रतिशत ही उपयोग कर पाता है। जो दस प्रतिशत उपयोग करने लग जाता है, वह महान व्यक्ति बन जाता है। जो उपयोग नहीं कर पाता, उसकी सारी क्षमताएं सोई रह जाती है।

चतुर्थ परिकल्पना– जीवन विज्ञान की चौथी परिकल्पना है– परिष्कार। यह परिष्कार तीन प्रकार से होता है– प्रथम, दृष्टिकोण का परिष्कार, द्वितीय, व्यवहार का

परिष्कार और तृतीय, भावना का परिष्कार।

इस परिष्कार के लिए "पहले हम यह सोचे कि हमारे दृष्टिकोण पर, व्यवहार और भाव पर नियन्त्रण किसका है? कौन इनको संचालित करता है? वैज्ञानिक खोजो ने यह प्रस्थापित किया है कि इन सब पर हाइपोथेलेमस (मस्तिष्क का एक भाग) तथा अन्त.स्रावी ग्रन्थियो का नियंत्रण है। पीनियल और पिच्यूटरी— ये ग्रन्थियां इनको सचालित करती है। इन ग्रन्थियो से प्रभावित एड्रीनल भी इन पर नियंत्रण रखती हैं। हमे परिष्कार करना है भावना का। यह हमारा लक्ष्य है, किन्तु जब तक हाइपोथेलेमस पर ध्यान केन्द्रित नही करेंगे, तब तक ग्रन्थियों से स्रवित होने वाले स्राव का परिष्कार नहीं होगा और जब तक यह ग्रथि-स्राव परिष्कृत नही होगा तब तक दृष्टिकोण, व्यवहार और भाव का परिष्कार नहीं होगा।

यह सही है कि परिस्थितिया हमारे दृष्टिकोण, व्यवहार और भाव को प्रभावित करती है, किन्तु उनका स्थान पहला नहीं है, द्वितीय है। वे मुख्य नही गौण हैं; मुख्य हैं अन्त.स्रावी ग्रन्थियों के स्राव। इन्हे उपादान कारण कहा जा सकता है और परिस्थिति को निमित्त कारण माना जा सकता है।"

शिक्षा में दो बिन्दु होते हैं— एक सैद्धान्तिक और दूसरा प्रायोगिक। सैद्धान्तिक बिन्दु जीवन विज्ञान है तो प्रायोगिक बिन्दु प्रेक्षाध्यान है। इसी प्रेक्षाध्यान के माध्यम से उपर्युक्त ग्रन्थि स्राव को सन्तुलित रखा जाता है, नियत्रित रखा जाता है।

जीवन विज्ञान की परिभाषा

जीवन विज्ञान के उद्‌भव से लेकर विकास तक उसी से जुड़े रहकर आचार्य महाप्रज्ञ ने जीवन विज्ञान को समय-समय पर विभिन्न रूप से, विभिन्न शब्दों में परिभाषित किया है—

- ☐ जीवन विज्ञान सम्यक् जीवन जीने की कला के विज्ञान का प्रशिक्षण है।
- ☐ जीवन विज्ञान अहिसा की शिक्षा, नैतिकता की शिक्षा, आन्तरिक परिवर्तन की शिक्षा पद्धति का नाम है।
- ☐ शिक्षा मे अणुव्रत और प्रेक्षाध्यान की समन्वित पद्धति का नाम जीवन विज्ञान है।
- ☐ जीवन के नियमों की खोज का नाम जीवन विज्ञान है।
- ☐ शरीर के मुख्य अगो पर विचार एवं प्रयोग का नाम है— जीवन विज्ञान।

जीवन विज्ञान की उपर्युक्त विभिन्न परिभाषाओं को नई विद्या शाखा के सन्दर्भ में समेकित रूप से इस प्रकार परिभाषित किया गया है—

"जीवन विज्ञान [illegible] है। अत. इसका अंग, उनके **साथ-साथ आध्यात्म, सहिष्णुता, उदारता,** विभिन्न क्षेत्रो मे अनुप्रयोग। [illegible] है। जिसकी परिणति संतुलित एव सर्वागीण व्यक्ति के रूप मे होती है।"

"Science of living is a science which studies the fundamentals of living techniques for their development and their application in different fields of life ultimetely to bring about the development of a balanced and integrated Personality."

जीवन विज्ञान के उद्देश्य

जीवन विज्ञान शिक्षा शास्त्र के क्षेत्र में एक नई शाखा के रूप में उभर रहा है। प्रत्येक नई विद्या शाखा के अपने लक्ष्य एव उद्देश्य होते हैं, जिससे उसकी सही दिशा का निश्चय हो सके। इस दिशा मे अनेक समस्याए होती है, जिनका समाधान प्रस्तुत करना ही इसकी सफलता है। अतः उसके कुछ सिद्धान्त या उद्देश्य सुनिश्चित होते हैं। जीवन विज्ञान के उद्देश्य के सम्बन्ध में जीवन विज्ञान के विशेषज्ञ माने जाने वाले आचार्य महाप्रज्ञ का कथन उल्लेखनीय है—

"जीवन विज्ञान का उद्देश्य है— व्यक्तित्व का विकास। भावात्मक विकास रहित बौद्धिक विकास और बौद्धिक विकास रहित भावात्मक विकास अपर्याप्त है। जीवन के लिए आवश्यक सुविधाओं के एकत्रीकरण के लिए बौद्धिक विकास अत्यन्त उपयोगी होता है। शान्तिपूर्ण जीवन के लिए भावनात्मक विकास अनिवार्य है। जीवन आवश्यक

है– यह विशिष्ट अधिगम है– जीवन विज्ञान इस द्वितीय अधिगम की व्याख्या करता है। जीवन के बाह्य और आन्तरिक दोनो पक्षो के सामञ्जस्य बिना सम्यक् जीवन नही जीया जा सकता। बाह्य पक्ष की सपूर्ति पदार्थ से होती है। आन्तरिक पक्ष की सपूर्ति जैविक रसायनो, नाड़ी तत्रीय प्रकम्पनों, कर्म स्पन्दनो से और चेतनात्व की निर्मलता से हो सकती है। जीवन विज्ञान इन सभी के समीकरण की प्रक्रिया है, यह प्रायोगिक प्रक्रिया है।"

जीवन विज्ञान के निम्न उद्देश्य निर्धारित किए गए है–

- ☐ जीवन के परिष्कार द्वारा आध्यात्मिक वैज्ञानिक व्यक्तित्व का निर्माण करना।
- ☐ जीवन की शारीरिक, मानसिक एवं चैतसिक प्रक्रियाओ पर योग व प्रेक्षाध्यान की प्रक्रियाओ के प्रभाव का अध्ययन करना।
- ☐ जीवन के उन नियमो एवं प्रक्रियाओं का अध्ययन तथा अन्वेषण करना, जिनसे जीवन के ज्ञानात्मक, भावात्मक व क्रियात्मक पक्ष का परिष्कार होता है।
- ☐ बौद्धिक और भावात्मक विकास का सन्तुलन।
- ☐ संवेग और विवेक मे सामञ्जस्य।
- ☐ सामाजिकता और वैयक्तिकता मे सामञ्जस्य।
- ☐ मानवीय सबंधों मे परिवर्तन।
- ☐ नैतिक मूल्यों का विकास।
- ☐ आत्मानुशासन की क्षमता का विकास।
- ☐ मानवीय समस्याओ के प्रति सवेदनशीलता का विकास।
- ☐ पुस्तकीय ज्ञान के साथ-साथ अच्छे ढंग से जीवन जीने की कला का प्रशिक्षण।
- ☐ संवेग नियत्रण की पद्धति सीखना।
- ☐ सामाजिक व्यवहार को निश्चल एवं मैत्रीपूर्ण बनाना।
- ☐ मादक वस्तुओ के सेवन से मुक्ति दिलाना।
- ☐ जीवन की समस्याओं के समाधान की खोज एवं स्वस्थ जीवन जीने का मार्ग प्रशस्त करना।
- ☐ स्वयं की शक्तियों से परिचय कराना व उपयोग करने मे दक्ष बनाना।

जीवन विज्ञान के विभिन्न रूप

जीवन विज्ञान को अनेक दृष्टियों से देखने पर उसके विभिन्न रूप सामने आते है। उन विभिन्न रूपों मे यद्यपि कोई वस्तुभेद या मतभेद नही है, अपितु वे मात्र विभिन्न दृष्टिकोणो के परिणाम है। जीवन विज्ञान के विभिन्न रूप निम्नानुसार वर्णित है–

जीवन विज्ञानः नई विद्या शाखा– सन् 1981 मे राजस्थान शिक्षा सचिवालय द्वारा अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी एव आचार्य महाप्रज्ञ के सान्निध्य में एक शिक्षा गोष्ठी का आयोजन किया गया। नैतिक शिक्षा सबंधी गहन विचार-विमर्श हुआ। श्री चन्दनमल बैद ने कहा– "हमने यह निर्णय लिया है कि हमारी शिक्षा प्रणाली मे कुछ नए प्रयोग किए जाएं। हम चाहते है कि परस्पर विचार-विमर्श कर निर्णायक मे ऐसा हल खोजा जाए जो शिक्षा के सम्बन्ध में हमारे प्रयोगों का मार्गदर्शन कर सके।" आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा कि "मैं नही समझता कि केवल पुस्तकीय ज्ञान छात्रों के नैतिक विकास मे कोई विशेष सहयोग कर सकेगा। आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षा मे जीवन विज्ञान को एक नई विद्या शाखा के रूप मे स्वीकार किया जाए। मैं मानता हूं कि यदि जीवन विज्ञान को साइन्स की तरह सैद्धान्तिक तथा प्रायोगिक स्तर पर चेतना के जागरण के लिए उपयोग किया जाए तो एक क्रान्ति घटित हो सकती है; 'उससे संतुलित व्यक्ति निकलेंगे।"

जीवन विज्ञानः समन्वित पद्धति– जीवन विज्ञान एक समन्वित तथा परिपूर्ण शिक्षा प्रणाली है। समन्वित इसलिए है कि इसमें शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एव भावनात्मक विकास का सन्तुलन स्थापित किया गया है और परिपूर्ण इसलिए है कि इसमें सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ-साथ प्रायोगिक अभ्यास भी आवश्यक है। "शिक्षा का अर्थ है– अभ्यास। अभ्यास दो प्रकार का होता है– ग्रहणात्मक अभ्यास और आसेवनात्मक अभ्यास। शिक्षा इन दो चरणो मे चलती है। शिक्षा का पहला चरण था 'ग्रहण' और दूसरा चरण था 'आसेवन'। जानना भी शिक्षा है, पर जानना मात्र शिक्षा नही है। आसेवन भी शिक्षा है और यह शिक्षा का महत्वपूर्ण अंग है।" ग्रहण और आसेवन–

दोनो की समन्वयात्मक शिक्षा पद्धति ही जीवन विज्ञान है। समन्वित पद्धति को स्पष्ट करने हेतु आचार्य महाप्रज्ञ का कथन उल्लेखनीय है– "जीवन विज्ञान समन्वित पद्धति का नाम है। इसमें अहिंसा की शिक्षा, नैतिक शिक्षा और आन्तरिक परिवर्तन की शिक्षा तीनों का समन्वय है। इसे शिक्षा के क्षेत्र में अणुव्रत और प्रेक्षाध्यान के समन्वय से विकसित किया गया है।"

जीवन विज्ञानः नियमों की खोज– 'जीवन विज्ञान' मे जीवन के विभिन्न पहलुओं की खोज की जाती है और उनके आधार पर जीवन जीने के नियमो की रचना की जाती है। इन नियमों के उपयोग द्वारा जीवन का सफलतम विकास होता है। इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए आचार्य महाप्रज्ञ ने कहा है– "जीवन विज्ञान का अर्थ है– 'जीवन के नियमों की खोज'। जीवन विज्ञान के तीन मुख्य पक्ष है– ज्ञानात्मक पक्ष, भावात्मक पक्ष, क्रियात्मक पक्ष।

★ जीवन के उन नियमों की खोज जिनसे इन तीनो पक्षों का परिष्कार किया जा सके।
★ जीवन के उन नियमो की खोज, जिनसे भावात्मक विकास और बौद्धिक विकास मे सन्तुलन स्थापित किया जा सके।
★ जीवन के उन नियमो की खोज, जिनसे प्रज्ञा को, अन्तःकरण को, शुद्ध चेतना को जगाया जा सके। अचेतन मन को परिष्कृत किया जा सके।

जीवन विज्ञानः बहु आयामी शिक्षा प्रणाली– मानवीय चेतना शरीर, मन और भाव– इन तीनो से प्रभावित होती है। अतः सन्तुलित जीवन जीने के लिए इन तीनो को समझना अनिवार्य है, क्योकि ये हमारे जीवन को विविध प्रकार से प्रभावित करते हैं। इन सबको जीवन विज्ञान के अन्तर्गत अनुशासित करके बहुआयामी शिक्षा प्रणाली के रूप में भी उद्भव हुआ है।

जीवन विज्ञान के आधार

● जीवन विज्ञान का प्रथम एव सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधारभूत तत्त्व है– शरीर। शरीर के बिना जीवन की स्थिति और कल्पना सभव नही है। शरीर के नाड़ी सस्थान एव मस्तिष्क आदि के द्वारा ऊर्जा तथा चेतना का संग्रहण होता है। इसी के द्वारा हमारी विभिन्न प्रवृत्तियो एव व्यवहार का सचालन बहुत ही सहजता व सरलता से होता है।

● जीवन विज्ञान का द्वितीय आधारभूत तत्त्व है– श्वांस। श्वांस जीवन का आवश्यक साधन है। शरीर के सचालन एवं नियमन मे श्वांस की अह भूमिका है। श्वास वह तत्व है जो अन्तर्जगत से बहिर्जगत मे सेतु का कार्य करता है। वह अन्दर जाता है तो प्राणवायु को ले जाता है और बाहर आता है तो दूषित वायु को लेकर आता है।

● जीवन विज्ञान का तृतीय आधार है– भाषा, वाणी। वाणी के अभाव मे चिन्तन सभव नही और बिना चिन्तन के एक स्वस्थ समाज की कल्पना नहीं की जा सकती। भाषा सम्प्रेषण के लिए एक सशक्त माध्यम है इसके द्वारा ही हम अपने विचारो का आदान-प्रदान कर सकते है। विचारों के सम्प्रेषण के द्वारा ही एक सुसगत समाज का निर्माण किया जा सकता है। पशुओ के पास वाणी का अभाव है। अतः उनका कोई समाज नही होता। कहा है– "पशूनां समाजः, मनुष्याणां समाजः।"

● जीवन विज्ञान का चतुर्थ आधार है– मन। मन के तीन कार्य है– कल्पना, चिन्तन एव तर्क। इन तीनो के द्वारा ही तो कोई नई विषय-वस्तु सामने आती है। अतः मन का बडा ही महत्वपूर्ण स्थान है। आध्यात्मिक दृष्टि से भी मन को बन्ध और मोक्ष का कारण कहा गया है– "मनः एव मनुष्याणां कारण बन्धमोक्षयोः।"

जीवन विज्ञान की प्रक्रियाएं

शरीर, श्वांस, वाणी और मन को सुशिक्षित एव प्रशिक्षित करने की प्रक्रिया ही जीवन विज्ञान की प्रक्रियाए है। वे चार प्रकार की मानी गई हैं–

दर्शन– यह दर्शन तीन तरह से होता है– श्वांस का दर्शन, शरीर का दर्शन और चैतन्य केन्द्रो का दर्शन। सर्वप्रथम श्वास का दर्शन किया जाता है, श्वास मन्द किया जाता है, जिससे मन स्थिर हो जाता है। इसके उपरान्त आता है शरीर दर्शन। शरीर को देखने का तात्पर्य

उसके ऊपरी रंग, रूप आदि को देखना नही है, अपितु उसके भीतर अनेक ग्रन्थि तंत्र तथा उनसे होने वाले रासायनिक परिवर्तनो, प्रकम्पनों, विद्युत-प्रवाहो को देखना है, जिससे हमारे विचारो, मनोभावो एव व्यवहार में परिवर्तन आता है। अन्त में चैतन्य केन्द्रो का दर्शन किया जाता है– हमारे शरीर में कुछ ऐसे स्थान है जहां पर चेतना की स्थिति अत्यधिक रूप से प्रवर्तती है। ऐसे स्थानों को चैतन्य केन्द्र कहा जाता है। वैसे तो सम्पूर्ण शरीर ही चैतन्य केन्द्र है, परन्तु कुछ महत्वपूर्ण चैतन्य केन्द्र माने गए हैं। इनके दर्शन से ये सक्रिय होने लगते है तथा बौद्धिक एवं मानसिक स्तर मे वृद्धि प्रारम्भ होने लगती है।

अनुप्रेक्षा– बारम्बारता की आवृत्ति को अनुप्रेक्षा कहते हैं। व्यवहार शोधन के अन्तर्गत जब किसी आदत मे सुधार करना होता है तब उस विषय की बारम्बार भावना की जाती है, जिससे कि वह भावना आन्तरिक अवचेतन मन तक पहुच जाए। तभी अवचेतन मन मे अवस्थित आदतो मे परिवर्तन आ सकता है। अनुप्रेक्षा मे व्यक्ति का यौगिक प्रक्रियाओ द्वारा अवचेतन मन से सम्पर्क स्थापित किया जाता है तथा तत्समय दिए गए सुझाव उसके अन्तर्मन मे गहरे उतर जाते हैं, जो व्यवहार परिवर्तन में अत्यन्त उपयोगी बनते है।

कायोत्सर्ग– कायोत्सर्ग का अर्थ है काय का उत्सर्जन अर्थात् शिथिलीकरण। दीर्घश्वास के प्रयोग द्वारा शरीर का शिथिलीकरण किया जाता है। जिससे मानसिक तनाव स्वमेव ही नष्ट हो जाता है तथा उससे उत्पन्न होने वाली बीमारिया यथा अनिद्रा, चिन्ता, उच्च रक्तचाप, हृदयरोग आदि से भी छुटकारा मिल जाता है। जब श्वास शिथिल होता है तो शरीर भी शिथिल एव शान्त हो जाता है तब अनेक मनोकायिक रोगो की सहज ही चिकित्सा हो जाती है।

जागरूकता– व्यक्ति अधिकाशत- मूर्छा मे रहता है। वह अधिकाश कार्यो को मूर्छा में कर जाता है, उसको होश नही रहता। यदि वह जागृत रहे तो अनेक समस्याओ से सहज ही बचा जा सकता है। योगशास्त्र और आध्यात्मशास्त्र मे दो प्रकार की निद्रा बताई गई है– लुप्त निद्रा एव जागृत निद्रा। जागरूकता के अभ्यास से इसका बोध निरन्तर बना रहता है। यहा तक कि निद्रा मे भी जागरूकता का अनुभव होता है। यही सतत् जागरूकता जटिल मानसिक रोगो की चिकित्सा को सरल बना देती है।

उपर्युक्त चारो प्रक्रियाओ को जो व्यक्ति साध लेता है वह जीवन की वास्तविक अनुभूतियो का आनन्द प्राप्त कर लेता है। ये चारो प्रक्रियाएं चेतना एवं ऊर्जा की सचारिणी हैं। अत. इनका साधक व्यक्ति चेतना और शक्ति से सम्पन्न बन जाता है। ❑❑

शिक्षाशास्त्र विभाग
श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ
(मानित विश्वविद्यालय) कटवारिया सराय
नई दिल्ली

यौन शिक्षा की आवश्यकता एवं औचित्य

❑ पंकज अरोड़ा

विकासवादी मनोवैज्ञानिकों ने 'यौन-विकास' को मानव के नैतिक, सामाजिक, संज्ञानात्मक, भावात्मक तथा शारीरिक विकास की ही तरह मौलिक एवं सार्वभौमिक स्वीकार किया है। अतः यौन विकास को भी अन्य मानवीय विकास की भांति स्वीकृति व मान्यता दी जानी चाहिए तथा उतनी ही रुचि के साथ विकास एवं जानकारी प्राप्ति की सुविधाएं प्रदान करनी चाहिए। भारत एच.आई.वी. महामारी के तीसरे दौर में प्रवेश कर चुका है। ऐसे में भविष्य की चिंता करते हुए इस क्षेत्र में युद्धस्तर पर कार्य आरंभ हो जाना चाहिए। 'यौन शिक्षा' एक ऐसा ही कम खर्चीला तथा साधारण-सा अस्त्र है जो अनावश्यक मानसिक तनाव, दबाव, यौन प्रतिगमन, एकाकीपन, एड्स व यौन-संक्रमित रोगों तथा यौन संबंधी व्यवहार के अवांछित परिणामों से बचाव कर सकता है।

हमारे प्राचीन मनीषियो, तत्ववेत्ताओ तथा ज्ञान की समस्त शाखाओ-प्रशाखाओ ने धर्म-अर्थ-काम एव मोक्ष, इन चार पुरुषार्थो को मानव-जीवन का लक्ष्य स्वीकार किया है। यह प्राचीन भारतीय जीवन-दर्शन की वह अमूल्य निधि है, जिसे तब से अब तक चुनौती नही दी जा सकी है। आज इसकी प्रतिष्ठा एक सर्वमान्य सिद्धात के रूप में प्रतिस्थापित हो चुकी है।

सांस्कृतिक, भाषायी, रीति-रिवाजो तथा विश्वास की विभिन्नताओं वाले हमारे देश मे यौन शिक्षा आरभ किए जाने का विचार चुनौतीपूर्ण है। भारत में यौन शिक्षा की आवश्यकता 1970 के आरभ से महसूस की गई, जब अनेक चिकित्सालयो मे लोग अनचाहे गर्भ, विषम विवाह, पतियो की यौन व्यवहार मे भूमिका तथा उनसे यौन सबधी असतोष आदि की समस्याओ को लेकर आने लगे। आज लोगो का जीवन व्यवहार तथा यौन व्यवहार तेजी से बदल रहा है। ऐसे मे जनसख्या शिक्षा कार्यक्रमो के साथ-साथ यौन संबधी समस्याओ व चिंताओ पर बात करना आवश्यक हो गया है। 1980 के दशक में एड्स महामारी की पहचान तथा इसके गैर-उपचारात्मक होने की बात पता चलने के साथ ही ऐसा कहा जाने लगा कि एड्स के विरुद्ध 'शिक्षा' ही एकमात्र उपचार है।

वर्तमान सामाजिक परिदृश्य को समाजशास्त्री निकृष्ट मानते है क्योकि इस समय मानव सबधों व इनसे संबधित समस्याएं निरंतर बढ़ रही हैं। 'यौन शिक्षा कार्यक्रम' समाज के विस्फोटकीय विनाश को प्राथमिक उपचार देने के साथ-साथ इसे अनियत्रित स्थिति में पहुंचने से रोकने में भी मददगार सिद्ध होगा।

भारत जैसे देश मे जहां सेक्स के प्रति भ्रांतिया, गलत धारणाए इतनी प्रभावी हैं कि हम प्रयास करके एक दृढ़-सकल्पित, भली प्रकार निर्देशित, व्यवस्थित एव समस्यामूलक दृष्टिकोण के माध्यम से इन पर नियंत्रण प्राप्त कर सकते हैं।

'यौन शिक्षा' वक्त की माग है तथा इसकी शुरुआत के लिए यही सर्वोत्तम समय है।

"धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष, इनमे बड़ा कौन?
जो देता आनंद, लेकिन रहता है मौन।"

यह प्राचीन भारतीय समाज की वास्तविक वयस्कता ही कही जाएगी कि रति सुख की श्रेष्ठ प्राप्ति के प्रयासो

ने, सभोग की मैथुनी सृष्टि की प्रक्रिया चलाने वाले साधन की भूमिका का विस्तार करते हुए, इसे 'संभोग कला' का स्वरूप भी दिया। पहली बार सोलह कलाओ में 'संभोग' को भी स्थान मिला। यह एक ऐसी ऐतिहासिक घटना थी जिसने 'रति-सुख' के मानव समाज के प्रयासों तथा पशु समाज के प्रयासों में विभाजक रेखा खीची। मानव समाज में 'सभोग' संतति के साथ-साथ कला के रूप मे भी प्रतिष्ठित हुआ। पाक कला, श्रृंगार कला व युद्ध कला के साथ सभोग भी व्यावहारिक प्रयोग की कला के रूप मे विकसित हुआ

इस संबंध में 'वात्स्यायन' और उनके 'कामसूत्र' नामक शोध प्रबंध की चर्चा न की जाए तो यह चर्चा अधूरी होगी। यदि एक मोटा अनुमान ले, तो अब से क़रीब 2000 वर्ष पूर्व, महर्षि वात्स्यायन ने बहुत सुलझे हुए ढग से वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाते हुए अपना शोध प्रबंध 'कामसूत्र' लिखा। यह भी एक उल्लेखनीय तथ्य है कि 'कामसूत्र' की विषय-वस्तु केवल 'काम' न होकर दर्शन व आध्यात्म भी है। इसके सात खण्ड है जिनमे से केवल एक खण्ड 'काम कला' पर है। यह खण्ड इस संवेदलशील एवं नैसर्गिक विषय की बहुआयामी रूपरेखा प्रस्तुत करता है। 'कामसूत्र' भी आश्वलायन और याज्ञवल्क्य के गृहसूत्रो की भाति सर्वाधिक स्वीकृति प्राप्त गृहसूत्र रहा है। इस विषय पर वात्स्यायन के विचारो मे उच्चकोटि की गुणवत्ता होने के कारण, यह हालिया हिन्दी साहित्य के रीतिकाल तक यौन शिक्षा (काम कला शिक्षण) का आधार रहा।

रीतिकाल तक समाज का एक वर्ग, जिसमें महिलाओ का वर्चस्व था, यौन शिक्षा देता रहा। सदियो तक चितेरे कामसूत्र को अजता की भित्ति से लेकर लघुचित्रो में उतारते रहे। सदियों तक मूर्तिकार इन्हें गढ़ते रहे और आज खजुराहो, अजन्ता, एलोरा तथा कोणार्क आदि हमारी अमूल्य विरासत बन गए है।

इस संबंध में यह विचारणीय तथ्य है कि तत्कालीन समाज कितना स्वतंत्रचेता एवं वयस्क रहा होगा कि 'काम' के पक्ष पर इतनी गभीरता से गहन विचार किया गया। यह वास्तव मे एक स्वस्थ समाज की पहचान भी है।

उत्थान और पतन जीवन की अनिवार्यता हैं। इसी सिद्धांत के अनुरूप भारतवर्ष में आयुर्वेद, वास्तुशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र की तरह ही कामशास्त्र भी ज्ञान को गुप्त रखने की संकीर्ण प्रवृत्ति का शिकार हो गया। फलत. आज जहां कामशास्त्र विश्वस्तरीय स्वीकृति पा चुका है, हम अभी भी संकीर्णताओ में घुट रहे हैं। यौन ज्ञान एवं यौन शिक्षा विषयक हमारा इतिहास जितना शानदार एवं गौरवमयी रहा है, हमारा वर्तमान उतना ही शोचनीय व शर्मनाक है।

नि:संदेह यह एक विचारणीय एव चिताजनक तथ्य है कि भारत की विशालकाय जनसख्या को नियत्रित करने के उपायो के सदर्भ मे भावी पीढ़ी को विद्यालयी शिक्षा के अंतर्गत ही जनसंख्या नियंत्रण के उपायों व अन्य किशोरावस्थाकालीन वृद्धि तथा विकास सबधी जानकारी दिए जाने की चर्चाएं तो विभिन्न सगठनो व सस्थाओ द्वारा की गई किंतु इस तरफ कोई सकारात्मक पहल अब तक नहीं हो पाई है।

भारत में परिवर्तनशील सामाजिक, नैतिक मान्यताओ एवं मूल्यों के साथ-साथ बाज़ारीकरण की प्रवृत्ति ने हमारे समाज के महत्वपूर्ण अग-किशोरवर्ग/युवावर्ग पर प्रतियोगिता का दबाव बढ़ा दिया है। उच्च शिक्षा प्राप्ति की दौड व व्यवसाय मे स्थापित होने की लालसा के परिणामस्वरूप विवाह की आयु मे वृद्धि होने लगी है। इन सभी कारणो के चलते किशोरवर्ग/युवावर्ग विवाह-पूर्व यौन सबधों को सामान्य मानने लगा है तथा ये संबंध छोटी आयु में गर्भधारण, गर्भपात आदि के साथ-साथ अनेक यौन सक्रमित रोगो (जिनमें एड्स भी शामिल है) के कारण बन रहे है। भारतीय सामाजिक एवं सास्कृतिक परिवेश को ध्यान मे रखते हुए मान्य यौन व्यवहार की सीमाओ के प्रति सच्ची आस्था उत्पन्न किया जाना आवश्यक हो गया है।

आज विश्व का स्वरूप तेजी से बदल रहा है। वैज्ञानिक अनुसधानो एवं मीडिया के क्षेत्र मे हुए क्रांतिकारी परिवर्तनो ने विश्व के सभी देशों को बहुत करीब ला दिया है। इससे हमारा युवावर्ग सर्वाधिक प्रभावित हो रहा है तथा इस वर्ग को हर तरह की जानकारी मिल

रही है। युवा पीढ़ी पर हो रहा पाश्चात्य देशों का प्रभाव यौन संबंधी मूल्यों में गिरावट ला रहा है। ऐसे समय मे भारतीय मूल्यो, जैसे विषम लिंग के प्रति सम्मान, जीवनसाथी व वैवाहिक जीवन का सम्मान, विवाह-पूर्व एवं विवाहेत्तर यौन संबधों की अवमानना को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है।

शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक एवं सामाजिक विकास मानव जीवन की स्वाभाविक प्रक्रिया है। अन्य जीवो की भांति मनुष्य के जीवन में भी विभिन्न चरणो में परिवर्तन होता रहता है। यह परिवर्तन मानव विकास चक्र के विभिन्न चरणों के अनुरूप होता है। मनोवैज्ञानिकों ने मानव के विकास काल को छः भागो में विभक्त किया है–

- ☐ भ्रूणावस्था
- ☐ शैशवावस्था
- ☐ बाल्यावस्था
- ☐ किशोरावस्था/युवावस्था
- ☐ प्रौढावस्था
- ☐ वृद्धावस्था

इन छः अवस्थाओं मे से 'किशोरावस्था' मानव जीवन मे सर्वाधिक परिवर्तनो एव तीव्रतम विकास की अवस्था होती है। राष्ट्रीय शिक्षा शोध और प्रशिक्षण परिषद् (1996) की किशोरावस्था शिक्षा पर राष्ट्रीय संगोष्ठी के प्रतिवेदन' मे बताया गया है कि विश्व स्वास्थ्य संगठन की परिभाषा के अनुसार किशोरावस्था 10 से 19 वर्ष के बीच का आयुकाल है जबकि भारतीय किशोरावस्था स्वास्थ्य संगठन, किशोरावस्था को 10 से 25 वर्ष की आयु के बीच का काल मानता है। मनोवैज्ञानिक लेखक जॉन जेनैवे कागर के अनुसार, "किशोरावस्था का आरभ जैविक एव अंत सास्कृतिक होता है तथा इसमे शारीरिक परिवर्तनों के साथ-साथ अनेक यौन सबंधी परिवर्तन भी बडी तेजी से होते है। इनके परिणामस्वरूप बालक/बालिकाएं प्रजनन हेतु वांछित परिपक्वता प्राप्त करते है। प्रत्येक राष्ट्र की संस्कृति इन परिवर्तनों के सबंध मे समायोजन मे सहायक अथवा बाधक बनती है।"

किशोरावस्थाकालीन विकास का काल सामान्यतः साढ़े चार वर्ष का होता है तथा यह विकास लडकियों मे लडको की तुलना में लगभग दो वर्ष अग्रिम रहता है। भारतीय जनसंख्या का पाचवा हिस्सा अर्थात् 20 प्रतिशत इसी किशोरावस्था का है, जिसे किसी भी राष्ट्र के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानव संसाधन माना जाता है। 'किशोरावस्था' बाल्यावस्था से युवावस्था तक पहुंचने के बीच की कड़ी है। इस अवस्था में होने वाले विशेष व तीव्र परिवर्तनो के कारण 'किशोरावस्था' का मानव जीवन में विशेष महत्व है। किशोर एवं किशोरिया अपनी अस्मिता अर्थात् अपनी अलग पहचान बनाने का प्रयास इसी अवस्था से प्रारंभ करते हैं। इस अवस्था के परिवर्तन प्रारभिक काल में तीव्र होते हैं परन्तु उत्तरकाल या अतिम दो वर्षो मे इनमे थोड़ी स्थिरता आ जाती है। परिवर्तन की विभिन्नता के कारण इस अवस्था को तीन भागो में बांटा जा सकता है–

प्रारंभिक किशोरावस्था (9-13 आयु वर्ष)

इसे 'यौवनारंभ काल' भी कहते है। यह अवस्था तीव्र परिवर्तन की अवस्था है जिसमे विकास हार्मोन तथा यौन-हॉरमोन सक्रिय हो जाते है। हार्मोन्स की सक्रियता से यौनागों में परिवर्तन एवं परिपक्वता आती है, जननागो का विकास होता है, आवाज़ मे भिन्नता आती है, शरीर के विभिन्न अंगो पर बाल बढ़ने लगते हैं तथा बालिकाओ के वक्षस्थल मे परिवर्तन आता है।

मध्य किशोरावस्था (14-15 आयु वर्ष)

इस अवस्था में शारीरिक, सांवेगिक एवं मानसिक विकास परिपक्वता की ओर आने लगता है। यौन अंगो के विकास मे पूर्णता आने लगती है तथा प्रजनन क्षमता की प्राप्ति होती है। इस अवस्था मे लबाई मे तेजी से वृद्धि होने लगती है। 'यौन विषयो' के प्रति जिज्ञासा बढ़ने लगती है व इसके सबंध में जानकारी के लिए ये प्रयत्नशील रहते है। विषम लिंगीय व्यक्ति के प्रति आकर्षण भी बढ जाता है।

उत्तर किशोरावस्था (16 वर्ष एवं अधिक)

इस अवस्था मे शारीरिक विकास की गति धीमी हो जाती है। पूर्ण विकास के लक्षण स्पष्ट दिखाई देने लगते है। किशोर/किशोरियो मे सांवेगिक एव मानसिक स्थिरता आने

लगती है। लड़के एव लड़कियो में शारीरिक सुन्दरता के प्रति सजगता बढ़ जाती है। इसका सीधा संबंध समाज मे अपनी एक विशेष पहचान बनाने से है।

किशोरावस्था की संकल्पना नई है। यूं तो हजारों वर्षो से मानव विकास की इस अवस्था मे होने वाले परिवर्तन अध्ययन का केन्द्र रहे हैं किन्तु इस शब्द का प्रथम उपयोग 20वीं शताब्दी मे अमरीका मे किया गया। किशोरावस्था काल को विभिन्न समाजों में वहां की सामाजिक व सास्कृतिक भिन्ता के सदर्भ में निर्धारित किया जाता है। हम किशोरावस्था को मात्र कुछ वर्षो से जोड़कर नही देख सकते क्योंकि यह व्यक्ति-से-व्यक्ति मे भिन्न होती है। इसका प्रारंभ 9 वर्ष से लेकर 14 वर्ष की आयु तक माना जा सकता है। इसमे अनेक शारीरिक, मनोवैज्ञानिक व सामाजिक परिवर्तन होते है जो बाल्यावस्था से वयस्कता की ओर ले जाते हैं। इस अवस्था की समाप्ति प्रजनन संबंधी पूर्ण विकास के साथ मानी जाती है।

भूख व यौनिकता, वे शक्तिशाली ततु है जो मानव मे बहुत तीव्र भावनाए जगा देते है। भारत के प्रसिद्ध यौन विशेषज्ञ डा प्रकाश कोठारी का कहना है कि विश्व की 1/5 आबादी वाले हमारे राष्ट्र मे यह चौकाने वाला तथ्य है कि यौन संबंधी जानकारी के लिए यहां कोई विश्वसनीय स्रोत नही है। सरकार, मीडिया, विद्यालय, महाविद्यालय और यहा तक कि अभिभावक भी इस जिम्मेदारी को नहीं उठाना चाहते।

विकासवादी मनोवैज्ञानिकों ने 'यौन विकास' को मानव के नैतिक, सामाजिक, सज्ञानात्मक, भावात्मक तथा शारीरिक विकास की ही तरह मौलिक एव सार्वभौमिक स्वीकार किया है। अतः यौन विकास को भी अन्य मानवीय विकास की भाति स्वीकृति व मान्यता दी जानी चाहिए तथा उतनी ही रुचि के साथ विकास एव जानकारी प्राप्ति की सुविधाएं प्रदान करनी चाहिए। भारत एच.आई.वी. महामारी के तीसरे दौर मे प्रवेश कर चुका है। ऐसे मे भविष्य की चिता करते हुए इस क्षेत्र में युद्धस्तर पर कार्य आरंभ हो जाना चाहिए। 'यौन शिक्षा' एक ऐसा ही कम खर्चीला तथा साधारण-सा अस्त्र है जो अनावश्यक मानसिक तनाव, दबाव, यौन प्रतिगमन, एकाकीपन, एड्स एव यौन सक्रमित रोगों व यौन सबंधी व्यवहार के अवांछित परिणामो से बचाव कर सकता है।

किशोरावस्था में होने वाले यौन विकास का व्यक्तित्व के सभी पक्षों पर प्रभाव पड़ता है तथा इससे संबंधित भ्रातियां एव गलत सूचनाएं किशोर पीढ़ी को गहराई से प्रभावित करते है जो उनके व्यवहार, रुचियों व भावी जीवन मे स्पष्टतः दिखाई देते है। इस अवस्था मे होने वाले तनाव, उत्तेजना तथा बचाव की शैली से निपटने के लिए किशोर पीढ़ी मे मानसिक, नैतिक एवं सामाजिक समर्थन की विशेष आवश्यकता होती है। यौन विषयक ज्ञान के शिक्षण के द्वारा इस संबध में स्पष्टता विकसित की जानी चाहिए न कि इस अज्ञानता का शिकार बनना चाहिए।

यौन शिक्षा की आवश्यकता एव महत्व भारत की 'राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 1996' से भी पुष्ट होती है। इस स्वास्थ्य नीति में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि बच्चो के स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाली ऐसी शिक्षा दी जाए, जो उन्हे अनेक सामाजिक समस्याओं, जिसमे यौनिकता संबंधी समस्याए भी शामिल हैं, से मुक्ति दिलवाने वाली हो।

'यौनिकता' हमारे जीवन का एक अभिन्न अग है तथा यह हमारे व्यक्तित्व को प्रभावित करती है, चाहे हम इस विषय को दबाएं, मना करे अथवा प्रभावी रूप से उपयोग करे। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो हमारे जीवन के साथ आरभ होती है व मृत्यु के साथ ही इसका अंत होता है।

भारत जैसे देश में जहां 'सेक्स' के प्रति भ्रातियां, गलत धारणाए इतनी प्रभावी हैं कि हम प्रयास करके एक दृढ़, सकल्पित, भली प्रकार निर्देशित, व्यवस्थित व समस्यामूलक दृष्टिकोण के माध्यम से इन पर नियंत्रण प्राप्त कर सकते है।

'यौन शिक्षा' वक्त की माग है तथा इसकी शुरुआत के लिए यही सर्वोत्तम समय है। ❑❑

सैंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन
दिल्ली विश्वविद्यालय, 33 छात्र मार्ग
दिल्ली

नारी सशक्तिकरण के नए युग का आरम्भ

❑ रमेश सिंह

आज की नारी स्वतंत्र है। सत्ता की कुर्सी हो या खेल का मैदान, वैज्ञानिक अनुसंधानों की प्रयोगशाला हो या कला साहित्य का संसार, आज नारी के लिए प्रत्येक क्षेत्र के द्वार खुले हुए हैं। भारत सहित विश्व के कई राष्ट्रों में आज नारी को समुचित स्थान प्राप्त है। वस्तुतः "स्वतंत्र और सबल प्रस्थितिवाली नारी" ही 21वीं सदी की सबसे बड़ी देन है।

मानव समाज में स्त्री व पुरुष दोनो जीवन रूपी गाड़ी के दो पहियो के समान है। दोनों को विकास हेतु अधिकाधिक क्षेत्रों मे लगभग समान रूप से अवसर भी प्राप्त हैं। इसमे किसी भी एक की उपयोगिता को अस्वीकार नही किया जा सकता। किसी भी स्वस्थ एव विकसित समाज के निर्माण में स्त्री एवं पुरुष दोनों की बराबर की सहभागिता होना परमावश्यक तो है ही साथ ही साथ नैसर्गिक सिद्धान्त तथा पर्यावरणीय सन्तुलन की दृष्टि से भी ऐसा अनिवार्य माना जाता है। बगैर नारी के मानव समाज की कल्पना अर्थहीन है, वैसे भी मानव समाज के स्थायित्व, समुचित एवं सर्वागीण विकास मे महिलाओं का योगदान कभी कम नहीं रहा परन्तु यह एक विडम्बना ही रही है कि समाज मे उन्हे बराबरी का दर्जा शायद ही कभी प्राप्त हुआ हो। उन्हें 'अबला' की उपाधि से सुशोभित किया जाता है, जबकि राष्ट्रपिता इसके सख्त खिलाफ थे, वे कहते थे—"स्त्री को अबला कहना उसे बदनाम करना है वह अगर आघात करने मे निर्बल है तो कष्ट सहने मे उतनी ही बलवान है"। विज्ञान भी इस बात पुष्टि करता है कि यदि महिलाए शारीरिक रूप से पुरुष की तुलना मे कमजोर होती हैं तो जैविक रूप से वे पुरुष से अधिक मजबूत होती हैं, उनमें प्रतिरोधक क्षमता का विकास ज्यादा होता है। महिलाओं की उपयोगिता के सबंध में स्वामी विवेकानन्द की यह उक्ति कि—"जब तक नारी की दशा को सुधारा नहीं जाता तब तक विश्व का कल्याण सम्भव नहीं है, क्या एक पंख मे उड़ पाना पक्षी के लिए सम्भव है"? अत्यन्त महत्वपूर्ण है, फिर भी हमारी सामाजिक व्यवस्था व परंपराओं ने जन्म से ही लड़का व लड़की में भेद किया है, लडके को जहा कुलदीपक, पारिवारिक समृद्धि, यश व प्रतिष्ठा का प्रतीक समझा जाता है, वहीं लड़की को पराई सम्पत्ति व दहेज आदि कारणो से बोझ व अभिशाप समझा जाता है। लेकिन समकालीन विश्व मे अब महिलाओं के पक्ष में हवा चल रही है और सभी जगह इनके सर्वांगीण विकासार्थ अनूकूल वातावरण भी बनता जा रहा है जो सयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा आयोजित चारों विश्व महिला सम्मेलनो से स्वत. सिद्ध हो जाता है, इसलिए अधिकतर सरकारी, गैर-सरकारी संस्थाएं व सामान्य जन 21वी सदी को महिला सदी कहने लगे है। अब नारी प्रत्येक क्षेत्र में अपनी अन्तर्निहित क्षमता द्वारा आत्मविश्वास तथा साहस के साथ पुरुष प्रधान समाज मे अपने अस्तित्व का एहसास दिलाने के प्रयास मे सफलताएं अर्जित कर रही है।

इतिहास साक्षी है कि जब-जब समाज या राष्ट्र ने नारी को अवसर तथा अधिकार दिया है तब-तब नारी

ने विश्व के समक्ष श्रेष्ठ उदाहरण प्रस्तुत किया है, मैत्रेयी, गार्गी, आडाल, विश्वपारा, घोषा, केशा आदि विदुषी नारिया शिक्षा के क्षेत्र में अपने बहुमूल्य योगदान के लिए आज भी पूजनीय हैं। आधुनिक काल में महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान, महाश्वेता देवी, अमृता प्रीतम, अरुन्धती राय आदि ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। रजिया सुल्तान, लक्ष्मीबाई, शिरिमाओ भण्डारनायके, आदि स्त्रिया प्रगति के मार्ग पर सघर्ष और सुनेतृत्व की स्पष्ट मूर्तियो के रूप मे स्थापित हुई है। रंगमंच एव विभिन्न ललित कलाओ के माध्यम से यामिनी कृष्ण मूर्ति, सोनल मान सिह, एम एस सुब्बुलक्ष्मी, लता मंगेशकर, देविकारानी, बैजंती माला, सुधा चन्द्रन, निर्माता निर्देशक मीरा नायर, तनुजा चन्द्रा, कल्पना लाजमी, दीपा मेहता, मेघना गुलजार आदि ने अपने कार्यो से भारतीय मानस को सोचने पर मजबूर कर दिया है। "भारतीय नारी श्रम से नहीं घबराती, किन्तु आसुओं की चिन्ता करते हुए वह रोटी, असमान व्यवहार, अपमान एवं शोषण से अवश्य डरती है"– डा. अम्बेडकर की इस युक्ति से महिला सशक्तिकरण का आभास होता है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में असंदिग्ध रूप से यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओ ने अपने दायित्वो का निर्वहन करते हुए आत्मोन्नयन के साथ राष्ट्रोन्नयन को मूर्त रूप प्रदान किया है। महिलाओं ने इस पुरातन उक्ति को चरितार्थ कर दिखाया है कि यदि पुरुषों मे क्षात्र तेज है तो नारियों में भी दैवी शक्ति है। "महिलाएं प्रेम-पात्र पुत्री हैं, स्नेहमयी भागिनी है, कर्तव्यशीला पत्नी और भविष्य के नागरिकों की माता है।" परिवार एवं समाज की केन्द्र नारी होती है, ऐसा सभी विचारक निर्विवाद रूप से स्वीकारते हैं, वास्तव में शीलवती महिलाएं ही परिवारो को आदर्शोन्मुखी बनाकर समाज एवं राष्ट्र का उत्थान कर सकती हैं। शक्ति पुंज दुर्गा, चण्डी आदि के रूप में आततायियों का वध करने की गाथाओ से हमारा वाङ्मय भरा पड़ा है। उदाहरणत. जीजाभाई सदृश माता ने अपने पुत्र शिवाजी को उस पुण्य कार्य के लिए तैयार किया। अनेक वीरांगनाओं ने अपने पुत्रो, पतियो को भारत की अस्मिता के रक्षार्थ तिलक-आरती करके विदा किया, यहां तक कि युद्ध से भागकर आने वाले पुरुषो के लिए द्वार नही खोले। रजिया सुल्तान ने दिल्ली सल्तनत के मात्र 3 वर्षो के शासनकाल मे ऐक्य एवं साम्य का अद्‌भुत तादाम्य स्थापित किया। महारानी लक्ष्मीबाई की गरिमामय हुंकार ने मरते दम तक अंग्रेजो को नाकों चने चबवा दिए। महारानी अहिल्याबाई होल्कर, दुर्गावती एव काठियावाड़ की राजबाई ने अपने अदम्य शौर्य का परिचय दिया। मां की ममता, उदारता एवं सहिष्णुता से कोई भी व्यक्ति जीवन के सभी मूल्यो को ग्रहण कर सकता है। किसी भी युग पुरुष के व्यक्तित्व का निर्धारण उसकी माता करती है।

आधुनिक भारत मे स्वतंत्रता सग्राम से लेकर वर्तमान समय तक महिलाओं का योगदान अवर्णनीय है– सरोजनी नायडू, स्वरूप रानी नेहरु, विजयलक्ष्मी पंडित, अरुणा आसफ अली, ऐनी बेसेट, मैडम भीकाजी कामा, भगिनी निवेदिता, सुचेता कृपलानी ने जहा स्वतत्रता सग्राम मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाई वही अन्य नेत्रिया वर्तमान राष्ट्रीय परिदृश्य में महत्वपूर्ण भूमिकाओ में है।

महिलाओं ने अपनी कर्तव्यनिष्ठा से यह सिद्ध कर दिया है कि वे किसी भी स्तर पर पुरुषों से कम नही हैं बल्कि उन्होने तो प्रगति के मार्ग पर अपनी श्रेष्ठता ही प्रदर्शित की है। आजादी के बाद देश के प्रधानमत्री के पद को बहुत मुस्तैदी और कुशलतापूर्वक एक महिला ने संभाला। राज्यपाल, मुख्यमंत्री, कैबिनेट मंत्री, राजदूत, जैसे महत्वपूर्ण राजनीतिक और प्रशासनिक पदों के उत्तरदायित्वो के भली-भांति निर्वहन के साथ-साथ उच्चतम न्यायालय के न्यायधीशो, सघ लोग सेवा आयोग एवं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष के पद भार भी महिलाओ द्वारा बखूबी सभाले गए हैं। इसके अलावा विभिन्न क्षेत्रों मे पहली महिला ऐवरेस्ट विजेता बछेन्द्री पाल, संतोष यादव, अन्तरिक्ष यात्री कल्पना चावला, इग्लिश चैनल पार करने वाली आरती साह (वर्तमान मे गुप्ता), विश्व ऐथलेटिक्स में पदक विजेता– सीमा अंतील, एशियाड पदक विजेता पी.टी. ऊषा एवं सुनीता रानी, कुंजुरानी देवी, अपर्णा पोपट, निरूपमा वैद्यनाथन, कर्णम मल्लेश्वरी, ज्योतिर्मय सिकन्दर, कीनेरुहम्पी, मिथाली राज,

अजुम चौपड़ा, रूपा उन्नीकृष्ण, सानामाचू चानू आदि अपने कार्यकलापों एव सक्रियता से महिलाओं को जागृत एव क्रियाशील होने की सीख देने में सफल रही हैं। प्रशासनिक फलक मे भारत की पहली महिला आई. पी. एस एवं यू.एन ओ में नियुक्त पहली (महिला) नागरिक सुरक्षा सलाहकार सुश्री किरण बेदी, आई.ए.एस. टॉपर्स–भावना गर्ग एव विजयलक्ष्मी बिदरी जैसी महिलाओं ने इतिहास रचकर इस मिथक को तोड़ दिया है कि नारियां पुरुषों की अपेक्षा कम बुद्धिमान होती हैं। "गोल्डन लायन पुरस्कार" से सम्मानित फिल्म "मानसून वैडिंग" की निर्मात्री मीरा नायर (यह पुरस्कार प्राप्त करने वाली प्रथम महिला) प्रतिष्ठित दादा साहब फाल्के पुरस्कार की प्रथम विजेता देविका रानी भी महिला थी। "खूब लडी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी" कविता के माध्यम से जागृति का शखनाद करने वाली सुभ्रदा कुमारी चौहान को कौन भूल सकता है। कई महिलाओं ने कला एवं साहित्य के माध्यम से राष्ट्रीय मुद्दों को दृष्टिगत रख अपनी सृजनशीलता का परिचय दिया है।

विगत वर्षो में महिलाओं ने प्रगति के प्रत्येक क्षेत्र में अहम् भूमिका निभाई है फिर भी सही अर्थो मे विभिन्न क्षेत्रो में महिलाओं की भागीदारी अभी भी आधी अधूरी है। उनकी लगभग आधी आबादी होने और विभिन्न स्तरो से होने वाले तथाकथित प्रयासो के बाद भी महत्वपूर्ण पदो पर उनकी संख्या नगण्य-सी है। वर्ष 2000 मे प्रकाशित अन्तरससदीय संघ की रिपोर्ट मे विभिन्न देशो की ससद मे महिलाओ के प्रतिनिधित्व की जानकारी देते हुए बताया गया है कि स्वीडन (42.7%), महिला प्रतिनिधित्व, डेनमार्क (37.4%), फिनलैण्ड (36 5%) देश इस मामले मे अग्रणी हैं। भारत (9%) के साथ 71वे स्थान पर है। इससे भारत में महिला प्रगति का अनुमान लगाया जा सकता है।

महिलाओ की प्रगति एवं सशक्तिकरण हेतु भारत जैसे लोककल्याणकारी राष्ट्र जिसका आधार सामाजिक न्याय है के सविधान, जो हमारी सर्वोच्च निधि है के विभिन्न अनुच्छेदों में नारी अधिकारो का प्रावधान है। इनमें से अनुच्छेद 14 विधि के समक्ष समता का अधिकार, अनुच्छेद 15 में धर्म, मूलवश, जाति, लिंग, जन्मस्थान के आधार पर कोई विभेद नहीं, अनुच्छेद 16 लोक नियोजन मे अवसर की समानता, अनुच्छेद 17, 19 में महिला समानता, अनुच्छेद 23,24 शोषण के विरुद्ध अधिकार, अनुच्छेद 39 जीवन निर्वाहन एवं समान कार्य हेतु समान वेतन, अनुच्छेद 41 में नारी को काम व शिक्षा का अधिकार तथा बेरोजगारी, वृद्धावस्था, बीमारी या अपाहिज होने की अवस्था मे सुरक्षा प्राप्ति, अनुच्छेद 42 मे प्रसूति काल में राहत, अनुच्छेद 43 मे मजदूरों (महिला एव पुरुष दोनों) को जीने हेतु अच्छा वेतन, अनुच्छेद 44 में समान दीवानी सहिता, अनुच्छेद 325 में समान मतदान अधिकार आदि प्रमुख हैं।

संविधान के इन प्रावधानों के आधार पर हम यह कह सकते है कि भारत मे विधि शासन "रूल ऑफ लॉ" है तथा स्त्री एवं पुरुष में किसी भी प्रकार का भेदभाव नही करता तथा जहां पर नारी को पूर्ण प्रतिनिधित्व नही मिल पाया है वहा उन्हे प्रतिनिधित्व दिलाने की बात करता है। इसी आधार पर अप्रैल 1993 मे भारतीय सविधान में 73वा व 74वा संशोधन करके महिलाओ को पचायतो तथा नगर निकायो मे एक तिहाई स्थान आरक्षित करके मूल स्तर पर राजनीतिक सत्ता में उनकी भागीदारी सुनिश्चित कर दी गई जो कि संविधान के अनुच्छेद 40 का ही संशोधन है। इससे लगभग 14 लाख महिलाओं को जन प्रतिनिधियो के रूप मे कई अधिकार प्राप्त हुए हैं। इसके साथ ही ससद और राज्यो के विधान मण्डलो में महिलाओं को 1/3 आरक्षण प्रदान किए जाने के लिए किए जा रहे प्रयासों, प्रशासन मे भागीदारी हेतु नौकरियो मे किए जा रहे आरक्षण के प्रावधानों तथा अन्य अनेक प्रावधानों से महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र मे एक नए युग का आरम्भ हो चुका है।

सविधान के उक्त प्रावधानो के अतिरिक्त भारत सरकार ने भी समय-समय पर महिला सशक्तिकरण हेतु अनेक योजनाओ का संचालन कर नए युग का शुभारम्भ कर दिया है। इन कार्यक्रमो के तहत 8 मार्च को 1975 से अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मनाया जाने लगा। सन् 1985 मे मानव ससाधन विकास मंत्रालय के अन्तर्गत अलग से महिला और बाल विकास विभाग और 31 जनवरी, 1992 को राष्ट्रीय महिला आयोग के गठन, 1987 मे न्यू मॉडल चर्खा योजना, 1989 में नौराड प्रशिक्षण

योजना, 1989 में महिला समाख्या योजना, 1992 मे मातृ एव शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रम, 1993 मे राष्ट्रीय महिला कोष की मुख्य ऋण योजना, 1993 मे ऋण प्रोत्साहन योजना, 1993 मे स्वयं सहायता समूह योजना, 1993 मे विपणन वित्त योजना के अलावा राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना (1994), मार्जिन मनी ऋण योजना(1995), ग्रामीण महिला विकास परियोजना (1996), राज राजेश्वरी बीमा योजना (1997), ड्वाकुआ योजना (1997), स्वास्थ्य सखी योजना (1997) आदि अनेक योजनाओं के भारत सरकार द्वारा समय-समय पर संचालन से यह आशा की किरण नजर आने लगी है कि अब महिला सशक्तिकरण के लिए भारत मे ही नही विश्व स्तर पर प्रयास जोर पकड़ रहा है।

भारतीय नारी उत्थान प्रक्रिया के इसी कार्यक्रम मे संयुक्त राष्ट्र द्वारा वर्ष 2000 को विश्व महिला वर्ष मनाने के बाद भारत मे नारी उत्थान को विशेष महत्व देते हुए वर्ष 2001 को "महिला सशक्तिकरण वर्ष" के रूप मे मनाया गया। महिला सशक्तिकरण वर्ष में केन्द्र सरकार द्वारा देश में पहली बार एक "राष्ट्रीय महिला उत्थान नीति" बनाई गई ताकि देश मे महिलाओं के लिए विभिन्न क्षेत्रो में उत्थान और समुचित विकास की आधारभूत व्यवस्थाएं निर्धारित किया जाना सभव हो सके। इसके अतिरिक्त "सती प्रथा अधिनियम", " इन्डीसेंट रिप्रेजेन्टेशन एक्ट", "आई. पी. टी. एक्ट", परित्यकता महिलाओं के लिए "गुजारा भत्ता संशोधन विधेयक", "बालिका अनिवार्य शिक्षा एवं कल्याण विधेयक" व "घरेलू हिंसा विरोधक विधेयक" के साथ-साथ सरकार द्वारा महिलाओं के राजनैतिक सशक्तिकरण को नई दिशा प्रदान करने हेतु उन्हें संसद और राज्य विधानमण्डलों मे आरक्षण दिए जाने संबधी 84 वें सविधान संशोधन विधेयक, 1998 को भी संसद से पारित कराने के लिए प्रयास किए गए। ईसाई समुदाय की महिलाओं को पुरुषों की भांति तलाक का अधिकार प्रदान करते हेतु "भारतीय तलाक सशोधन अधिनियम 2001" को ससद से पास भी करा लिया गया। सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशो पर भ्रूण हत्या रोकने के लिए विधेयक "प्रसव-पूर्व परीक्षण तकनीक अधिनियम 1994", (जिसके द्वारा गर्भावस्था में 1 जनवरी, 1996 से लिंग परीक्षण पर कानूनी रोक लगा दी है) के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु विशेष प्रयास भी किए गए।

महिला सशक्तिकरण वर्ष 2001 के अन्तर्गत भारत सरकार ने महिलाओ के विकास हेतु कई नई योजनाओ का संचालन किया है, जिसमें किशोरी शक्ति योजना, महिला स्वयं सिद्धा योजना, महिला स्वधारा योजना (12 जुलाई, 2001 दोनों), महिला उद्यमियो हेतु ऋण योजना(15 अगस्त, 2001), महिला स्वशक्ति योजना एव राष्ट्रीय पोषाहार मिशन योजना (15 अगस्त, 2001) आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। इसके अतिरिक्त पूर्व से सचालित बालिका समृद्धि योजना में व्यापक संशोधन कर इसे अधिक व्यावहारिक बनाने का भी प्रयास किया गया है। भारत सरकार की वर्तमान योजनाओ के अतिरिक्त महिलाओं को संवैधानिक एवं कानूनी रूप से सशक्त बनाने हेतु पूर्व से अनेक व्यवस्थाओ एव अधिनियमो को लागू किया जाता रहा है जैसे बागान श्रम अधिनियम (1951), खान अधिनियम (1952), बीड़ी एवं सिगार कर्मकार अधिनियम (1966), प्रसूति सुविधा अधिनियम (1961), दहेज निषेध अधिनियम (1961), (सशोधन 1986), ठेका श्रम अधिनियम (1970), समान पारिश्रमिक अधिनियम (1976), बाल विवाह निषेध अधिनियम (1976), स्त्री अशिष्ट निरूपण निषेध अधिनियम (1986), वैश्यावृत्ति निवारण (सशोधन) अधिनियम (1986), सती निषेध अधिनियम (1987), प्रसव-पूर्व निदान तकनीक अधिनियम (1994) आदि के तहत उन्हें विशेष सुरक्षा और संरक्षण प्रदान करने के प्रयास किए गए हैं। इस प्रकार के अनेक अधिनियमों, योजनाओं के अतिरिक्त ऐसी महिलाओ और महिला सगठनो/संस्थाओ को जिन्होने सामाजिक क्षेत्र मे उत्कृष्ट स्तर का योगदान किया है, को केन्द्र सरकार द्वारा प्रतिवर्ष "श्री शक्ति पुरस्कार" से सम्मानित करने का निर्णय लिया गया है। इन पुरस्कारों का नाम देश की 5 शीर्ष स्तरीय वीरागनाओं के नाम पर रखा गया है। ★ देवी अहिल्या बाई होल्कर पुरस्कार ★ रानी लक्ष्मीबाई पुरस्कार ★ माता जीजाबाई पुरस्कार ★ रानी गेदन्लियू जेलियाग पुरस्कार ★ कनागी पुरस्कार को वर्ष 2001 से प्रदान करने का निर्णय लिया गया है। उक्त सरकारी प्रयासो के अलावा महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र मे कई महिला संगठन जैसे सैल्फ एम्पलाइड विमेंस एसोसिएशन, बनिता समाज, संजीवनी सेवा संगम, अहिल्या आश्रम, दिशा, नेशनल मुस्लिम वूमेन वैलफेयर

सोसायटी, ओजस्विनी समदर्शी न्यास आदि भी कार्यरत है। इन सभी योजनाओं एव कार्यक्रमो के अतिरिक्त भी महिला सशक्तिकरण की दिशा मे कई महत्वपूर्ण कदम उठाए गए है जैसे सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशों के अनुपालन मे महिलाओ के लिए उनके कार्य स्थान पर यौन उत्पीड़न रोकने हेतु राष्ट्रीय स्तर समिति का गठन, महिलाओं के आर्थिक स्वावलम्बन हेतु "महिला आर्थिक कार्यक्रम" (नौराड), के संचालन हेतु कई नई परियोजनाओं की स्वीकृति, गरीब तबके की महिलाओं को कृषि, पशुपालन, डेयरी, हैण्डलूम, हस्तशिल्प आदि क्षेत्रों में प्रशिक्षण एव आर्थिक सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से 12 नई परियोजनाए "स्टैप कार्यक्रम" के अन्तर्गत वर्ष 2001 में स्वीकृति, महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र मे कार्यरत सस्थाओ के सदस्यों को प्रशिक्षण प्रदान करने हेतु डी डब्ल्यू. सी डी., इग्नू, तथा इसरो के सहयोग से वर्ष 2001 मे 'डिसटेन्स एजुकेशन परियोजना' प्रारम्भ, पहली बार 'वार्षिक आर्थिक सर्वेक्षण' मे लैगिक असमानता सबंधी एक अध्याय जोड़ा गया और वर्ष 2001-02 के बजट का लैंगिक विश्लेषण भी किया गया। वर्ष 2001 मे पहली बार विभिन्न राज्यो तथा जिलो के "जैण्डर डवलपमैट इण्डैक्स" तैयार किए गए। सम्पूर्ण देश के विभिन्न भागों मे कार्यरत महिलाओ हेतु 29 महिला छात्रावासो के निमार्ण की स्वीकृति एव इनमें "डे केयर" सुविधा भी उपलब्ध होगी एव महिलाओ के लिए देश मे उपलब्ध कानूनी प्रावधानों की व्यापक समीक्षा हेतु "टास्कफोर्स" का गठन किया गया आदि।

वास्तव में पिछले दशको से चल रही महिला योजनाओ, कार्यक्रमो आदि से भारतीय नारी की स्थिति मे उत्तरोत्तर सुधार सम्भव हुए है। अब परिवार मे ही नही वरन समाज मे भी नारी को चारदिवारी, पर्दा प्रथा एवं उपेक्षित व्यवहार से बाहर निकालने हेतु प्रेरित एवं उत्साहित किया जा रहा है। यह बदलाव महिलाओं की प्रगति से स्वतः परिलक्षित होता है, फिर भी हमे यह ध्यान रखना है कि महिला सशक्तिकरण हेतु हमे केवल लक्ष्य निधारित नही करने हैं बल्कि लक्ष्यो की प्राप्ति हेतु आवश्यक ससाधन भी जुटाने होगे, योजनाएं सिर्फ सरकारी स्तर पर और राज्यो तक ही सीमित न रह जाएं बल्कि वे धरातल पर उतारी जाए जिससे भविष्य मे नारियों का चौतरफा विकास सुनिश्चित किया जा सके। इसी सदर्भ में नोबेल पुरस्कार विजेता व कल्याण अर्थशास्त्र के प्रोफेसर अमर्त्य सेन ने अपनी पुस्तक– "India Economic Development and Social Opportunity" मे लिखा है– महिला सशक्तिकरण से न केवल महिलाओ के जीवन में निश्चित रूप से सकारात्मक असर पड़ेगा बल्कि पुरुषो और बच्चो को भी इससे लाभ होगा।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि महिलाओ कि वह स्थिति जिसके आधार पर यह युक्ति चरितार्थ थी कि–

"नारी ने जन्म दिया नर को, नर ने उसे बाजार दिया,

जब चाहा कुचला और मसला जब चाहा दुत्कार दिया"

अब बिल्कुल समाप्त हो चुकी है। महिलाएं पुरुषो के साथ प्रत्येक क्षेत्र में कन्धे से कधा मिलाकर चल रही हैं। इन्होने अपनी क्षमता से यह सिद्ध कर दिया है। कि महिलाए किसी भी तरह पुरुष से उन्नीस नही है, दूसरी ओर सरकारी और गैर-सरकारी सगठनो द्वारा महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र मे इतने प्रयास किए जा रहे है जिससे इस क्षेत्र मे एक नए युग का सूत्रपात हो चुका है। भारतीय नारी अब करुणा त्याग, उदारता, कोमलता, मातृत्ववत्सल आदि गुणो से परिपूर्ण ही नही है वरन उसमें शारीरिक, मानसिक, राजनीतिक, व्यावसायिक एवं बौद्धिक क्षमता भी विकसित हो रही है। निश्चित रूप से महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र मे विभिन्न योजनाओ, कानूनो, कार्यक्रमो एवं सतप्रयासो से एक नए युग का आरम्भ हो चुका है। लेखक की दृष्टि से इस क्षेत्र मे केवल एक कार्य ऐसा बचा है जिससे महिलाओ को पूर्ण रूप से सशक्त बनाया जा सकता है वह है "महिलाओं को उनकी शक्ति की आत्मानुभूति करवाना"। यदि प्रत्येक महिला अपनी शक्ति को पहचान ले तो वह दिन दूर नही होगा जब हमें पुरुष सशक्तिकरण हेतु अभियान चलाना पड़ेगा। ❑❑

राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
कोटद्वार, गढ़वाल, उत्तरांचल

गिजुभाई बधेका : दिवास्वप्न एक विश्लेषण

❒ नीरजा धनखड़

पूरी कहानी में 'लक्ष्मीनारायण' बने गिजुभाई अपने अथक प्रयोगों से भावी शिक्षकों के लिए प्रयोगों का द्वार खोलते हैं। उनके प्रयोग जब आज भी हमें अचंभित करते हैं तो तब के समाज के लिए तो वे और भी क्रांतिकारी रहे होंगे। उस समय शिक्षा एक गौण विषय था, माता-पिता बच्चों की शिक्षा के लिए चिंतित नहीं थे। ऐसे में गिजुभाई का यह प्रयास न केवल उन्हें वरन बड़े अफसरों यहां तक कि अंग्रेज अफसरों, जो भारतीय को बौद्धिक रूप से भी निम्न मानते थे, को भी हैरान करते थे।

देश के अग्रणी शिक्षाविद् गिजुभाई बधेका का जन्म 15 नवबर, 1885 को चित्तल, सौराष्ट्र मे हुआ था। अपने बचपन की यातनापूर्ण स्कूली शिक्षा का उनके मन-मस्तिष्क पर भारी दबाव पड़ा। गिजुभाई बच्चों की आजादी के प्रबल समर्थक थे। उनकी यह दृढ़ मान्यता थी कि बच्चो को भरपूर स्वतंत्रता देकर ही उन्हें बेहतर ढंग से शिक्षित किया जा सकता है। बच्चो को मारपीट तथा डाट-डपटकर पढ़ाना उन्हे कतई पसंद नहीं था। वे बच्चो के साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार के पक्षधर थे और चाहते थे कि उन्हे प्रचुर लाड-प्यार के साथ पढाया जाए। बच्चो को बगैर कोई यातना, प्रताड़ना दिए प्यार-दुलार के साथ पढाने-लिखाने के लिए उन्होंने बाल शिक्षण के क्षेत्र मे अनेकों सफल प्रयोग किए। अपनी मेहनत, लगन, निष्ठा के कारण कई भाषाओं में उनकी अमर कृतियो के अनुवाद प्रकाशित होने लगे। गिजुभाई की कुल चौदह पुस्तके प्रकाशित की गई। उनमे से एक है— दिवास्वप्न।

गिजुभाई बधेका ने शिक्षा के क्षेत्र में जो प्रयोग किए तथा करने चाहे, उन्हे बड़ी ही रोचकतापूर्ण ढग से 'दिवास्वप्न' नामक कहानी मे उतार दिया है। इस कहानी के पठन के दौरान मैंने स्वयं को इतना संलग्न पाया, जितना किसी अन्य कहानी मे नही पाया था। मानो इस कहानी के प्रत्येक पृष्ठ पर छपे शब्दो से वे भविष्य में बनने वाले शिक्षकों तथा वर्तमान मे कार्यरत शिक्षको को पढ़ाने के नए आयाम बताने जा रहे हों। उन्होंने प्रयोग स्वरूप चौथी कक्षा को एक वर्ष पढ़ाने की जिम्मेदारी ली। इस एक वर्ष के दौरान, उन्होंने ऐसे-ऐसे अद्भुत प्रयोग किए जो आज के इस विकसित दौर में भी हैरत में डाल देते हैं। ऐसा कभी सोचा न था कि भूगोल, इतिहास, व्याकरण इत्यादि नीरस से लगने वाले विषय भी इतने आकर्षक व रोचक ढग से प्रस्तुत किए व पढ़ाए जा सकते हैं। इस कहानी के अध्ययन के दौरान दो प्रमुख बातें पाई—

- उन्होने अपने प्रत्येक प्रयोग में बच्चो की भरपूर भागीदारी ली।
- पाठ्यपुस्तक पढ़ाते समय भी क्रिया प्रधानता बनी रहे, इसका ध्यान रखा।

परिमाणतः उन्होंने पढ़ाने के साथ अनेक ऐसे पहलुओं को भी छुआ, जिनका उस समय शिक्षा व पाठ्यक्रम मे कोई स्थान नहीं है, और सबसे बड़ी बात यह थी कि वे कोई भी क्रिया इत्यादि करवाने से पूर्व घर पर ही उसकी योजना बनाते थे। परंतु कक्षा में बच्चों को पूर्ण स्वतंत्रता थी कि वे अमुक कार्य को इच्छानुसार करें। कुल मिलाकर उनकी शिक्षा पद्धति बच्चो के चारों ओर घूमती है। अब

उन पहलुओ को देखा जाए जो कि इस कहानी में रेखांकित किए गए तथा जो भावी अध्यापकों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं–

- **बच्चों के हृदय में श्रद्धा जगाना**– प्रारभ में वे कक्षा की शुरुआत प्रार्थना आदि से करवाते थे जिसमें बच्चे रत्तीभर रुचि नहीं लेते थे। उन्हे आभास हुआ कि बच्चों को सही ज्ञान-दान देना है तो पहले उनमें 'गुरु' के प्रति आदर-प्रेम जगाया जाए। अत: सबसे पहले उन्होंने बच्चों को, बच्चो के स्तर पर आकर कहानी सुनाने का निर्णय लिया। ये वह बच्चे थे जो पाठ्यक्रम को रटने के आदी थे पर गुरुजी द्वारा कहानी सुनाने की बात सुनकर उनमें उत्सुकता, जिज्ञासा आदि भाव जाग गए और वे बच्चे जो पढ़ाने मे विघ्न डाल रहे थे, गुरुजी की बात को पूर्ण महत्व देने लगे। यह बच्चों का दिल जीतने का पहला सफल प्रयास रहा।
- **अनुशासन**– कहानी को माध्यम बनाकर वे अप्रत्यक्ष रूप से कक्षा में अनुशासन स्थापित करने लगे। कहानी सुनने के लालच मे कक्षा मे शांत बैठना, हाजिरी पूरी होना आदि अनुशासन के नियम पालन होने लगे। साथ ही साथ कहानी सुनने में जो आनन्द आ रहा था उसे पाने के लिए बच्चे कहानी किताबों से पढने को भी तैयार होने लगे।
- **विद्यार्थी को जानने का अवसर**– 'कहानी' के माध्यम से बच्चे और 'गुरुजी' के निकटवर्ती संबंध बन पाए। साथ ही भाषा शुद्धि और साहित्य का परिचय देना सरल हो गया।
- **स्वच्छता की शिक्षा**– उस समय 'सफाई' एक अनछुआ पहलू था। कहानी पठन के दौरान गुरुजी बच्चो को नाखून काटने, साफ कपडे पहनने आदि की शिक्षा दे डालते। सबसे बड़ी खास बात थी कि बच्चे स्वच्छता के लिए मां-बाप को तंग नही करते थे। विद्यालय में ही वे मुह-हाथ धोकर स्वच्छ हो जाते। इससे उनमे आत्मनिर्भरता बढ़ने लगी।
- **'खेल' के लाभ**– आज हम खेलों के लाभ पर दर्जनों निबध लिख डालते है पर उस समय खेल विद्यालयी चर्चा का अंग नही थे। ऐसे मे गिजुभाई ने कक्षा व कक्षा के बाहर खेल खिलाकर बच्चो को चुस्त-दुरुस्त रखने, अनुशासनप्रद रहने तथा एक स्वस्थ दृष्टिकोण बनाने में मदद् की। अब विद्यालय जाना भी रोचक लगने लगा।
- **माता-पिता से सहयोग**– मा-बाप बच्चों को स्कूल भेजकर अपनी जिम्मेदारी से पिंड छुड़ाते थे। वे आवश्यकता पडने पर उन्हे (बच्चों को) पीट देते थे तथा उनका संबध बच्चे के पास होने से था, पर गिजुभाई ने उनसे भी सहयोग मागा। उन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता आदि से परिचित कराया। यद्यपि इसमे खास सफलता हाथ नहीं लगी पर आज पी.टी.ए. का क्या उपयोग है सबको ज्ञात है।
- **आर्थिक समस्या**– वे जैसे प्रयोग कर रहे थे, उसमें रास्ता पग-पग पर कठिन था। बच्चो के लिए सग्रहालय बनाने के लिए आर्थिक समस्या उत्पन्न हुई, जैसे बच्चों से किताबो के पैसे मंगवाकर किताबे संग्रहालय मे रखना भी एक समस्या थी। परंतु बौद्धिक शक्ति का प्रयोग कर वे इससे भी जूझ लेते हैं।
- **निराली शिक्षा पद्धति**– वे प्रत्येक विषय के लिए भिन्न-भिन्न प्रणालियो का प्रयोग करते हैं। जैसे श्रुतलेख करवाते समय वे प्रत्येक शब्द को बोलकर, समझने के बाद ही बच्चों को लिखने को कहते हैं। इससे बार-बार शब्द दोहराने की आवश्यकता नही थी। इतिहास विषय की नीरसता को खत्म करने के लिए वे उसे कहानी रूप में अभिनय के साथ परोसा। परिणामत: बच्चे उस कहानी के प्रत्येक अंश से जुड़े। कविताओं को वे अताक्षरी का खेल बनाकर बच्चों को रटवाते। व्याकरण समझाने के लिए वे विभिन्न अवयवों की पर्चिया बनाकर बच्चों को स्वयं पहचानने की प्रेरणा देते। भूगोल की पारगतता के लिए वे बच्चो को ड्राफ्टसमैन के दफ्तर तक घुमाया तथा उसके छोटे पहलुओ से परिचित कराया।
- **बच्चों के मानसिक स्तर के अनुरूप**– गिजुभाई बच्चो पर भारी-भरकम विचारो को लादने के हक में नहीं थे इसलिए धार्मिक शिक्षा मे मोक्ष, मृत्यु, जीवन आदि गूढ़ तत्वों पर बच्चो से बात नही की। वे मानते थे कि बच्चे खिलती कलियां है उनके कोमल मानस पटल पर अभी से ये बड़े शब्द न डाले जाए। इनकी अपेक्षा धर्म में कही गई बातों को जीवन में उतारने का प्रयास करें, न कि उन्हें कठंस्थ करे।

- **बुलंद इरादे**— गिजुभाई पूरी कहानी में एक दृढ निश्चयी पात्र बनकर सामने रहे है। कई बार उनका मन डोला पर दूसरे ही पल वे नया प्रयोग खोजकर खुद को संभाल लिया। उनकी दृढ़ता इस बात से झलकती है कि उनके प्रयोगो मे कोई उनका समर्थक नही था, वरन् उनका उपहास किया जाता। मित्रगण उन्हे अपने कटाक्षों से चीर देते पर वे इरादे के पक्के थे। एक के बाद एक प्रयोग करते गए।
- **बच्चों का सर्वागीण विकास**— वे बच्चो की प्रत्येक प्रतिभा को पहचानने, परखने की दृष्टि रखते थे। सभी बच्चों को कविता लेखन हेतु प्रेरित किया तथा उसे प्रकाशित किया। बच्चो को पाठ्यपुस्तक के ज्ञान के साथ नाटक, खेलकूद आदि में भी पूर्ण बनाने का प्रयास किया। इस प्रकार उन्होने शिक्षा के वर्तमान उद्देश्य अर्थात् 'संपूर्ण व्यक्तित्व का विकास' को पूरा करने का भी सफल प्रयास किया।
- **परीक्षा पद्धति**— प्रस्तुत कहानी मे वर्णित उनकी परीक्षा पद्धति भी भिन्न है। वह 'परीक्षा' नामक शब्द से बच्चो को भयभीत करने का प्रयास नही करते वरन परीक्षा भी हल्के-फुल्के माहौल में अताक्षरी, कविताओं, खेलो द्वारा ली जाती है। परीक्षा का यह रूप बच्चो मे आत्मविश्वास भर देता है। परिणामत बच्चे जो भी सीख पाए है, वह सब दिखा सके।
- **प्रकृति से संबंध जोड़ना**— वे बच्चो को कभी नदी किनारे तो कभी खुले मैदान मे ले जाकर खेल खिलाते थे। साथ ही बच्चों को मिट्टी के बर्तन बनाने को प्रेरित किया ताकि बच्चे प्रकृति से संपर्क साध पाने में समर्थ हों।
- **बच्चों की प्रतिभा पहचानना**— प्रत्येक बच्चे में कोई न कोई गुण अवश्य होता है, आवश्यकता है पहचानने की। गिजुभाई ने एक 'हस्तलिखित पत्रिका की योजना बनाई जिसमें सभी बच्चे अपना-अपना योगदान देते। साथ ही उन्होंने गुरुजी (गिजुभाई) के कमरे को खूबसूरत स्वरचित कलाकारियों, तस्वीरों से सजा दिया। वहीं बच्चो ने छह मास मे ही अनेकों किताबे भी पढ़ डालीं। इस प्रकार बच्चे अपनी योग्यता का भरपूर प्रयोग कर पाए।
- **धैर्यवान**— पूरी कहानी में गिजुभाई का धैर्य का बाध टूटता नजर नही आता। वे अपने मित्रगणों, बडे अफसरो आदि के तानो से अधिक प्रभावित नही होते दिखाई देते वरन् अपना काम ईमानदारी से करते रहे। ढोग, छलावा उन्हें एक आंख नहीं भाता। कई बार स्वय बच्चों के माता-पिता उनसे शिकायत करने चले आते परतु वे बिना डगमाए, लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं।
- **बच्चों में पारस्परिक सहयोग तथा मन में अध्ययन का विकास**— एक बच्चे को यदि एक पाठ समझ आ जाए तो वह दूसरे को भी समझाए। उनके ये वाक्य बच्चों में पारस्परिक सहयोग बढ़ाने की प्रक्रिया का अंग हैं। वहीं वे बच्चों को मन मे पढ़ने को प्रेरित करते है ताकि उनकी मनन शक्ति का विकास हो। वे जो भी पढें, उसका अर्थ आत्मसात् कर ले।

पूरी कहानी मे 'लक्ष्मीनारायण' बने गिजुभाई अपने अथक प्रयोगों से भावी शिक्षकों के लिए प्रयोगो का द्वार खोलते है। उनके प्रयोग जब आज भी हमें अचभित करते है तो तब के समाज के लिए तो वे क्रांतिकारी रहे होगे। तब शिक्षा एक गौण विषय था, माता-पिता बच्चो की शिक्षा के लिए चितित नहीं थे। ऐसे में गिजुभाई का यह प्रयास न केवल उन्हें वरन बड़े अफसरो यहा तक कि अग्रेज अफसरो, जो भारतीय को बौद्धिक रूप से भी निम्न मानते थे, को भी हैरान किया। गिजुभाई मांटेसरी पद्धति के समर्थक थे। क्योंकि यह पद्धति ही खेल, अभिनय आदि द्वारा शिक्षा देने की समर्थक थी। इसलिए उनके प्रयोगो पर मांटेसरी की छाप नजर आती है। वे चली आ रही शिक्षा पद्धति की परिपाटी से अलग हटकर सोचते और करते। भूगोल जैसे विषय को भी 'खेल-खेल' मे पढ़ाना उनकी कलात्मकता। एक शिक्षक होने के नाते प्रत्येक कौशल में पारंगतता की आवश्यकता है। साथ ही गिजुभाई जैसा आत्मविश्वास तथा दृढ़ निश्चय; शिक्षक का मेहनती होना भी आवश्यक है तभी हम अपने कार्य के साथ न्याय कर पाएंगे। □□

महाराजा सूरजमल संस्थान
जनकपुरी, नई दिल्ली

प्राथमिक स्तर पर शिक्षकों व शिक्षिकाओं के नियंत्रण केन्द्र तथा मूल्यों के मध्य संबंध का अध्ययन

❑ मंजू सिंह

प्रस्तुत शोध प्राइमरी स्तर के शिक्षकों व शिक्षिकाओं पर प्रतिपादित किया गया, जिसके अन्तर्गत उनके नियन्त्रण केन्द्र तथा मूल्यों के मध्य सह-संबंध का अध्ययन किया गया। अध्ययन हेतु आगरा शहर के 35 शिक्षकों व 35 शिक्षिकाओं को न्यादर्श के रूप में चयनित किया गया। प्रदत्तों के विश्लेषणोपरान्त यह पाया गया कि शिक्षकों व शिक्षिकाओं (समग्र) के नियन्त्रण केन्द्र तथा मूल्यों यथा सैद्धान्तिक, आर्थिक, सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक के मध्य महत्वपूर्ण सह-संबंध नहीं है तथापि नियन्त्रण केन्द्र एवं सैद्धान्तिक व आर्थिक मूल्यों के मध्य निषेधात्मक सह-संबंध है, जबकि नियन्त्रण केन्द्र एवं अन्य मूल्यों यथा सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक के मध्य विधेयात्मक सह-संबंध है।

शिक्षा एक उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है। शिक्षा के उद्देश्य देश, काल और परिस्थितियो के अनुसार परिवर्तित होते रहते है, जो समाज की परिवर्तित आवश्यकताओ के पूरक होते है। शिक्षा ही हमे इस योग्य बनाती है कि परिस्थितियों के अनुरूप उचित का निर्णय लेकर सही मार्ग का चयन करे और जीवन के विभिन्न क्षेत्रों मे विभिन्न अवसरो पर सही विकल्प का चुनाव कर सके। वस्तुतः उच्चतम विकल्प के चुनाव की प्रक्रिया ही मूल्य प्रक्रिया है। इस मूल्य प्रक्रिया में चयनकर्ता की बुद्धि, योग्यता, रुचि, शैक्षिक स्तर, विश्वास एव नियन्त्रण केन्द्र की अहम् भूमिका रहती है, जिसके आधार पर वह अपने जीवन को विकासोन्मुख एव समाजोपयोगी बनाने मे सक्षम होता है।

व्यक्ति और समाज एक-दूसरे के पूरक होने के साथ-साथ पारस्परिक निर्भरता का गुण रखते हैं, यह निर्भरता व्यक्तियो की मनोवृत्तियों, आचरणों व सांस्कृतिक मानदण्डो पर आधारित होती है। इन मानदण्डो का निर्धारण करने मे माता-पिता, शिक्षको, समाज सुधारको, वैज्ञानिक एवं साहित्यकारों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। वही मानवता के पोषक मूल्य मानदण्डों को बालकों व बालिकाओ में विकसित करने के लिए शिक्षको की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। शिक्षक के जीवन-दर्शन का प्रभाव परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप से विद्यार्थियो को प्रभावित करता है तथा उसका जीवन-दर्शन भी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक आदि तत्वों से प्रभावित होता है और यही प्रभाव वह बालक-बालिकाओं में संक्रमित करता है, जिससे बालक अपने जीवन मूल्यों को वैकल्पिक चयन प्रक्रिया के द्वारा निर्धारित करता है। अत· शिक्षक समाज की बुराइयो को समाप्त करने के साथ-साथ सांस्कृतिक विकास मे भी सहयोगी होता है। इसी प्रकार के तथ्यों को राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में स्वीकार करते हुए कहा गया है कि हमारा समाज सांस्कृतिक दृष्टि से बहुआयामी है तथा शिक्षा द्वारा ऐसे सार्वभौमिक व शाश्वत मूल्यों का विकास किया जाना चाहिए जो हमारे लोगों की एकता व उनके समाकलन की ओर अभिमुख हों। इस प्रकार की

मूल्य शिक्षा से धार्मिक उन्माद, हिसा, अन्धविश्वास, भाग्यवाद व रूढ़िवादिता समाप्त होगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुच्छेद 2 4 मे शिक्षा को सामाजिक व नैतिक मूल्यो के विकास के लिए एक सशक्त साधन बनाने के लिए कहा है।

दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिक इस तथ्य को स्वीकार करते है कि उच्च मूल्य व्यक्ति को आदर्श नागरिक बनाते है तथा उसके व्यक्तित्व निर्माण मे अहम् भूमिका निभाते हैं। वे मूल्य ही हैं जो व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करते है तथा जिससे समाज में व्यक्ति की पहचान होती है। अतः जो शिक्षा के व्यवहार को प्रभावित करते हैं तथा जिससे समाज मे व्यक्ति की पहचान होती है। अत जिस शिक्षा के जितने उच्च मूल्य होंगे, वह उतनी ही उन्नत एवं भावी पीढ़ी के लिए विकासोन्मुख होगी। यहा पर यह विचार करने योग्य बात है कि वे कौन- से मूल्य है जो भावी पीढी के निर्माताओ अर्थात् शिक्षको व शिक्षिकाओं मे आचरित हो रहे है तथा व्यक्तित्व के विभिन्न आयामो को प्रभावित कर रहे हैं। इस दिशा में प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया गया है कि क्या व्यक्ति के मूल्य एव उनका नियन्त्रण केन्द्र एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं?

उक्त तथ्य को जानने के लिए उनके मध्य सह-सम्बन्ध का अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन के अधोलिखित उद्देश्य है—

- ☐ प्राथमिक स्तर पर शिक्षकों के नियन्त्रण केन्द्र एव मूल्यों के मध्य संबंध का अध्ययन।
- ☐ प्राथमिक स्तर पर शिक्षिकाओं के नियन्त्रण केन्द्र एवं मूल्यो के मध्य सबंध का अध्ययन।
- ☐ प्राथमिक स्तर पर शिक्षकों एवं शिक्षिकाओ (समग्र) के नियन्त्रण केन्द्र एव मूल्यो के मध्य संबंध का अध्ययन।

परिकल्पनाएं

प्रस्तुत अध्ययन के लिए निम्नांकित शून्य परिकल्पनाओ का निर्माण किया गया है—

- ☐ शिक्षको के नियन्त्रण केन्द्र एवं सैद्धान्तिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नहीं है।
- ☐ शिक्षको के नियन्त्रण केन्द्र एव आर्थिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नही है।
- ☐ शिक्षको के नियन्त्रण केन्द्र एव सौन्दर्यात्मक मूल्य के मध्य सार्थक सह-सम्बन्ध नहीं है।
- ☐ शिक्षको के नियन्त्रण केन्द्र एवं सामाजिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नही है।
- ☐ शिक्षको के नियन्त्रण केन्द्र एव राजनैतिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नही है।
- ☐ शिक्षको के नियन्त्रण केन्द्र एवं धार्मिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नही है।
- ☐ शिक्षिकाओ के नियन्त्रण केन्द्र एव सैद्धान्तिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नही है।
- ☐ शिक्षिकाओ के नियन्त्रण केन्द्र एवं आर्थिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नही है।
- ☐ शिक्षिकाओ के नियन्त्रण केन्द्र एवं सौन्दर्यात्मक मूल्य के मध्य सार्थक सह-सम्बन्ध नही है।
- ☐ शिक्षिकाओ के नियन्त्रण केन्द्र एव सामाजिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नही है।
- ☐ शिक्षिकाओं के नियन्त्रण केन्द्र एव राजनैतिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नहीं है।
- ☐ शिक्षिकाओ के नियन्त्रण केन्द्र एवं धार्मिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नहीं है।
- ☐ शिक्षको एवं शिक्षिकाओ (समग्र) के नियन्त्रण केन्द्र एव सैद्धान्तिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नहीं है।
- ☐ शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं (समग्र) के नियन्त्रण केन्द्र एव आर्थिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नही है।
- ☐ शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं (समग्र) के नियन्त्रण केन्द्र एव सौन्दर्यात्मक मूल्य के मध्य सार्थक सह-सम्बन्ध नही है।
- ☐ शिक्षकों व शिक्षिकाओं (समग्र) के नियन्त्रण केन्द्र

एवं सामाजिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नहीं है।

- शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं (समग्र) के नियन्त्रण केन्द्र एव राजनैतिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नहीं है।
- शिक्षको एव शिक्षिकाओं (समग्र) के नियन्त्रण केन्द्र एव धार्मिक मूल्य के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नहीं है।

प्रत्ययों की व्याख्या

मूल्य— मूल्य किसी वस्तु या स्थिति का वह गुण है जो समालोचना व वरीयता प्रकट करता है। यह एक आदर्श या इच्छा है जिसे पूरा करने के लिए व्यक्ति जीता है तथा आजीवन प्रयास करता रहता है। दूसरे शब्दों मे मूल्य को आचार, सौन्दर्य, कुशलता या महत्व का मानदण्ड माना गया है, जिनके साथ हम जीते है, जिन्हें हम कायम रखते हैं।

वास्तव मे, हम जिसे सम्मान देते हैं, चाहते है या महत्वपूर्ण समझते है, वही मूल्य है। यह मानवीय संरचना की अभिप्रेरणात्मक विधा है। वे व्यवहार के लिए प्रेरणा स्रोत है। ये वे मानक रूपी मानदण्ड हैं जिनसे मानव प्रत्यक्षीकृत क्रिया-विकल्पों मे से चयन करते समय प्रभावित होता है। (फ्लिक)

नियन्त्रण केन्द्र— नियन्त्रण केन्द्र सम्प्रत्यय रोटर (1954) के सामाजिक अधिगम सिद्धात से उद्धृत है जो यह इगित करता है कि पुनर्बलन व्यक्ति के स्वय के व्यवहार अथवा भाग्य या अवसर का परिणाम है। आन्तरिक प्रत्याशाओ से युक्त प्रयोज्यों को आन्तरिक तथा अपेक्षाकृत अधिक बाह्य प्रत्याशाओ से युक्त प्रयोज्यों को बाह्य रूप मे वर्णित किया गया है। आन्तरिक नियन्त्रण केन्द्र की प्रधानता वाले व्यक्तियों का विश्वास होता है कि पुनर्बलन उनके स्वय के व्यवहार, विशेषताओ और क्षमताओं पर निर्भर करता है, जबकि बाह्य नियन्त्रण केन्द्र की प्रधानता वाले व्यक्तियो का विश्वास होता है कि पुनर्बलन उनके वैयक्तिक नियत्रण के अधीन नहीं होता, बल्कि वह अवसर और भाग्य के अधीन होता है।

शोध अभिकल्प

प्रस्तुत शोध कार्य अप्रायोगिक है क्योंकि स्वतत्र चरों का हस्तप्रयोग प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया गया है, बल्कि कुछ मनोवैज्ञानिक परीक्षणों पर प्रायोज्यों के प्राप्ताको के मध्य सांख्यिकीय गणना करके चरों के मध्य संबध का अध्ययन किया गया है। अतः यह एक सह-संबंधात्मक अध्ययन है। यद्यपि इस अनुसंधान कार्य मे चरो का हस्तप्रयोग करके प्रभाव का अध्ययन नही किया गया है, फिर भी नियन्त्रण केन्द्र को स्वतन्त्र चर एव मूल्यों को आश्रित चर के रूप में लिया गया है।

न्यादर्श

प्रस्तुत अध्ययन प्राथमिक स्तर के शिक्षकों और शिक्षिकाओं पर प्रतिपादित किया गया। अध्ययन में आगरा शहर के 35 शिक्षको व 35 शिक्षिकाओ को यादृच्छिक चयन विधि से प्रयोज्यो के रूप मे चयनित कर सम्मिलित किया गया। प्रतिदर्श के प्रयोज्यों की आयु 21 से 35 वर्ष के मध्य थी।

उपकरण

प्रस्तुत अध्ययन की प्रकृति के अनुरूप निम्नांकित उपकरणों का प्रयोग किया गया है—

नियन्त्रण केन्द्र मापनी— शिक्षकों व शिक्षिकाओ के नियन्त्रण केन्द्र के मापन हेतु कुमार एवं श्रीवास्तव (1966) द्वारा हिन्दी मे अनुकूलित रोटर नियन्त्रण केन्द्र मापनी का प्रयोग किया गया है।

अध्यापक मूल्य सूची— शिक्षको व शिक्षिकाओं के मूल्यो के मापन हेतु सिंह एवं अहलूवालिया (1981) की अध्यापक मूल्य सूची का प्रयोग किया गया।

विश्लेषण एवं व्याख्या

प्रस्तुत अध्ययन मे प्रायोज्यों के मूल प्राप्तांकों का सांख्यिकीय विश्लेषण एवं व्याख्या की गई ताकि उनके अन्तर्निहित अर्थ स्पष्ट हो सकें। साख्यिकीय विश्लेषण के अन्तर्गत शिक्षकों एव शिक्षिकाओं के नियन्त्रण केन्द्र एव मूल्यो के मध्य सह-सम्बन्ध गुणाक की गणना पृथक-पृथक व समग्र न्यादर्श के लिए की गई, जो कि अग्रांकित सारणियों में प्रस्तुत है—

तालिका 2 पर दृष्टिपात करने से विदित होता है कि शिक्षिकाओं के नियन्त्रण केन्द्र व मूल्यो यथा सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक एव धार्मिक के मध्य सकारात्मक सह-सम्बन्ध है, किन्तु नियन्त्रण केन्द्र एव सैद्धान्तिक तथा आर्थिक मूल्य के मध्य नकारात्मक सह-सम्बन्ध है। प्राप्त सह-सम्बंध गुणांकों का मान विश्वास के किसी भी स्तर पर सार्थक नही है। अतः अध्ययन की शून्य परिकल्पनाएं (7 से 12 तक) कि "शिक्षिकाओं के नियन्त्रण केन्द्र व मूल्यों यथा सैद्धान्तिक, आर्थिक, सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक एव धार्मिक के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बन्ध नहीं है" स्वीकृत होती है। परन्तु परिणामों के आधार पर झुकाव की विवेचना करते हुए कहा जा सकता है कि शिक्षिकाओं के नियन्त्रण केन्द्र प्राप्तांकों मे वृद्धि के साथ-साथ मूल्यों यथा सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक तथा धार्मिक के प्राप्ताको में बढोत्तरी होती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक एव धार्मिक मूल्यों का संवर्द्धन नियन्त्रण केन्द्र के साथ सबंधित है, परन्तु यह सांख्यिकीय दृष्टि से विश्वसनीयता के साथ नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार नियन्त्रण केन्द्र एव सैद्धान्तिक व आर्थिक मूल्यो के मध्य ऋणात्मक सह-सम्बन्ध यह दर्शाता है कि शिक्षिकाओ के नियन्त्रण केन्द्र प्राप्तांको में वृद्धि होने से उनके सैद्धान्तिक एवं आर्थिक मूल्य के प्राप्तांको मे ह्रास होता है। इससे विदित होता है कि जो शिक्षिकाए भाग्य व अवसरवाद मे विश्वास रखती हैं वे सत्य की खोज मे रुचि नही रखतीं। उनका प्रायोगिक, प्रामाणिक, तार्किक एवं आलोचनात्मक दृष्टिकोण नहीं होता है, अर्थात् वे सैद्धान्तिक तथ्यो मे रुचि नहीं रखतीं तथा धन संबंधी मामलो में भाग्य को सर्वोपरि मानती है। परन्तु यह विश्वास के साथ कहना अत्यन्त कठिन है।

तालिका 3 का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि शिक्षक व शिक्षिकाओ (समग्र) के नियन्त्रण केन्द्र एवं मूल्य प्राप्ताकों के मध्य पृथक-पृथक सम्बन्ध है। कुछ मूल्य यथा सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक एव धार्मिक विधेयात्मक रूप से संबंधित है, जबकि अन्य मूल्य यथा सैद्धांतिक एवं आर्थिक निषेधात्मक रूप से संबंधित है, परन्तु प्राप्त कोई भी सह-सम्बन्ध विश्वास के किसी भी स्तर पर सार्थक नही है। अत अध्ययन की परिकल्पनाए (13 से 18 तक) कि "शिक्षको एवं शिक्षिकाओ (समग्र) के नियन्त्रण केन्द्र एव प्राप्ताको एवं मूल्यो यथा सैद्धांतिक, आर्थिक, सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक के मध्य महत्वपूर्ण सह-सम्बंध नहीं है" स्वीकृत होती है।

परिणामों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि शिक्षक व शिक्षिकाओं (समग्र) के नियन्त्रण केन्द्र प्राप्ताकों में सवर्द्धन होने के साथ उनके सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक एव धार्मिक मूल्य प्राप्ताकों में सकारात्मक वृद्धि होती है तथा अन्य मूल्यो जैसे सैद्धातिक

सारणी 3

शिक्षकों व शिक्षिकाओं (समग्र) के नियन्त्रण केन्द्र एव मूल्यों के मध्य सह-सम्बन्ध

नियत्रण केन्द्र	*मूल्य का नाम*	*सह-सम्बन्ध गुणाक का मान*	*सार्थकता*
नियंत्रण केन्द्र	सैद्धान्तिक मूल्य	– .086	सार्थक नहीं
नियंत्रण केन्द्र	आर्थिक मूल्य	– .079	सार्थक नहीं
नियंत्रण केन्द्र	सौन्दर्यात्मक मूल्य	+ 225	सार्थक नहीं
नियत्रण केन्द्र	सामाजिक मूल्य	+ 094	सार्थक नहीं
नियत्रण केन्द्र	राजनैतिक मूल्य	+ .067	सार्थक नहीं
नियत्रण केन्द्र	धार्मिक मूल्य	+ .015	सार्थक नहीं

एव आर्थिक के प्राप्तांको मे नकारात्मक बढ़ोत्तरी होती है। इससे स्पष्ट होता है कि भाग्य एवं अवसरवाद विभिन्न मूल्यों के साथ सम्बन्धित तो है परन्तु यह विश्वास के साथ नहीं कहा जा सकता।

निष्कर्ष

- शिक्षको के नियन्त्रण केन्द्र एवं मूल्यो यथा आर्थिक, राजनैतिक तथा धार्मिक के मध्य निषेधात्मक सह-संबंध है जबकि नियन्त्रण केन्द्र एवं मूल्यों यथा सैद्धातिक, सौन्दर्यात्मक एव सामाजिक के मध्य विधेयात्मक सह-सम्बन्ध है परन्तु प्राप्त कोई भी सह-संबध साख्यिकीय दृष्टि से विश्वसनीय नहीं है।
- शिक्षिकाओं के नियन्त्रण केन्द्र एव सैद्धान्तिक व आर्थिक मूल्य नकारात्मक रूप से सह-सम्बन्धित है, जबकि नियन्त्रण केन्द्र एव सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक एव धार्मिक मूल्य सकारात्मक रूप से सह-सम्बन्धित हैं, परन्तु कोई भी सह-सम्बन्ध साख्यिकीय दृष्टि से सार्थक नही है।
- शिक्षक व शिक्षिकाओं (समग्र) के नियन्त्रण केन्द्र एव सैद्धन्तिक व आर्थिक मूल्यों के मध्य निषेधात्मक सह-सम्बन्ध है, जबकि नियन्त्रण केन्द्र एव मूल्यो जैसे सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक के मध्य सकारात्मक सह-सबंध है परन्तु प्राप्त कोई भी सह-सम्बन्ध साख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण नही है।

सुझाव

प्रस्तुत अध्ययन के परिणाम इगित करते है कि नियत्रण केन्द्र एवं सैद्धातिक मूल्य के मध्य निषेधात्मक सह-सम्बन्ध है, जो कि विश्वसनीय स्तर पर प्राप्त नहीं है। परन्तु इसके आधार पर यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि अधिक अवसर या भाग्यवाद, व्यक्ति के सैद्धान्तिक मूल्य मे ह्रास लाता है, अर्थात् भाग्यवाद व्यक्ति के वैज्ञानिक एव तार्किक दृष्टिकोण मे ह्रास लाता है, जबकि आधुनिक युग में वैज्ञानिक एवं तार्किक दृष्टिकोण की महती आवश्यकता है।

अत. शिक्षको एव शिक्षिकाओ में सैद्धान्तिक मूल्य संवर्द्धित करने के प्रयास किए जाने चाहिए ताकि वे भावी पीढ़ी में भी वैज्ञानिक, तार्किक एव आलोचनात्मक दृष्टिकोण विकसित कर सके। ❑❑

शिक्षा विभाग
सी इम्पैक्ट संस्थान
आगरा-मथुरा रोड, आगरा
उत्तर प्रदेश

मानवीय मूल्यों व सामाजिक विकास हेतु शिक्षण तथा शिक्षण व्यवस्था में बदलाव आवश्यक

❑ भावेश चन्द्र दूबे

किसी भी शिक्षा योजना में शिक्षक का निर्विवाद केन्द्रीय स्थान होता है, शैक्षणिक प्रक्रिया के प्रमुख संचालक होने के नाते अवश्य ही उसका स्थान प्रमुख है। शैक्षणिक प्रक्रिया के अच्छे, बुरे होने पर शिक्षार्थी का जीवन बिगड़ सकता है। शिक्षार्थी ही देश एवं राष्ट्र के भावी नागरिक हैं। सभ्यता की उन्नति शिक्षक की योग्यता पर निर्भर है क्योंकि बालकों पर शिक्षक का बड़ा प्रभाव पड़ता है। शिक्षा क्षेत्र में मस्तिष्क का मस्तिष्क पर तथा व्यक्तित्व पर प्रभाव डालने वाला शिक्षक के समान कोई दूसरा नहीं।

व्यक्ति समाज तथा समाज व्यक्ति का निर्माणकर्ता है, जब-जब पृथ्वी पर महामानवो ने जन्म लिया तब-तब समाज मे व्याप्त कुप्रथा को दूर कर सामाजिक धारा को उत्थान की तरफ मोड़ा। फिर समाज द्वारा उसे भगवान या महामानव की उपाधि प्रदान की गई। परिस्थितियों और पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव ने उन्हीं महामानव अर्थात् 'शिक्षक' को समाज मे निम्न स्तर पर ला खडा कर दिया है जिसे अब हेय दृष्टि से देखा जाने लगा है। अगर इसी प्रकार शिक्षक के सम्मान पतन की गति विद्यमान रही तो वह समय दूर नही जब शिक्षक को घृणा की दृष्टि से देखा जाने लगेगा और इसका बस एक ही प्रमुख कारण होगा 'शिक्षक' की कर्तव्य विमुखता। क्योकि 'शिक्षक' शब्द से ही मानव मस्तिष्क मे त्यागी, शिक्षक के प्रति ज्ञानी, सद् व्यवहारी, सदाचारी, दृढ सकल्पी तथा परोपकारी इत्यादि संकल्पना उसके मस्तिष्क मे उत्पन्न हो जाती है। लेकिन आज 'शिक्षक' से तात्पर्य वेतनभोगी, समयदुरुयोगी, ट्यूशनकर्ता, स्वार्थपरायण, कार्य विमुख तथा वाचालकर्ता से लगाया जाता है और मात्र इसका प्रमुख कारण एक ही है, "शिक्षा व्यवस्था तथा शिक्षण।" क्योकि जब पूरे समाज में भ्रष्टाचार, घूसखोरी, अन्याय, अत्याचार तथा अमूल्यीकरण का रोग व्याप्त है तो उसी समाज से निकला शिक्षक इन सब अवगुणो से प्रभावित नहीं होगा ऐसा सोचना मूर्खता है। आज समय का प्रभाव यहा तक पहुच गया है कि शिक्षक बनने हेतु प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए इन्हें भ्रष्टाचार का सहारा भी लेना पडता है। अगर इस परिस्थिति मे उस शिक्षक से उचित व्यवहार की आशा की जाती है तो इसमे शिक्षक का क्या दोष है, इसे स्वय समझा जा सकता है। अगर यह स्थिति इसी तरह से विद्यमान रही तो न तो यह समाज, समाज रहेगा और न ही देश, देश रहेगा चारो तरफ व्यक्तिवाद का बोलबाला होगा। व्यक्ति अपने स्वार्थ से संचालित होगा और किसी प्रकार का असामाजिक कार्य करने मे थोड़ा भी नहीं हिचकेगा। बढ़ते जनसख्या घनत्व एव सामाजिक दबाव के कारण दिन-प्रतिदिन मानवीय प्रवृत्तियो में बदलाव आता जा रहा है जिसके कारण सरकार द्वारा चलाई गई योजना अथवा पाठ्यक्रम का उल्टा परिणाम देखने को मिल रहा है। मेरे विचार से अगर सामाजिक व्यवस्था को सुचारू ढंग से सचालित करना है तो शिक्षा व्यवस्था तथा शिक्षण व्यवस्था मे जड से ही सुधार करना होगा। 'शिक्षा'—

छात्र का? इसका स्वय अनुमान लगाया जा सकता है।

मैं शिक्षाविद्, शिक्षा व्यवस्थापक, शिक्षा सचालक तथा शिक्षक बन्धुओं से अपील करूंगा कि अभी भी समय है कि शिक्षण मे ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक पक्षो के सभी वर्गों का शिक्षण किया जाए अर्थात् व्यवहार केन्द्रित शिक्षण हो। मूल्यांकन भी इन तीनों पक्षों का किया जाए सिर्फ ज्ञानात्मक पक्ष के मूल्यांकन के द्वारा प्रमाण-पत्र देने की परम्परा को तोडा जाए तथा व्यवहार केन्द्रित मूल्याकन व्यवस्था को अपनाया जाए। अर्थात् क्रियात्मक एव ज्ञानात्मक पक्ष का मूल्याकन किया जाए और इन पक्षों के मूल्यांकन द्वारा ही अगली कक्षा में प्रोन्नत किया जाए और पाठ्यक्रम के मूल्य और उद्देश्यों की प्राप्ति निश्चित की जाए। अगर पाठ्यक्रम द्वारा निश्चित लक्ष्य और उद्देश्य आधारित व्यवहार नहीं करता तो उसे उस पाठ्यक्रम से निकाल दिया जाए और वह जिस व्यवसाय की योग्यता रखता हो उसे उस व्यवसाय को ही प्राप्त करने के अवसर उपलब्ध कराए जाएं तभी देश राष्ट्र का विकास सम्भव है। नहीं तो आने वाले भविष्य का अन्जाम क्या होगा स्वयं विचार किया जा सकता है। ❑❑

महात्मा ज्योतिबा फुले रुहेलखण्ड
विश्वविद्यालय, बरेली
उत्तर प्रदेश